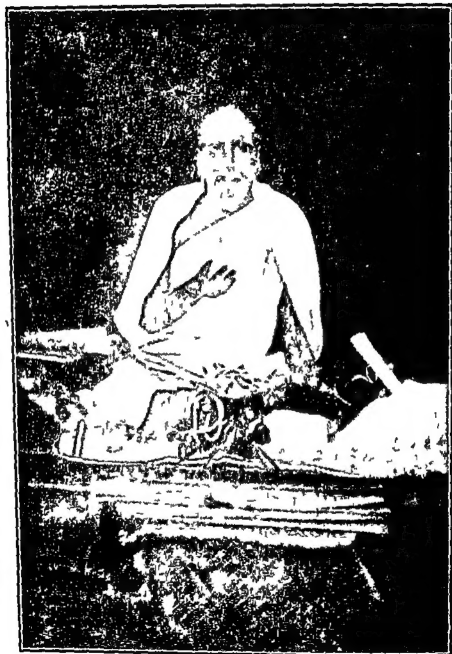
श्रीअभय जैन ग्रन्थमाला पुष्प ७ वा

# युगप्रधान श्रीजिनचन्दसूरि

लेखक—
अगरचन्द नाहटा,
भंवरलाल नाहटा।

प्रकाशक—
शङ्करदान शुभैराज नाहटा
नं० ५।६ आरमेनियन स्ट्रीट,
कलकत्ता।

प्रथमावृत्ति १००० | वि० सं० १९९२ | मूल्य १)



परमपूज्य शासन-प्रभावक शास्त्र-विशारद जैनाचार्य
श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरिजी महाराज



# समर्पण

परमपूज्य, प्रातःस्मरणीय, महोपकारी, शासन प्रभावक,
स्वनाम धन्य जैनाचार्य श्रीजिनकृपाचन्द्र
सूरीश्वरजी महाराज !

पूज्य गुरुदेव,

आपके सदुपदेशसे हमारे हृदयक्षेत्रमे साहित्यानुराग और साहित्य सेवाका जो भव्य बीज प्रस्फुटित और पल्लवित हुआ है, उसीके फलस्वरूप यह प्रथम पुष्पाञ्जलि प्रेम, श्रद्धा और भक्ति पूर्वक आपके कर-कमलोंमें सादर समर्पित है।

विनीत,

अगरचन्द नाहटा।

भंवरलाल नाहटा।

## महामहोपाध्याय रायबहादुर पण्डित गौरीशंकर जी हीराचन्द जी ओझा महोदयकी

# सम्मति

*सत्रहवीं शताब्दीके जैन समाजके आचार्योंमें एक श्री जिनचन्द्र सूरिजी नामक बड़े ही प्रभावशाली आचार्य हो चुके हैं; जिनका उपदेश उस समयके तत्कालीन मुगल बादशाह अकबरने सुनकर अपने साम्राज्यमेंसे हिंसावृत्तिको बहुत कुछ रोक दी थी। उनकी तपस्या और त्यागवृत्तिने बादशाहका चित्त जैन धर्मकी ओर खींच लिया था, जिससे जैन धर्मका विकास होकर उस तरफ उत्तरोत्तर आस्था बढ़ती जाती थी। फलतः बादशाह अपने यहां प्रायः जैन साधुओंको बुलाकर उनसे उपदेश ग्रहण किया करता था। वह जैन समाजके लिये स्वर्णयुग था और कर्मचन्द्र बच्छावत जैसे श्रावक उसमें मौजूद थे। इतिहाससे स्पष्ट है कि अकबरके समयके जैन आचार्योंने इस प्राचीन धर्मकी संरक्षाके लिये कठिन तपस्या की थी। वास्तवमें देखा जाय, तो मध्यकालीन युगके भारतके इतिहासको सुरक्षित रखनेका बहुत कुछ श्रेय जैन साधुओंको भी है, जिन्होंने कई ग्रन्थ निर्माणकर संस्कृत साहित्यको जीवित रखनेका बड़ा प्रयत्न किया है।*

हिन्दी ससार अभीतक ऐसे साहित्यरक्षकोंसे अपरिचित है, अतएव इस कमीको पूरी करनेके लिये बीकानेरनिवासी श्री अगर-चन्दजी नाहटा और श्री० भवरलालजी नाहटाको बडी लगन है। उनकी प्रथम कृति 'युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि' मेरे सामने है। पुस्तक उपयोगी है और प्राचीन पुस्तकों, पट्टावलियों, शिलालेख आदिके आधारपर लिखी गई है, जिससे उस समयकी परिस्थिति और आचार्य श्री जिनचन्द-सूरिजीके जीवनकी खासी झाकी होती है।

श्री० अगरचन्दजी नाहटा और श्री० भवरलालजी नाहटा खोजके वडे प्रेमी हैं। श्री अगरचन्दजी नाहटा द्वारा लिखित 'विधवा-कर्त्तव्य' और श्री भवरलाल जी नाहटा लिखित 'सती मृगावती' अपने विषयकी अच्छी पुस्तक है, और मैं उनके उत्साहकी प्रशसा करता हू।

अजमेर,
ता० १७ सितम्बर १६३५

गौरीशकर हीराचन्द ओझा



स्वर्गीया विदुषी आर्या श्रीमती विमलश्रीजी महाराज

# स्व० विदुषी आर्या श्रीमती विमलश्री

—का—

# संक्षिप्त जीवन ।

'यथा नाम तथा गुण ' के वाक्यानुसार विमल श्री जीकी पवि
सर्वथा विमल और निर्मल थी। हार्दिक ऋजुता ( सरलता ) और
स्वभाव आपके अनुपम और आदर्श गुण थे। संसारसे उदासीनता
आध्यात्मिक मग्नता आपके प्रसन्न मुख और मृदु वचनोंसे टपक
आपके उपदेश बड़े रोचक और असरकारक हुआ करते थे। जि
बार भी आपके पुनीत दर्शन एवं सत्समागमका लाभ मिला है वे
सद्गुणोंसे सदाके लिये मुग्ध हो जाते थे।

फलोधी निवासी चोधरी करणमलजी श्रावककी धर्मपत्नी
देवीके कुक्षिसे स० १९३२ के अक्षय तृतीयाको आपका जन्म हुआ
आपका शुभ नाम दुर्गाकुमारी रखा गया। अवसरविज्ञ माता
१३ वर्षकी योग्य वयमें चोथमल जी लोकडके सुपुत्र मोहनलालजी
आपका पाणिग्रहण कर दिया, किन्तु दुर्दैव कालने विवाहको १
पूरे होनेके पूर्व ही आपकी सौभाग्यश्री को हरण कर लिया, या
जाय कि भोग्यकर्म आपके अवशेष न था और चारित्रावर्णीय
क्षयोपशमने आपको चारित्राभिमुख होनेका मौका दे दिया।

इधर पूज्या सिंह श्री जीके उपदेशोंने आपके हृदयको वैराग्य
प्रोत कर दिया। फलत दुर्गाबाईने अपने सास ससुर आदि
व्यक्तियोंकी आज्ञा सम्पादन कर स० १९५० के आषाढ कृष्ण
सिंह श्रीजीसे दीक्षा ग्रहण की, स० १९५० आषाढ शु० ११ को
हो जानेपर आपका शुभ नाम 'विमलश्री' रखा गया।

दीक्षाके अनन्तर आपने स्वपर सिद्धान्तोंका अध्ययन
विद्वत्ता और योग्यता प्राप्त की, साधनाके मध्ये आदर्शसे

सं० १९६९ के पौष शुक्ल १२ को श्रीसिंहश्रीजीका अजमेरमें स्वर्गवास हो गया, तबसे उनकी आज्ञानुवर्ती आर्या सङ्घकी देखभाल आपके नेतृत्वमें रही, आपने बड़ी योग्यतासे इसका सञ्चालन किया और आपके गम्भीर एवं शान्त प्रकृतिने सबके हृदयों पर प्रभुत्व जमा लिया।

नव वर्षकी अवस्थामें दीक्षित आर्या प्रमोदश्रीजीका विद्याध्ययन भी आपके नेतृत्वमें हुआ, जो आज परम विदुषी, पण्डिता और आर्यारत्नकी ख्याति प्राप्त है।

पूज्या विमलश्रीजीने मारवाड़, मेवाड़, मालवा, गुजरात, काठियावाड़ आदि देशोंमें विहार कर बहुत शासनोन्नति और धर्म प्रभावना की है, शिक्षा प्रचार और जीर्णोद्धारकी ओर आपका विशेष लक्ष्य था।

भोपाल और गन्धारमें प्रतिष्ठा महोत्सव, रतलाममें ध्वजा-रोपण और थांयासाके मन्दिरका जीर्णोद्धार, सरवाड़के दादावाड़ीके भव्य मन्दिरका उद्धार, सोजतमें कन्या पाठशालाकी स्थापना, कोटेमें दीवान बहादुर केशरीसिंहजी द्वारा विंशति स्थानक तप उद्यापनका महोत्सव, बीकानेरमें नवपद ( १०-१२ ) उद्यापनोंका महोत्सव आदि अनेक धर्म कृत्योंके होनेमें आपके सदुपदेश ही प्रधान कारण है।

इस प्रकार आत्मोद्धार और धर्म प्रचार करते हुए सं० १९९० माघ कृष्णा अष्टमी मंगलवारके रात्रि ९। बजे समाधि पूर्वक फलौधीमें आपकी अमर और पवित्रात्मा नश्वर देहका परित्याग कर स्वर्ग सिधारीं, उस पौद्गलिक देहकी अविद्यमानतामें भी आपकी विमल कीर्ति चिरस्थायी है।

विनीता,

**आर्या राजेन्द्र श्री।**

---

आवश्यक सूचना —आपकी स्वर्गीया आत्माके सद्गुणोंकी स्मृतिमें फलौधी सङ्घने १०००) रुपये धर्मार्थ निकाले हैं।

इस ग्रन्थरत्नकी जो ४०० प्रति ये पूज्य विमलश्री जीकी स्मृतिमें अमूल्य वितरणार्थ जिन-जिन धर्मानुरागी श्रावक श्राविकाओंने द्रव्य सहायता दी है उन्हें धन्यवाद दिया जाता है और सदा इसी प्रकार उत्तम ग्रन्थोंके प्रकाशनमें सहायता देते रहें, यही अनुरोध है।

### कविवर समयसुन्दरोपाध्याय कृत

# युगप्रधान श्री जिनचन्द सूरि अष्टक



एजी सतनके मुख वाणि सुणी, 'जिनचन्द' मुणिंद महन्त यति ।
तप जप करै गुरु गुज्जरमे, प्रतिबोधत है भवि कु सुमति ॥
तब ही चित चाहन चूप भई, 'समयसुन्दर'के प्रभु१ गच्छपति ।
पठइ२ पातशाहि अक्बर३की छाप, बोलाए गुरु गजराज गति ॥१॥
एजी 'गुज्जर' तैं गुरुराज चले, बिच४ में चौमास 'जालोर' रहे ।
'मेदनीतट' मन्त्री मडाण कियो, गुरु 'नागोर' आदर मान लहे ॥
मारवाड 'रिणी' गुरु वन्दन को, तरसै 'सरसै' बिच वेग वहै ।
हरख्यो सघ 'लाहोर' आये गुरु, पातिशाह अकबर पॉव गहै ॥२॥
एजी शाहि 'अकबर' बब्बर के, गुरु सूरति देखत ही हरपै ।
हम योगी यति सिद्ध साधु व्रती, सब ही पट दर्शनके निरखे ॥
तप जप्प दया धर्म धारणको, जग कोइ नहीं इनके सरखे ।
'समयसुन्दर' ६के प्रभु धन्य गुरु, पातिशाह 'अकब्बर' जो परखे॥३॥
एजी७ अमृतवाणी सुणी सुलतान, ऐसा पातिशाह हुकम किया ।
सब आलम माहि अमारि पलाइ, बोलाय गुरु फरमाण दिया ॥

१ गुरु २ भेजे ३ अकब्बरी ४ अधबिच ५ में ६ टोपीधराऽमावम चन्द उदय, अज तीन बताय कला परखै ( मुद्रितमें पाठान्तर ) ७ गुरु

जग जीव दया धर्म दाखण तैं, जिन शासनमे जु सोभाग लिया।
'समयसुन्दर' कहै गुणवन्त गुरु, द्दग देखो हरषित होत८ हीया ॥४॥
एजी९ श्रीजी गुरु धर्म गोठ१० मिले, सुलताण 'सलेम' अरज्ज करी।
गुरु जीव दया निल चाहत११ है, चित्त अतर प्रीति प्रतीति धरी ॥
'कर्मचन्द' बुलाय दियो फुरमाण, छोडाइ 'खभाइत'की मच्छरी।
'समयसुन्दर' कहै सब लोकनमे, जु१२ खरतर गच्छको ख्याति खरी ।५।
एजो श्री 'जिनदत्त' चरित्र सुणी, पातिशाह भयो गुरु राजिय१४ रे।
उमराव सबे कर जोड़ि खडै, पभणै अपणै मुख हाजिय रे ॥
युगप्रधान१३ किये गुरु कु, गिगडदू धुधु बाजिय रे।
'समयसुन्दर' तू ही जगत गुरु, पातिशाह 'अकबर' गाजिये रे ।६॥
एजी ज्ञान विज्ञान कला सकला, गुण देख मेरा मन रीझिये जी।
हिमायुंको नन्दन एम अखै, मानसिंह 'पटोधर' कीजिये जी ॥
पतिशाह हजूरि थप्यो 'सिंह सूरि', मडाण मन्त्रीश्वर१५ बीजियैजी।
'जिणचन्द्र'१६ अने 'जिनसिंह सूरि', चन्द्र सूरज ज्यु प्रतपीजियै जी।७।
एजी 'रीहड' वश विभूषण हंस, खरतर गच्छ-समुद्र शशि।
प्रतप्यो 'जिनमाणिक सूरि'के पाट१७, प्रभाकर ज्यु प्रणमो उलसी ॥
मन शुद्ध 'अकबर' मानतु है, जग जाणत है परतीति इसी।
जिणचन्द्र मुणिन्द चिर प्रतपो, 'समयसुन्दर' देत आशीस इसी ॥८॥

---

८ भव्य ९ इम १० ध्यान ११ प्रेम धरै १२ जु १३ चामरछत्र मुरा तब भेट १४ रीझियै १५ कोजियैजु १६ पटे १७ पट्ट।

# वक्तव्य।



सतरहवा सैका भारतका स्वर्णयुग था। इससे पहिलेकी कई शताब्दियोकी तुलना करनेसे इस समयमे युगान्तर सा ज्ञात होता है। उस समय जैन धर्मकी अवस्था वडी उन्नत थी। आचार्य-देवकी आज्ञा, भक्तोके लिये शाही आज्ञासे भी कहीं अधिक उपदेश समझी जाती थी, इसी कारण प्रत्येक गच्छ और समुदायका सगठन इतना सुदृढ था कि उसके सामने बड़ी वडी सत्ताए भी टक्करा कर पीछे हट जातीं और सिर झुकाती थीं। भक्तिवादका साम्राज्य इस समय वडे जोरोसे था। जैन धर्ममे ही नहीं वल्कि अन्य धर्मोमे भी भक्ति रसका पोषण इस समय प्रचुर प्रमाणमे हुआ था। हमने हमारे चरित्र नायकके गुणानुवादकी, तत्कालीन लिखी हुई १०८ गहूलिया ( भक्तिकाव्य ) सग्रहकी हैं, जिनको पढनेसे उस समयके विद्वानोंकी आचार्य देवके प्रति कितनी अगाध भक्ति थी, इसका अच्छा परिचय मिल जाता है।

हिन्दी-भाषाका अधिकाधिक प्रचार और सुव्यवस्थित रूपसे गठन भी इस शताब्दीसे प्रारम्भ हुआ है। इस शताब्दीके रचित और लिखित ग्रन्थोकी सख्या वहुत विशाल है। अत साहित्य युगके नाते भी यह शताब्दी विशेष उल्लेखनीय है।

सम्राट् अकबर आदि उस समयके राज्य शासक स्वयं विद्याविलासी थे, अतः प्रत्येक धर्म-प्रचारक विद्वानकी, विद्वत्ता और आचार ही सर्वोच्च कसौटी थी, इस कसौटीपर जैन विद्वानोंने उत्तीर्ण होकर राज्य शासकों एवं अन्य विद्वानोंपर भी अपना असाधारण प्रभाव जमा लिया था। जिसके फल स्वरूप इस समय ऐसे कई काम हुए, जो सदाके लिये चिरस्मरणीय हैं। अकबरके शासनकालमें प्रजाको जो शान्ति प्राप्त हुई, इसमें जैनाचार्यों और विद्वानोंका सतत उपदेश ही प्रधान कारण है।

जैनाचार्योंने इसके पहले और पीछे भी, समय समयपर राज-सभाओंमें बहुत सन्मान प्राप्त किया है एवं जैन धर्मकी महान् सेवा और अत्यधिक प्रचार करके शासनकी परम प्रभावना की है। आर्य्य नृपतियोंकी तो बात ही क्या? प्रत्येक विद्याविलासी नृपतियोंकी राजसभाओंमें उनकी विद्यमानताके प्रमाण मौजूद हैं। उन्होंने अपनी प्रखर मेधा और असाधारण पाण्डित्यका परिचय देकर अजैन विद्वानों पर भी अपनी विद्वत्ता एवं उत्कृष्ट चारित्रका गहरा प्रभाव डाला है।

## राजसभाओंमें खरतर-गच्छाचार्य्य।

खरतर गच्छके विद्वानोंका नृपतियोंकी सभाओंमें बडा ही गौरवास्पद स्थानथा। "खरतर" विरुद प्राप्तिसे लगाकर जिन जिन आचार्योंने राज सभाओंमें अपना प्रभाव फैलाकर सन्मान प्राप्त किया है, उनके कतिपय नाम ये हैं —श्रीजिनेश्वर-सूरिजीने गुर्जराधीश दुर्लभ राज+की सभामें, श्रीजिनवल्लभसूरिजीने

+सड्ढिय दुल्लह राए सरसइ अंको घसोहिए सुहए।
मज्झे रायसहं पविसिऊण लोयागमाणु मयं॥ ६६॥
( गणधर सार्ध शतकम )

धारानरेश नरवर्मकी सभामें, श्रीजिनदत्तसूरिजीका अजमेरके अर्णो-राज और त्रिभुवनगिरिके कुमारपालका प्रतिबोध ÷ मणिधारी श्रीजिनचन्द्रसूरिजीका दिल्लीके राजा मदनपालपर प्रभाव× और श्रीजिनपति सूरिजीका अन्तिम हिन्दूसम्राट पृथ्वीराजकी सभामें तथा राजा जयसिंह एव आशिकान—रेश भीमसिंहकी सभामें वादियोंको शास्त्रार्थमें परास्त कर सम्मानित होना, इतिहाससे भली भांति सिद्ध है– ।

आर्य-संस्कृतिके विनाशक मुसलमान बादशाहोंपर भी उनका प्रभाव विशेष उल्लेखनीय है। क्योंकि भिन्न जाति, भिन्न प्रकृति और भिन्न विचारवाले मुसलमान बादशाहोंपर प्रभाव जमाना देशी नरेशोंकी अपेक्षा अति कठिन कार्य था। वे लोग हरएक पर जरा-जरासी बातोंमें बिगड जाते और यद्वातद्वा दण्ड दे डालते थे। उन मुसलमान सम्राटोंपर सर्वप्रथम प्रभाव जमानेका श्रेय भी खरतर गच्छके आचार्योंको ही है।

---

÷ इन सब बातोंके लिये "गणधर सार्धशतक बृहद्वृत्ति" देखना चाहिये।

×यह सम्बन्ध पत्र ८६ को प्राचीन गुर्वावलीमें है।

– देखें 'ऐतिहासिक जैन काव्यसंग्रह' के पृष्ठ ९ में —

"पामिउ जेउ छत्तीस विवादहि, जयसिंह पुहविय परपदइ ए।
बोहिय पुहवी पमुह नरिन्दह, निसुणिय वयणि जिण धम्मु करइ ए ॥१६॥।

इन शास्त्रार्थोंका विस्तृत और मनोरंजक वर्णन प्राचीन गुर्वावली (पत्र २६ ) में है।

खरतर गच्छके और भी कई आचार्योंने नृपति द्वारा सम्मान प्राप्त किया है, जिसका उल्लेख प्राचीन गुर्वावली आदिमें है।

कलिकाल केवली श्री जिनचन्द्रसूरिजी ( सं० १३४१—७६ ) सुलतान कुतुबुद्दीनको चमत्कृत किया×। उनके पश्चात् श्री जिनप्र सूरिजी– ने सं० १३८५ पोष शुक्ला २ (८) शनिवारके सन्ध्या सम महमद तुगलक बादशाहसे मिलकर इतना जबरदस्त प्रभाव डाल कि वह सूरिजीका परमभक्त हो गया, यहांतक कि प्रवासमें भ उनको अपने साथ रखा था। पन्द्रहवीं शताब्दीमें बेगडशाखाके प्रथ आचार्य श्री जिनेश्वर सूरिजीने महमद बेगडेसे अच्छा सम्मा

---

× कुतुबदीन सुरताण राउ, रंजिउ [redacted] मणोहरू।
जगि पयडउ जिणचन्दसूरि, सूरिहि सिर सेहरू॥
( जिनकुशलसूरि रास, ऐ जै का सं० पृ० १६

– इनके विषयमें 'विविध तीर्थ कल्प' कन्नानय तीर्थ कल्पद्वय और पं० लालचन्द भगवानदास गांधीका लेख 'जैन' पत्रके रौप्यमहोत्सवाक, और गीतत्रय ऐ जै का सं० पृ० ११ से १४ मे देखनें चाहिये।

पुरातत्त्वविद श्रीजिनविजयजी विविध तीर्थ कल्पके प्रस्ताविक निवेदन जिन प्रभसूरिजीके विषयमें लिखते हैं —"ग्रन्थकार अपने समयके प्र बड़े भारी विद्वान् और प्रतिभाशाली जैन आचार्य थे। जिस तरह विक्रम १७ वीं शताब्दीमें मुगल सम्राट् अकबर बादशाहके दरबारमें जैन जगद्गु हीरविजयसूरिने शाही सम्मान प्राप्त किया था, उसी तरह जिनप्रभसूरि भी १४ वीं शताब्दीमें तुगलक सुलतान महम्मद शाहके दरबारमें बड़ गौरव प्राप्त किया था। भारतके मुसलमान बादशाहोंके दरबारमें, जैन धर्मका महत्त्व बतलानेवाले और उसका गौरव बढानेवाले शायद सबसे ये ही आचार्य हुए।"

प्राप्त किया था–। सोलहवीं शताब्दीके पूर्वार्द्धमें उपा० सिद्धान्त रुचिजीने माडवगढमें गयासुद्दीनकी सभामें विजय प्राप्त की× उत्तरार्द्धमें श्री जिनहस सूरिजीने सिकन्दर लोदी बादशाहके चित्तको चमत्कृतकर ५०० कैदियोंको छुडाया था*।

युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिजी जो कि हमारे चरित्र नायक हैं, उन्होंने सम्राट अकबर और जहाँगीरको प्रतिबोध देकर शासन्नोनति की है। जिसका परिचय इस ग्रन्थसे भलीभांति मिल जायगा। उनके पश्चात् श्रीजिनसिंहसूरिजीको सम्राट जहाँगीरने युगप्रधान–

---

÷ देखो जिनेश्वरसूरि गीत ( ऐ० जै० का स० पृ० ३१४ ) —
परतौ पूर्वी खान नौ, 'अणहिलवाडे' माहि हो।
महाजन बद्द मुकावियो, मेलयउ सघ उच्छाहि हो॥ स०॥ ६॥
'राजनगर' नइ पाधुर्या, प्रतिबोध्यो 'महमद' हो।
पद ठवणो परगट कियो, दुख दोहग गया रइ हो॥ स०॥ ७॥

× श्री ग्यासदीनशाहेर्महासभालब्धवादिविजयानाम्।
श्री सिद्धान्तरुचि महोपाध्यायाना विनेयेन॥ २॥
( स० १५१९ साधुसोम कृत, महावीर चरित्र वृत्तौ )

* देखें ऐतिहासिक जैन काव्यसग्रह पृ० ९३ में भक्तिलाभोपाध्याय कृत 'श्रीजिन हससूरि गुरु गीतम्' और पट्टावलियें।

–स० १६७५ खरतर वसहीके शांति प्रासाद आदिके लेखोंमे —"दिल्लीपति पातस्याह श्री जहांगीर प्रदत्त युगप्रधान विरुदधारक श्री अकबर शाहिरजक कठिन काश्मीरादि देश विहारकारक युग प्रधान श्री जिनसिंह सूरि।"

स० १६७९ में कविवर समय सुन्दरजीके स्वय लिखित गुर्वावली पत्र १ में
श्री दिल्लीपति पातशाहि विभुना, श्री नूरदी साहिना।
यैस्यौ दायि युगप्रधान पदवी, पट्टानुपट्टक्रमा।
मू पीठोत्तम चोपडाभिधकुल, प्रालेय रोचि प्रभा।
जीयासुर्जिनसिंह सूरि गुरव, प्रौढ प्रतापोदय॥ १॥

पदसे विभूषित किया, उनके पट्टधर श्रीजिनराजसूरिजी× भ
१६८६ मार्ग-शीर्ष कृष्णा ४ को आगरे में सम्राट् शाहजहाँसे मि
श्रीजिनरत्नसूरिजी और श्रीजिनरंगसूरिजीका भी शाही दरबार
नवाबोंसे अच्छा सम्बन्ध रहा था, जिसके प्रमाण स्वरूप कई
फरमान, लखनऊके खरतर गच्छीय ज्ञान भंडार और बीक
श्रीपूज्यजी श्रीजिन-चारित्रसूरिजीके पास उपलब्ध हैं।

बादशाह औरङ्गजेब बड़ा क्रूर-नीतिज्ञ और कट्टर मुस
था। अतः तभीसे शाही दरबारसे जैनाचार्योंका सम्बन्ध म
गया। अस्तु, कहनेका सारांश यह है कि खरतरगच्छाचा
प्रभाव देशी नरेशों तक ही सीमित न होकर मुसलमान बाद
पर भी यथेष्ट था।

हम ऊपर बतला चुके हैं कि खरतरगच्छाचार्योंका प्रभाव
नरपतियों पर खूब जमा हुआ था यहां तक कि वे उन्हें अपना
गुरु मानते थे—बीकानेर, जेसलमेर, जोधपुर, जयपुर आदि न
तो अविछिन्न सम्बन्ध रहा है, जिसके फल स्वरूप आज भी
पत्र, पट्टे, परवाने, खास रुक्के आदि विपुल परिमाणमें उपल
बस, इन बातोंका विवेचन यहीं समाप्त कर प्रस्तुत पुस्तकके
जानेका कारण दर्शाते हैं।

---

इति सं० १६७९ वर्षे भाद्र पद ११ दिने। श्री प्रल्हादनपुरे। श्री
सुन्दरोपाध्यायैर्लिलेखि पंडित सहजविमल मुनि पठनार्थम्।

( हमारे स

## हमारी साहित्य प्रगति—

सं० १९८४ के वसन्त पचमीको परम पूज्य आचार्य महाराज, सकलागम रहस्य वेदी, परम गीतार्थ, श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरिजी अपने विद्वान शिष्य, प्रवर्त्तक सुखसागरजी आदि मुनि मण्डलके साथ बीकानेर पधारे। सौभाग्यवश उनका चातुर्मास भी हमारे मकानमें हुआ, इससे हमारे जीवन पर गहरा प्रभाव पडा। प्रतिक्रमण, व्याख्यान श्रवणादिके अतिरिक्त समय समय पर पूज्य आचार्यश्री एवं प्रवर्त्तकजी आदिसे सैद्धान्तिक विषयोंमें प्रश्नोत्तर करते हुए धार्म्मिक तत्त्वोंका यत्किञ्चित् बोध हुआ। यद्यपि आपश्रीका लगभग तीन वर्ष बीकानेरमें विराजना हुआ, किन्तु हमें केवल १॥ वर्ष ही आपके सत्समागमका सुयोग मिला।

एक दिन प्रवर्त्तकजीसे "आनन्द काव्य महोदधि, ७वां मौक्तिक" लाकर श्रीयुक्त मोहनलाल दलीचन्द देशाइ B A L. L B का "कविवर 'समयसुन्दर" नामक निबन्ध पढा, तभी से हमारे हृदयमें कविवरके प्रति अगाध भक्ति उत्पन्न हुई और शीघ्र ही उनकी कृतियोंका खोज-शोध करना आरम्भ कर दिया। "श्रीमहावीर जैन मण्डल" के कतिपय हस्तलिखित ग्रन्थोंको मगवाया। सौभाग्यवश उनमें हमें एक ऐसा गुटका (पुस्तकाकार प्रति) मिला; जिसने हमारी मानसिक-भावनाको अत्यधिक उत्तेजन दिया, इसका कारण था—उक्त गुटकेमें दो सौके लगभग कविवरकी छोटी कृतियोंका उपलब्ध होना, जिनमें बहुत सी तो देशाइ महोदयको भी अनुपलब्ध थी। बस, उत्तरोत्तर खोज शोधकी रुचि बढती गई, उसने इतने अधिक प्रमाणमें कार्य

करनेका अवसर दिया कि जो हमारे लिये एक तरहसे कल्पनातीत और असम्भवसा था।

## इस ग्रन्थकी जन्म कथा—

सं० १९८६ मे यु० प्र० श्रीजिनचन्द्रसूरिजीका संक्षिप्त परिचय पट्टावलीके आधारसे लिखा। जिसका उद्देश्य एक मात्र यही था कि कविवर समयसुन्दरजी आपके प्रशिष्य थे, अतः उनके चरित्र सम्पादनमे काम लगेगा, किन्तु उस समय यह कल्पना तक न हुई कि कविवरका जीवन-चरित्र लिखनेके पूर्व ही, इन महापुरुषकी जीवनी इतने विस्तारसे लिखनेका सुयोग मिलेगा। सं० १९८७ के आश्विन कृष्णा २ को बीकानेरमे हमारे चरित्र नायककी जयन्ती मनाई, उस समय भी आपश्री के विषयमे संक्षेपतः कई पृष्ट लिखे गये। तदनन्तर तीसरी बार जिनदत्तसूरिचरित्र—उत्तरार्द्ध, गणधरसार्धशतक (भाषान्तर) आदिमें वर्णित चमत्कारिक बातों (जो इस ग्रन्थके १६ वें प्रकरणमे हैं) के साथ चरित्र लिखा गया। उसके बाद खोज-शोध करते हुए नयी नयी सामग्री प्राप्त होने लगी, उसी वर्षमें श्रीपूज्यजी महाराजके संग्रहका अवलोकन किया और उपा० श्रीजयचंद्रजी गणिके ज्ञान भण्डारके पुस्तकोंकी ज्ञातव्य सूचि बनाई। इन भण्डारोंमें भी हमे प्रचुर सामग्री मिली, तत्संबंधी साहित्य, गहुंलियों प्रशस्तियों आदिकी नकल की गई। सौभाग्यवश "अकबर प्रतिबोध रास" भी उ० श्रीजयचन्द्रजीके "ज्ञान भण्डार" की सूचि करते हुए उपलब्ध हुआ, अन्यान्य छोटे बड़े ज्ञान भण्डारोंसे भी यथेष्ट सामग्री मिलने लगी, जिससे हमारे चित्तमे परम सन्तोष और उत्साहकी

अभिवृद्धि होने लगी। आखिर सं० १६८६ में समस्त प्रमाणोंका सार खींच कर मुद्रणार्थ चौथी कॉपी तैयार की गई उसमें जो कुछ लिखना अवशेष था सं० १६६० में पूर्णकर दिया और यह इच्छा हुई कि इसे श्री० देसाई, श्रीजिनविजयजी, नाहरजी, जयसागरसूरिजी आदि इतिहास वेत्ताओंको दिखला कर शीघ्र ही छपा दें, किन्तु किसी अज्ञात शक्तिकी प्रेरणासे वह प्रेसकॉपी न तो कहीं भेजी गई और न प्रकाशनकी व्यवस्था ही हुई। गत वर्षमें बीकानेरके वृहत् ज्ञान-भण्डारके हस्तलिखित ग्रन्थोंकी सूचि, छह मासके अथक परिश्रमसे निर्माण करनेके समय भी ऐतिहासिक खोज शोध, अध्ययन और इसके सहायक अन्यान्य ग्रन्थोंको देखनेका कार्य चालू रखा। फलत शुद्धि और वृद्धि द्वारा ५ वर्षोंकी शोध-खोजके परिणाम स्वरूप जिनचंद्र सूरिजी रूपी चन्द्रमाकी १६ कलाओंके सूचक १६ (मूल) फरमों और १६ प्रकरणोंमें विभक्त होकर यह विस्तृत ग्रन्थ, जिसका कि इतना वडा होनेकी कोई सम्भावना ही नहीं थी, आज हमें सुहृद पाठकोंके समक्ष रखते हुए परम हर्ष होता है।

**प्रयुक्त सामग्रीकी प्रामाणिकता—**

हमने सूरिजीके जीवन चरित्रकी प्राय सभी बातें तत्कालीन लिखित विश्वसनीय प्रमाणोंके आधारसे ही लिखी हैं। विहार पत्र गहूलियें आदि अधिकांश सामग्री हमारे संग्रहमें मौजूद है। पहले हमारा यह विचार था कि इस ग्रन्थकी समस्त साधन, सामग्रीको ग्रन्थके परिशिष्टमें प्रकाशित कर दी जाय किन्तु यह विचार अन्तमें स्थिर न रह सका। क्योंकि ऐसा करनेसे मूल ग्रन्थसे भी परिशिष्ट

लम्बा हो जाता, जो ग्रन्थके लिये शोभास्पद नहीं होता। अतएव प्रमाण साक्षात्कारके निमित्त फुटनोटमे अवतरण देकर कतिपय अत्यावश्यक सामग्री "परिशिष्ट" मे दे दी है एवं रास और उपयोगी गहूलिया "ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह" मे प्रकाशित कर दी है।

हमे घटनाओको क्रमिक लिखनेमे दो विहार पत्रोंसे जो कि हमारे सग्रहमे है, पूर्ण सहायता मिली है। सच पूछे, तो इनके बिना सवत्सरानुक्रमसे जीवनी लिखना असम्भव था। पहला विहार-पत्र तत्कालीन लिखा हुआ है, वह जर्जरित जीर्ण आदर्श नष्ट न हो जाय इसलिये हमने उसका चित्र पुस्तकके परिशिष्टमे लगा दिया है, जिससे पाठकोंको जीर्ण प्रथमादर्शका साक्षात् दर्शन हो जाय और साथ साथ हमारे लिखित बातोंको जॉच करनेमे भी सुगमता मिले। ऐतिहासिक ससारसे अज्ञात वृत्तान्त, मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रजीका मृत्यु-समय भी इसी विहार पत्रमे है अत यह पत्र बहुत महत्वपूर्ण है। दूसरा विहार पत्र हमारे ख्यालसे कवि राजलाभ या उनके शिष्यका लिखा हुआ है। उसका लेखन समय अठारहवीं शताब्दीका पूर्वार्ध है, अत प्राचीनताके नाते हमने इस पत्रसे भी, अधिक प्रामाणिक होनेसे पहले पत्रका विशेष उपयोग लिया है।

छट्ठा प्रकरण "अकबर आमन्त्रण" प्राय 'अकबर प्रतिबोध रास' के आधार पर ही लिखा है, जिसकी मूल प्रति, कर्त्ताकी स्वय लिखित उ० श्रीजयचन्द्रजी गणिके भण्डार (बीकानेर) मे है और इसे "ऐ० जैन काव्य संग्रह" मे हमने प्रकाशित कर दिया है। कर्मचन्द्र-

वश प्रबन्ध वृत्ति* से हमने पूर्ण सहायता ली है, क्योंकि उसमें भी विशेष सामग्री है—वह सबसे अधिक प्राचीन, ( रचना संवत् १६५०-५५ ) विश्वसनीय और सूरिजीके साथ ही लाहोर जानेवाले परम गीतार्थ विद्वानकी रचना है, अतएव इसमें सन्देहको तनिक भी स्थान नहीं है। 'अकबर प्रतिबोध' और 'युगप्रधान पद प्राप्ति' नामक प्रकरण द्वय इसी ग्रन्थके मुख्याधारसे लिखे गये हैं। इनके अतिरिक्त अनेकों शिलालेख, प्रशस्तियों, प्राचीन पट्टावलियें, हस्त लिखित ग्रन्थ आदि प्रामाणिक साधनों द्वारा इस ग्रन्थका संकलन हुआ है। 'सहायकग्रन्थ सूचि' में, जिन-जिन ग्रन्थोंकी सहायता ली गई है, उनके नाम दे दिये गये हैं, बाकी फुटकर कृतियोंके नाम फुटनोटमें निर्देश कर दिये हैं।

## प्रस्तुत ग्रन्थकी उपयोगिता—

सूरिजीसे सम्बन्ध रखनेवाले प्राय सभी विषयोंपर प्रकाश डालनेका यथासाध्य प्रयास किया गया है। द्वितीय प्रकरणमें सूरिजी के पूर्ववर्ती आचार्यों, १३ वे प्रकरणमें शिष्य-समुदाय और १४ वे प्रकरणमें आज्ञानुवर्ती साधुसङ्घके परिचयके साथ साथ उनके रचित ग्रन्थोंकी विस्तृत नोंध भी दे दी गयी है, जिससे खरतरगच्छके विद्वानों की उल्लेखनीय साहित्य-सेवाका खासा परिचय मिल जायगा। इसी प्रकार १५ वे प्रकरणमें भक्त श्रावकोंकी स्तुत्य शासन-सेवा पर प्रकाश डाला गया है।

---

* इस ग्रन्थकी हस्तलिखित प्रति हमें श्री जिनकृपाचन्द्रसूरि ज्ञान-भण्डार—बीकानेरसे प्राप्त हुई थी, पर प्रति अशुद्ध होनेसे इस ग्रन्थमें उसके अवतरण ( श्लोक ) दिये गये है—उनमें भी अशुद्धियां रह गयी हैं, और भी दृष्टि और मुद्रण दोषकी अशुद्धियोंके संशोधन स्वरूप 'शुद्धा-शुद्धि पत्र' दे दिया गया है।

यद्यपि मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रजीकी जीवनी कई ग्रन्थोमे प्रगट हो चुकी हैं पर तथाविध खोज शोध और सामग्रीके अभावसे अद्यावधि ऐतिहासिक ससारमे उनके और उनके पुत्र भाग्यचन्द्र लक्ष्मीचन्द्रके विषयमे अनेक भ्रमणाएं* चली आती थी, हमने उन सबका तत्कालीन विश्वसनीय प्रमाणोके आधारसे निराकरण कर इस ग्रन्थमे मन्त्रीश्वरकी प्रामाणिक जीवनी जनताके समक्ष रखनेका भरसक प्रयत्न किया है। अत यह ग्रन्थ सूरिजीके जीवनीके साथ-साथ उस समयके खरतरगच्छीय विद्वानो उनके कृतियो, भक्त श्रावको आदि अनेक ज्ञातव्य बातोके जाननेमे परम उपयोगी होगा।

## स्पष्टीकरण—

"अकबर प्रतिबोध रास" और कर्मचन्द्र मन्त्रि-वश प्रबन्धमे परस्पर साधारण दो बातोका वैषम्य है 'रास' मे, अकबरका कर्मचन्द्रमे पूछना और उनका सूरिजीके राजनगरमे अवस्थित होना बतलाना, एव "वश-प्रबन्ध" के अनुसार खम्भातमे होना। दूसरा 'रास' मे सूरिजीके लाहोर पधारनेके पश्चात् अष्टोत्तरी-स्नात्र-महोत्सव होना और "वश प्रबन्ध" में पहिले होना। इन पाठातरोपर

---

* वडना जैन मित्रमण्डल-भावनगरसे प्रकाशित जैन स्पेशीयल ट्रेन स्मरणांकके पृष्ठ ५९ में "करमचन्द दीवान दील्ही मा आवीने रह्या, त्यां तेमणे अकबर बादशाह नो सारो प्रेम जीत्यो अने श्वेताम्बर जैन सघ ना प्रसिद्ध विद्वान् श्री हीरविजय सूरिने, सम्राट् अकबर ना दरबार मा बोलावा मा करमचन्द दीवाने ज आगळ पडतो भाग लीधो हतो" लिखा है और भाग्यचन्द्र लक्ष्मीचन्द्रका मृत्यु समय ई० स० १६१२ लिखा है जो सर्वथा असिद्ध है।

विचार करनेसे ज्ञात हुआ कि "वशप्रनन्ध" मे, सूरिजीसे पहले वा० मानसिंहजी (जिनसिंह सूरि) का लाहोर जानेका जिक्र ही नहीं किया है अत सभव है कि वाचकजीको लाहोर भेजनेके समय सूरि महाराज राजनगरमे हो। हा ? सूरिजी तो खम्भातसे ही लाहोर पधारे थे यह बात समयसुन्दरजी कृत अष्टकादिमे भलीभाति सिद्ध है। अष्टोत्तरी स्नात्रके विषयमे "वश-प्रनन्ध" का कथन ही विशेष प्राह्य एवं विश्वशनीय है, क्योंकि 'जहागीरनामे' मे भी स० १६४७ मे जहागीरके पुत्री जन्मका उल्लेख है और अष्टोत्तरी स्नात्र भी उसी पुत्रीके जन्मदोषके उपशान्तिके निमत्त ही हुआ था। अत हमने "रास" के अनुसार सूरिजीके लाहोर पधारनेके पश्चात् आनेवाली चैत्री पूनमका लिखा है किन्तु वास्तवमे स० १६४८ की चैत्री पूनम होना चाहिये।

दूसरे प्रकरण ( पृ० १५ ) मे "सदेह दोलावली बृहद् वृत्ति" को भ्रमसे श्रीजिन प्रबोध सूरि द्वारा रचित लिखा है किन्तु यह कृति प्रबोधचन्द्र कृत है। पृ० १६ मे सूरि परम्परामे जिनलब्धिसूरिजीनाम छूट गया है ये सं० १४०० के आषाढ शुक्ला १ को श्रीजिनपद्मसूरिजीके पाटपर बैठे, श्रीतरुणप्रभाचार्यने इन्हें सूरि मत्र दिया। इनके रचित एक विद्वत्तापूर्ण स्तोत्र हमारे सग्रहमे है। स० १४०६ में इनका स्वर्गवास हुआ।

पृ० १४० के फुटनोटमे दिया हुआ स० १६६८ का लेख, हमारे चरित्र नायकसे प्रतिष्ठित मूर्तिका न होकर आद्यपक्षीय श्रीजिनसिंहसूरिके शिष्य श्रीजिनचन्द्र सूरिजी द्वारा प्रतिष्ठित प्रतिमा का है।

पृ० १७१ मे "ऋषिमण्डल वृत्ति" का रचनाकाल श्रीदेसाईके लिखे अनुसार स० १७०५ लिखा है, किन्तु हमारे 'प्रशस्ति सग्रह' में उस ग्रन्थकी प्रशस्ति देखनेपर ज्ञात हुआ, कि उक्त ग्रन्थ स० १७०४ मे रचित है।

पृ० २२२ मे 'राजपूतानेके जैन वीर" के अनुसार जयपुरके राजा अभयसिंहका उल्लेख किया है, किन्तु उस समय जयपुरका अभयसिंह नामक कोई राजा नहीं था।

## चित्र और फरमान पत्र—

सूरिजीके अकबर मिलनका चित्र * इस पुस्तकमे दिया गया है। उसका ब्लॉक हमें "श्री जिनकृपाचन्द्र सूरि ज्ञान भण्डार" इन्दौरसे प्राप्त हुआ है, एतदर्थ हम उक्त ज्ञान भण्डारके सरक्षक चादमलजीको धन्यवाद देते हैं। ऐसे प्राचीन चित्र कई जगह उपलब्ध है, ( देखे पृष्ठ ११० की फुटनोट ) एव दादाजीके मन्दिरोकी दीवारोपर भी चित्रित पाये जाते हैं। सूरिजीके विराजे हुए और उनके समक्ष सम्राट् अकबरादि हाथ जोडे खडे हैं—ऐसा चित्र कलकत्तेमे सुप्रसिद्ध राय बद्रीदास बहादुरके मन्दिरसे लगा हुआ है। चरित्र नायकका एक स्वतन्त्र फोटो सेढुजीके मन्दिर ( बीकानेर ) में भी है।

---

* श्रीमान् हीरविजय सूरिजीका भी ऐसा ही फोटो कई ग्रन्थोंमें प्रकाशित हुआ है, पर उसकी प्राचीनता और प्रमाणिकताके विषयमें पुरातत्वविद श्री विद्याविजयजीसे पूछनेपर, मिती फाल्गुन शुक्ला १० (वी० स० २४६१) पाटणसे दिये हुए कार्डमें आप इस प्रकार लिखते हैं —

१ हीर वि० सू० और अकबरके मिलनका चित्र बनावटी है। मैंने लखनऊमें बनवाया था।

पंचनदी साधते समयका एक और चित्र श्री पूज्य जी श्री जिनचारित्रसूरिजीके पास है।

सूरि जीकी मूर्ति, जो कि श्री ऋषभ देव जीके मन्दिरमें है और लेख पृ० १५८ मे छपा है, उसका सुन्दर फोटो इस पुस्तकमें दिया गया है, किन्तु उस स्थानकी विषमताके कारण फोटोमें शिला लेखकी प्रतिकृति न आ सकी।

आषाढी अष्टान्हिकाका मूल फरमान जो कि हमें प० प्र० यतिवर्य सूर्यमल जीकी कृपासे प्राप्त हुआ है। उसका फोटो इसके परिशिष्टमे लगा दिया है। लखनऊके भण्डारसे प्राप्त करनेमें हम यति जीका आभार मानते हैं। दूसरा शत्रुञ्जय तीर्थ विषयक फरमान ( मूल ) खोज करनेपर भी न मिला। उसका अनुवाद बीकानेर ज्ञान-भण्डारस्थ पत्रसे नकलकर परिशिष्टमे प्रकाशित किया है। सम्भव है कि मूल फरमानके मिलनेसे अच्छा प्रकाश पडे। अन्यान्य फरमान पत्र खोज करनेपर भी प्राप्त न हुए इसके कारणोंमें एक कारण यह भी है कि सूरि जीके पश्चात खरतर गच्छमें तीन गच्छ-भेद हो गये—( १ ) जिनसागर सूरि, ( २ ) जिनरग सूरि, ( ३ ) जिनमहेन्द्र सूरिजीसे। इससे सामग्री यत्र-तत्र बिखर गयी और उसका पता लगाना दुष्कर हो गया। राधनपुरमें श्री जिनचन्द्र सूरि जी ( स० १८३४—१८५६ ) के जेसलमेर उ० उदयधर्मजीको दिये हुए पत्रसे ज्ञात होता है कि उस समय तक तो कई फरमान विद्यमान थे। उस पत्रका आवश्यकीय अंश यहा उद्धृत करते हैं। यह पत्र हमारे सग्रहमें है।

"प० क्षमाकल्याण गणि चौमास ऊनयें जेसलमेर थी। विहार करस्यै सो तुमे जेसलमेर पूठियानी थिति मरजाद सरब साचवजो श्री सघ नू पिण लिख भेजसा प० क्षमाकल्याण गणि नूं पिण लिख्यौ छे सो चालना तुम नु सुपरत करस्यै तुमे तथा पं० क्षमा कल्याण आपस मे घणु सप राखज्यो हेतमे सरब रूडो छै तथा गाठडी नी तुमे पाच पाती करी हती ते गाठडीमे जूना परवाना मुसलमानी अक्षर ना हता ते परवाना ठावडा करि ने पाली पहुचता करेज्यो पालीवाला नू इननो लिख देज्यो राधनपुर ठावडा पुहचावेज्यो पाली थी राधणपुर ठावा पहुचस्यै वलता पत्र देज्यो मिती द्वितीय भाद्रवा वदि १४"

श्री जिनसागर सूरि शाखाके ज्ञान-भंडार (बीकानेर) मे कइ शाही फरमान विद्यमान होनेका कहा जाता है, पर भडार कइ वर्षोसे वन्द है, अत प्राप्त न हो सके। प्रयत्न चालु है, मिल गये तो द्वितीया वृत्तिके समय प्रकाशित कर दिये जॉयगे।

सूरि जीने स० १६५४ मे भी शत्रुंजय की यात्रा की थी एव वहा मोटी टुक (विमलवसही) के समक्ष सभा मण्डपमे दादा श्री जिनदत्त सूरि जी और श्री जिनकुशल सूरि जीकी पादुकाए प्रतिष्ठित की थीं। उन दोनोंके लेख सरीखे हैं अत पाठकोंके अवलोकनार्थ एक लेख यहा देते हैं —

सं० १६५४ वर्षे जेठ सुदि ११ रवौ दिने श्री बृहत्खरतरगच्छे श्री जिन कुशल सूरिजी पादुका श्री युगप्रधान श्री जिनचन्द सूरिभि प्रतिष्ठित च स० सोना पुत्र मन्ना जगदास पुत्र स० ठाकरसीह पुत्र सघवी सामल का० सपरिवारेण।

शत्रुंजय पर शिवा सोम जीकी टुकमे श्री जिनचन्द्र सूर जी और श्री जिनसिंह सूरि जीकी पादुकायें श्री जिनराज सूरिजीकी प्रतिष्ठित हैं, जिनके लेख क्रमश इस प्रकार हे —

संवत् १६८१ युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरिश्वराणा पादुके कारिते डोसी गोत्रीय स० फ० श्री कमललाभोपाध्याय प० लब्धिकीर्तिगणि प० राजहस गणि प० वा। मरुदेव विजयादि युतेन उ०(प?)देशेन तव श्रेयसे शुभ भवतु प्रतिष्ठित बृहत्खरतर गच्छाधिराज श्री जिनराज सूरिभि

स० १६७५ वर्षे वैशाख सुदि १३ शुक्रे कान्माराव (काश्मीराग्र ?) नार्य देश घोष विहारादि प्रचार पथार मारि प्रवर्त्तक सर्वविज्ञान नर्त्तकी नर्त्तक जहागीर नूरद्दीन पातिसाहि प्रदत्त युगप्रधान पद श्री जिनसिंह सूरीणा पादुके प्रतिष्ठिते श्री जिनराज सूरिभि सकल सूरि राजाधिराजै ॥

इनके अतिरिक्त और भी तत्कालीन अनेक विद्वानोंकी चरणपादुकाएं वहा प्रतिष्ठित हैं, जिनके प्रकाशित होनेसे वहुतसा इतिहास प्रकाशमे आ सकता है।

## उपसंहार—

सम्राट अकबरके दरबारमे श्रीमान् हीरविजय सूरिजी और श्रीजिनचन्द्र सूरिजीका अच्छा प्रभाव रहा है, जिनमे हीरविजय सूरिजीकी जीवनी तो कई वर्ष पूर्व ही खोज शोध द्वारा प्रकट

* सं० १६७४ में सूरि जीकी चरणपादुकाए जेसलमेरमें प्रतिष्ठित है। देखें जेसलमेर लेख संग्रह, लेखाक २६००

हो चुकी थी किन्तु ऐतिहासिक सामग्री विपुल प्रमाणमे न मिलनेके कारण श्री जिनचन्द्रसूरिजीकी जीवनी अभीतक प्रकाशमे नहीं आयी थी। श्री हीरविजय सूरिजीकी भांति इनकी चरित्र-सामग्री किसी बड़े ग्रन्थाकारमे प्राप्त न होकर "कर्मचन्द्र मन्त्रि वंश प्रबन्ध और रास द्वयके अतिरिक्त अन्य सभी अंग यत्रतत्र बिखरे पड़े थे, उनमे उपलब्ध सर्व साधनोंको एकत्र कर सम्पादन करना कितना कठिन और श्रमसाध्य कार्य है, इसे साहित्य-प्रेमी विद्वान् ही अनुभव कर सकतेहैं। यत —

विद्वानेव विजानाति विद्वज्जन परिश्रमम्।
नहि वन्ध्या विजानाति गुर्वीं प्रसव वेदनाम्॥

५ वर्षके अनुसन्धान और परिश्रमसे यह ग्रन्थ लिखा गया है और इसे सर्वाङ्ग सुन्दर बनानेका पूर्ण प्रयत्न किया गया है। उस कार्यमे हम कैसे और कहातक सफल हुए हैं, इसका निर्णय विज्ञ पाठकों ही पर निर्भर करते हैं। यद्यपि हमने लापरवाहीऔर प्रमादसे बचे रहनेमे पूर्ण लक्ष्य रखा है तथापि हमारा यह प्रथम प्रयास है, अत अनेकों त्रुटिया रह जाना सम्भव है। विद्वज्जन उनका संशोधन कर हमे सूचित करें, द्वितीयावृत्तिमे उनको दूर करनेका यथासाध्य प्रयत्न किया जायगा।

## आभार प्रदर्शन—

इस ग्रन्थके निर्माण करनेमें हमें अपने अनेक इष्ट-मित्रोंसे अनेक प्रकारकी सहायता मिली है, अतएव हम अपने समस्त सहायकोंके प्रति धन्यवादपूर्वक हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं। जैन-

साहित्यके धुरन्धर लेखक श्रीयुक्त मोहनलाल दलीचन्द देसाई B A. L L B (वकील हाईकोर्ट, बम्बई) का हम हार्दिक आभार मानते हैं कि आपने हमारे अनुरोधको तत्काल स्वीकार करके अनेक कार्यों-में व्यस्त रहते हुए भी हमे विद्वतापूर्ण विस्तृत प्रस्तावना* लिख भेजी। राजपूत इतिहासक अमर लेखक विश्व विश्रुत श्रद्धेय महामहोपाध्याय रायबहादुर पण्डित गौरीशंकरजी हीराचन्दजी ओझा महोदयने वृद्धावस्थामे शारीरिक अस्वस्थता होते हुए भी अपनी अमूल्य सम्मति प्रदान करके हमे अनुगृहीत किया है। हम यह नहीं जानते कि इन दोनो विद्वानोके लिये किन शब्दोमे कृत-ज्ञता प्रकाशित करे।

यह सूचित करते हमें अपार हर्ष होता है कि विद्वद्वर्य श्री लब्धि मुनिजी महाराजने इस ग्रन्थके आधारसे सूरिजीके चरित्रका संस्कृत काव्य रचना प्रारम्भ कर दिया है, एतदर्थ आप श्री कोटिश साधुवादके पात्र हैं।

विदुषी आर्या श्री प्रमोद श्री महाराजके उपदेशसे ग्रन्थ प्रकाशन होनेकेपूर्वसे ही आपकी स्वर्गीया गुरुवर्या श्री विमलश्रीजी महाराजकी पवित्रस्मृतिमें निःशुल्क वितरणार्थ ४०० प्रतियोको फलोधी संघने खरीद करनेका वचन देकर ग्रन्थके प्रचार एव प्रकाशनमे सहायता दी और हमे उत्साहितकिया। एतदर्थ हम आपका आभार मानते हैं।

---

* प्रस्तावनाका हिन्दी अनुवाद कर प्रकाशित करनेका विचार था, पर देसाइ महोदयकी उसे गुजराती भाषा नागरी लिपिमें प्रकाशित करने की सूचना होनेसे वसा ही किया गया है।

जैनोए देशनो इतिहास भंडार अने साहित्यनिधि साचवी राख्योछे, तेमानो घणोए अप्रगट पड्योछे, जैनोनी खुदनी तवारीख, तेना महान श्रावकोनी, प्रतिभाशाली आचार्योनी-साधुओनी, पवित्र तीर्थोनी, कलामय मंदिरोनी, गच्छोनी-सप्रदायोनी तवारीख अण-उकेली, सिलसिलाबध अणलखेली, छिन्न भिन्न दशामा, पण छूटक छूटक प्रचुर माहिती आपनारी घणी सामग्रीवाली स्थितिमा पडी छे, तेमाथी देशना प्रजाजीवनने लगती रस भरी हकीकतो पण खूब मली आवे तेम छे।

ए सौभाग्यनो विषय छे के वर्त्तमान युगमा अनेक बलो पैकी५ नु एक बल ते आपणा देशना प्राचीन इतिहास तथा संस्कृति ना प्रामाणिक अभ्यासमा उडा उतरवानी सत्यशोधक वृत्ति जन्मी चुकी छे। केवल कपोलकल्पित दंतकथाओने भरोसे रही आपणा भूतकालने महोज्वल मान्या करवानी, अथवा तो विदेशी या अन्य इतिहासकारोए करेली केवल उपरछला ६ सशोधनपर अवलंबीने आपणा अतीतनी हीणी गणना करवानी—ए बन्ने आदतो वच्चे आ तुलनात्मक सशोधन दृष्टि इष्ट कार्य साधनारी छे।

आवी वृत्तिए केवल देश अने प्रातनीज नहीं, पण एकेक प्राचीन नगरनी प्राचीनता तपासवानु शरु थयु छे अने ते उपरात देशवीरो—धर्मवीरोना जीवनचरित्र पण लखावा मंड्या छे ए आ जमानानु शुभ चिन्ह छे। आ पुस्तक एवो एक प्रयत्न छे।

---

५ शक्तियोंमेंसे, ६ ऊपरी, उपलक।

जैन तवारीखमां पुष्कल७ लेखन सामग्री उपलब्ध थइ शके छे, परन्तु तेमां जैनेतर लेखकोए चचु प्रवेश नथी कर्यो—ते प्रत्ये प्रयत्न करवानो कोइए संकल्प कर्यो होय तो ते सफल थयो नथी। आथी ते कार्य जैन लेखको, अधिकारीओ, शिक्षको, ग्रेज्युएटो अने साधुओपर आवे छे, कारणके तेमने जैन ग्रंथो अने सामग्रीनो विशेष परिचय करवानी अनुकूलता अने जोगवाइ मली शके छे।

एक विद्वान् लखे छे—'इतिहासने सर्जनारा तो गया, पण ए सर्जायेला इतिहासने एकठो करनारा ये नथी जागता। आपणीज माटीमां आपणा रत्नो दटाया। आपण पग नीचे चगदाया ८। एने वीणवा ९ माटे दरिया पारथी टॉड आव्या फार्बस अने वाट्सन आव्या, तेओ कइ राम इतिहास संशोधनने माटे नहोता नीमाया १० हाथमां सोंपायेला पातांनी हानेमी करताज तेओने आपणी प्रेमकथाओनो अने शौर्यवार्त्ताओनो नाद लाग्यो हतो। आपणा खंडेरोमां दटायेला भूतकालनो पोकार एने काने पड्यो हतो। घोडे चडी चडीने ए इतिहासना आगको पहोडोनी शिखरमालामां भटक्या। अखंड अने रोमांचक इतिहास आपीने आज एइतिहासना आगको कबरमां सूता छे अने एना लख्या-भाख्याना आज आपणे भाग्या तूट्या तरजुमा करीए छीए। आपणने-हिन्द मातानी तवारीखना मिथ्याभिमानी वारसदारोने—आपणामांथीज केम कोई टॉडके फार्बस न सांपड्यो? शौर्य तो परवार्यां पण शौर्यना पूजन--अरे स्मरण पण विसार्यां ?

'आज पण गोरा अमलदारो निर्जन, विकट, रोग भर्यां प्रदेशोमां

७ प्रचुर, ८ कुचलाये, ९ चुगने, १० नियुक्त हुए।

उलट भेर रहे छे—नदनवन सर्जे छे, अने कलम तथा केमेरो लईने पोताने वींटलायेली११ नानकडी१२ दुनियानो गाढतम परिचय करील्ये छे। कहो के पी जाय छे। हिन्दमांके हिन्दना कोई पण भागना सौराष्ट्र, गुजरात, मारवाड, मेवाड वगेरेना देशी अधिकारी बधुने आवी तालावेली१३ क्यारे लागशे? सौराष्ट्र, मेवाडनी भूमिने तो पोपडे पोपडे इतिहास वाझ्यो१४ होवानी आपणने जाण छे, गामे गामनो इतिहास आज अधिकारी भाइओने ठेबे१५ आवे छे। नवा युगनु शिक्षण पामेला नवयुवको हाकेमी भोगवी रह्या छे। कोई पुस्तक या मासिक वाटे मली आवती अमली शौर्य घटनाओने पण तेओ अत्यन्त जिज्ञासा साथ वाचे छे। तेओने जूनी तवारीख कहेनार मनुष्योने सामग्रीओ पण हाथ जोडी हाजर छे। मात्र तेओने तो कलम लईने ते बधु टाचण१६ करवानी वृत्ति थवानीज रहे छे। अधिकारीओ ए कर्त्तव्य उपाडील्ये तो एमनी पोतानी जिन्दगीमाज नवु तीवेल१७ रेडाय, पोताना पग तले नित्य चगदाती धरतीनी-महत्ताना दर्शन थाता ए पोतेज मानवताना रोमाच अनुभवी रहे। देशना इतिहास भूगोलपर आवा अजवाला पाथरवा१८ होय तो आ इतिहास विमुख अने अकिंचन भूमिना देशी अधिकारी वधुओनी सहाय बहु अगत्यनी छे।

आ दिशामा साची सुगमता जो होय तो ते प्रत्येक राज्योना केलवणी खाताने। तेमा सेकडे पोणोसो टका शिक्षको तो खचीत१९ आ वस्तुमा रस लेनारा रह्या। एने फुरसद घणी तेथी गामना

११ घेरे हुए, १२ छोटी, १३ उत्सुकता, १४ मिला हुआ, १५ स्कन्धपर १६ उतारा, सुव्यवस्थित लेखन, १७ तेल, १८ फैलाना, १९ सचमुच ।

दृद्यो, प्रमादीओने गप्पोटीओनो डायरो पनी ओसरी२० मा मले। एमाथी कटलु इतिहास-द्रव्य मले ?

आपणा युनीवर्सिटी नी परीक्षामा पसार थई वहार नीकलेला गेज्युएटो प्रमाद छोडी पोतानो जे काल फुरसद तरीके ओलखायछे तेनो सदुपयोग पोतानी भूमिनी माटीमा दटायेला वेमूल जवाहिरोने शोधी काढवामा, जे कोई वीरधर्मी नी भाल२१ लागे तेनी कथा-नोधी लेवामा गालशे, तो नूतन भूमि जन्मशे ने तेना यशोभागी पोते थशे।

आपणा मुनिओ तो दिवस ना चोवीसे कलाक सेवानु व्रत लई गामडे गामडे, शहेरे शहेर प्राते प्रात विहरनारा छे। ए अप्रतिबद्ध विहारी प्रवासीओ पोताना चातुर्मास समयमा एक स्थले स्थिरवासमा अने ते सिवायना आठ मासमा अत्र तत्र थोडा निवासमा ते ते क्षेत्रना मानव समाजनी, प्रकृति सौन्दर्यनी, धर्मजीवननी, वगेरे सर्वदर्शीय माहितीओ उपरात तेना इतिहास, कथाओ, पुरातन अवशेषो वगेरनी नोंधो सरल छता ममतोल, अने लागणीमय२२ छता विचारोत्पादक तमज आल्हादक शैलिमा पूरी पाडी शके तेम छे। तेओमा प्रमादक पर प्रत्ययनेय२३ वुद्धि होवाज न घटे, एवो तेमनो शिष्ट आचार छे। तेओ तरफथी आपणा घणा मनोरथो सफल थवानी आशा छे। तेओ धारेतो जैन साहित्यमा पूर्वाचार्योना लखेला ऐतिहासिक पुस्तको, ग्रन्थो, चरित्रो वहार पाडी शके एटलुज नहीं पण दरेक गामना

२० बैठकखाना, २१ शोध, २२ सजग, प्रयत्नमय, २३ दूसरेपर भरोसा करनेका विचार।

जिनमंदिरो, प्रतिमाओ, वगेरेना उत्कीर्ण२४ लेखो एकत्रित करी समग्र भारतमाना पूर्व जैनोना गौरव बतावी शके।

जेवी रीते देशभक्ति पेदा करवा माटे देशनो प्राचीन इतिहास शोधावो जोइए, तेवीज रीते धर्मप्रेम तथा धर्मगौरव ते ते धर्मना मूलपुरुषोना भव्यजीवन चरित्रो, ऐतिहासिक प्रमाणोवाला बहार पाडवाथीज जागे। एमा धार्मिक दृष्टि साथे ऐतिहासिक दृष्टि सकलायेली रहेवी जोइए२५। आवा प्रकारनो प्रयास आ जीवनचरित्र मा थयेलो छे।

धार्मिक पुरुषोना जीवन चरित्रो ए पण एक प्रकारनु लोकोपयोगी साहित्य छे। 'साहित्यमा कोमीतडा२६ पडे ए वधु मा वधु अनिष्ट वात छे' ए कथनमा रहेलु सत्य स्वीकार्य छे, अने ए लक्षमा राखी जैन के जैनेतर-कोई पण ऐतिहासिक साहित्यमा थी जैन के जैनेतर लेखके तेज साहित्यने वलगी२७ रहीने अन्य साहित्यनी उपेक्षा करवानी नथी, पण बन्ने साहित्यमा थी मलती हकीकतो मेलवी बन्नेने सत्य आकारमा तटस्थताथी अने व्यापक दृष्टि थी रजु२८ करवानी छे। जो के एम करवामा बधा लेखको शक्तिमान होता नथी, या सफल थता नथी, छता जे लेखक तरफ थी तत्कालीन साहित्यपर निष्पक्षपात दृष्टि राखी तेमाथी पोताना विषय पूरती सामग्री मेलवी ते कालनी बीनाओ२९ नो केवल एक शुभ अखंड अमिश्रित निर्देश थाय, ते लेखकने तेटले अंशे अभिनन्दन आपवु योग्य छे। आमा खास पले पले स्मरणमा राखवु आवश्यक छे के साम्प्रदायिक मोहके

२४ खुदे हुए, २५ चाहिये, २६ साम्प्रदायिक भेद, २७ चिपककर, २८ जाहिर करना, सामने रखना २९ हकीकतें।

कोमी दृष्टिने इतिहासनी चालणीमा चाली नाखवा जोइए—भट्टीमा गाली भस्म करवा जोइए। तेम थाय तोज सत्य देव नु आराधन थइ शकशे।

विक्रमनी पंदर सदी वीती गई अने सोलमीनो प्रारंभ थता हिंदना पाटनगर दिल्हीना सिंहासने सम्राट् अकबर विराज्यो अने तेना समयमा मोगलसत्तानो सूर्य पूर्ण-तेजथी प्रकाश्यो। ते सम्राट् अकबरने घणा धर्मोनी माहिती मेलवी ते सर्वमांथी उपयुक्त वस्तुओनी एकीकरण करी एक सर्व सामान्य धर्म काढवानी उत्कंठा थई, ते उत्कंठा तृप्त करवामाटे सर्वमांथी एक एवा जैन धर्मना त वखते विद्यमान आचार्य श्री हीरविजयसूरिने पोतानी पासे बोलावी तेमनी साथे मन्त्रणा करी। श्री हीरविजयसूरिए श्वेताम्बर जैनना तपागच्छना आचार्य हता, अने तेमणे जैन धर्मना महात्म्यनी प्रथम झांखी सम्राट् अकबर-ने करावी। आ आचार्यनु जीवन गुजराती भाषामा आलेखवानो सबल अने सफल प्रयत्न मुनि श्री विद्याविजयजीए 'सूरीश्वर अने सम्राट्' ए नामना पुस्तक रूपे करेलो, ते सं० १९७६ मा प्रथम प्रकट थयो, ( के जेनो हिंदी अनुवाद पण त्यार पछी तेमणे बहार पाड्यो ) त्यारे पन्दर वर्षे—सं० १९९१ मा—तेज सम्राट् अकबरने थयेला परिचयनी ज्योत आलशी३० राखवामा सहायक खरतरगच्छ ना आचार्य श्रीजिनचन्द्रसूरिनु जीवन हिंदी भाषामा लखी प्रकट कर-वानो सफल प्रयास बीकानेरना प्रसिद्ध नाहटा कुटुम्बना वंशजो श्रीयुत अगरचन्द अने भवरलाल नाहटा तरफथी थयोछे ते जोई खरेखर आनन्द थाय तेम छे।

---

३० सभालने।

श्री हीरविजयसूरिनी प्रतिष्ठा अने गौरव जेटला तपा गच्छमा छे तेटला प्रतिष्ठा अने गौरव श्री जिनचन्द्रसूरिना खरतर गच्छ मा होय ते स्वाभाविक छे।

खरतरगच्छ ए तपागच्छ थी प्राचीन छे। तपागच्छनी उत्पत्ति जगच्चन्द्र सूरिए बहु तप कर्यो तेथी तेमने 'तपा' ( एटले तपस्वी ) ए बिरुद, कहेवाय छे के, मेवाडना ते वखत ना पाटनगर आघाट नगर-ना राणाए सं० १२८५ मा आप्यु, ते परथी ते सूरिनी शिष्य परम्परा नो गच्छ 'तपा' नामथी प्रसिद्ध थयो, ज्यारे खरतर गच्छनी उत्पत्ति गुजरातना पाटनगर अणहिलपुर पाटणमा दुर्लभसेन (राज) राजानी सभामा श्री जिनेश्वरसूरिए चैत्यवासी जैन साधुओनो आचार शास्त्र समत नथी एम बतावी आपी 'खरतर' ( विशेष प्रखर-उग्र आचारवाला ) बिरुद प्राप्त कर्यु। ए परथी ते सूरिनो शिष्य-परम्परा खरतर गच्छना नामे ओलखावा लागी एम, जणावतामा आवे छे।

पाटणनी गादीपर गुर्जरराज दुर्लभराजे स० १०६६ थी १०७८ एम बार वर्ष राज्य कर्यु, एम मेरुतुङ्गसूरिनी विचारश्रेणी-स्थविरावलीमा, तेमज राजावलीकोष्टकमा जणाव्यु छे अने ते श्रीमान् ओझाजीए अने अन्य इतिहास-कारोए स्वीकारेल छे। ज्यारे खरतर गच्छना केटलाक, उपर्युक्त बनाव बन्यानो सवत १०८०, तो कोइक १०२४ आपे छे एम खरतर गच्छ पट्टावली सग्रह (सग्राहक —श्री जिनविजयजी, प्रकाशक बाबू पूरणचन्द नाहर) परथी अने अन्य पट्टावली परथी जणाय छे।

(१) सं० १५८२ मां थयेली खरतरगच्छ-सूरिपरम्परा-प्रशस्ति मां जणाव्युं छे के —

तत्पट्ट पङ्केरुह राजहंसा जैनेश्वरा सूरि शिरोवतंसा ।
जयन्तु ते ये जिनशैवशासन श्रुतप्रवीणा भवपाशमक्षिपन् ॥३७॥
श्री पत्तने दुर्लभराज राज्ये विजित्य वादे मठवासिसूरीन् ।
वर्षेऽब्धिपक्षाभ्रशशिप्रमाणे लेभेऽपि ये खरतरो बिरुद युग्मम् ॥३८॥

अर्थ—ते ( वर्द्धमान सूरि ) ना पट्टकमल पर राजहंस रूप जिनेश्वर सूरि मस्तकना आभूषण थया के जेमणे जैन शैव शासनना शास्त्रोमां प्रवीण होइ भवपाशने फेंकी दीधो तेओ जय पामो । श्री पत्तनमां दुर्लभराजना राज्यमां मठवासी आचार्योने वादमां जीती जेमणे सं० १०२४ ना वर्षमां 'खरतर' नामनुं बिरुद युग्म (? एकज) बिरुद पण मेळव्युं ।

आ प्रशस्तिमां जणावेली सं० १०२४ नी सालने एक संवत् १६७५ आसपासनी खरतर पट्टावली 'दस सय चिहु वीसेही' एटले सं० १०२४ मां ।

'सुविहित गच्छ खरतर बिरद, दुल्लभ नरवई तिहां दियउ ।
श्री वर्धमान पट्टइ तिलउ, सूरि जिणेसर गह गह्यउ' ॥

एम कही टेको आपे छे । पण आ पुस्तकना लेखक नाहटाजी 'दस सय चिहु वीसेहीं' एनो अर्थ दशसो अने चार वीस एटले ८०मी एवो करे छे ते खरेखर हुशियारी बतावनारो (ingenious ) छे ।

(२) खरतर गच्छीय मुनि क्षमाकल्याणनी सं० १८३० नी खरतर गच्छनी पट्टावलीमां एवुं कथेलुं छे —

××एव सुविहित पक्ष धारका जिनेश्वर सूरयो विक्रमत १०८० वर्षे 'खरतर' विरुद्र धारका जाता ।

अने ते समयमा लखायेली बीजी पट्टावलीमा पण ते सूरिमाटे एम जणावेलु छे के 'सवन् १०८० दुर्लभराज सभाया ८४ मठपतीन् जीत्वा प्राप्त खरतर विरुद ।'

आमा त्रण हकीकत आवे छे —[ १ ] पाटणमा जिनेश्वर सूरिए दुर्लभराजना राज्यमा तेनी राज्यसभामा मठवासीने हराव्या [ २ ] ते जय थी 'खरतर' विरुद तेमणे मेलव्यु [ ३ ] ते घटना स० १०२४ मा के स० १०८० मा बनी । आ त्रणेना सम्बन्धमा विशेष प्राचीन प्रमाणो केवा प्रकारना मले छे ते जोइए ।

उक्त जिनेश्वर सूरिना पट्टधर जिनचन्द्र सूरिना शिष्य प्रसन्नचन्द सूरिना शिष्य सुमति वाचक ना शिष्य मुनि गुणचन्द्रे महावीरचरिय प्राकृत भाषामा स० ११३९ मा [ श्री हेमचन्द्रसूरिना त्रिषष्टिशलाकापुरुष—चरितना दशमा पर्वमा आवेल सस्कृतमा महावीरचरित्र रचायु ते पहेला ] रची पूर्ण कर्यु तेमा छेल्ली प्रशस्तिमा कह्यु छे के —वर्धमान सूरिने वे शिष्य हता । प्रथम जिनेश्वर सूरि अने बीजा बुद्धिसागर सूरि, अने

बोहित्थोव्व समत्थो सिरि सूर जिणेसरो पढमो ।
गुरुसाराओ धवलाओ खरय(र) साहु संतइ जाया ॥
[ पाठातर ] गुरु साराओ धवलाओ निम्मल साहु सन्तइ जाया ॥
हिमवताओ गगुव्व निग्गया सयल जण पूज्जा ।
अण्णो य पुण्णिमा चन्द सुन्दरो बुद्धिसागरो सूरी ॥
[ पीटर्सन रिपोर्ट, ३,३०६ पी० ५,३२ ]

अर्थ—प्रथम शिष्य जिनेश्वर सूरि बुद्धिमान समर्थ हता, ते धवल गुरुना सारमाथी खरतर [ पाठातर-निर्मल ] साधु सन्तति थई। जेम हिमवन्तमा थी सकल जनने पूज्य एवी गङ्गा नीकली तेम, बीजा शिष्य ते पूर्णिमा ना चन्द्र जेवा सुन्दर बुद्धिसागर सूरि थया।

[ आ ग्रन्थ शेठ देवचन्द लालभाई जैनपुस्तकोद्धार—फण्डना ग्रन्थाक ७५ तरीके प्रकट थई गयो छे तेमा उपरनी गाथामा खरयरने बदले सुविहिया [ निम्मला पु० ] एम छापलु छे ]

उक्त जिनेश्वर सूरिना शिष्य नवागी वृत्तिकार अभयदेव सूरिना शिष्य प्रसन्नचन्द्र सूरिना शिष्य देवभद्रसूरिए प्राकृतमा पार्श्वनाथ चरिय स० ११६८ [ वसु रस रुद्र ] ना वर्षमा रच्यु तमा प्रशस्तिमा स्पष्टलु जणाव्यु छे के

तस्सासि दोन्नि सीसा जय [ ग ] विक्खाया दिवायर ससिव्व।
आयरिअ जिणेसर बुद्धिसागरायरिय नामाणो ॥

[ पी० ३,६४ ]

अर्थ—ते [वर्द्धमान सूरि] ना जयथी (जग मा) विख्यात थयेला सूर्य अने चन्द्रमानो जेवा [ अनुक्रमे ] बे शिष्य-आचार्य जिनेश्वर अने बुद्धिसागर आचार्य ए नामना थया ॥

[ आ ग्रन्थ ने जेसलमेर जैन भाण्डागारीय ग्रन्थाना सूचीपत्रम मा ग्रन्थाङ्क २६६ तरीके मात्र नाम आपी ७७६ पत्रो जणावी ताड-पत्रीय प्रत तरीके नोधेल छे। तेमा उपली गाथानी बीजी पक्ति नीचे प्रमाणे छे एम श्रीयुत नाहटाजीनु कहेवु थाय छे —

आयरिय जिणेसर बुद्धिसागर खरयरा णाया।

एटले खरतर [ विरुद ] थी ज्ञात थयेला आचार्य जिनेश्वर अने बुद्धिसागर-एम तेमा 'खरतर' शब्द मूकेलो छे। ]

स० ११७० मा लिखित कवि पाल्हे अपभ्रंश मा करेली खरतर पट्टावली के ज 'अपभ्रंश काव्यत्रयी' ना परिशिष्टमा पृ० ११० थी ११२ मे आपी छे तेमा कहेल छे के —

देवसूरि पहु नेमिचन्दु बहुगुणिहिं पसिद्धउ।
उज्जोयणु तह वद्धमाणु खरत(?)र वर लद्धउ॥
सुगुरु जिणेसरसूरि नियमि जिणचन्दु सुसंजमि।
अभयदेउ सव्वगु नाणि जिणवल्लह आगमि॥
जिणदत्त सूरि ठिउ पट्टि नहि जिण उज्जोइउ जिणवयणु॥
सावइहिं परिक्खिवि परिखिरिउ सुहि महग्घउ जिण रयणु॥

आमा खरतरनो वर जेणे लब्ध कर्यो छे ते विशेषण सामान्य-रीते उद्योतन पछी थयेल वर्द्धमानने लागु पडे, पण ते सुगुरु जिने-श्वरसूरिने लगाडवानु छे।

उपर्युक्त जिनेश्वरसूरिना जिनचन्द्रसूरि अने अभयदेवसूरि ते-मना जिनवल्लभसूरि अने तेमना पट्टधर जिनदत्त सूरि [ आचार्य पद स० ११६९ स्व० १२११ ] कृत 'सुगुरु पारतन्त्र्यम्' मा उक्त जिनेश्वरसूरि सम्बन्धी एवु दर्शाव्यु छे के —

---

* यह पट्टावली हमारी ओरसे प्रकाशित होनेवाले ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह (पृ० ३६९ से ३६८) मे छप चुकी है। —( लेखक )

पुरओ दुरल्लह महिवल्लहस्स अणहिल्लवाडए पयड ।
मुक्का वि वारिऊग सीहेण व दव्व लिंगि गया ॥१०॥
दस मच्छेर व निसि विप्फुरन्त सच्छन्द सूरि मय तिमिर ।
सूरेण व सूरि जिणेसरेण हयमहिय दोसेण ॥११॥

अर्थ—अणहिल्लवाडामा दुर्लभ नृपनि पास 'द्रव्य लिंगी रुपी गजो, सिंहनी पेठे विदारी नाख्या अने दशम। अच्छेरा [ आश्चर्य ]' रूपी रात्रिमा फेलायेल स्वच्छन्द रूपी सूरिना मत रूपी अधार' जेणे सूर्यनी पेठे टाली नाख्यु एवा निर्दोष जिनेश्वर सूरि ।

तेज जिनदत्त सूरि वली पोताना गणधरसार्द्धशतक मा उक्त जिनेश्वर सूरि सम्बन्धी विशेष जणावे छे के —

तेसिं पय पउम सेवारसिओ भमरव्व सव्व भम रहिओ ।
समसय-परसमय पयत्थ वित्थारण समत्थो ॥६४॥
अणहिल्लवाडए नाडड व्व दसिय सुपत्त सन्दोहे ।
पउर पए बहु कविदूसगे य सन्नाण गाणु गए ॥६५॥
सड्ढिय दुरल्लह राए सरसइ अंकी व सोहिए सुहए ।
मज्झे रायसहं पविसिऊण लोयागमाणु मय ॥६६॥
वसइहिं निवासो साहूण ठविओ ठाविओ अप्पा ॥६७॥
परिहरिय गुरु कमागय वर वत्ता ए वि गुज्जरत्ताए ।
वसहि निवासो जेहिं फुडीकओ गुज्जरत्ताए ॥६८॥

—तेमनो [ वर्धमान सूरि ना ] पद कमलनी सेवामा रसिक एवा भमरनी पेठे सर्व भ्रमथी रहित, स्वसमय अने पर समय [ शास्त्र ] ना पदार्थ जेणे अर्थ सहित विस्तारेला एवा समर्थ [ जिनेश्वरसूरिए

अणहिल्लवाडामा नाटकमा जेम छे तेम सुपात्रना सन्दोह जेगे देखाड्या छे एवा, प्रचुर प्रज, वहु कवि दूषक, सन्नायक ने अनुगन एवा ऋद्धिमान्-राजा दुर्लभराज सरस्वनी अकथी उपशोभित, सुराज अने सुभग राज्य करता सता तेनी लोकागमने अनुमत एवी राज्यसभामा प्रवेश करीने विचारहीन एवा नामना आचार्यो साथे विचार-विवाद करीने साधुओनो निवास वसतिमा होवो जोइए ए स्थापित कर्यु अने गुरु क्रमथी चाली आवेली वात जेणे तजी-दीधी हती एवी गूर्जरत्रा [ गुजरात ] मा पण जेमणे वसति निवास ते गूर्जरत्रामा स्फुट कर्यो।

( गुजरात ए शब्द जे 'गूर्जरत्रा' शब्दमाथी फलित थयु मनाय छे ते 'गूर्जरत्रा' बारमी सदी जेटलो तो जुनो छेज ए आ अवतरण परथी सिद्ध थाय छे )

उक्त जिनेश्वर सूरिए रचेला पचलिंगी प्रकरण पर उक्त जिनदत्त-सूरिना पट्टधर जिनचन्द्रसूरिना पट्टधर जिनपति सूरिए [ सूरिपद स० १२२३ ने स्व० स० १२७७ वच्चे ] वृत्ति रचता तेनी आदि-माज कहेल छे के —

इह गूर्जर वसुधाधिप श्री दुर्लभराज सभा सभ्य समाज महा वादि चैत्यवासि कल्पित जिन भवनवास समासादित विस्तृवर कीर्त्ति कर्पूरपूर सुरभित त्रिभुवन भवनाभोग श्री जिनेश्वर सूरि विरचित पचलिंगयाख्य प्रकरणस्य ( पी० ३ पृ० २५० )

—आ गूर्जर भूमिना राजा श्री दुर्लभराजनी सभामा सभ्य समाजमा महावादी चैत्यवासी ना कल्पित जिन मन्दिरमा वासने

निर्मूल करीने जेनी कीर्त्तिरूपी कर्पूर थी सुगन्धित थयेल त्रिभुवन रूपी भवन छे एवा श्री जिनेश्वर सूरिना रचेल पर्वलिंगी नामना प्रकरणनी ।

तेज भावार्थनु उक्त जिनपति सूरिए संघपट्टकनी विवृत्तिना प्रारम्भमा जिनेश्वर सूरि सम्बन्धे कह्यु छे। जुओ अपभ्रंश काव्य-त्रयी नी पण्डित श्री लालचन्द भाई नी प्रस्तावना पृष्ठ १०।

पूर्णभद्रे सं० १२८५ ( के जे वखतनी आसपास तपागच्छना स्थापक जगच्चन्द्रसूरिए तप वडे 'तपा' नामनु बिरुद प्राप्त कर्यु ) मा धन्नाशालिभद्र चरित्र रच्यु छे तेनी प्रशस्तिना जणाव्यु छे के —

श्रीमद् गूर्जरभूमि भूषण मणौ श्रीपत्तने पत्तने
श्रीमद् दुर्लभराज राज पुरतो यश्चैत्यवासिद्विपान् ।
निर्लोड्यागम हेतु युक्ति नखरैर्वास गृहस्थालये
साधूना समतिष्ठपन मुनि मृगाधीशोऽप्रधृष्य परै ।
सूरि स चान्द्रकुल मानस राजहंस
श्रीमज्जिनेश्वर इति प्रथित पृथिव्या ।

श्री भरेली गूर्जर भूमिना आभूषण मणि रूप श्रीपत्तन नामना शहेरमा श्रीमद् दुर्लभराज राजानी आगल जेणे चैत्यवासी रूपी हाथीने आगमहेतु युक्त रूपी नखथी पराजित करीने अन्यथी साधा न जाय तेवा जे मुनि रूपी सिंहे गृहस्थनी मालेकीनो जगाए साधु-ओए वास करवो जोइए एम स्थापित कर्यु एवा चन्द्रकुल रुप मानसरोवर ना राजहंस रूपी सूरि श्रीमद् जिनेश्वरसूरि पृथ्वीमा प्रसिद्ध थया।

सं० १२९५ मा उक्त जिनपति सूरि शिष्य सुमति गणिए उपर्युक्त गणधर सार्द्ध शतक पर बृहद्वृत्ति रची छे तेमाथी जिनेश्वर जिनेश्वर सूरिनु विशेष चरित्र मली आवशे, ते आखी वृत्ति ऐतिहासिक विगतोनो भंडार छे छता ते प्रगट थई नथी ए दुर्भाग्यनो विषय छे। उक्त जिनेश्वरसूरिना लीलावती तथा काव्य नो उद्धार थता छेवटे लखेलछे के —

"इति श्री वर्द्धमानसूरि शिष्यावतंस—वसतिमार्ग प्रकाशक प्रभुश्री जिनेश्वर सूरि विरचित—प्राकृत श्री निर्वाण लीलावती कथेति वृत्तोद्धारे लीलावती सारे जिनांके ( जेसलमेर सूचीपत्र ४३ अंक ३४७ )"

उपरना प्रमाणो जिनेश्वर सूरिनो शिष्य परम्परामाना जोया, हवे आपणे तेथी भिन्न परम्परामानु एक स्वतन्त्र प्रमाण लईए ते चन्द्रगच्छमाथी पछीथी थयेल राजगच्छना धनेश्वर सूरि, अजित-

---

* इसी वृत्तिके अन्तर्गत प्रकरण ( श्रीवर्द्धमान सूरिजीसे श्रीजिनदत्त सूरिजी तकका ऐतिहासिक चरित्र ) प्रकाशित हो चुका है और उसका भावान्तर भी श्रीजिनकृपाचन्द्र सूरि ज्ञान-भण्डार इन्दौरसे प्रकाशित हो चुका है। उक्त वृत्तिमें खरतर विरुद प्राप्ति विषयक उल्लेख इस प्रकार है —

"किं बहुनेत्थ वाद कृत्वा विपक्षान्निर्जित्य राजामात्य श्रेष्ठि सार्थवाह प्रभृति पुर प्रधान पुरुषै सह भट्टचट्टेषु वसति मार्ग प्रकाशन यश पताकायमान काव्य रत्नान् दुर्जन जन कर्णशूलान् साटोप पठत्सु सत्सु प्रविष्टा वसतौ प्राप्त खरतर विरुदा भगवन्त श्रीजिनेश्वर सूरय एव गुर्जरत्र देशे श्रीजिनेश्वर सूरिणा प्रथम चक्रे",

( गणधर सार्द्ध शतकान्तर्गत प्रकरणम् पृ० ११ )

( लेखक )

सिंह-शालिभद्र-श्रीचन्द्र-जिनेश्वरगणि-पूर्णभद्र—चन्द्रप्रभ सूरि शिष्य प्रभानन्द सूरिए प्रभावक चरित्र संस्कृत काव्यमा संवत् १३३४ मा रच्युं छे तेमा आपेला जिनेश्वर सूरिना शिष्य अभयदेवसूरि के जेमणे नव अंगोपर संस्कृत वृत्तिओ रचीछे तेना चरित्रमाथी नीचेनी हकीकत मली आवेछे —

'भोजना राजत्व कालमा धारानगरीमां वसता लक्ष्मीपति नामे श्रीमन्तने त्यां रहेला मध्यदेशना व विद्वान युवान व ब्राह्मण पुत्रो श्रीधर अने श्रीपतिए आचार्य वर्धमान सूरि पासे दीक्षा लीधी अने तेओ जिनेश्वर अने बुद्धिसागर नामथी प्रसिद्ध थया।'

'आ वखते पाटणमा चैत्यवासीओनु प्राबल्य हतु, ते एटला सुधी के तेमनी सम्मति सिवाय सुविहित साधु पाटणमा रही शकता नहोता. आचार्य वर्धमान सूरिए पोताना शिष्य जिनेश्वर सूरि अने बुद्धिसागरने त्यां मोकलीने पाटणमा सुविहित साधुओनो विहार अने निवास चालु कराववानो विचार कर्यो अने पोताना उक्त बन्ने शिष्योने× पाटण तरफ विहार कराव्यो। ते बन्ने पाटणमा गया पण त्या तेमने उतरवा माटे उपाश्रय मल्यो नहि, वधे फरीने तेओ त्याना सोमेश्वर नामना पुरोहितने त्या गया अने पोतानी विद्वत्तानो परिचय आपी तेना मकानमा रह्या ज्यारे चैत्यवासीओने ए समाचार मल्या तो पोताना नियुक्त पुरुषोद्वारा तेमने पाटण छोडी जवा जणाव्युं,

× सं० १२९५ रचित गणधरसार्द्धशतक बृहद्वृत्तिमे वर्द्धमान सूरिजी भी पाटण साथ ही पधारे थे और राजसभामें भी साथ थे, स्पष्ट उल्लेख है।

(लेखक)

पण पुरोहिते कह्यु के आ बाबतनो न्याय राजसभामा थशे। आथी चैत्यवासीओए राजानी मुलाकात लीधी ने वनराजना समयथी पाटणमा स्थपायेल चैत्यवासीओनो सार्वभौम सत्तानो इतिहास समजाव्यो, जे परथी पाटणनो नृपति दुर्लभराज पण लाचार थयो अने पोताना उपरोध थी ए साधुओने अहीं रहेवा देवा माटे आग्रह कर्यो के जे वात चैत्यवासीओए मान्य करी।

'ए पछी पुरोहिते सुविहित साधुओना उपाश्रय माटे राजाने प्रार्थना करी। राजाए ए कामनी भलामण पोताना गुरु शैवाचार्य ज्ञानदेवने करी, जे उपरथी भात बजारमा योग्य जमीन प्राप्त करीने पुरोहिते त्या उपाश्रय कराव्यो, त्यार पछी सुविहित साधुओने माटे वसतिओ थवा माडी।'

"जिनेश्वर सूरि ज्यारे पहेलीवार पाटणमा गया त्यारे पाटणमा दुर्लभराजनु राज्य होवानु आ प्रबन्धकार लखे छे। (ज्यारे उपर बताव्या प्रमाणे) जिनदत्त सूरि आदि खरतर गच्छीय आचार्यो पण गणधरसार्द्धशतक आदिमा ते वखते पाटणमा दुर्लभ राजनु राज्य बताने छे, पण खरतरगच्छ वालाओ ए प्रसङ्ग (स० १०२४ के स० १०८० कोई) १०८४* मा बन्यानु लखे छे ते बराबर लखातु नथी, कारणक (१०२४ मा मूलराजनु राज्य हतु अने स० १०८० मा के) स० १०८४ मा पाटणमा दुर्लभराज नु राज्य नहीं पण भीमदेवनु राज्य हतु।"

—इतिहास-महोदधि साक्षर मुनि श्रीकल्याणविजयजी नी
प्रभावक चरितना गु० भापा० नी प्रस्तावना।

---

* सवत् १०८४ नु प्रमाण कोइए आप्यु होय एथी अमे अज्ञात छीए, छता मुनि श्रीकल्याणविजयजी जेवा इतिहासज्ञ ते आपे छे तो तेनु प्रमाण ते जणावशे।

तत्कालीन प्राचीन प्रमाणथी जिनेश्वरसूरिने 'खरतर' ए बिरुद मल्यु अने ते मल्यु तो अमुक वर्ष मा मल्यु ए शोधी काढी बतावरा मा ऐतिहासिक सशोधकोए प्रयास सेववा योग्यछे। आ विषय पर लेखक महाशयने स० ११७० नी लखेली पट्टावली× जोवा मली छे तेमा जिनेश्वरसूरिने 'खरतर' बिरुद मल्यानो स्पष्ट उल्लेखछे अने ते विषय पर विशेष विचार लेखक महाशय एक स्वतन्त्र निबन्ध रूपे प्रगट करशे एम पृ० ११ नी टिप्पणमा पोते जणावे छे, तो आ निबन्ध प्रगट थये विशेष प्रकाश पडवानी आशा रहे छे।

बृहत् खरतर गच्छनी पट्टावली मा श्रीमान् प्रभु महावीर थी उक्त जिनेश्वर सूरिनु स्थान ४० मु छे, त्यार पछी तेनी पट्ट परम्परा मा प्रस्तुत पुस्तकना नायक छट्ठा जिनचन्द्रसूरिनु स्थान ६१ मु छे। *

नायकना चरितमा बीकानेरना मन्त्री कर्मचन्द्र अगत्यनो भाग भजवे छे। तेमना द्वारा सम्राट् अकबर साथे मेलाप-परिचय, जीव-वधत्याग-अमारिना फरमान, शाहजादा सलीम तथा अमीर उमराव साथे पिछान, सलीम पादशाह थता तेणे साधुओ प्रत्ये तिरस्कार थी—काढेल हुकमनु रद करावनु वगेरे अनेक बीनाओथी नायकनु चरित्र रसभर्यु अने माहितीवालु छे। तेने योग्य न्याय आपवा-

---

× यह वही पट्टावली है जिसका अवतरण देशाइ महोदयने हमारी सूचनानुसार पृ० ४२ में दे दिया है।

* पट्टा नम्बर ४०-६१ क्षमाकल्याण कृत पट्टावलीके अनुसार है। अन्य पट्टावलियोंमें नम्बरोंमें कमी बढती भी है। (लेखक)

माटे लेखक महाशये घणी महेनत लई तत्कालीन साहित्यमांथी घणी विगतो एकठी करी तेने अनुक्रममा सरल अने रुचिकर भाषामां प्रयोजी एक सत्य जीवनचरित आलेखी प्रकट कर्युं छे। ते माटे लेखक महाशयने अभिनन्दन घटे छे।

कर्मचन्द्र मन्त्री सम्बन्धी, गुणविनय उपाध्यायकृत 'कर्मचन्द्र मन्त्री प्रबन्ध' गुजराती पद्यमां सं० १६५५ मा रचेलो बहार पड्यो ते परथी आपणे जाणता थया हता अने मुनि श्री विद्याविजयजीए 'सूरीश्वर अने सम्राट्'मा पृ० १५३-५४ पर टुकमा हकीकत जणावी छे। पण ते गुजराती प्रबन्ध ते गुणविनयनाज गुरु जयसोम उपाध्याये संस्कृतमां सं० १६५० मा अकबरना राज्य दिन थी ३८ मा वर्षे लाहोरमां प्रबन्ध रच्यो हतो, तेना परथी गुणविनये कर्यो हतो अने ते संस्कृत प्रबन्ध पर तेज गुणविनये संस्कृतमा व्याख्या सं० १६५६ मा श्री तोसामपुरे कर्मचन्द्र मन्त्रीना आग्रह थी रची पूरी करी हती ते प्रसिद्ध इतिहास रसिक श्रीमान् पूरणचन्दजी नाहर M, A, B L पासेथी मने प्राप्त थई हती अने ते परथी तेमज श्रीयुत उमरावसिंहजी टाक ना अंगरेजी चरितमांथी हकीगत लईने अनुक्रमे मारा 'जैन साहित्यनो संक्षिप्त इतिहास' नामना पुस्तकमा पारा ८३६ थी ८४४ मा तेमज मुनि श्री जिनविजयजी सम्पादित जैनऐतिहासिककाव्यसंचय नी प्रस्तावनामां मे विशेष हकीकत आपीहती [ ते संस्कृत मूल प्रबन्ध 'कर्मचन्द्र वंशोत्कीर्त्तनक काव्यम्' ए नामे रायबहादुर गौरीशंकर ओझाजीए सम्पादित करी हिन्दी अनुवाद सहित सन् १९२८ मा छपाव्योछे, पण हजु सुधी जनता समक्ष प्रकट

थयो नथी, वली खरी उपयोगी तेना उपरनी गुणविनयकृत सस्कृत टीका हजु सुधी छपाई नथी ए दुर्भाग्यनो विषयछे। जुओ जैन युग पुस्तक ५ पृ० ४६० थी ४६४ ]

लेखक महाशयोए विशेष शोध खोल करी उक्त कर्मचन्द्र मन्त्रीना जीवन अने वशजनु विश्वसनीय चित्र रजु कर्यु छे ते माटे तेओ धन्यवादने पात्र छे।

सम्राट् अकबरने जैन साधुओथी आछो आछो परिचय स० १६३६ पहेला थयो हतो, पण तेना पर प्रबल अविचल अने व्यापक असर करनार जैन तपागच्छना आचार्य श्री हरिविजयसूरि हता ए निर्विवाद छे, अने पछी ते असर कायम राखनार तेमनु शिष्य मण्डल विजय-सेनसूरि, भानुचन्द्र आदिनु हतु। तेनु एकज दृष्टान्त बस थशे के अकबरना मित्र अने मन्त्री जेवा विद्वान अबुलफजले उर्दु भाषामा लखेला 'आइन-इ-अकबरी' नामना प्रसिद्ध पुस्तक परथी जणायछे के 'अकबरे पोतानी धर्मसभाना सभ्योने पाच विभागमा विभक्त कर्या हता, ते बधामा मलीने कुल १४० सभ्यो हता। पहेला वर्गना २१ सभ्यो छे, तेमा प्रथमना बार नामो मुसलमानोना छे अने १६ मु नाम हीरजी सूर (हीरविजय सूरि) नु छे, ने पाचमा वर्ग मा विजय-सेन अने भानुचन्द्रने मूकेला छे।

आ रीते जैनोमाथी त्रण प्रसिद्ध व्यक्तिओ बधी तपागच्छ ना साधुओ अकबर नी धर्मसभा ना सभ्यो तरीके मूकायेला छे, परन्तु खरतरगच्छना आचार्य जिनचन्द्रसूरि के अन्य प्रसिद्ध व्यक्ति तेमा दाखल करेली नथी। अबुल फजलनु नयू मलीमे ( जहागीरे )

सन् १६०२ नी १२ मी ऑगष्टे ( स० १६५९ मा ) कराव्यु , ज्यारे तेना मरण पहेला दश वर्षे जिनचन्द्र सूरिने स० १६४६ मा लाहोरमा युगप्रधान पद मल्यु ने अकबर बादशाहनी साथे तेमनो अने तमना शिष्य जिनसिंह सूरिनो विशेष परिचय थयो, छता ते बन्नेमा थी एकेनो तेमज समयसुन्दर आदि विद्वान् व्यक्तिनो पण समावेश आइन-इ-अकबरीमा करवामा आव्यो जणातो नथी ।×

श्रीमान् जिनविजयजी प्राचीन शिलालेख सग्रहना बीजा भागमा पोताना अवलोकन पृ० ३६ मा कथे छे के —

---

× आइन-इ-अकबरीमें चाहे उल्लेख न मिले पर उससे भी अधिक महत्व का उल्लेख अष्टान्हिका फरमान पत्रमें है, सम्राट् अकबर स्वय जिनचन्द्रसूरिजी का प्रभाव इस प्रकार व्यक्त करते है —

"इससे पहले शुभ चिन्तक तपस्वी जिनचन्द्रसूरि खरतर, हमारी सेवामें रहता था । जब उसकी भगवद्भक्ति प्रकट हुई तब हमने उसको अपनी बडी बादशाहीकी महरबानियोंमें मिला लिया ।" ( इसी ग्रन्थके पृष्ट २७८ )

श्रीजिनसिंह सूरिजीका उल्लेख भी सम्राट अकबर और जहागीर दोनों इस प्रकार करते हैं —

इन दिनों आचार्य जिनसिंह उर्फ मानसिंहने अर्ज कराई कि पहले जो ऊपर लिखे अनुसार हुक्म हुआ था वह खो गया है, इसलिये हमने उस फरमानके अनुसार नया फरमान इनायत किया है । ( उक्त फरमान पत्र पृ० २७९ )

इन सेवडोंके दो पन्थ है । एक तपा दूसरा करतल (खरतर)। मानसिंह ( जिनसिंह सूरि ) करतलोका सरदार था और बालचन्द्र ( भानुचन्द्र ? ) तपोका, दोनो सदा स्वर्गवासी श्रीमान् ( अकबर ) की सेवामें रहते थे ।

( जहागीर नामा ) लेखक

'सं० १६३६ थी १६६० सुधी अकबरने जैन विद्वानोनो सतत सहवास रह्यो, तेमा प्रथमना दश वर्षोमा तपागच्छनु अने पछीना दश वर्षमा खरतरगच्छनु विशेष वलण हतु एम कहेवामा कांई हरकत नथी, परन्तु साथे एटलु तो अवश्य कहेवु ज जोइए के खरतरगच्छ करता तपागच्छने विशेष मान मल्यु हतु। अने बादशाह पासेथी सुकृत्यो पण ए गच्छवालाओए अधिक कराव्या हता।'

लेखके हीरविजयसूरि सम्बन्धी टु क उल्लेख पृ० ६४ उपर करी तेमनु सविशेष चरित जोवा वाचकने 'सूरीश्वर अने सम्राट्' ए पुस्तकनो हवालो आपी दीधो छे।

तपागच्छाचार्य हीरविजयसूरि सं० १६३६ थी १६४२ एम त्रण वर्ष अकबर बादशाह पर प्रभाव पाडी गुजरात प्रत्ये विहारकरी गया ने पोताना केटलाक शिष्यने वखतो वखत तेना परिचयमा आव्ये जाय ते माटे राखता गया। त्यारपछी खरतरगच्छाचार्य जिनचन्द्र सूरिए सम्राटनु कर्मचन्द्र मन्त्री द्वारा आमन्त्रण थता लाहोर जइ अकबर बादशाहने मली पोतानो अने पोताना धर्मनो परिचय कराव्यो। ( लाहोरमा प्रवेश सं० १६४८ फा० सु० १२ ) त्यारपछी तेमणे तथा तेमना शिष्य मण्डले—जिनसिंहसूरि आदिए ते अकबर बादशाह पर पोतानी असर चालु राखी—ए सर्वे वृत्तान्तनु वर्णन आ पुस्तकमा मनोहर रीते करवामा आव्यु छे अत्र साथे साथे ए पण जोवानु छे के तपागच्छना विजयसेन सूरिने आमन्त्रण मलता तेओ पण लाहोर जइ अकबर बादशाहने मल्या। तेमनो लाहोरमा प्रवेश सं० १६४९ ज्येष्ठ सुदि १२ ) आवी रीते तपागच्छना हीरविजय सूरिए पोते तेमज

पोताना शिष्य प्रशिष्योए तेमज खरतर गच्छना जिनचन्द्रसूरि अने तेमना शिष्यादिए सम्राट् अकबरपर धीमे धीमे उत्तरोत्तर विशेष प्रमाणमा प्रभाव पाडी तेने जीवदयाना पूरा रग वालो कर्यो हतो एमा किंचिन्मात्र शक नथी। ए वातनी साक्षी ते बादशाहे बहार पाडेल फरमानो ( के जे पैकी केटलाक अत्यारे पण मली आवे छे ते ) परथी, तेमज अबुल फजलनी, आइने अकबरी, बदाउनीना अलन-द्राउनी, अकबरनामा वगेरे मुस्लिम लेखकोए लखेला ग्रन्थोपरथी पण स्पष्ट जणाय छे। ( जुओ मारो 'जैन साहित्य नो सक्षिप्त इति-हास' पारा ८१० ) आ प्रभाव जेवो तेवो न गणाय। तेनाथी जैन धर्मनी महत्ता समग्र हिंदमा विस्तृत थई अने बादशाहने पण ते धर्मना अनुरागी करे एवा समर्थ महापुरुषो जैन धर्ममा पण पड्या छे एम सिद्ध थयु।

तेथी अकबर बादशाह जैनधर्मी थयो, एम मानवानु नथी। तेणे अनेक क्रान्तिकारी फेरफारो कर्या हता ते पैकी पोताना राज्य वर्ष थी एक सवत् नामे 'सन् इलाही' चलाववानु, अने एक सामान्य धर्म नामे 'दीन-इ-इलाही' प्रवर्त्तावबानु तेने पोताना मनमा स्फुर्यु हतु. अने तेमा ते कटले अशे पोताना राजत्वकालमा फलीभूत थयो, पण पोताना मरण पछी ते बने विफल थया। पोते काढवा धारेला सामा-न्य धर्म माटेनी सामग्री मेलववा जुदा २ धर्मोना वडाओने बोलावी ते ते धर्मना मुख्य सिद्धान्तो, आचार, विधि विधानो जाणवा पुष्कल प्रयास कर्यो। ए रीते हिन्दु, जैन, पारसी, ख्रिस्ती वगेरेना धार्मिक सिद्धात जाणवा ते ते धर्मना, अग्रणी विद्वानो आचार्योने बोलावी

तेमनी साथे पोते कलाको ना कलाको गालतो। जैन धर्मना वडा ते वराने तपागच्छमा हीरविजयसूरि अने खरतरगच्छम जिनचंद्रसूरि हता। पहेला हीरविजयसूरिने आगरा पासे फतेपुर (सीकरी) बोलावी सवत् १६३९ थी १६४२ सुधीमा तेमनो परिचय सेव्यो, ने ते सूरिए पछी पोताना शिष्यो शांतिचन्द्र, भानुचन्द्र आदिने बादशाह ना निकट समागममा वरजनो वखत आवे तेम राख्या। पछी जिनचन्द्र सूरिने लाहोर बोलावी स० १६४८ ने त्यार पछीना वर्षमा तेमनो समागम सेव्यो,ते सूरिए पण पोताना पट्टधर शिष्य जिनसिंह सूरिने तेना समागममा आवे ते माटे राख्या हता। स० १६४६ मा हीरविजय सूरिना पट्टधर शिष्य विजयसेन सूरिने लाहोरमा बोलाव्या हता। आ रीते तपागच्छ अने खरतरगच्छ एम बनेना अग्रणी विद्वानो पासेथी जैन धर्मना-सिद्धान्तो आदि जाणी अकबर बादशाहे जीवदया, जीववध-त्याग अमुक दिवसोए आखा देशमा पलावो जोइए ए बाबतना, तेमना तीर्थोनी रक्षा ना, तेओने कोई अडचन न करे ए बाबतना, जीजीया वेरो बंध करवाना वगेरे अने फरमानो काढी आप्या ते परथी ते धर्मगुरुओनो प्रभाव केटलो बधो अकबर बादशाह पर पड्यो हतो तेनो सारो ख्याल आवी शके तेम छे, आ माटे ते बन्ने-आचार्यो हीरविजय सूरि अने जिनचन्द्र सूरिना विस्तृत जीवन-चरितो वाचवा जोइए।

हवे त बन्ने आचार्यो अने तेमना पट्टधरोनी कालक्रम आदिनी कइक टुक माहिती सरखामणी अर्थे नीचेना कोष्ठक रूपे जोईए—

| | | हीरविजय सूरि | जिनचन्द्रसूरि | विजयसेनसूरि | जिनसिंहसूरि |
|---|---|---|---|---|---|
| १ | जन्म सवत् | १५८३ | १५६५ | १६०४ | १६१५ |
| २ | जन्म स्थल | पालणपुर | तिमरी-वडली | नाडुलाई(मारवाड) | खेताम्बर |
| ३ | जन्म नाम | हीरजी | सुलताण | जयसिंह (जेसङ्ग) | मानसिंह |
| ४ | ज्ञाति | वीसा ओसवाल | वीसा ओसवाल | वीसा ओसवाल | वीसा ओसवाल |
| ५ | पिता | कु रा (कु वरजी) | श्रीवत | कला शा | चापा |
| ६ | माता | नाथी | सिरियादे | कोडा दे | चापल दे |
| ७ | दीक्षा संवत् | १५९६ | १६०४ | १६१३ | १६२३ |
| ८ | दीक्षा नाम | हीरहर्ष | सुमतिधीर | जयविमल | महिमराज |
| ९ | दीक्षा गुरु | विजयदानसूरि | जिनमाणक्यसूरि | विजयदानसूरि | जिनचन्द्रसूरि |
| १० | गच्छ नाम | तपा | खरतर | तपा | खरतर |
| ११ | सूरिपद सवत् | १६१० | १६१२ | १६२८ | १६४९ |
| १२ | परिचित नृप | अकबर | अकबरअनेजहांगीर | अकबर | अकबरअनेजहांगीर |
| १३ | स्वर्गगमन सवत् | १६५२ | १६७० | १६७२ | १६७४ |
| १४ | स्वर्गगमन स्थल | उना (काठियावाड) | विलाडा (वेनातट) | खंभात-अकबरपुरा | विलाडा वेनातट |
| १५ | पट्टधर | विजयसेनसूरि | जिनसिंहसूरि | विजयदेवसूरि | जिनराजसूरि |
| १६ | मुख्यकृति नाम | जंबुद्वीप प्रज्ञप्ति टीका | पौषधप्रकरण वृत्ति | | जिनसागरसूरि |

हीरविजय सूरिना चरितमा कोई खास अगम्य चमत्कार जणातो नथी, ज्यारे जिनचन्द्र सूरिना चरितमा पञ्चनदी साधना नो चमत्कार ( प्रकरण १० मु ) आपवामा आवेल छे, तेमज वीजा चमत्कार १६ मा प्रकरणमा गणाव्या छे। बने नु आयुष्य लगभग सरखुं ६६ अने ६५ वर्ष नुं हतुं। प्रथमना बीजाथी वयमा १२ वर्ष महोटा हता। बनेए अकबर बादशाह पर प्रभाव पाडी 'अमारि' ना फरमान अनुक्रमे मेलव्या हता अने जिनचन्द्र सूरिने आपेल ते प्रकारना फरमानमा हीरविजय सूरिने अगाउ अपायेल फरमाननो उल्लेख छे। बनेने सम्राट् अकबरे 'जगद्गुरु' अने 'युगप्रधान' एम अनुक्रमे पद-बिरुद आप्या हता। बनेना पट्टधर सरखा प्रभावशाली हता। बनेना शिष्य परिवार बहोलो हतो। बनेना शिष्य प्रशिष्योए अनेक ग्रन्थो संस्कृत प्राकृत अने देशी भाषामा रचेला सापडे छे। बने शासन प्रभावक पुरुष हता। अने पोत पोताना गच्छमा प्रभावशाली अग्रणी नायक हता।

अकबर बादशाहे खुद श्री जिनचन्द्रसूरिने 'युगप्रधान' पदवी आपी हती तेथी आ ग्रन्थनु नाम 'युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि' अन्वर्थक छे। तेमा जुदा २ प्रकरणो खास विषयने कालानुक्रमे लेखके विशेष विकसित अने विस्तृत बनाव्यो छे। ते प्रकरणो ना नामो आ प्रमाणे छे —

१ परिस्थिति, २ सूरिपरम्परा, ३ सूरिपरिचय, ४ पाटणमे चर्चाजय, ५ विहार और धर्म प्रभावना, ६ अकबर आमन्त्रण, ७ अकबर प्रतिबोध, ८ 'युगप्रधान' पद प्राप्ति, ६ सम्राट् पर प्रभाव,

१० पचनदी साधना, और प्रतिष्ठाए, ११ महान् शासन-सेवा, १२ निर्वाण, १३ विद्वन शिष्य समुदाय, १४ आज्ञानुवर्ती साधु-सघ, १५ भक्त श्रावकगण, १६ चमत्कारिक जीवन और अवशेप घटनाए, तदुपरान्त परिशिष्टमे दो विहार-पत्र, क्रियाउद्धार नियमपत्र, सामाचारी पत्र, दो शाही फरमान, एक परवाना, सावत्सरिक पत्र, आदेशपत्र, प्रशस्तिपत्र, विज्ञप्तिपत्र, आचार्य कृत अष्टमद चौपाई, सस्कृतमे पचतीर्थी स्तवन, पार्श्वनाथ स्तवन—ए उपयोगी ज्ञातव्य हकीकतो रजु करी छे। तेथी चरित्र नायक सम्बन्धिनी तात्कालिक लगभग घणी खरी बीनाओ, ते वखतनु वातावरण, खरतरगच्छ अने ते गच्छना मुनि श्रावको आदिना वृत्तान्त आपणने प्राप्त थाय छे।

लेखक महाशयनी लेखन प्रवृत्ति परथी कहेवु ज पडशे के तेमणे पोते पुरातत्त्व रसिक होवाथी तेमज खरतर गच्छना अनुयायी होइ ने पोताना बीकानेरमा रहेला पुस्तकभडारो तपासवानी सगवड सुभाग्ये मलवाथी तेमाथी शोध करी ऐतिहासिक सामग्री एकत्रित करी तेने व्यवस्थित गोठववामा अने तेनो शुभ तथा यथास्थित उपयोग करवामा कोई जातनी कसर राखी नथी ए समग्र पुस्तकना पृष्ठे पृष्ठे दृग्गोचर थाय छे। पोते रह्या श्रीमन्त व्यापारी, बीकानेर, कलकत्ता, सीलहट, बोलपुर, चापड, बाबुरहाट वगेरे स्थलोए पोतानी घथानी पेढीओ अने तेने लगता व्यवसायो पोताने सभालवाना रह्या, छता ते सर्वनो वहीवट करवानी साथे आ जातनु साहित्य कार्य अखण्ड चालु राखे ए खरेखर तेमना धर्मानुराग अने तदर्थे प्रीतिश्रम (Labour of love) ने आभारी छे।

ए पण नोधवा जेवु छे के बीकानेरना घणा वसत थी वध रहेला पुस्तक भण्डारो जोवा तपासवानी महामहेनते प्राप्त थयेली तक लेसकने न मली हत, तो आ ग्रन्थनी अनेक हकीकनो प्रकाशमा आवी शकी न हत। जैन पुस्तक भण्डारो स्थले २ विद्यमान छे, पण ते एवी स्थितिमा छे के तेनो लाभ विद्वानो—पुरातत्त्वना शोधकोने पण मलो शकतो नथी ए अति शोकनो-दुर्भाग्यनो विषय छे। आ वखने अमदावादमा एक पुस्तकालयनो पायो नाखता पुस्तकालयना मकान, व्यवस्था अने जैन सघना ग्रन्थ भण्डारोनी दशा सम्बन्धी महात्माजीए केटलीक घणी महत्त्वनी सूचनाओ करी छे—छेल्ले छेल्ले थोडो दर्द भर्यो विनोद पण कर्यो छे। ते अहीं अवतारवानु रोकी शकातु नथी। तेओ कहे छे—"गुजरातमा जैन धर्मना पुस्तकोना घणा भण्डार छे पण ते वाणीयाने घेर छे। तेओ ए पुस्तकोने सुन्दर रेशमी वस्त्रोमा वीटालीने राखे छे। पुस्तकोनी ए दशा जोई मारु हृदय रडेछे, पण जो रडवा बेसु तो हु १२३ वर्ष जीवु पण शी रीते ? पण मने तो एम थायछे के जो चोरीनो गुन्हो न गणातो होय तो ए पुस्तको हु चोरी लउ अने पछी एमने कहु के तमारे माटे ए लायक नहोता माटे मे चोरी लीधा। वणिको ए ग्रन्थोने नहीं शोभावे, वणिको तो पैसा भेगा करी जाणे अने तेथीज आजे जैन धर्म—जैन साहित्य जीववा छता सुकाई गया छे। धर्म पैसाना ढालामा केम पडे ? पैसो धर्मना ढालामा पडवो जोइए।"

आ परथी श्रीयुत 'सुशील' नामना सुप्रसिद्ध पत्रकार जणावेछेके "महात्मा गाधीजी जेवा सात्त्विक वृत्तिवाला पुरुषने जैन ग्रन्थालयो

ना रेशमी वस्त्रोथी वींटलायेला, गर्भ श्रीमन्तना लाडकवाया पुत्रनी जेम पम्पालाता ग्रन्थो चोरवानु मन थाय ए आपणे सारु एक सरस प्रमाण पत्रज गणाय। आपणे एनी जेवी जोइए तेवी व्यवस्था करी शक्या नथी, एनाथी जगतने अने आपणने पोताने जे लाभ मलवो जोइए तेनाथी आपणे वञ्चितज रह्या छीए। अने एनु कारण आपणे विद्या, साहित्य, ज्ञान करता पण धनवैभवने विशेष अगत्यनु आसन आप्यु छे एज छे एम तेमना कहेवानो मुख्य आशय छे। जुदा २ स्थानोए, जुदी २ मालेकीना अनेक ग्रन्थ-भण्डारो होयए तेना करता सार्वजनिक अने मुख्य स्थले ग्रन्थसमृद्ध पुस्तकालयो होय वधु इच्छवा योग्य छे। मर्यादित द्रव्य अने शक्तिथी एनु सुयोगपणे सरक्षण अने प्रचार पण थई शके। आवी सीधी सादी वात पण आपण व्यवहारदक्ष आगेवानोने गले हजी-उतरनी नथी।"

लेखक महानुभावोए अन्य मालेकीना पुस्तक भण्डारोनो तपासवा जेटली सगवड मेलवी तेनो अने तेटलो उपयोग करवानो उद्यम कर्यो, एटलुज नहीं परन्तु पोते पण पोताना माटे अनेक ग्रन्थोनो जवरो सग्रह द्रव्य खरची बीकानेरमा कर्यो छे के जे जोवा आववानु आमन्त्रण मने करताज आव्याछे। ए सग्रहनो एक सार्वजनिक सग्रह स्थान तरीके जनताने लाभ मले एवो प्रबन्ध करवानी तेमनी अभिलाषा छे ते सत्वर पार पडो !!

'सूरीश्वर अने सम्राट्' ए पुस्तकमा अकबर बादशाह तेनी साथे सम्बन्ध धरावती अन्य व्यक्तिओ, राजवहीवट वगेरे सम्बन्धी जैनेतर'

साधनो द्वारा एकत्रित करेली हकीकतो मूकवामा आवी छे तेथी आ पुस्तकमा ते सम्बन्धी निर्देश करवाथी लेखक मुक्त रह्या छे ते सुघटित छे।

जीवन चरित्र ना पुस्तकमा उपदेशात्मक विवेचनो बधु पानां रोके तो ते अन्दरना इतिहासने लगभग दाटी दईने वाचकने मुद्दानी वातथीज विमुख बनावी दे तेवी धास्ती छे। पुस्तकनो हेतु कदाच जैन धर्मनो यश प्रद्योत बताववानो होय, तेनी फिकर नथी, परन्तु धर्मना उपरछला विवेचनोने लीधे पुस्तकनी ऐतिहासिक महत्ता झाखी पडे छे ए ध्यान बहार रहेवु न जोईए।

आ पुस्तकना लेखक तथा 'सूरीश्वर अने सम्राट्' ना लेखक मुनि पोताना ऐतिहासिक शोखने हरदम सिंचन कर्या करे अने भविष्यमा विशेष अन्धकार भेदीने एवीज साची धातु कशा मिश्रण विना आपणी समक्ष मूक्या करे, एम इच्छीशु।

सामान्यरीते ग्रन्थावलोकन करता एक बाबतमा एक इतिहास-रसिक तरीके मारो भिन्न अभिप्राय सप्रमाण व्यक्त करवानु शुद्धि तरीके नम्र पणे बताववानु मने प्राप्त थाय छे तो तेम करवा रजा लउ छुं।

लेखक आ ग्रन्थ ना आठमा प्रकरणमा पृ० १०३ नी टिप्पणीमा खरतरगच्छीय जयसोम उपाध्याय कृत प्रश्नोत्तर ग्रन्थ मा थी अमुक उतारो आपेल छे तमाथी आवश्यक भाग लईए —

"तउ तेहना ( जिनचन्द्र सूरिना ) शिष्य तथा श्रावक ( तहने ) 'युगप्रधान' कहे तिहा स्यो दूषण थाइ ?×+++चली 'युगप्रधान' नामि

दुहवो ते स्यु ? आज प्रभूत वली श्री जिनशासन माहि किणइ आचार्यनइ 'जगद्गुरु' कह्या हुवइ तो तुम्हे दिखाडो । तमारा ऋषीमतीना भट्टारकनै श्रावक श्राविका 'जगतगुरु' कही गावै छै, तुम्हे साभली खुशी थाओ छो, श्री जिनचन्द्र सूरिजीना नाम 'युगप्रधान' साभली दुहवाओ ते स्यु ? जइ पातिशाह 'जगतगुरु' एहवा नाम साभलै ( तउ ) फजीत करै, श्री सेख अबुलफजल हजुर ' जगत् गुरु' नाम कहता-शेखे अम्ह* हजूर रोस करी भानुचन्द्र पन्यास नै जे बोल कह्या, ते भानुचन्द्र जाणे छे, वली लोकोना कह्या 'तपा' एहवा नाम मानो छो एव विचारता तुमने ए प्रश्न अजाणपणो जणावै छे ।"

आमानु लखाण सम्पूर्ण सत्यमानी लेखक तेनी नीचे एम लखवा प्रेराया छे के —

'इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि श्रीमान् हीरविजयसूरिका 'जगतगुरु' पद उनके भक्त श्रावक श्रावकाओ द्वारा रखा हुआ गुरु भक्ति सूचक मात्र था, किन्तु सम्राट् अकबरने उन्हें 'जगत गुरु का कोई बिरुद नहीं दिया था ।'

उपरना अवतरण परथी मने एम जणायछे के तपागच्छवालाओ ख० जिनचन्द्रसूरिने 'युगप्रधान' ए बिरुद अकबरे आप्यु होय, एम स्वीकारता नहीं होय अने कहेता हशे के ते तो तेमना शिष्य अने

---

* यह शब्द वजनदार है । जयसोमजी की सत्यवादिता, प्रमाणिकता और भवभीरुता उनके ग्रन्थोंसे टपकती है ।

( लेखक )

श्रावको तेमने ए पद लगाडे छे। आवी स्थिति थई हशे त्यारे स्व० जयसोमजी तपागच्छ वालाने उद्देशीने प्रत्युत्तर रूपे एम कहे के 'जगद् गुरु' ए विरुद पण जिन शासनमां कोई आचार्यने अपायुं नथी, तेम ते पद अकबर मानले तो फजेत करे, अबुल फजल समक्ष हजुर 'जगद् गुरु' नाम कहेता तेणे अमारी समक्ष रीस करी भानुचन्द्रने जे बोल कह्या ते तो जाणे छे, वलो लोकोनुं कहेलुं तमारु 'तपा' नाम पण बराबर नथी-ए स्वाभाविक छे। एक बीजानुं उत्थापे एवो घाट आमा थयो लागे छे।

तपागच्छना साहित्यमा खरतरगच्छाचार्य जिनचन्द्र सूरिने अकबरे 'युगप्रधान' विरुद आप्युं एवुं मारा जोवामा नथी आव्युं, ज्यारे तेम थयुं हतुं ए वात खरतर गच्छना तत्कालीन साहित्य थी-शिलालेखोथी जणाय छे, तेथी ते एक सत्य घटना तरीके न स्वीकारवी ? स्वीकारवी घट। तेज प्रमाणे अकबरे तपागच्छाचार्य हीरविजयसूरिने 'जगद् गुरु' विरुद आप्युं ए वात भले खरतर गच्छना साहित्यमा प्राप्त न थाय पण तपागच्छना तत्कालीन साहित्य थी-शिलालेखोथी स्पष्ट छे तेथी ते हकीकत सत्य तरीके अवश्य स्वीकार्य छे। तेना उदाहरण जोइए —

॥ सवत् १६४६ मा लखायेली जेनी प्रत मले छे एवा काव्य के जेनुं नाम पण 'जगद् गुरु' परथी 'जगद् गुरुकाव्य' छे तेमां तेना कर्त्ता १६७ मा श्लोकमा कहे छे के —

शुद्धा सर्वपरीक्षणे गुरुवरा ज्ञात्वेति पृथ्वीपति ।
सभ्याना पुरत स्वपर्षदि गुणास्तेषा स्वयी शोधितान् ॥

उक्त्वा सर्वं यतीश हीरविजयाख्या नाम दद्याद् भक्तिन ।
स्वैर्वाक्यैर्विरुदं जगद्गुरुरिति स्पष्टं मह पूर्वकम् ॥१॥

सर्व परोक्षा थी गुरुवर शुद्ध छे एम जाणो बादशाहे पोतानी परिषद्मा सभ्योनी समक्ष स्वबुद्धिथी शोधायेला एवा तेमना गुणोने कहीने सर्व यतिओना स्वामी एवा हीरविजय नामना ने भक्तिथी। पोते उच्चारेला वाक्योथी महोत्सव पूर्वक 'जगद् गुरु' ए नामनु स्पष्ट विरुद आप्यु ।

हीर सौभाग्य नामनु महाकाव्य हीरविजय सूरिना समकालीन तेमना शिष्य परम्पराना देवविमले स० १६४६ पहेला रचता आवेला तेमा १४ मा सर्गमा श्लोक २०५ मा जणाव्यु छे के—

'जेम आघाट नगरमा राजाए जगचन्द्रसूरिने बार वर्ष सुधी आचाम्ल तप करवामाटे 'तपा' विरुद आप्यु, खभातमा दफरखाने मुनि सुन्दर सूरिने प्रेमथी 'वादि गोकुल संकट' विरुद आप्यु, तेवी रीते—

गुणश्रेणी मणीसिन्धो श्री हीरविजय प्रभो ।
जगद्गुरु रिट तेन विरुद प्रददे तदा ॥

—ते अवसरे ते (प्रमुदित अकबर शाहे) गुणश्रेणी रूप मणिना समुद्ररूप श्री हीरविजय प्रभुने आ 'जगद् गुरु' ए विरुद आप्यु ।

स० १६४७ नो शिलालेख श्री पूरणचन्द्रजी नाहर सम्पादित 'जैन लेख-संग्रह भाग १ ला मा न० ७१४ नो ज मात्र एकज दाखला तरीके लइए —

॥ॐ॥ सवत १६४७ वर्षे फाल्गुन मासे शुक्लपक्ष पचम्या तिथौ गुरुवासरे श्री तपागच्छाधिराज पातशाह श्री अकबर दत्त जगद्गुरु

विरुद धारक भट्टारक श्री श्री श्री ४ हीरविजय सूरीणामुपदेशेन चतुर्मुख श्री धरणविहारे प्राग्वाट ज्ञातीय सुश्रावक सा० खेता नायकेन वर्द्धा पुत्र यशवन्तादि कुटुम्ब युतेन अष्ट चत्वारिंशत् (४८) प्रमाणानि सुवर्ण नाणकानि मुक्तानि पूर्वदिक् सत्क प्रनोली निमित्त मिति श्री अहमदावाद पार्श्वे उसमा पुरत ॥ श्री रस्तु ॥

आम अनेक तत्कालीन प्रमाणोथी पुरवार थाय छे के हीरविजय सूरिनु 'जगद्गुरु' विरुद पातशाह श्री अकबर दत्त हतु। (जेम जिनचन्द्रसूरिनुं 'युगप्रधान' विरुद पण अकबर दत्त हतुं तेम) अने शोध खोलथी कालक्रम विचारता स० १६४० मा ते 'जगद्गुरु' विरुद हीरविजय सूरिने अपायु हतु।

जैन सघ ए एक विराट वटवृक्ष छे। तेना थडमा थी फुटेली श्वेताम्बर अने दिगम्बर नामनी बे महती शाखाओ छे, अने ए शाखाओमाथी गच्छो, सम्प्रदाय, ज्ञातिओ पेटा ज्ञातिओ नी कोइ अजब रीते पागरेली डालीओ छे, के जेथी बधी दिशाओ भराइ गइ होय तेवु कल्पनामा आवे छे, ते विराट वृक्ष ना मूल जेटला ऊडा छे तेटलीज तेनी शाखाओ हरीभरी छे, डालीए डालीए पुष्पोनी अने फलोनी वहार जमी पडी छे, ते वृक्षनी शाखाए शाखाए डालीए डालीए महा प्रभावशाली पुरुषोनी कीर्ति सुवास म्हेकी रही छे, शाखाओ डालीओ जाणेके परस्पर सात्विक स्पर्धा करती होय एम लागशे।

सघ तो अविभक्त रहेवो जोइए, ए सिद्धान्त घणो सुन्दर अने आदरणीय छे, पण प्रकृति पोते एनो विरोध करे छे, वृक्षनु थड भले

एक अने अखण्ड होय पण एटलामाज एनुं सामर्थ समाइ जतुं नथी, शाखा ना विस्तार माज एना बल अने रसनी साची सार्थकता छे, खजूरी अने नालीयेरना झाड सीधा वध्ये जाय छे, पण एनी उपमा आर्य संस्कृति ना प्रतिनिधिने आपी शकाती नथी, वड तो हिन्दुस्थाननी भूमिमाज फाले फूले छे, अने आर्य संस्कृति नी विराटता तथा भव्यता पण ए वटवृक्ष दाखवे छे एनुं बीज सूक्ष्म छे, पण कालनी सामे झूझवानी एना मा ताकात छे, एनो विस्तार पण एटलो असाधारण होयछे ऐनी एक एक शाखा एक वृक्ष ना विस्तार नी हरिफाइ करे छे। जैन संघ ए रीते जुदा जुदा गच्छो, सम्प्रदायो- मा विस्तार पाम्यो छे एने ए बधामा जे एकज प्रकार नो रस वही रह्यो छे ते जोता जैन संघ तत्वत एक विराट वट वृक्ष नहीं तो बीजुं शुंछे ?

ए वटवृक्ष नी श्वेताम्बर शाखा नी त्रण मुख्य डालीओ हाल विद्यमान छे, १ खरतर २ तपा ३ अचल, ए नामना त्रणगच्छो। आ- त्रणे गच्छना आचार्यो नी पट्ट परम्परा पर दृष्टिपात करीशुं तो तेना मा जैन शासननो प्रभाव प्रदर्शित करवानी प्रबल अने एकधारी भावना जाग्रत हती एम जणाशे, हजु तेमनो सलग, सविस्तर, अने शोधखोलथी मेलवेली सामग्री वालो इतिहास लखायो नथी ए शोकनी वात छे, पण ज्यारे तेवो लखाइ बहार पडशे त्यारे जणाशे के ते एक कीर्तिवन्त इतिहास छे, आ शाखाओ [illegible] भिन्न भिन्न होवा- छता ते सर्वेनो [illegible] छता बीजी दृष्टिए [illegible]

विस्तार ए जेटला स्वाभाविक छे तेटलाज विरोध अने वैषम्य प्रत्येक शाखाने माटे भयकर तमज प्राण हानिकर छे। आपणा गच्छोना इतिहास ना ए बन्ने वस्तुओ मली आवेछे, आरम्भनो इतिहास शौर्य अने औदार्य थी अकिल होय छे, पण ए पछी जेम जेम वर्तमान कालनी नजीक आवीए छीए तेम तेम विरोध अने भेद भयकर रूप धरता जणाय छे। मनुष्य स्वभाव जागे युद्धशील होय नहिं, तेम नानी निर्जीव वातोपर झगडा थया कर्या छे, पुरातन वीर पुरुषो ना कथानक साभली तथा ससमरी आपणे आल्हाद अनुभवीए छीए पण वर्तमान स्थिति नो सामनो करवानो अवसर आवे छे त्यारे सो उछलना मारतुं गरम लोही पण जाणेके थीजी जतु होय एम लागे छे, आपणी सघ सन्धानु बल छिन्न भिन्न थयु छे अने अन्य सामान्य विरोधी ना हाथ मजबूत बन्या छे, हजुपण समाज चेतशे ? अने आपस आपस ना क्लेशथी तद्दन मुक्त रहेवानु मन वचन कायाए पाली श्रीवीतराग प्रभुना पोते साचा अनुयायी छे ए स्वन सिद्ध करशे ? सौ पोता पोताना सगठन योजे, कुप्रथाओ ना दासत्व ने दूर करे अने ज्ञानना विस्तार अर्थे कइक पण सगीन काम करी बतावे तो समुच्चये समग्र जैन सघ सगठित अने बलवान बन्या विना न रहे ए निर्विवाद छे।

भूतकाल नी भव्यतानु सगीत दूर दूर थी आवता सगीत नी पेठे मनोरम अने कर्णप्रिय लागे छे अने माणसने मुग्ध बनावे छे, तेमाथी घणी खरी विषमता, कठोरता उडी जाय छे, दूर दूर थी वही आवता झरणनु पाणी जेम निर्मलता पामे तेम भूतकाल ना दूर पण

एक अने अखण्ड होय पण एटलामाज एनु सामर्थ समाइ जतु नथी, शाखा ना विस्तार माज एना बल अने रसनी साची सार्थकता छे, खजूरी अने नालीयेरना झाड सीधा वध्ये जाय छे, पण एनी उपमा आर्य सस्कृति ना प्रतिनिधिने आपी शकाती नथी, वड तो हिन्दुस्थाननी भूमिमाज फाले फूले छे, अने आर्य संस्कृति नी विराटता तथा भव्यता पण ए वटवृक्ष दाखवे छे एनु बीज सूक्ष्म छे, पण कालनी सामे झूझवानी एना मा ताकात छे, एनो विस्तार पण एटलो असाधारण होयछे ऐनी एक एक शाखा एक वृक्ष ना विस्तार नी हरिफाइ करे छे। जैन सघ ए रीते जुदा जुदा गच्छो, सम्प्रदायोमा विस्तार पाम्यो छे एने ए बधामा जे एकज प्रकार नो रस वही रह्यो छे ते जोता जैन सघ तत्वत एक विराट वट वृक्ष नहीं तो बीजुं शुछे ?

ए वटवृक्ष नी श्वेताम्बर शाखा नी त्रण मुख्य डालीओ हाल विद्यमान छे, १ खरतर २ तपा ३ अचल, ए नामना त्रणगच्छो। आत्रणे गच्छना आचार्यो नी पट्ट परम्परा पर दृष्टिपात करीशु तो तेना मा जैन शासननो प्रभाव प्रदर्शित करवानी प्रबल अने एकधारी भावना जाग्रत हती एम जणाशे, हजु तेमनो सलग, सविस्तर, अने शोधखोलथी मेलवेली सामग्री वालो इतिहास लखायो नथी ए शोकनी वात छे, पण ज्यारे तेनो लखाइ बहार पडशे त्यारे जणाशे के ते एक कीर्तिवन्त इतिहास छे, आ शाखाओ डालीओ भिन्न भिन्न होवाछता ते सर्वेनो मूल अने थडनी साथे घनिष्ट सम्बन्ध छे, छता बीजी दृष्टिए जोइसुं तो प्रकृति ना नियम प्रमाणे विकास अने

विस्तार ए जेटला स्वाभाविक छे तेटलाज विरोध अने वैषम्य प्रत्येक शासने माटे भयकर तेमज प्राण हानिकर छे। आपणा गच्छोना इतिहास ना ए बन्ने वस्तुओ मली आवेछे, आरम्भनो इतिहास शौर्य अने औदार्य थी अंकित होय छे, पण ए पछी जेम जेम वर्तमान कालनी नजीक आवीए छीए तेम तेम विरोध अने भेद भयकर रूप धरता जणाय छे। मनुष्य स्वभाव जाणे युद्धशील होय नहिं, तेम नानी निर्जीव वातोपर झघडा थया कर्यां छे, पुरातन वीर पुरुषो ना कथानक साभली तथा सम्भरी आपणे आल्हाद अनुभवीए छीए पण वर्तमान स्थिति नो सामनो करवानो अवसर आवे छे त्यारे तो उछलता मारतुं गरम लोही पण जाणेके थीजी जतु होय एम लागे छे, आपणो संघ सस्थानुं वल छिन्न भिन्न थयु छे अने अन्य सामान्य विरोधी ना हाथ मजबूत बन्या छे, हजुपण समाज चेतशे ? अने आपस आपस ना क्लेशथी तद्दन मुक्त रहेवानुं मन वचन कायाए पाली श्रीवीतराग प्रभुना पोते साचा अनुयायी छे ए स्वत सिद्ध करशे ? सौ पोता पोताना सगठन योजे, कुप्रथाओ ना दासत्व ने दूर करे अने ज्ञानना विस्तार अर्थे कइक पण सगीन काम करी बतावे तो समुच्चये समग्र जैन सघ सगठित अने बलवान बन्या विना न रहे ए निर्विवाद छे।

भूतकाल नी भव्यतानुं संगीत दूर दूर थी आवता सगीत नी पेठे मनोरम अने कर्णप्रिय लागे छे अने माणसने मुग्ध बनावे छे, तेमाथी घणी खरी विषमता, कठोरता उडी जाय छे, दूर दूर थी वही आवता झरणनुं पाणी जेम निर्मलता पामे तेम भूतकाल ना सूर पण

अधिक निर्मल बने छे, क्षेत्र अने काल ना अन्तरमा वस्तुने विशुद्ध बनाववानु स्वाभाविक सामर्थ्य छे, इतिहासमा भभकभरी विगतो मोटे भागे भरी होय छे ए देखाय छे प्राचीन बधु भव्य लागे छे ने भूतकालनु' घेन चडे छे, आ वस्तु-स्थिति थी चेतवानु' छे

वली भूतकाल वर्त्तमाननी साथे सकलायेला रहे छे एने साव भूसी नाखवानो प्रयत्न करनार गमे तेवी महान् व्यक्तिके प्रजा होय तोये ते निष्फल निवडवानी, केटलाकनी फरियाद छे के भूतकालनी अतिशयोक्तिओथी अने भूतकाल ने जे भव्य आकर्षणीय रगोथी रगवामा आवे छे, तेथी घणा वहेमो, पाखण्डो, अनाचारो अने दम्भो नभी रह्या छे, अने भूतकालनी भव्यता घणी वार माणसने आजी नाखे छे, अने यथार्थ वस्तु-स्थिति समजवा मा अन्तराय रूप बने छे, राजाओ अने मोटा श्रीमतोनी खुशामद करवा मा घणा सारा पण्डितो, कविओ अने तपस्वीओ ए पण पुरातन समयमा मोटो भाग भजव्यो छे, अने एने लीधेज भूतकाल आटलो आकर्षक बन्यो छे, भूतकाल ना ए ऐश्वर्यशाली राजाओ अने धनिकोनी नबला-इओ न होती एम बनेज नहीं, तेमणे गरीबोने चूसवामा, नबळाने जीतवा मा, सामा थनार पर जुलम करवामा, प्रजाने पीडवामा जे फाळ कर्यु होय तेनो कई पण इसारो सरखो पण करवामा आवतो नथी, समाजमा रहेला अनाचार अत्याचार पण लोकाचारने नामे ओलखाता हता, अने जेमने ए जमाना ना एक महापुरुष, गणी शकाय तेमणे पण ए अत्याचार सामे ऊ ची आगली करवानी हिम्मत नथी बतावी, ऐटले के जुनु' एटलु' बधु' सारु' एम गणवु' के मानवु'

ए सत्यनो द्रोह छे, जे लोकाचार के रीति नीति उपर 'प्राचीनता' नी छाप पडी होय ते प्रत्येक युगमा पवित्र अने उपकारक ज होय ए भ्रमणा छे।

एक विद्वान ना शब्दों मा इतिहास एटले अवनवी प्रेरणा नो प्रेरक, प्रज्ञाज्ञानो आत्मदर्शक, परम विशुद्धिकारक अनेक मथनो जगावनार महाप्राण, ए महाप्राण नुं हार्द लेखकोनी लेखनीओना स्पर्श थी उघडे छे, अनेक कलमो ए महाकाल ना मनोमन्दिरमा प्रवेशवा चाली छे, अने बन्ध बारणानी चीराडो जोइ पाछी वली छे, गर्भद्वार मा दाखल थनारी तो विरल ( छे ) । इतिहास एटले हतु तेवुं आलेखवु पण खरेखर केवु हतु ए कहवु शक्य नथी बन्यु छता इतिहास ना कालनोल पोत पोताना युग-संस्कार ना पडदा उपर झीलना एज इतिहास लेखक करी शके तेम छे इतिहास ना बनावो मा उडी उतरी अमृत ना अक्षरो पाडवा एटलु तेनी पासेथी इच्छीए।

जीवन चरित्र ए पण इतिहासनु एक अङ्ग छे, महान पुरुषोना जीवन युग ने घडे छे, तेओ युगसर्जक छे, अने युगने जोइता महा-पुरुष मली रहे छे, तेमना जीवनमा थी तेमना युग ना इतिहास सांपडे छे, वली महापुरुषो ना जीवन प्रसगो प्रकाश पाथरती दीवा दांडीओ छे, तेनो अर्थ ए छे के पुरुषो चाल्या जाय छे पण एमना पुनित संस्म-रणो रही जाय छे, अने ए संस्मरणो प्रकाशनी गरज सारे छे सेंकडो उपदेशो करता, आवा जीवन प्रसंगो श्रोताओ अने वाचकोना दिल उपर स्थायी असर करे छे, वली ए पण विचारवानु छे के धर्मना

मुख्य प्रचारको, प्रवर्त्तको अथवा पुनरुद्धारको धर्मनी प्राण शक्ति ना मूल क्षरण छे धर्म प्रवाहने जरूरने प्रसगे सगठनके पुनर्विधान ना पाणि नथी मलता ते वहु लावा कालगीसुधी टकी शे कतो नथी मोटा रण मा नानी नदीओ ना जल शोषाइ जाय तेम ते धर्मप्राण कालेकरो ने क्षीण वने छे तेथी जरूर पडये प्रभावको, प्रचारको, युगप्रधानो अने धर्मधुरन्धरो ए वहता प्रवाहने विषे देश कालने अनुसरी पुन-र्घटना ना नवा सस्कार ना प्राण पूरे छे, ए रीते धर्म सम्प्रदायो पोताना अनुयायीओ अने अनुरागीओने आलोक तेमज परलोकना कल्याणमा साधनरूप वने छे।

खरतर गच्छना एक महान् आचार्य श्री जिनचन्द सूरिनु जीवन वृत्तान्त वहार पाडी लेखक नाहटाजीए एक सारी इतिहास सेवा करी छे। खरतरगच्छीय साधुओ ए जैन शासन अने साहित्य नी घणी सेवा वजावी छे। अने हजु सुधी कालना प्रवाहमा सदोदित रही ते गच्छ विद्यमान छे। सामान्य रीते एम कही शकाय के प्राय गूजरातमा, पश्चिम-हिंदमा तपागच्छना साधुओनो विहार अने प्रभाव जमी रह्यो त्यारं प्राय मेवाड मारवाड आदि राजपूतानामा अने उत्तर हिन्दमा खरतर गच्छना साधुओनो विहार अने प्रभाव थतो रह्यो। तपागच्छ वालानु साहित्य गूजरातना तपागच्छीय श्रावको अने सस्थाओए प्रकट करवानु सतत जारी राख्यु, ज्यारे दुर्भाग्ये खरतरगच्छीय साहित्यने विशेष प्रमाणमा सतत वाहर पाडवा अर्थे कोइ जवरी सस्था के श्रीमन्त हजु सुधी मली शकेलीनथी तेथी तेमनु साहित्य वहु अल्प प्रकट थयु छे। अने ते गच्छनी शासन सेवा प्रकाशमा पूरते रीते आवी नथी।

लेखक श्री नाहटाजी खरतरगच्छ प्रत्येना अनुरागथी प्रेराइ ते गच्छनी शासनसेवा अने साहित्य सम्पत्ति जनता समक्ष मूकवाना दृढ अभिलाष सेवी रह्या छे। अने तेना प्रथम प्रयास रूपे वे त्रण ग्रन्थ बहार पाडी आ जीवन चरित्र अनेक प्रमाणो सहित परिश्रमपूर्वक लखी प्रकट करे छे। अने 'ऐतिहासिक जैनकाव्यसंग्रह' नाम नो संग्रह पोतानी माहिती भरपूर प्रस्तावना सहित थोडा समय पछी प्रकाशित करशे ते स्तुत्य छे। तेमनी शुभेच्छा पार पडे ए सौ कोइ इच्छशे।

मने आ प्रस्तावना लखवा माटे उत्सुक करी जे तक आपी छे ते माटे श्रीयुत नाहटाजी नो हृदयपूर्वक आभार मानु छु २२-४-३५ ने दिने टुङ्की प्रस्तावना लखी मोकल्या पछी तेने जरा विस्तृत करवानी सूचना थता तेम में करेल छे। छताय हु पूरतो न्याय आपी न शक्यो होउं तो ते क्षतव्य गणी लेखाशे ऐटली खातीभरी आशा सेवु छु।

तवावाला बिल्डिंग<br>त्रीजे माले<br>लोहारचाल मुम्बई<br>ता० २४-६-३५

सत्पुरुष चरणेच्छु<br>मोहनलाल दलीचन्द देशाइ<br>BA, LLB ADVOCATE



# ॥ सहायक ग्रन्थ सूची ॥



ग्रन्थ नाम — लेखक, सम्पादक और प्रकाशक — रचनाकाल

**संस्कृत—**

• १ कर्मचन्द्रमन्त्रि वश प्रबन्ध उ० जयसोम गणि ( स० १६५० )

२ कर्मचन्द्रमन्त्रि वश प्रबन्ध वृत्ति उ० गुणविनय ( स० १६५६ )

• ३ अष्ट लक्षी (प्रशस्ति) उ० समयसुन्दर ( स० १६४६ )
( अनेकार्थ रत्नमंजूषा में प्रकाशित )

४ समाचारी शतक उ० समयसुन्दर ( स० १६७२ )

५ कल्पलता (प्रशस्ति) उ० समयसुन्दर ( स० १६८५ )

६ मध्यान्ह व्याख्यान पद्धति वादी हर्षनन्दन ( स० १६७३ )

• ७ जैन लेख सग्रह भाग १ बाबू पूरणचन्द्र नाहर M A B L

• ८ जैन लेख सग्रह भाग २ बाबू पूरणचन्द्र नाहर M A. B L

९ जैन लेख सग्रह भाग ३ बाबू पूरणचन्द्र नाहर M A B L

• १० खरतरगच्छ पट्टावली सग्रह स० श्री जिनविजयजी ।

११ प्राचीन जैन लेख सग्रह भाग द्वितीय स० श्री जिनविजयजी ।

१२ जैन धातु प्रतिमा लेख सग्रह भाग १ स० श्री बुद्धिसागर सूरिजी

• १३ जैन धातु प्रतिमा लेख सग्रह भाग २ स० श्री बुद्धिसागर सूरिजी

---

• यह चिन्ह प्रकाशित ग्रन्थोंका सूचक है. इस चिन्ह बिनाके ग्रन्थ अप्रकट है।

१४ बीकानेर जैन लेख संग्रह — संग्राहक—अगरचन्द भवरलाल
१५ अपभ्रंश काव्यत्रयी — स० लालचन्द भ० गाधी
१६ भानुचन्द्र चरित्र — सिद्धिचन्द्रजी
१७ विजय प्रशस्ति काव्य मू० हेमविजय टी० गुणविजय (स० १६८८)
१८ प्रशस्ति संग्रह द्वय — P C हरिसागरजी
१९ आचार दिनकर प्रशस्ति — हर्षनंदन (१६६६)
२० षट्स्थान प्रकरण प्रस्तावना — स० विद्वद् मगलसागरजी
२१ पञ्चनदी साधन विधि — ( हमारे संग्रहमें )

## प्राकृत—

२२ पार्श्वनाथ चरित्र (प्रशस्ति) — देवभद्राचार्य ( स० ११६८ )

## हिन्दी—

२३ ओसवाल जातिका इतिहास, प्र० ओसवाल हिस्ट्री पब्लिशिंग हाउस।
२४ राजपूतानेके जैन वीर — अयोध्याप्रसाद गोयलीय
२५ सूरीश्वर और सम्राट् — मुनि विद्याविजयजी
( मूल गुजराती, अनुवाद हिन्दी )
२६ विजय प्रशस्ति सार — मुनि विद्याविजयजी
२७ छपारस कोष — श्री जिनविजयजी
२८ गणधर सार्धशतक (भाषान्तर) — स० श्री जयसागर सूरिजी
२९ श्रीजिनदत्तसूरि चरित्र भाग द्वि० — श्री जयसागर सूरिजी
३० महाजनवंश मुक्तावली — महो० रामलालजी

३१ ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह स० अगरचंद भंवरलाल नाहटा
३२ यतीन्द्र विहार दिग्दर्शन यतीन्द्रविजयजी
३३ विज्ञप्ति त्रिवेणी स० जिनविजयजी
३४ अकबरी-दरबार प्र० नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।
३५ जहाँगीर नामा मुन्शी देवीप्रसादजी
३६ खानखाना नामा मुन्शी देवीप्रसादजी
३७ बीकानेर राज्यका इतिहास प्र० वैंकटेश्वर प्रेस, ले०-कन्हैयालाल
३८ भारतके प्राचीन राजवंश विश्वेश्वरप्रसाद रेऊ
३६ सरस्वती ( मासिक ) सन् १६१२
४० नागरी प्रचारिणी पत्रिका स० १६८१

### गुजराती ग्रन्थ—

४१ जैन साहित्य नो संक्षिप्त इतिहास मोहनलाल द० देसाई B A, LL B,
४२ जैन गूर्जर कविओ, भाग १ मोहनलाल द० देसाई B, A,, LL B,
४३ जैन गूर्जर कविओ, भाग २ मोहनलाल द० देसाइ B A, LL B,
४४ जैन ऐतिहासिक गूर्जर काव्य संचय, श्री जिनविजयजी
४५ ऐतिहासिक (जैन)रास संग्रह भाग ३ स० श्री विजयधर्मसूरिजी
४६ ऐतिहासिक(जैन)रास संग्रह भाग ४ स० श्री विद्याविजयजी
४७ प्रचीन तीर्थमाला संग्रह स० श्री विजयधर्मसूरिजी
४८ श्री जिनचन्द्र सूरिजी संक्षिप्त जीवन-चरित्र, प्र०श्री जिनदत्त-सूरि ज्ञान भण्डार बम्बई।

. ४६ सवा-सोमा — गोकुलदास द्वारकादास रायचुरा
. ५० आनन्द काव्य महोदधि मौ० ७ प्र० देवचद लाल० पुस्तकोद्धार फड सूरत।
५१ धर्म देशना — विजयधर्मसूरिजी
. ५२ समेत शिखिर स्पेशल ट्रेन स्मरणाक प्र० वडवाजैनमित्रमडल
. ५३ जैनयुग
. ५४ आत्मानन्द प्रकाश, ( मासिक )
. ५५ "जैन" ( साप्ताहिक पत्र ) रौप्य महोत्सव अक
५६ कॉन्फरेन्स हेरल्ड ( इतिहास-साहित्य अक )
. ५७ जैन साहित्य सशोधक (त्रैमासिक )

**प्राचीन भाषा—**

. ५८ श्री जिनचन्द्रसूरि अकबर-प्रतिबोध रास लब्धि कल्लोल (सं० १६५८ ) प्र० ए०- जैन का०स०
. ५६ युगप्रधान निर्वाण रास — समयप्रमोद ,,
. ६० श्रीपूज्य वाहण गीत — कुशललाभ ,,
. ६१ श्री जिनचन्द्र सूरि गीत न० १०८ अनेको सुकवि (हमारे स०मे)
६२ श्री जिनसिंह सूरि गीत ३१ — अनेको सुकवि (हमारे स० मे)
. ६३ श्री जिनराज सूरि रास — श्रीसार ( स० १६८१ ) ,,
. ६४ श्री जिनसागर सूरि रास — धर्मकीर्ति ( स० १६८१ ) ,,
६५ श्री निर्वाण रास — सुमतिवल्लभ (स०१७७०) ,,
. ६६ श्री हीरविजय सूरि रास — कवि ऋषभदास ( स० १६८५ ) प्र० आ० का० महो० मौ० ५वा

६७ प्रश्नोत्तर ग्रन्थ ( विचार रत्न सग्रह ) उ० जयसोमजी
६८ वेगड ( खरतर ) शाखा पट्टावली — हमारे सग्रहमे
६९ खरतरगच्छ पट्टावली — श्री जिन कृपाचन्द्र सूरि ज्ञान भण्डार
७० खरतर गच्छ पट्टावलियें — बडा उपासरा, बृहद् ज्ञान भडार
७१ जइत पद वेलि — कनकसोम ( स० १६२५ )
७२ शत्रुञ्जय यात्रा परिपाटी स्तवन — गुणरङ्ग ( स० १६१६ )
७३ शत्रुञ्जय यात्रा परिपाटी स्तवन — गुणविनय ( स० १६४४)
७४ शत्रुञ्जय यात्रा परिपाटी स्तवन — हर्षनन्दन ( स० १६७४ )
७५ „ „ „ „
७६ बच्छावत ( पद्य ) वशावली — हमारे सग्रहमे
७७ बच्छावत ( गद्य ) वशावली — „
७८ „ „ वंश ख्यात श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरि ज्ञानभडार
७९ वासुपूज्य स्तवन — समयराज
८० „ — अपूर्ण
८१ प्रशस्ति सग्रह — सग्राहक—अगरचन्द, भंवरलाल नाहटा

English—

८२ Ain-i-Akabari. Trans by H Blochmann
८३ Akabar Nama
८४ Akbar the Great Moghul by Vincent A. smith
८५ A short History of Muslim Rule in India
८६ Al-Badaoni
८७ The Jain teachers of Akabar by Vincent A Smith ( Commemoration Vollum )

वंगला—

८८ जहागीरेर आत्म जीवनी — कुमुदिनी मित्र

## हस्त लिखित जैन ग्रन्थोकी सूचियें—

. ८६ जैसलमेर भाण्डागारीय ग्रन्थाना सूचि स० लालचद भ० गाधी
. ९० लींबडी भडार सुचि प्र० आगमोदयसमिती
. ९१ जैन ग्रन्थावली प्र० जैन श्वेताम्बर कॉन्फरेन्स
. ९२ जैन ग्रन्थाना सूचि कलकत्ता सस्कृत कालेज
९३ बीकानेर वृहत् ज्ञानभडारसूचि अष्टकम् सू० अगरचन्द नाहटा
(१) जिनहर्षसूरि (२) महिमा भक्ति (३) ज्ञानसागर (४) अभयसिंह
(५) अबीरचदजी (६) महरचदजी (७) पनालालजी (८)
९४ श्रीपूज्य जिनचारित्र सूरि सग्रह सू० अगरचद नाहटा
९५ उपाध्याय क्षमाकल्याणजी भडार सू० श्रीगणाधीश हरि-
सागरजी, सशो० अगरचद नाहटा
९६ श्री जिन कृपाचद्रसूरि ज्ञानभडार सू० अगरचद नाहटा
९७ उपा० जयचन्द्रजी भडार (लक्ष्मीमोहन शाला) बीकानेर
९८ बिकानेर स्टेट लायब्रेरी
९९ सोठिया लायब्रेरी ( अगरचन्द भैरू दान)
१०० बोरायसेरी खरतर गच्छ भडार सू० भवरलाल नाहटा
१०१ अभयजैन पुस्तकालय सू० अगरचंद भवरलाल
१०२ कुशलचद्र सूरि पुस्तकालय
१०३ हेमचद्र सूरि पुस्तकालय
.१०४ चुनीलालजी यति समह अवलोकन नोटस्
१०५ पुनमचद्रजी यति समह० सू० अगरचद नाहटा
१०६ जयपुर पंचायती भडार (खरतर) सू० गणाधीश हरिसागरजी

१०७ हरिसागरजी पुस्तकालय, लोहावट
१०८ कोटा खरतर पचायती भंडार सू० वीरपुत्र आनन्दसागरजी
१०९ वीरपुत्र आनदसागरजी पुस्तकालय कोटा,
११० अवाला भंडार सूचि सू० प्रो० बनारसीदासजी जैन, M A
१११ गुलाब कुमारी लायब्रेरी (P C) सूचि कलकत्ता
११२ नित्य मणि विनय जैन लायब्रेरी सूचि कलकत्ता
११३ रायबद्रीदासजी म्युजियम,,--अवलोकन नोटस्*
११४ प० प्र० सूर्यमलजी यति संग्रह, कलकत्ता
११५ रोयल एसोटिक सोसायटी (जैन ग्रन्थ सूचि)
११६ नेमिचद्राचार्य—भडार सूचि, काशी
११७ नेमिनाथजी भडार सूचि, अजीमगज
११८ ज्ञानचद्रजी यति सग्रह (अजीमगज) अवलोकन नोटस्
११९ फतेसिंहजी कोठारी सग्रह (अजीमगज) अवलोकन नोटस्
१२० जिनदत्तसूरि ज्ञानभडार सूचि० सूरत
१२१ भक्तिविजयजी भडार—भावनगर (आत्मानद सभा)
१२२ जैनधर्मप्रसारक सभा पुस्तकालय
१२३ आणदजी कल्याणजी भडार, पालीताना
१२४ हेमचद्र सूरिपाठशाला पुस्तकालय, पालीताना
१२५ नरोत्तमदासजी M A, संग्रह—अवलोकन नोटस्

और भी अनेको हस्तलिखित ग्रन्थो, उनकी प्रशस्तियो, पट्टावलियो, विकीर्ण पत्रो, डा० भाडारकर, पीटर्सन, बुल्हर आदि कृत रिपोर्टो आदि प्रकाशित अप्रकाशित सैकडो ग्रन्थोके अवलोकन, अध्ययन और सहायसे इस ग्रन्थका सकलन किया गया है।

* जिनकी सूचियें बनी हुई नहीं हैं।

## ॥ सांकेतिक अक्षरोंका स्पष्टीकरण ॥

अ०—अपूर्ण
आ०—आचार्य
आ०-आषाढ,आश्विन
इ०—ईस्वी
उ०—उपाध्याय
उपा०—उपाध्याय
ऋ०—ऋषिमती (तपा)
ऐ०—ऐतिहासिक
कॉ०—कॉफरिया
का०—कार्तिक
का०—कारितम्
कृ०—कृष्णपक्ष
कृपा०-कृपाचन्द्रसूरि
ख०—खरतर
गा०—गाथा
गु०—गुटका
च०—चउमास
चै०—चैत्र
चौ०—चौपइ

जय०—जयचन्दजी यति (बीकानेर)
जे०—जेठ (ज्येष्ट)
जे० भ० सूचि०—जैसलमेर भाण्डागारीय ग्रन्थाना सूचि
जै० गु० क०—जैन गूजर कविओ
ठि०—ठिकाना
डा०—डावडा
डॉ०—डाक्टर
न०—नम्बर
प०—पत्र
प्र०—प्रति
प्र०—प्रथम
प्र०—प्रतिष्ठितम्
प्र०—परिवार
प्रत्ये०—प्रत्येक बुद्ध
प्रा०—प्राकृत
पु०—पुस्तक

पृ०—पृष्ट
प्र०—प्रकाशित
प्रो०—प्रोफेसर
प०—पण्डित
फा०—फाल्गुन
बाला०—बालावबोध
बालाव०— ”
बु०—बुधवार
भा०—भार्या
भा०—भाग
भ०—भंडार
महो०—महोपाध्याय
मा०—माघ
मि०—मिगसर
मु०—मुंहता
मु०—मुकाम
मू०—मूल
मो०—मोहनलाल
द०—दलीचद देसाइ
मौ०—मौक्ति

## चित्र सूची



युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि मूर्ति ( परिचय पृ० १५५-८ )

* ॐ *

# युग-प्रधान श्रीजिन-चन्द्रसूरि

## पहला प्रकरण

## परिस्थिति



रतवर्षका प्राचीन इतिहास अतिशय उज्ज्वल और गौरवमय है। क्या धार्मिक, क्या सामाजिक और क्या राजनैतिक सभी क्षेत्रो मे इस देशका अतीत गौरव--सर्वोपरि है। भगवान महावीर और बुद्ध जैसे प्रातः स्मरणीय परम तत्त्ववेत्ता महापुरुष इसी रत्नगर्भा भारत-वसुन्धरामे अवतीर्ण हुए हैं। जिनके गहन तत्वज्ञान के अध्ययनसे विज्ञान और शिक्षाके सर्वोपरि धुरंधर पाश्चात्य विद्वान भी चकित और मुग्ध हो जाते हैं। जिन आधुनिक आविष्कारोको गहन तत्व-चिन्तन और निरन्तर परिश्रमसे पाश्चात्य विद्वानोने आविष्कृत कर समस्त संसारको चमत्कृत किया है, उनका अस्तित्व, भारतके प्राचीन साहित्य मे हजारो वर्ष पहिले ही

से इस देशमे होनेके प्रमाण मिलते हैं। अध्यात्म-तत्वकी चिन्तामें यह देश इतना समुन्नत था कि जिसकी समता करनेका सौभाग्य किसी भी देशको अद्यावधि प्राप्त नहीं हुवा है। आज भी उस विषयका भारतीय साहित्य इतना विपुल और गहन है कि जिसको पूर्णत समझनेके लिये पाश्चात्य धुरन्धर विद्वान् भी असमर्थसे ज्ञात होते हैं।

आध्यात्मिक एवं धार्मिक तत्व चिन्ताकी इतनी समुन्नतिके साथ साथ यहा का सामाजिक उत्कर्ष भी किसी प्रकार न्यून नहीं था। शिशुपालन, शिक्षा, गृहस्थ-जीवन, कौटुम्बिक सम्बन्ध, पारस्परिक व्यवहार और सामाजिक संगठन वहुत ही सुव्यवस्थित था। मानव जीवनकी सफलताके प्रत्येक अङ्गोका सौन्दर्य्य पूर्ण विकसित था। आचार विचारोकी पवित्रता आदि भारतकी सामाजिक उन्नतिका उज्ज्वल अतीत गौरव इतिहासके पृष्ठोमे स्वर्णाक्षरोसे अङ्कित है।

राजनैतिक क्षेत्रमे भारत भूमिके उज्वल रत्न सम्राट चन्द्रगुप्त, अशोक, सम्प्रति, विक्रमादित्य, भोज, कुमारपाल आदि प्रजावत्सल नृपतियोका उच्च स्थान है। कौटिल्यके अर्थ-शास्त्र आदि भारतीय प्राचीन राजनैतिक ग्रन्थोमे राज्यमर्य्यादा, राजनीति, राज्यव्यवस्था, युद्ध नीति, अधिकारियोका कर्त्तव्य, जन समुदायके सुखके प्रति लक्ष्य आदि राजकीय सभी अङ्गोके सुव्यवस्थित होनेके उल्लेख पाये जाते हैं।

"किसीके सब दिन सरखे न होई" यह कहावत भी भारतवर्ष पर पूर्णत चरितार्थ हुई। कालचक्रके प्रबल झकोरोने पारस्परिक फूट आदि दुर्गुण पैदाकर इस देशकी उन्नतिको दिनो दिन हीयमान करना

प्रारम्भ किया और क्रमश देशकी शक्ति इतनी क्षीण हो गई कि जिससे उसपर विदेशी लोगोने आक्रमणकर अपना आधिपत्य जमा लिया।

जबसे रत्नगर्भा भारत-वसुन्धराकी राज्य सत्ता आर्य्य-शासकोसे नष्ट होकर यवनोके हाथमे चली गई तबसे भारतकी प्राचीन सस्कृति मे विकृति-सूचक गहरा परिवर्त्तन होने लगा। मुसलमान बादशाहोने अपनी कठोर राजनीति और असहिष्णुवृत्ति से भारतकी अनुपम स्थापत्य कला और विशिष्ट-विशाल साहित्यपर कल्पनातीत वज्राघातके साथ-साथ भारतवासी लोगोको असह्य यत्रणाए देना प्रारम्भ कर दिया था।

इस्लाम धर्मकी एकमात्र वृद्धिके अभिलाषी अत्याचारी म्लेच्छोने अपनी अन्याय प्रवृत्तिको चरम सीमा तक पहुचा दी थी। इस्लाम धर्म अस्वीकार करनेवाले आर्योपर नाना प्रकारके कर लगा दियेगये थे। उनमेसे जजिया नामका कर बडा ही भयानक और अन्यायपूर्ण था। इस करको न देनेवाली आर्य्य-प्रजाके प्राण तक ले लिये जाते थे। जगह-जगह पर मुसलमानोने आर्य्योके देव मन्दिरोको तुडवा कर उनके स्थान पर* मस्जिदे स्थापनकर आर्य्य प्रजाके हृदयमे मार्मिक वेदना उत्पन्न कर दी थी।

जिस साहित्यके बिना समाजकी अवस्थिति भी सदेहपूर्ण है, उस सैकडो वर्षोसे सचित प्राचीन साहित्य और धर्म-ग्रन्थोको इतनी प्रचुर-सख्यामे जलाकर व कुओमे डालकर नष्ट कर दिया कि जिनक

* इसके प्रमाण-स्वरूप आज भी कई मस्जिदोंमें आर्य्य मन्दिरोंके खण्ड-स्तम्भ, और ध्वस्त-शिलालेख दिवारोंमें लगे हुये पाये जाते हैं।

नाम भी अवशेष नहीं रहे। साहित्य प्रेमियोंसे यह छिपा नहीं है कि सैकड़ो ग्रन्थोके अस्तित्वके प्रमाण मिलनेपर भी वे ग्रन्थ अब नहीं मिलते।

आदर्श और उन्नत शिल्पकला के आगार हजारो देवमन्दिर तुड़वाकर छिन्न-भिन्न कर दिये गये। जिनका ध्वसावशेष अब भी कहीं २ अपनी प्राचीन गौरवगाथाका परिचय दे रहा है। उनके धराशायी होनेके एकमात्र कारण मुसलमान अधिकारी ही थे। यह अन्याय प्रवृत्ति पठान शासकोके समयमे तो बहुत ही बढ़ चुकी थी, जिसका वर्णन श्रीयुक्त बंकिमचन्द्र लाहिड़ी अपनी पुस्तक "सम्राट अकबर" मे इस प्रकार करते हैं —

"পাঠানদিগের অত্যাচারে ভারত শ্মশান অবস্থায় প্রাপ্ত হইল, যে সাহিত্য কানন নিত্য নব নব কুসুমের সৌন্দর্য্য ও সুগন্ধে আমোদিত থাকিত তাহাও বিশুষ্ক হইল, স্বদেশ হিতৈষিতা, নিস্বার্থপরতা, জ্ঞান ও ধর্ম্ম সকলই ভারত হইতে অন্তর্হিত হইল, সমগ্র দেশ বিষাদ ও অনুৎসাহের কৃষ্ণ ছায়ায় আবৃত হইল।"

अर्थात्—पठानोके अत्याचारसे भारत श्मशान अवस्थाको प्राप्त हो गया, जो साहित्य वाटिका सर्वदा नये नये पुष्पोके सौन्दर्य और सुगन्धिसे प्रफुल्लित रहती थी वह भी सूख गई। स्वदेश-हितैषिता, निःस्वार्थ परायणता, ज्ञान और धर्म ये सब भारतवर्षसे अलग हो गये। सारा देश विषाद और अनुत्साहकी काली घटाओसे आच्छादित हो गया।

एक तो आर्य्य लोग पठानोके त्राससे त्रस्त हो ही चुके थे दूसरे

तैमूरलङ्गके भयङ्कर आक्रमणसे तो भारतवर्ष को इतनी क्षति पहुची कि जिसका वर्णन किया जाय तो एक छोटा-मोटा ग्रन्थ बन जाय। सक्षेपमे इतना कहना ही पर्य्याप्त होगा कि उन्होने अपनी पाशविक लोभ और काम वृत्तिको पूरी करनेके लिये जनहत्या,लूटपाट, और स्त्रियोंका सतीत्व भग आदि अमानुषिक दुष्कृत्य करके भारतीय प्रजाको अत्यन्त कष्ट पहुचानेमे कोई कसर नहीं रखी। तैमूरके इस उपद्रवसे पठानोंकी राज्य-सत्ताको धक्का अवश्य ही पहुचा, किन्तु तो भी उन्होंने अपना जाति-स्वभाव न छोडा।

सिकन्दर लोदी आदि बादशाहोने मन्दिरोंको नष्ट करनेका काम चालू ही रखा। कविवर लावण्यसमय ने क्या ही मार्मिक शब्दोंमे कहा है —

*जिहां जिहां जाणइ हिंदू नाम, तिहां तिहां देश उजाडइ गाम।*
*हिन्दू नो अवतरियउ काल, तू चालि तू करि सभाल॥*

(स० १५८९ में रचित "विमल प्रबन्ध")

उसके पश्चात् मुगल बादशाहो के समयमे भी यह अत्याचार ज्योंका त्यों बना रहा। सन् १५३० ई० में बाबरका देहान्त होजाने से उसका पुत्र हुमायूँ बाईस वर्षकी अवस्थामे दिल्लीकी राज-गद्दी पर बैठा, किन्तु अभागे भारतमे तो अशान्ति ही रही। और तो दूर रहा स्वय हुमायू भी कितने ही वर्षों तक पदच्युत होकर देश-देशमे भटकता फिरा इस प्रवासमे उसके एक तेजस्वी पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम उसने "जलालुद्दीन अकबर" रखा। कुछ समयके पश्चात् हुमायूँ ने युद्ध करके दिल्लीका राज्य फिरसे ले लिया।

उसकी मृत्युके पीछे अकबर राज-गद्दी पर बैठा,परन्तु इसकी बाल्यावस्था होनेके कारण कुछ वर्षों तक तो राज्यमे अशान्ति ही रही। क्योकि उसके विश्वस्त पुरुष बैरम खा के हाथमे ही राज्य व्यवस्थाकी सारी बागडोर थी। वह बड़ा क्रूर और अन्यायी था, इससे प्रजाको सुख मिलना तो दूर ही रहा, स्वयं अकबर ही के विरुद्ध उसने षडयंत्रकी रचना की थी, परन्तु अकबरको मालुम हो जाने से उसने अपने सेनापति मुनीम खॉ को युद्धके लिये पंजाब भेजकर सन् १५६० ई० मे बैरम खॉ को कैद करवाया।

अब दिल्लीका निष्कण्टक राज्य अकबरके हाथ आ गया। वह लगभग बारह वर्षों तक युद्ध करके अधिकाश भारतका स्वामी होकर सुखपूर्वक राज्य करने लगा। शताब्दियोंके कष्टसे ऊबी हुई भारत-जनताको उस समय कुछ शान्ति मिली।

भारतकी मध्यकालीन राजनैतिक परिस्थितिके विषयमे ऊपर संक्षिप्त प्रकाश डाला गया है। राजनैतिक और सामाजिक विषयमे परस्पर घनिष्टता होनेके कारणसे उस समयकी सामाजिक परिस्थिति भी अति शोचनीय और विकट हो गयी थी। अपने पूर्वजोंके गौरवकी रक्षा करना तो दूर रहा, किन्तु अपना जीवन-निर्वाह भी करना आर्य्य प्रजाके लिये दुष्वार हो गया था। साहित्य रचनादिका कार्य तो मन्द गतिसे होता ही रहा, लेकिन आचार-विचारोंमे वह प्राचीन पवित्रता न रह सकी। अपने-अपने धन, कुटुम्ब और धर्मकी रक्षामे ही जब वे समर्थ न हो सके, तब पारस्परिक प्रेम, संगठन, शिक्षादि आवश्यकीय बातोंका ह्रास होना

स्वाभाविक ही था। बाल-विवाह, पर्देकी प्रथा आदि कतिपय घातक कुरीतियाँ भी इसी समयमे प्रचलित हुई थीं, जिनका स्रोत अद्यावधि अविच्छिन्न गतिसे चलता आ रहा है।

इस सकटावस्थामे वास्तविक धार्मिकता मुरझा गयी थी। ऊपरोपरि कष्टोंको सहन करते समय आध्यात्मिक-तत्व-चिन्ताका तो अवकाश ही कहा था? धार्मिक * फिर्काबन्दियोने बेहद सत्ता जमा ली थी। शुष्क क्रियाकाण्ड और व्यर्थके आडम्बरोंमे सच्ची धार्मिकता समझी जाने लगी। साधुओंके कठिन आचार-विचारोंमे भी क्रमश शिथिलताने प्रवेशकर अपना अड्डा जमा लिया था।

अवनतिके पश्चात् उन्नतिका होना, यह सहज स्वाभाविक नियम है, इसी अटल नियमके अनुसार समय-समयपर विकृत-परिस्थितिको सुधारनेके लिये महापुरुषोंका जन्म हुआ करता है। आवश्यकतानुसार उस समय भी कई महापुरुष अवतीर्ण हुए, जिनमे प्रात स्मरणीय, पूज्यपाद, महोपकारी असाधारण प्रतिभासम्पन्न हमारे चरित्र-नायक स्वनामधन्य श्री जिनचन्द्रसूरिजी महाराजका एक उल्लेखनीय अग्र-स्थान है।

आर्य्य प्रजाके सुखके हेतु ही आपका मङ्गलमय जन्म हुआ था। आपने मात्र नौ वर्षकी अवस्थामें वैराग्यवासित होकर, भागवती-

* श्रीयुक्त मोहनलालजी देसाई बी० ए० एल एल० बी० अपने 'जैन साहित्य नो सक्षिप्त इतिहास' में इस प्रकार लिखते हैं —

एकदरे दरेक दर्शन मा—सम्प्रदाय मा भाग तोड—भिन्नता-विच्छिन्नता थएलछे। मुसल्मानी काल हतो, लोकमां अनेक जात ना खलभलाट थधु-थधु थया करता, राजस्थिति, व्यापार, रहणी करणी विगेरे बदलाया।'

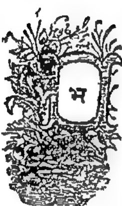
दीक्षा ग्रहण की, सतरह् वर्षकी अवस्थामे गच्छनायक आचार्य-पद प्राप्तकर शीघ्र ही क्रिया-उद्धार करके दुष्कर चरित्रपालकोमे अग्रणीय हुए। सूरीश्वरने अपने अमित प्रभावसे खरतर गच्छके साधुओंकी शिथिलताको दूर हटाकर दूसरोके लिये आदर्श-मार्ग प्रकाशित किया।

जैन शासनकी प्रभावनाके हेतु सम्राट अकबरके विनीत-आमन्त्रणसे सूरि महाराज लाहौर पधारे, वहा सम्राट्पर अपने सदुपदेशोसे अलौकिक प्रभाव डालकर समस्त भारतीय प्रजाको सुखी बनाया। सम्राट्के द्वारा अमारि फरमान प्रकाशित कराकर हिंसा-प्रधान यवन-राजमे भी अहिंसा धर्मका अकथनीय प्रचार करके मूक प्राणियोका हितसाधन किया, बिचारे जलचर और स्थलचर पशु भी निर्भय होकर सूरि महाराजका अन्तरङ्ग भावोसे यशोगान करने लगे।

आपने अपने लोकोत्तर प्रभावके कारण उस बिगडे हुए समयमे युगान्तर-सा उपस्थित कर दिया, इसीसे आपके सद्गुणोपर मुग्ध होकर सम्राट् अकबरने आपको *"युग-प्रधान"* पदसे अलङ्कृत किया। जैन तीर्थोंकी रक्षाके निमित्त सम्राट्से फरमानपत्र प्रकाशित करवाकर जैन-शासनकी अनुपम सेवा की। आपके जीवनकी उल्लेखनीय घटना एक यह भी है कि स०१६६९ मे सम्राट् जहागीरने जब साधु विहार-प्रतिबन्धक एक फरमान जारी किया, तब आप ही ने आगरे पधारकर उस घातक फरमानको रद्द करवाके जैन शासनकी अभूतपूर्व प्रभावना की थी। पाठकोको इन सब बातोका परिचय आपकी इस जीवनीसे भली भाति मिल जायगा।

# दूसरा प्रकरण

## ×सूरि-परम्परा




गवान महावीरकी अविच्छिन्न परम्परामे प्रभावक आचार्य श्री उद्योतनसूरिजी हुए। कहा जाता है कि एक समय उत्तम मुहूर्त देखकर आपने अपने पासमे रहे हुए चौरासी शिष्योको एक ही समयमे आचार्य पद दिया। उन चौरासी आचार्योंसे चौरासी गच्छोकी स्थापना हुई। सूरिजीके विनयी शिष्य श्री वर्द्धमान सूरिजी थे। उन्होने स० १०५५ मे

× इस प्रकरणमें सूरि-परम्परा बहुत ही सक्षिप्त लिखी गयी है, क्योंकि इसका हेतु केवल चरित्र-नायककी गुरुपरम्परा बतलानेका ही है। अत इस प्रकरणमें उल्लिखित आचार्योंका विशेष परिचय "खरतरगच्छपट्टावली सग्रह", से कर लेना चाहिये। श्री वर्द्धमानसूरिजीसे श्रीजिनदत्तसूरिजी पर्य्यंतका सविशेष वर्णन 'गणधरसार्द्ध-शतक बृहद्वृत्ति' में है, इसी ग्रथसे उद्धृत श्री जिन वल्लभ सूरिजी और श्री जिनदत्त सूरिजीका जीवनचरित्र अपभ्रश काव्यत्रयी में विशेष ज्ञातव्यके साथ प्रकाशित हो चुका है। श्री जिनदत्त सूरिजीके पश्चात् श्री जिनचन्द्र सूरिजीसे जिनपद्म सूरिजी तकका प्रामाणिक विस्तृत-जीवन हमें उपलब्ध पत्र ८६ की पट्टावलीमें है। उस ग्रन्थसे सार

उपदेशपद टीका बनाई और गिरिराज आबूपर मन्त्रीश्वर विमल शाहके कराये हुए भव्य मन्दिरोंकी सं० १०८८ मे प्रतिष्ठा की। आपके जिनेश्वर सूरिजी और बुद्धिसागर सूरिजी नामक दो विद्वान शिष्य थे। एक समय आप अपने शिष्य-मण्डलके साथ अणहिलपुर पत्तनमें पधारे। वहा * चैत्य वासियोका विशेष प्राबल्य

मात्र परिचय हमारे तरफसे प्रकाशित 'ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह' में देखना चाहिये। श्री जिन भद्रसूरिजीका विशेष परिचय 'विज्ञप्ति-त्रिवेणी' और 'जेसलमेर-भाण्डागारीय-ग्रन्थाना-सूचि' में प्रकाशित हो चुका है। नवाङ्गीवृत्ति कारक श्री अभयदेव सूरिजीका जीवन-चरित्र प्रभावक चरित्रमें भी पठनीय है। भाषाग्रंथोंमें श्री जिनदत्त सूरि जीवन-चरित्रके दो भाग और 'गणधरसार्द्धशतक भाषान्तर' रत्नसागर भाग दूसरा, 'जैन गूर्जर-कविओ भाग दूसरा आदि ग्रन्थ भी खरतर गच्छके आचार्योंके चरित्र जाननेमें सहायक है।

इस प्रकरणमें उल्लिखित आचार्योंके 'पट्टस्थापना' और स्वर्गवास-संवत आदि कई बातोंमे पाठान्तर पाये जाते हैं, लेकिन हमने ऐतिहासिक दृष्टिसे जिसे तथ्य समझा है, वसे ही लिखा है। विशेष उहापोह और उचित संशोधन भविष्यमें खरतर गच्छके विशाल इतिहास सम्पादनके समय करनेकी शुभाकांक्षा है।

भगवान महावीरसे श्री उद्योतनसूरिजी तकके आचार्योंके विषयमें गणधर-सार्द्ध-शतक वृहद् वृत्ति और पट्टावलियोंसे देखना चाहिये। इस परम्पराके आचार्योंके नाम, क्रम और संख्यामें पाठान्तर होनेके कारण हमने नहीं लिखा हैं। विद्वान लोग इसे विशेष खोज-शोध करके उद्योतन सूरिजी तक की परम्परामें उचित संशोधन करें।

* जिन मन्दिरोंमें ही रहनेवाले, देवद्रव्य उपभोगी, पान खाना आदि साध्वाचारसे विपरीत आचरण करनेवाले थे। इनके विशेष परिचयके लिये देखो संघ पट्टक वृत्ति और सम्बोध सत्तरी प्रकरण।

था, सुविहित साधुओंको वहाँ ठहरनेके लिये स्थान तक नहीं मिलता था। सूरिजी समुदाय सहित राज पुरोहितके यहा ठहरे, किन्तु वहा भी उन्हे न ठहरानेके लिये चैत्यवासियोंने राजाज्ञा प्राप्त की। सूरिजीके पाण्डित्य और सद्गुणोंसे पुरोहितजी मुग्ध हो चुके थे। अत उन्होंने दुर्लभ राजाको सूरिजीके कठिन साध्वाचार का वर्णन करते हुए उनके गुणोंसे परिचित कराया। नृपवर्य्यने वास्तविक साधुताका निर्णय करनेके लिये चैत्यवासियोंके साथ सूरि महाराजका शास्त्रार्थ कराना निश्चय किया।

सं० १०८० मे राजसभामें जिनेश्वर सूरिजीका चैत्यवासियोंके साथ शास्त्रार्थ हुआ। फलत चैत्यवासियोंकी पराजय हुई, क्योंकि शास्त्रोक्त विधिको पालन करनेमें वे असमर्थ थे, उनका चरित्र जैनागमोंसे विरुद्ध और दूषित था और सत्यकी विजय सब कालमें सुनिश्चित है। इससे महाराज दुर्लभने 'श्रीजिनेश्वर सूरिजीका पक्ष खरा' अर्थात सत्य प्रमाणित किया, तभीसे उनका समुदाय खरतर गच्छके नामसे प्रसिद्ध हुआ।

जिनेश्वर सूरिजी और बुद्धिसागर सूरिजी कठिन चारित्रवान होनेके साथ साथ प्रकाण्ड विद्वान भी थे। श्रीजिनेश्वरसूरिजीने

* खरतर गच्छकी उत्पत्तिका समय कई लोग सं० १२०४ लिखते है, लेकिन स० ११६८ में रचित पार्श्वनाथ चरित्र (देवभद्रसूरिकृत) की प्रशस्ति (जेसलमेर भण्डारमे ताडपत्रीय ग्रन्थाक २१६)और स० ११७० की लिखित पट्टावलीमें जिनेश्वर सूरिजीको खरतर बिरुद मिलनेका स्पष्ट उल्लेख है। इस विषयपर विशेष विचार हम एक स्वतन्त्र निबन्धके रूपमे प्रगट करेंगे।

मे ही आपके पुण्य प्रभावसे सरस्वती देवी प्रसन्न हुई, जिससे आपकी "बाल-धवल-कुर्चाल सरस्वती" विरुदसे प्रसिद्धि हुई। आपका स्वर्गवास स० १४०० के वैसाख शुक्ला १४ के दिन पाटणमे हुवा। आपकी कृतियोमे "स्थूलिभद्र फाग" उपलब्ध है।

उनके पश्चात् गच्छनायक श्रीजिनचन्द्र सूरिजी हुवे। सं० १४१५ मे स्थंभनक तीर्थमे आपका स्वर्गवास हुआ। आपके पट्टपर श्रीतरुण प्रभाचार्यने जिनोदयसूरिजीको स्थापित किया। इन्होने अनेक जिनालयोमे जिन-बिम्बोकी प्रतिष्ठाये की और कई स्थानोमे अमारि-उद्घोषणा कराके जैन-शासनकी महती प्रभावना की।

उनके पट्टधर श्रीजिनराज सूरिजी हुवे, जो न्याय-शास्त्रके प्रकाण्ड विद्वान थे। श्रीस्वर्णप्रभाचार्य, भुवनरत्नाचार्य और *सागरचन्द्राचार्यको आचार्य पद भी आप ही ने दिया था। सं० १४६१ मे देवलवाडामे आपका स्वर्गवास हुवा। आपके पट्टपर नार-चन्द्र टिप्पन कर्त्ता सागरचन्द्राचार्यने × श्रीजिनवर्द्धन सूरिजीको स्थापन किया जिनपर दैवी प्रकोप हो जानेके कारण सघकी आज्ञासे गच्छस्थिति रक्षणार्थ स० १४७५ मे श्रीजिनभद्र सूरिजीको गच्छनायक बनाया।

*इनकी परम्परामे अभी तक यतिवर्य्य छमेरमलजी और ऋद्धिकरणजी आदि हैं।

×खरतर गच्छकी पिप्पलक शाखाके स्थापक आप ही थे। आपकी स० १४७४ में रचित सप्तपदार्थी वृत्ति और दूसरा ग्रन्थ वाग्भटालङ्कार वृत्ति भी मिलती है।

श्रीजिनभद्रसूरिजी एक प्रतिभाशाली विद्वान व जैन साहित्यकी रक्षा और अभिवृद्धि करनेमे अग्रगण्य आचार्य हुवे हैं। आपने जेसलमेर, जालोर, देवगिरि, नागोर, पाटण, माडवगढ, आशापल्ली, कर्णावती, खम्भात आदि स्थानोपर हजारो प्राचीन ग्रन्थ और हजारो नवीन ग्रन्थ लिखा करके भण्डारोमे सुरक्षित किये, जिनके लिए केवल जैन समाज ही नहीं किन्तु सारा साहित्य-ससार भी चिर कृतज्ञ रहेगा। आपने जिन-विम्बोकी प्रतिष्ठा प्रचुर प्रमाणमे की थी, उनमे से सैकडो अब भी विद्यमान हैं।

इनका बनाया हुआ जिनसत्तरीप्रकरण (गा २२०) प्राकृत भाषा का उपलब्ध है। इनकी हस्तलिखित सुन्दर "योग-विधि"की प्रति श्रीपूज्यजी (बीकानेर) के संग्रहमे है। स० १५०१ मे तपारत्न कृत षष्टिशतक-वृत्ति का आप ही ने सशोधन किया था।

श्रीभावप्रभाचार्य और कीर्तिरत्नाचार्य को आपने ही आचार्य पदसे अलकृत किया था। स १५१४ मिगसर कृष्ण ६ को कुम्भल-मेरमे आपका स्वर्गवास हुआ।

आपके पट्टपर श्रीकीर्तिरत्नाचार्य * ने श्रीजिनचन्द्रसूरिजीको स्थापित किया। श्रीधर्मरत्नसूरि, गुणरत्नसूरि आदिको इन्होने ही

* आचार्य पद प्राप्तिके पूर्व आपका नाम कीर्तिराज उपाध्याय था। स० १४९९ (?)में आपने "नेमिनाथ महाकाव्य"बनाया। आपकी जीवनीके विषयमें हमारी ओरसे प्रकाशित "ऐतिहासिक-जैन-काव्य-सग्रह" देखें। आपकी परम्परामे, परम गीतार्थ वयोवृद्ध आचार्य श्रीजिनकृपाचन्द्र सूरिजी आदि विद्यमान हैं।

आचार्य पद दिया। स० १५३० मे जैसलमेरमे आपका स्वर्गवास हुआ। इन्होंने अपने पट्टपर स्वहस्तसे श्रीजिनसमुद्रसूरिजीको स्थापन किया। उन्होने पञ्च-नदी साधन आदि करके खरतर गच्छकी उन्नति की। स० १५३६ मे जैसलमेरके श्रीअष्टापदप्रासादमे प्रतिष्ठा की। सं० १५५५ अहमदाबादमे इनका स्वर्गवास हुआ। इनके पश्चात् गच्छनायक श्रीजिनहंससूरिजी हुए, जिन्होने स०१५७३ में बीकानेर मे "आचाराग दीपिका" बनाई। सिकन्दर लोदी बादशाहको चमत्कृत कर पाचसौ (५००) बन्दीजनोको कारागारसे मुक्त करवाया था। इनका स्वर्गवास स० १५८? मे पाटणमे हुआ। अपने पट्टपर इन्होने श्रीजिनमाणिक्यसूरिजीको स्थापित किया। जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है —

इनका जन्म स० १५४९ मे कूकड चोपडा गोत्रीय सघपति राउलदेकी धर्म-पत्नी रयणादेवीकी कुक्षिसे हुआ। स० १५६० मे दीक्षा ग्रहण करके शास्त्राभ्यास किया। इनकी विद्वत्ता और योग्यताको देखकर गच्छनायक श्रीजिनहंससूरिजीने स०१५८२ मिती माघ शुक्ला ५ को बालाहिक गोत्रीय शाह देवराज कृत नन्दी-महोत्सव पूर्वक आचार्य पद देकर अपने पट्टपर स्थापन किया। इन्होने गूर्जर, पूर्व, सिन्धु-देश और मारवाडमे विहार किया। सं० १५९३ माघ शुक्ला १ गुरुवारको बीकानेरके मन्त्रीश्वर कर्मसिंहके बनवाये हुए श्रीनमिनाथ स्वामीके मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। सिन्धु देशमे शाह धनपति कृत महोत्सवसे पञ्च नदीके पाच पीर आदिको

उस समय गच्छके साधुओंमें शिथिलाचार बढ़ गया था। आपको यह असह्य हुआ। और परिग्रह त्यागकर क्रियोद्धार करनेकी तीव्र उत्कण्ठा आपके हृदयमें जागृत हुई। बीकानेरके मन्त्रीश्वर संग्रामसिंह जी बच्छावतको भी गच्छकी इस परिस्थितिसे महान् असन्तोष था, इसलिये उन्होंने भी सूरि-महाराजको बीकानेर पधारकर गच्छकी सुव्यवस्था करनेके लिये विनती पत्र* भेजा। मन्त्रीश्वरकी इस नम्र-प्रेरणाने सोनेमें सुगन्धका-सा काम किया। श्री जिनमाणिक्य-सूरिजीने भावसे क्रियोद्धार करके यह सोचा कि पहले देरावर जाकर दादा श्री जिनकुशलसूरिजीकी यात्रा करके समस्त परिग्रह

---

* आपके आज्ञानुवर्ती उपाध्याय कनकतिलक जी आदिने सं० १६०६ में क्रिया-उद्धार किया था। परन्तु इससे गच्छके अन्य साधुओंपर प्रभाव न पड़ा। अतः संग्रामसिंह मन्त्रीने सारे गच्छकी स्थिति सुधारनेके लिये ही सूरिजीको विनतीपत्र भेजा था।

श्री कनकतिलकोपाध्यायजीका क्रियोद्धार-नियम पत्र हमें उपलब्ध हुआ है। जिसका आवश्यकीय अंश इस प्रकार है —

'संवत् १६०६ वर्षे दीवाली दिने श्री विक्रमनगरे प्र सुविहित गच्छ साधु मार्ग नी स्थिति सूत्र उपरि कीधी, ते समस्त ऋषिभरे प्रमाण करवी ॥'

'उपा० कनक तिलक वा० भावहर्षगणि वा० श्रीशुभवर्द्धनगणिइ यद्मो साध्वाचार कीधो छै।'

इसके बाद बावन बोलोंका वर्णन है, जिसमें साध्वाचारकी कठिन क्रिया व्यवस्था लिखी है। उन बोलों को अमान्य करे, उसे 'पासत्था' नामसे सम्बोधन किया है। यह पत्र जर्जरित होकर, एवं कई स्थानोंमें कटकर नष्ट हो गया है, इससे यहां सम्पूर्ण नकल न दे सके। यह जीर्ण पत्र मारुह साख दाह गोपा परमसुश्रावकके पठनार्थ लिखा गया था और हमारे संग्रहमें है।

त्याग करूंगा और मेरे आज्ञानुयायी साधु-वर्ग को भी शुद्ध साध्वाचार पालन करने को वाध्य करूंगा। प्रकट प्रभावी दादा कुशलसूरि जी मुझे इस कार्यमे सफलता दें। इस हेतुसे देरावर पधारे, वहा गुरु-दर्शन कर जेसलमेरको ओर वापिस आते हुए मार्गमे पिपासा-परिसह उत्पन्न हुआ, उस दिन आपके पञ्चमीका उपवास था। किन्तु उस प्रान्तमे जलका बहुत अभाव होनेके कारण कहीं भी जल न मिला। सन्ध्या हो गई, उसके पश्चात् थोडा-सा जल मिला। लोगोंने कहा महाराज! इसे ग्रहणकर अपनी पिपासा शान्त करें। उत्तरमे आपने दृढताके साथ कहा—वर्षों तक किये हुए चउविहार व्रतको क्या एक दिनके लिये भङ्ग कर दू? यह कदापि नहीं हो सकता। आयुष्य घटाने-बढानेकी शक्ति तो किसीमे भी नहीं है, जो भावी भाव सर्वज्ञ प्रभुने देखा है, वही होगा।

इस प्रकार शुभ अध्यवसायो द्वारा व्रत भङ्ग न करके स्वयं अनशन कर लिया। स १६१२ मिती आषाढ शुक्ला ५ को उपवासके दिन गुरु महाराज स्वर्ग पधारे। जिस स्थानमे आपका अग्नि-संस्कार हुआ, वहापर जैनसङ्घने एक सुन्दर स्तूप* बनवाया था, जिसका अब कुछ पता नहीं चलता।

हमारे चरित्रनायक श्री जिनचन्द्रसूरिजी आप के ही शिष्य-रत्न थे। जिनका यथाज्ञात जीवन-चरित्र अगले प्रकरणोमे लिखा जायगा।

---

* इस स्तूपका उल्लेख पद्मराज कृत "पच नदी साधन जिनचन्द्रसूरि गीत" में है सो आगेके प्रकरणमें दिया जायगा। एक पट्टावलीमें आपका

# तीसरा प्रकरण

## सूरि-परिचय





रवाड प्रान्तके जोधपुर राज्यमें खेतसर* नामक एक रमणीय ग्राम है। वहां ओसवाल जातीय रीहड गोत्रवाले श्रीवन्तशाह नामक श्रेष्ठि निवास करते थे। उनकी सुशीला धर्म-पत्नीका नाम श्रियादेवी था। आनन्द पूर्वक श्रावकधर्म पालन करते हुये, श्रिया देवीकी रत्नगर्भा कुक्षिमें एक पुण्य-

* खरतर गच्छकी अधिकांश पट्टावलियोंमें श्रीवन्त शाहका निवास-स्थान तिमरीके पार्श्व-वर्त्ती बडली ग्राम लिखा है, किन्तु उनसे भी अधिक प्राचीन, कवि कनकसोमकृत "श्रीजिनचन्द्रसूरि गीत," जो कि सं० १६२८ में कविके द्वारा लिखित उपलब्ध है, उसमें इस प्रकार लिखा है—

"मारवाडि देश उदार, तिहां धरमको विस्तार, तिहां खेतसर मझारि।
ओस वंश कउ सिणगार, सिरवन्तशाह उदार, तसु सिरिय देवी नार ॥२॥
सुख विलसता दिन-दिन्न, पुण्यवन्त गरभ उत्पन्न नव मास जिहाँ पडिपुन्न
जनमिया पुत्र रतन्न, तिहां खरचिया बहु धन्न, सब लोक कहइ धन धन्न॥३

इसमें खेतसर नाम स्पष्ट लिखा है। प्राचीन होनेसे हमने भी खेतसर का ही उल्लेख किया है।

वान् जीव उत्तम गतिसे च्यवन करके अवतीर्ण हुआ । गर्भकाल व्यतीत होनेपर सम्वत् १५९५ के मिती *चैत्र कृष्णा १२ के दिन शुभ लग्नमे कामदेवके सदृश रूप-लावण्य वाला, सूर्यके समान तेजस्वी, शुभ लक्षणयुक्त एक पुत्ररत्न जन्मा। इस शुभ अवसरके उपलक्ष्में श्रेष्ठिने बहुतसा द्रव्य व्यय करके आनन्द उत्सव मनाया। दसवें दिन उस बालकका नाम "सुलतान कुमार"† रखा गया। वे "सुलतान कुमार" दिन पर दिन शुक्ल पक्षके चन्द्रमाकी भाति बढने लगे। माता-पिताने उन्हें बाल्यकाल ही मे सकल कलाओंका अभ्यास कराके निपुण बनाया।

वि० स० १६०४× मे खरतर-गच्छनायक श्रीजिनमाणिक्य सूरिजी महाराज अपने शिष्य समुदायके साथ वहा पधारे। उनके पधारनेसे खेतसरमे धर्मकी अच्छी जागृति हुई। वहाके श्रावक दत्त-चित्त होकर धर्मकार्यमें प्रवृत हुए। उनका उपदेश-वचनामृत श्रवण कर "सुलतान-कुमार"के निर्मल चित्तमे वैराग्य भावना जागृत हुई। वे ससारके सुखोकी असारताको जानने लगे और उन्होने सच्चे सुखको देनेवाले चारित्र धर्मका पालन करनेके लिये दीक्षा लेनेका दृढ निश्चय कर लिया।

* विहार पत्र न० २ में मिती वैसाख शुक्ला १२ लिखा है।

† नाम थापना सुलतान, नित नित चढतइ वान, जगमें अमली मान।
(स० १६२८ लि० कनकसोम कृत जिनचन्द्रसूरिगीत)

× विहार-पत्र न० २ में स० १६०२ लिखा है, किन्तु रत्ननिधान कृत गीत, युगप्रधाननिर्वाण रास आदिमे सर्वत्र ही स० १६०४ लिखा है, अत यही ठीक है। स० १६०२ लेखककी भूलसे ही लिखा गया ज्ञात होता है।

अब सुलतान कुमार माताके पास आकर दीक्षा लेनेकी आज्ञा मागने लगे। उन्होंने निवेदन किया "माताजी ! यह ससार असार है। समस्त पौदूगलिक सुख क्षणभगुर हैं, इसलिए सच्चा आत्मिक सुख प्राप्त करनेके लिए मैं श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी महाराजके पास दीक्षा लेकर साधु हूँगा। अतएव आप कृपा कर अनुमति दीजिये !" माताने कहा—"बेटा अभी तुम बालक हो ! यौवनावस्थामे प्रवेश करना है, चारित्रका पालन करना महान् दुष्कर है; बडे होकर पीछे चारित्र ले लेना," इत्यादि वचनोसे साधु मार्गकी कठिनता बतलाई और दीक्षा लेनेकी मनाही की, किन्तु वैराग्य वासित हृदयवाले सुलतानकुमार कब माननेवाले थे। उन्होंने युक्तियोंसे माताके कथनोका उत्तर देकर अन्तमें अनुमति ले ही ली।

सुलतान कुमारने स० १६०४ मे श्रीजिनमाणिक्य सूरिजी के पास दीक्षा ली उनका दीक्षा-नाम गुरुमहाराज ने सुमतिधीर रखा। उस समय उनकी अवस्था केवल ६ ही वर्ष की थी, किन्तु विलक्षण बुद्धिवाले और गुरुभक्त होनेके कारण वे अल्पकाल ही मे ११ अगादि पढकर सकल शास्त्रोंके पारगत हुवे। शास्त्रवाद व्याख्यान कलादिमे निपुण होकर अपने गुरू श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी के साथ देश विदेशमे विचरने लगे।

देराउरसे जेसलमेर आते हुए स० १६१२ मिती आषाढ शुक्ला पञ्चमी को श्री जिनमाणिक्य सूरिजी का देहान्त हो जानेसे अन्य साधुओंके साथ विहार करके श्री सुमतिधीरजी जैसलमेर पधारे। अन्त समयमे श्री जिनमाणिक्य सूरिजी के साथ २४ शिष्य थे परन्तु

वे संयोगवश किसीको अपने पट्ट पर स्थापित न कर सके थे। जैसलमेर आनेके पश्चात् इस विषयमे परस्पर मतभेद हुवा, अन्तमे समस्त सघ और वहाके राउल श्रीमालदेवजी (राजकाल सं० १६०७ से १६१८ तक) ने वेगड गच्छके श्रीपूज्य — श्रीगुणप्रभ सूरिजी की

---

* श्रीगुणप्रभसूरि—खरतर गच्छकी वेगड शाखाके श्रीजिनमेरुसूरिके शिष्य थे। इनके विषयमें उक्त शाखाकी पट्टावलीमें निम्नलिखित वर्णन लिखा है —

तत्पट्टे ६१वा श्रीगुणप्रभसूरि, तेषिण महागीतारथ थया, सवा करोड रुपीया खरची गाना गुणदत्त राजलोइ पद ठवणो कियो, याचकाँ नै चूडा मे चूनडी पहिराया, पाच सोनैरी पुस्तक, पाच रूपेरी पुस्तक लिखावी गुरों ने विहराव्या एकदा जेसलमेर रा राउल हरराजकी राणी हरषम दे तेहनइ पुत्र कोइ नहीं, तिवारे गुरा आग आवी, दिन ३ हठ झाली बैठो, तिवारै तीजे दिन गुरे ओघानी दसी (फली) दीधी, कह्यो, जा पुत्र थास्यै। तिण नाम "भीम"दीजै तिवारै राणीइ उठता लोभ वशे बीजी फली तोडी लीधी तिवारइ गुरे कह्यो, मागी लेत तो रूडी पण अम्हारी दसी खाली नहीं जायइ पुत्र थास्यै नाम अर्जुन दीजइ, आठ वर्ष जीवस्यइ। हिवइ भीम पहिलो जायो एकदा परणवा गयो तिवारइ परणी पातिस्याह पासइ आव्यों, पातस्या कह्यौ राणी नवरोजें मेल्हि। तिवारइ भीमे न मोकली यत

"भीम न मूकी भाटिइ, नवरोजे नारी।
बीजाठाकुर बापडा करमूके दारी॥"

एहवौ भीम अवतारीक थयौ ए प्रथमज अवदात। हिवइ एकदा श्रीजिनमाणिक्य सूरि देराउरनी यानाइं गया, वाटइ काल प्रापति थया, चेला साथइ चउवीस हुँता पण पाट थापी सक्या नहीं, तिवारइ चेला पाछा ।, वाद करवा लागा, तिवारइ सहु मिली गुणप्रभ सूर पासे आव्यो

सम्मतिसे श्री सुमतिधीरजी को ही आचार्य पद के सर्वथा योग्य समझ कर उन्हें ही इस पद पर स्थापित करना निश्चित किया। राउल श्रीमालदेवजी खरतर गच्छके अनन्य भक्त थे, इसलिए उन्होंने

---

कह्यौ जेहनइ तुम्हे पाट थापस्यौ से प्रमाण। तिवारइ गुरे लहुडो चेलौ छल्-सान नामि जाति रीहड तेहनइ थाप्यउ,नाम जिनचद्रसूरि दीधउ। तिवारइ मडो चेलो धन्नउ नीसर्यो जाइ, पातिस्याह नइ मिली जेसलमेर ओलखी देखाडी, तदा जेसलमेर काबल आयो तिवारइ रावल सहु सर्व आधी गुरो नइ कह्यो। गुरे कह्यो "आंबिल तप घर घरि करउ अनइ म जाप जपउ" "आंबिल अमृत वाणी, धन्नो हुओ धूल धाणी" ते तिमज धूल धाणी हुओ, ए बीजो अवदात। हिवें एकदा श्रीजेसलमेरइ तीन वरसी दुकाल पड्यो, तिवारे राउल भीमइं गुरु वीनव्या, तिवारइ गुरे तीन उपवास करी धाम पदागुप्ट धारइ करी कायोत्सर्ग करी २२००) रुपइया रौ दीप धूप होम जाग करायो, तीजै दिन धरणेन्द्र प्रत्यक्ष थयो, वर मागि। कह्यौ मेह कीजइ तिवारइ धरणेन्द्र कहै सवा पुहर दिन चढतै मेह आविस्यइ काइ निरधौ राखिजो पारणो करीजो,गुरु कह्यौ काछली भरियें गढिसर भरियै ए सकेत छै। इम कही देवता विसरज्यौ हिवइ प्रभाते पारणो कीधो, सवा पुहर दिन चढते बादला उपड्या गाज वीज घटा करि मूसलधार वरसवा लागो गुरे चेलो १ अने १ श्रावक हाथे काछली देइ बेसाड्या इम आधो काछली थइ, काछली भारि पाछा उतरया हैवति खमि न सकें'गडीसर'दोढ वरस रो पाणी आयो, तिवारइ रावल भीम गुरो नतेडी पटोली पन्च शब्दो पचोल दीधौ कह्यो जे देगटा विना पटोली करणी बीजो कोइ करण न पावें पन्च शब्दो बजावण न पावइ इम मान महत्व दीधउ एहवा प्रभाविक स० १५८९ पाटपतिथया स० १६१५ स्वर्ग हुया।"

स्वयं बड़े समारोहके साथ नंदी महोत्सव कराके * श्री सुमतिधीरजी को सं० १६१२ भादवा शुक्ला ६ गुरुवारके दिन आचार्य पद दिलाया। वेगड़ गच्छके आचार्य श्री गुणप्रभ सूरिजी ने उन्हें सूरि मंत्र दिया। श्री जिनहंससूरिजी के विद्वान शिष्य महोपाध्याय श्री पुण्यसागरजी ने सूरि पदके योग, तप आदि कराये इसका उल्लेख एक प्राचीन पत्र मे है —

स्वस्ति श्री ॥ श्री पूज्य जी नउ कागल १ हिवणाइज आव्यउ कागल १ श्रीसंघ भणी आव्यउ। वाच्या, समाचार जाण्या। तत्र लिख्या जे पद स्थापना विधि लिखी मूकीज्यो। तप विगरि॥ श्री पूज्य श्री जिनचन्द्रसूरि भणी भाद्रवा माहे जेसलमेरु रइ धणी सूरि मन्त्र दिवराव्यउ। पछइ तप उपाध्याय श्री पुण्यसागरजी पासे वहा ए वात वडॉ पासे साभली छइ॥ परं हिवणा तत्र देश मॉहे रहता भला नहीं छइ। हिवणा इज। राजनगर थी राजा पासइ ब्राह्मण १ सावलदास रउ मूकिउ लहण। लेश भणी आयोछइ तियइ कहिउ। सावलदासइ अहम्मदाबाद रा भट्टारिकिया श्रावक तेडि नइ कह्यो। गच्छ भेलो करउ सु गच्छ भेलउ करिस्यइ। आ वात थे पण साभलि हुस्यइ। अत्र लिखो नहीं सु किम। इस्या वाता भरया नहीं तुरत विनती करिस्यइ। चउमास उतरी पछइ जोरावरी करी तुहा नइ

* स० १६२८ लिखित "कनकसोम" कृत गीतमें लिखा है—

"सोल्हसइ सपत बार, जिन माणिक्यसूरि पद धार, जिन सूरिमन्त्र उच्चार।

हीरकलशकृत गहूंलीमें भी —

"भादवा सुदि नवमी दिनइ, जेसलमेर मझारु हे

संघ सयल गुरु आइसइ, थापइ नाम अपारु हे ॥३॥"

राख्या तउ कुण आडो आवस्यइ । ते भई आ पिण तत्र आवी विरूप कीधउ तउ किम थास्यइ। विचार पहिलउ कीजइ तउ भला छइ। मारवाडि माहे। कोई एक श्रावक पद ठवणा कराविवा वालउ मिलाढज करिस्यइ। चउमास माहे नहीं बोलइ। चउमास उतरी तुरत विरूप करिस्यइ। थारा भाग्य छइ भला थास्यइ। पण अम्हा-नइ घणा मामला पड्या छइ। म्हे बीहा छा। तथा सुरि मन्त्र कियइ पासि तत्र लेस्यउ। अभ्रकीय (?) भट्टारक। आचार्य। इया पासइ आपा नइ लेना भलउ नहीं। बीजउ कुण देस्यइ। ते पिण समाचार देज्यो। विधि लिखता वेला काइ नहीं लागती॥ विधिप्रपा माँहि विधि वात रूप लिखी छइ॥ डोढ पत्र छइ॥ प० हर्षसोम योग्यम्। पण्डित होज्यो। जउ जोरावरि माडइ तउ ठाणा २२ श्री पूज्या भणी चलाइ देज्यो। पछइ थे चालिज्यो। रखे ढीला थाउ। इतरा मीम आवज्यो। तथा थे लिख्या जे फागुण चौमासा पछी आदेश देस्या। तत्रार्थे। अत्र आया पछी जोग्या जोग्य विचारी आदेशरी बात करज्यो प० भान प्रमोद भणी तेडाविज्यो। तै सर्व रूडी परइ जाणिइ छइ। मइ पिण कागल दीधउ छइ। जाणा छा पारणइ तुहा पासि आवस्यइ। सदा वदना जाणिज्यो॥ सावचेत रहिज्यो॥ तथा तुहा नइ गच्छ माहे जियइ यति रउ कागल नथी आव्यउ। जियइ सथ रउ पिण नहीं आयो। ते लिखिज्यो। मारवाडि वेगा पधारिज्यो। कागलरा समाचार उत्तर सहु लिखिज्यो। सर्वोपि साधुवर्गोऽनुनम्य॥ गुजरात रा जतो गुजरात माँहिज राखिज्यो। साथि मत आणउ॥ सघाडा ७ छै॥

आचार्यपद प्राप्तिके अनन्तर हमारे चरित्र नायक सुमतिधीरजी श्रीजिनचन्द्रसूरि नामसे प्रसिद्ध हुवे। जिसदिन उन्हे आचार्यपद मिला उसी रात्रिको उनके गुरु श्री जिनमाणिक्य सूरिजी ने स्वप्नमे प्रत्यक्ष दर्शन दिया और समवसरणको — पुस्तकमे रहे हुए माम्नाय सूरि मंत्र पत्रकी ओर संकेत करके अदृश्य हो गये। सं० १६१२ का चतुर्मास जैसलमेर हुआ। मंत्री श्री संग्रामसिंह वच्छावत ने सूरिजी को बीकानेर पधारनेके लिये विनती भेजी।

चतुर्मास पूर्ण हो जानेसे सूरिजी जैसलमेरसे विहार करके बीकानेर पधारे। सं० १६१३ का चतुर्मास वहीं किया। बीकानेर का प्राचीन×उपाश्रय शिथिलाचारी यतियोंके द्वारा रोका हुवा देखकर मंत्रीश्वर ने अपनी अश्वशालामे ही सूरिजी का चतुर्मास कराया। वह स्थान आजकल रांघडी चोकमे वडा उपाश्रयके नामसे प्रसिद्ध है।

सूरि जी गच्छमे फैले हुवे शिथिलाचारको देखकर सहम गये। जिस आत्म-सिद्धिके उद्देश्यसे चारित्र धर्मका वेष ग्रहण किया गया, उस आदर्शको यथावत् न पालना यह लोक-वञ्चनाके साथ-साथ आत्म-वञ्चना भी है। गच्छका सुधार करनेके लिये गच्छनायकको क्रिया उद्धार करना अनिवार्य है। इत्यादि विचार करते हुवे उनमें

---

* देखो क्षमाकल्याणजी कृत खरतर गच्छ पट्टावली आदि।

× यह उपाश्रय, बाजारमें श्री चिन्तामणिजीके मन्दिरके पास था, जहा आजकल मथेरण लोग निवास करते है। कहा जाता है कि (१) चिन्तामणिजीके मन्दिर (२) उपाश्रय और (३) बीकानेरके पुराने किलेकी नीव एक साथ डाली गयी थी।

आत्मबल और चारित्रकी अमोघ शक्तियोंका उल्लास होने लगा। अन्त मे उनके हृदयमे क्रियोद्धार करनेकी प्रबल भावना जागृत हुई, उन्होने सोचा त्यागके बिना सफलता नहीं है। शुद्ध चरित्र पालन करनेसे ही इष्ट ध्येयकी सिद्धि हो सकती है। परिग्रह धारी रहनेवाला व्यक्ति कभी स्वतत्र सत्योपदेश नहीं दे सकता। और न जनता पर प्रभाव ही जमा सकता है, उसे सदैव स्वार्थ-वश दबना पडता है। अतएव मुझे समस्त प्रकारसे सुख और कल्याणका दायक क्रियोद्धार करना ही श्रेय है। इत्यादि विचार करके स० १६१४*मिती चैत्र(कृष्ण) ७ को क्रियोद्धार किया। इस शुभ अवसर पर मन्त्रीश्वर श्रीसंग्रामसिंह बच्छावत ने बहुतसा द्रव्य व्यय करके उत्सव किया। उस समय बीकानेरमे ३०० गृही-यति † थे, जिनमे से १६ शिष्यो ने सर्वथा परिग्रह त्यागकर सूरिजी के पास पच महाव्रत धारण किये, बाकी सब मथेरण × गृहस्थ मथे (मस्तकपर) ऋण (पगडी धारण की) अर्थात चारित्र पालनेमे असमर्थ=मथेरण हुवे। वे अबतक लेखक और चित्रकारका काम करते है, किन्तु खेद है उनमेंसे कई लोग जैन धर्म छोडकर विधर्मी भी हो गए हैं। स० १६१४ का चतुर्मास सूरिजी ने बीकानेरमे ही किया, उस समय गच्छकी सुव्यवस्था और साधुओको उत्कृष्ट-चारित्र पालनेके लिये कई कठोर नियम बनाये उनका अवलोकन करनेसे तत्कालीन साधुओका चारित्र कितना उत्कृष्ट था यह भलीभाति ज्ञात हो जाता है। *

* खरतरगच्छ पट्टावली न० १ म क्रियोद्धारका स० १६१३ लिखत है, सभव है कि कत्ताने गुजराती पद्धतिका अनुकरण किया हो, विहारपत्रम तो स० १६१४ लिखा है।

† ऐसा श्री जिन कृपाचन्द्र सूरिजी महाराजका कथन है।

× ये लोग अपनेको मथेन या महात्मा लिखते हैं

* व्यवस्था-पत्रके लिये देखो "परिशिष्ट"

चतुर्मास पूर्ण हो जानेसे वहाँ से विहार करके आप महेवा पधारे। स० १६१५ का चतुर्मास वहाँ किया। विहार पत्र न० २ मे "तिहा छम्मासी तप" लिखा है, सभव है कि सूरि महाराज या और किसीने छम्मासी तप किया हो। सं० १६१६ का चतुर्मास जैसलमेरमे किया। विहार पत्र न० २ मे "वीदा०" लिखा है, इसका आशय हमारी समझमें नहीं आता। चतुर्मास पूर्ण हो जाने पर वहासे विहार करके आप गुजरात देशमे पधारे।

स० १६१६ मे माघ शुक्ला ११ को बीकानेरसे निकले हुवे यात्री-सघने महातीर्थ श्रीशत्रुञ्जयकी यात्रा करके वापस लौटते हुवे पाटण मे श्री जिनचन्द्र सूरिजी महाराजके पुनीत दर्शन किये थे। जिसका उल्लेख कविगुणरग कृत "चैत्य परिपाटी स्तवन" मे इस प्रकार है —

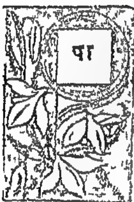
*"वडली नयर मझारि, दुइ चेइ नम्या पेख्यउ पाटण सिर तिलउ ए ॥२३॥ तिहि जिणिवर ना वृन्द, देहरासर पुनि, चर्च्या चित्त चोखइ करी ए। तिहा श्रीजिनचन्द्रसूरि, विहरन्ता गुरु वद्या मनह उच्छन धरी ए ॥"*

स० १६१७ का चतुर्मास सूरि-महाराजने पाटणमे किया, इस चतुर्मास मे एक महत्वकी घटना हुई, जिसका वर्णन अगले प्रकरणमे किया जायगा।



# चौथा प्रकरण

# पाटणमें चर्चा-जय




टण नगर गुजरात प्रान्तकी प्राचीन राजधानी है। इस नगरको बसानेका श्रेय नरपति वनराज चावडाको है। गुजरातके इतिहासमें इस नगरका बहुत ऊंचा स्थान है। धर्मिष्ट महाराज दुर्लभराजके समक्ष श्रीजिनेश्वरसूरिजी ने चैत्य-वासियोंको शास्त्रार्थमें जीत कर "खरतर" विरुद भी इसी नगरमें प्राप्त किया था, जिसका वर्णन दूसरे प्रकरणमें किया जा चुका है। सम्वत् १६१७ में हमारे चरित्र नायक श्रीजिनचन्द्र सूरिजी महाराज ने पाटणमें चातुर्मास किया। उस समय तप गच्छीय कदाग्रही-शिरोमणि, और उग्र-स्वभावी उ० धर्मसागरजी* ने लोगोंके समक्ष

---

* श्री मोहनलाल द० देसाई B A L L B अपने ग्रन्थ "जैन साहित्य नो संक्षिप्त इतिहासके पृ० ५६२ में इस प्रकार लिखते हैं —"तेओ घणा विद्वान पण अति उग्र स्वभावी अने हठ आग्रही ( प्रखर स्वसम्प्रदायी) हता।" धर्मसागरे तपा गच्छ साचो नै बीजा गच्छो खोटा जणावी तेमना

कहा कि नवाङ्गी-वृत्ति कर्त्ता श्रीअभयदेव सूरिजी खरतर गच्छमे नहीं हुए हैं, इस गच्छकी तो उत्पत्ति ही स० १२०४ मे हुई हे।" उन्होने केवल यह कहा ही नहीं वल्कि खरतर गच्छ वालोको उत्सूत्र-भाषी सिद्ध करनेके लिये "औष्ट्रिक-मतोत्सूत्र दीपिका" व "तत्व-तरङ्गिणी वृत्ति" ( कुमति-कद कुद्दाल ) आदि खडनात्मक विषैला-साहित्य बना कर जैन शासनमे कलहका विष बीज अकुरित किया।

इससे पहले* किसीने यह वात नहीं सुनी थी कि अभयदेवसूरि जी खरतर गच्छमे नहीं हुए। धर्मसागरजी के इस कुचेष्टा-पूर्ण अभूतपूर्व प्रतिपादनसे सारे जैन-शासनमे भारी हलचल मच गई। चारो तरफसे इसके प्रतिवाद होने लगे, सबके हृदयमे इस विष-वृक्षको

---

पर घगा प्रहारो उग्र-भाषा मा ग्रन्थोनामे तत्वतरंगिणी, प्रवचन परीक्षा—कुमति मत कुद्दाल रचो कर्यो खरतरो साथे पाटण मा स० १६१७ मा अभयदेव सुरि खरतर गच्छना न हता—एवोप्रबल वाद कर्यो ते वर्षे तेमने श्वेताम्बर सम्प्रदाय ना जुदा जुदा गच्छना आचार्यो ए उत्सूत्र प्ररूपणा ना कारणे जिन शासन थी वहिष्कृत कर्या। तपागच्छ ना नायक विजयदान सूरि ए 'कुमति-मत-कुद्दाल' ने जल-शरण कराव्यो अने जाहिरमां कादी सात बोलनी आज्ञा काढी। एक बीजा मत वालाने वाद विवादनो अथडा-मण करता अटकाव्या" "धर्म सागरे सूरि श्री नै चतुर्विधि संघ समक्ष मिच्छामि-दुक्कड आप्यो, तेमनो माफी मांगी।"

* उस समय तक श्री अभयदेव सूरिजीको "खरतरगच्छीय" ही सब गच्छवाले मानते थे। दूसरोकी बात ही क्या ? स्वय तपा-गच्छीय आचार्योंने ही अपने ग्रन्थोंमे श्री अभय देव सूरिजीको स्पष्ट खरतर गच्छीय सम्बो-धित कर गुणावदात गाये हैं। यथा —

उच्छेद करनेकी महत्वाकांक्षा लगी, ताकि भविष्यमें भगवान वीरकी सन्ततिमें परस्पर द्वेष, कलह और असन्तोष न फैले।

हमारे चरित्र-नायक श्रीजिनचन्द्र सूरिजी को खरतर गच्छका सारा उत्तरदायित्व था, अत खरतर गच्छके प्रति किये हुए,

---

संवत् १५०३ तपागच्छीय सोमधम गणि विरचित उपदेश सत्तरीमें—

पुरा श्री पत्तने राज्य, कुर्वाणे भीम भूपतौ ।
अभूवन् भूतला ख्याता , श्रीजिनेश्वरसूरय ॥२॥
सूरयोऽभयदेवाख्यास्तेषां पट्टे दिवं गता ।
तेभ्य प्रतिष्ठामापन्नो गच्छ खरतराभिध ॥३॥

तपागच्छीय कृत कल्पान्तवाच्यमें —

"नवांगी वृत्तिकारक श्रीअभयदेवसूरिजी ये स्थम्भणइ सेढी नदी नइ उपकण्ठि श्री पार्श्वनाथ तणी स्तुति करी धरणेन्द्र प्रत्यक्ष कीधउ। शरीर तणउ उत्कृष्टउ रोग उपशमाव्यो। तत्शिष्य श्रीजिनवल्लभ सूरि हुवा। चारित्र निर्मल अनेक ग्रंथ तणउ निर्माण कीधउ। इणि अनुक्रमि खरतर पक्षइ सूरिवर अनेक हूया सातिशय।"

तप गच्छके आचार्य श्री विजयदान सूरिजी और श्री हीरविजय सूरि भी श्रीअभयदेवसूरिजीको खरतर गच्छमें हुए मानते थे। और इसके लिए लिखित सम्मति भी देनेको प्रस्तुत हुए, किन्तु पीछे से धर्मसागरके कपट-प्रपञ्चमें आकर उन्होंने खरतर गच्छवालोंको लिखित सम्मति देना अस्वीकार कर दिया। इस आशयको धर्मसागरजीके किसी शिष्यने इस प्रकार व्यक्त किया है —

"हे पूज्य! श्री अभयदेव सूरि कुण गच्छ मध्ये हुआ? विचारइ श्री पूज्यजी आम कीधु जे प्रघोषइ तो खरतर कहवरावइ छइ, ते साभली खर-

धर्मसागरके अनुचित आक्षेपोका निराकरण करना उन्हे परमावश्यक ज्ञान पडा। क्योकि ऐसे प्रसङ्गमे मौन रहनेसे भविष्यमे विशेष अहित होना सुनिश्चित था। इसीलिये मिती कार्तिक शुक्ला ४ के

---

तर बोल्या जे पूज्य ! एतलु लिखि आपउ। जेम दद नासइ इम कही कागल आप्यउ तिवारइ आचार्य श्रीहीरविजयसूरि नइ श्रीपूज्यजीइ आज्ञा दीधी जे लिखि आपो, तिवारइ श्री आचार्यजी ए कह्यु जे हिवणा तउ ध्यान बयसहु छु मध्यान्ह पछी लिखि आपसु इम कही पाछ्या वाल्या पछइ मध्यान्ह पछी वलि सर्व खरतर मिलि आव्या श्री पूज्य श्री आचार्यजी पासे जे अम्हनइ लिखि आपउ एहवइ समइ स० उदयकरण व० पासदत्त प्रमुख श्रावक पूछवा लागा भगवन्जी स्यु लिखि आपो छो ? तिवारइ श्री पूज्यजी कहिवा लाग्या जे पाटण मॉहि खरतर अनइ श्री उपाध्याय धर्मसागर गणिनइ मॉहो मॉहे चरचा अभय देवसूरि सम्बन्धी चरचा थाई छइ अनइ इहा ना खरतर लिख्यु मागइ छइ अनइ प्रवोपइ श्री अभयदेव सूरि खरतर कहवरावइ छइ ते लिख्यु मागइ छइ।"

× × × × श्री उपाध्यायजी ( धर्मसागर ) नौ नफरइ लेख आप्यो × × श्री अभय देव सूरि खरतर नथी कहा × × श्रीपूज्य श्रीविजयदान सूरि आचार्य श्रीहीरविजय सूरिए वाच्या पछइ विचार कीधो × × × × खरतर नइ लिखि न आपवु ॥

[ आत्मानन्द प्रकाश वर्ष १९ अक ३—४ पृ० ८७।८८ ]

धर्मसागरकी नवीन प्ररूपणाके कारण अब भी कई लोग श्री अभयदेव सूरिजी खरतर गच्छमें नहीं हुए ऐसा मानते हैं उनको नि सार युक्ति यह है कि "श्री अभयदेव सूरिजीने अपने ग्रथोमें अपना गच्छ खरतर नहीं

जिन आपने पाटणमे स्थित सभी गच्छोके आचार्य व साधुओंको एकत्र किया। वहा शास्त्रार्थ × के लिये धर्मसागरजी को बुलाया

---

लिखा"। किन्तु इस युक्तिसे उनका खरतर गच्छमें होना निषेध नहीं हो सकता। क्योंकि तपागच्छके देवेन्द्र सूरिजी आदिने भी अपने ग्रथोंमें अपने गच्छका नाम तप गच्छ नहीं लिखकर चित्रवाल-गच्छ लिखा है। क्या तप गच्छवाले इन्हें तपागच्छीय नहीं मानते? स० ११६८ में अभयदेव सूरिजीके प्रशिष्य देव भद्र सूरिजीने जिनेश्वर सूरिजीको खरतर विरुद मिला लिखा है। तब श्री जिनेश्वर सूरिजीके शिष्य श्री अभयदेव सूरिजीका खरतर गच्छमें होना स्वत सिद्ध है।

× सवत सोल सतोतरइ, पाटण नगर मझार।
श्रीगुरु पहुता विहरता, सहु भवियण मन हर्ष अपार ॥ ७ ॥
केइ कुमति कलकिया, बोल्हइ सूत्र अरथ विपरीत।
जिन गुरु भाषित ओलषइ तिहा, कणि श्रीगुरु पाम्यो जीत ॥ ८ ॥
कक्काली मही मूलगो पण्डित तणो वहै अभिमान।
सागर छीलर सम थयो, जिहि उदयो खरतर गुरु भाण ॥ ९ ॥
[ विधि-स्थानक चौपइ ]

सवत सोल सतोतरइ, पाटण नयर मझार।
मेलि दरसन सहु सम्मत, ग्रन्थनी साखि साधार ॥५॥
पूरब विर" उजवालियउ, साखि दाखइ सहु लोकरे।
तेज खरतर सहगुरु तणउ, ऋषिमति ते थयउ फोक रे ॥६॥
ऋषि मति जे हुवो ककलो, बोलतो आल पपाल रे।
पट्ट कीधौ खरतर गुरे, जाणइ बाल गोपाल रे ॥७॥
( जिनचन्द्र सूरि गीत गा० ९ से )
पाटण सोल सतरोतरइ च्यार असी गच्छ साखि रे।
खरतर विरुद दीपावियउ आगम अक्षर दाखि रे ॥७॥

गया, किन्तु वे नहीं आये, उपाश्रयके द्वार बन्द करके × छिप गये।

मिती कार्तिक शुक्ला ७ शुक्रवार को फिर सभा एकत्र हुई, धर्मसागरजी को बुलाया गया किन्तु 'चोर रा पग कच्चा हुवे" की कहावतके अनुसार वे कब आनेको थे! आखिर एकत्र महानुभावोंके समक्ष श्रीजिनचन्द्र सूरिजी ने यह प्रश्न रखा कि "अभयदेव सूरिजी किस गच्छमें हुये हैं? आपलोग निर्णय करें। उपस्थित विद्वत् मण्डलीने ४१ प्राचीन ग्रन्थोंके प्रमाणसे यही निश्चय किया कि जिन महान् प्रभावक आचार्यको चौरासी गच्छ वाले पूज्य दृष्टिसे देखते हैं, वे नवाङ्गी वृत्ति कर्ता व स्थम्भनक पार्श्वनाथ प्रतिमा प्रकट करने वाले श्री अभयदेव सूरिजी खरतर गच्छमें ही हुए हैं।"

इस निर्णयका एक मत-पत्र लिखा गया, जिसमें समस्त आचार्यों तथा मुनियोंके हस्ताक्षर हुए। मिती कार्तिक शुक्ला १३ को सब गच्छवालों ने मिलकर धर्मसागरजी को असत्य, उत्सूत्र भाषी समझ कर निन्हव प्रमाणित किया, और वे जैन संघसे बहिष्कृत कर दिये गये।

उपरोक्त आशयके मत-पत्र की नकल यहां दी जाती है, जिससे इन बातों का भलीभांति परिचय मिल जायगा।

---

× पाटण मांहि पचासरउ, पाडा पासलि जे पोसाल।
पोल देइ पैसी रहाउ, जे मुखि लावत आल पपाल ॥१०॥
गच्छ चोरासी मेलवी, पच शास्त्र नी साखि उदार।
जीत्यउ खरतर राजियउ, एस हु को जाणइ ससार ॥११॥
(विधिस्थानक चौपाई गा० १७ से)

## ॥ मत-पत्रमिदम् ॥ *

स्वस्ति श्री सवत् १६१७ वर्षे कार्तिक सुदी ७ सप्तमी दिने शुक्रवारे श्री पाटण महानगरे श्री खरतर गच्छ नायक वादि-कद कुद्दाल भट्टारक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी चउमासी कीधी ( रह्या हुता ) तिवारइ ऋषिमती धर्मसागरे कुडी चरचा मॉडी जउ श्रीअभयदेव सूरि नवाङ्गी-वृत्ति कारक श्री स्थमना-पार्श्वनाथ प्रकटकर्ता, ते खरतर गच्छि न हुवा। एह्वी वात साभली तिवारइ खरतर श्री जिनचन्द्र सूरि, ( ए विचारी वात ) समस्त दर्शन एकठा कीधा पछइ समस्त दर्शन नइ पूछ्यो जे श्री अभयदेव सूरि नवाङ्गी-वृत्ति-कर्त्ता स्थम्भणइ पार्श्वनाथ प्रकट-कर्त्ता किंयइ (किसइ) गच्छइ हुवा ? तिवारइ समस्त दर्शन मिली अनइ घणा ग्रन्थ जोई पछइ ( ए वात विचारि नइ ) इम कह्या जे श्री अभयदेव सूरि (नवाङ्गी-वृत्तिकारक, स्थम्भणइ पार्श्वनाथ प्रकट-कारक ) खरतर गच्छे हुवा। सही। सत्य समस्त दर्शन घणा ग्रन्थ जोइ नइ सही कीधी। सही वार१०८

---

* इसी प्रकार स्तम्भतीर्थ ( खभात ) में भी इसी आशयका एक मत-पत्र लिखा गया था। जिसकी नकल इस प्रकार है —

*स्वस्ति श्री स्थम्भनाधीश मत्वा श्री स्थम्भ तीर्थ मध्ये समस्त दशन लिखित श्रीअभयदेव सूरि नवागी वृत्तिकारक श्री स्थभणउ पार्श्वप्रगटकारक खरतर गच्छि हुवा। केइ एक एम नथी सद्दहता, राग द्वेष ना वाह्या कुबुद्धि लागा (वाह्या) ते बापडा गाढा दुखिया थास्ये (हुस्य) सही सही १०८*

सिद्धान्त नइ मेलि नवाङ्गी वृत्ति नइ मेलि वृद्ध सम्प्रदाय अनुसारइ (नइ मेलि) जेइ न मानइ ते घणा कूडा पडै छे।

अत्र साखि भट्टारक कर्म्मसुन्दरसूरि मत १
,, ,, सिद्धान्तिया वडगच्छा श्री थिरचन्द्र सूरि मत २
,, ,, जावडिया गच्छे श्रीहर्षविनय मत ३
,, ,, निगमिया तपा गच्छे श्री भ० कल्याणरत्नसूरि मत ४
,, ,, वृहत् तपा गच्छे श्रीसिद्धसूरि मत ५
,, ,, विवदणीक वारेजिया खडखडता तपा गच्छे श्रीपरमाणन्द-
सूरि मत ६
,, ,, (सिद्धान्तिया) बड गच्छा श्रीमहीसागरसूरि मत ७
,, ,, काछेला पुनमिया गच्छे श्रीउदयरत्नसूरि मतं ८
,, ,, पीपलिया गच्छे विमलचन्द्रसूरि मत ९

समस्त दर्शन ( जैन ) बहसी नवांगीवृत्ति प्रशस्ति जोइ वृद्ध सम्प्रदाय जोइ नइ बीजा पणि विचारकर सही कीधी । जे श्री अभयदेव सूरि खरतर गच्छि हुवा सही सही ।

अत्र साख ओसवाल गच्छे प० सींहा मतम् १
,, ,, अञ्चल गच्छे पं० लक्ष्मीनिधान मतम् २
,, ,, वृद्ध शालीय तपा गच्छनायक श्री सौभाग्यरत्नसूरि मतम् ३
,, ,, वडा गच्छे उ० विनयकुशल मतम् ४
,, ,, कोरटवाल गच्छे प० पद्मशेखर मतम् ५
,, ,, पूर्णिमा गच्छे प० रत्नधीर मतम् ६
,, ,, भरुअच्छा (तपगच्छे) प० रत्नसागर मतम् ७
,, ,, मलधार गच्छे क्षमासुन्दर मतम् ८
,, ,, अञ्चलिया पूर्णचन्द्र मतम् ९
,, ,, सडेरा समयरत्न मतम् १०

अत्र सारि आगडिया पुनमिया गच्छे श्रीविद्याप्रभ सूरि मत १०
,, ,, ढढेरिया पुनमिया गच्छे श्रीसयमसागरसूरि मत ११
,, ,, कुनबपुरा तपागच्छे श्रीविनयतिलकसूरि मतं १२
,, ,, वोकडिया गच्छे श्रीदेवानन्द सूरि मत १३
,, ,, सिद्धान्तिया गच्छे पन्यास प्रमोदहंस मत १४
,, ,, पाल्हणपुरा गच्छे वा० विनयकीर्ति मत १५
,, ,, पाल्हणपुरी साखा तपा गच्छे वा० रंगनिधान मत १६

---

अत्र साख आगमिया गच्छे ऋषि रामा मतम् ११
,, ,, सुधर्मघोष गच्छे ऋषि रत्नसागर मतम् १२
,, ,, कडुआमती पोमसी मतम् १३

श्री खरतर गच्छ अभयदेव सूरि स० ११११ श्री स्थम्भणउ पार्श्वनाथ प्रगट कीधउ। स० ११२० वर्षे नवांगीवृत्ति कीधी। स० १२०४ रुद्रपल्लीय अभयदेवसूरिजी बीजा हुवा। न मानइ ते अभागीया (उत्सूत्र-भाषी हूंडा थका धर्मनिगमो ससार मध्ये रुडम्यं महो सही) खोटुं बोली नइ चारित्र गमाडे छै। तथा केई कदाग्रही इम कहे जे श्री अभयदेवसूरि नवांगी वृत्तिकर्त्ता श्रीस्थम्भणउ पार्श्व प्रकट कारक खरतर गच्छे न हुवा ते महा उत्सूत्रवादी जाणिवा। जिणे कारणे तपागच्छनायक श्रीसोमसुन्दर सूरि नी कीधो उपदेश सत्तरी ते माहैं बारमइ उपदेशि, ते कालना गीतार्थ संवेगी हुवा तिगइ खरतर गच्छो कह्या छइ ते हुण्डो लिखीजइ (इसके बाद सस्कृतके २१ श्लोक उपरोक्त ग्रथसे उद्धृत किये हैं, उन्हें यहा अनावश्यक समझकर हमने नहीं लिखा)

इत्यादि वृतान्त जाणी करी जे संवेगो गीतार्थ छइ ते समम्न सूधा कहिस्ये। उत्सूत्र थो बीहता थका बीजाइ पूर्वाचार्ये अनेरइ गच्छे हुवा

अत्र सारि अंचल गच्छे पण्डित भावरत्न मत १७

" " छापरिया पुनमिया गच्छे पण्डित उदयराज मतं १८

" " साधु पुनमिया गच्छे वा० नगामत १९

" " मलधारा गच्छे पण्डित गुणतिलक मतं २०

" " ओसवाल गच्छे पण्डित रत्नहर्ष मतं २१

" " धवल पर्वीया आचलिया (आगमिया) पण्डित रगा मत २२

" " चित्रवाल गच्छे वा० क्षेमा मत २३

" " चिन्तामणियापाडा वा० गुण माणिक्य मत २४

" " आगमिया उ० सुमतिसेखर मत २५

" " वेगडा खरतर पण्डित पद्ममाणिक्य मतं २६
( उ०धर्म मेरु मत )

" " बृहत्खरतर वा० मुनिरत्न मत २७

" " चित्रवाल जोगीवाडइ पं०राजा मत(मुनि जयराज मत)२८

" " कोरण्टवाल गच्छे चेला हासा मतं २६

" " विवन्दणीक सिरालुआ (चेला मोकल) मत ३०

" " आगमिया मोकल मत ३१

" " खरतर उपाध्याय जयलाभ मत ३२

एव काती सुदि ४ दिने ( काती सुदि ७ शुक्रवारे ) सर्व दर्शन मिलि (,सर्व सङ्घ समुदाये ) मजलस कीधी। धर्मसागर ऋषि-मती तेडाव्यउ पुणि धर्मसागर दर्शन मॉहिन आव्यउ वार तीन मजलस करी

---

तेही इम कह्या जे श्री अभयदेव सूरि नवागी-वृत्तिकर्ता स्थम्भना पार्श्व-नाथ प्रकट करणहार जयतिहुअण बत्तीसी कारक श्रीखरतरगच्छि हुवा सही सही ॥ सन्देह नहीं ॥

तेडाव्यो पढ़इ छिपि रह्यो (ते ड्याम मुख करिनइ) पण नावइ तिवारइ कार्ती सुदि १३ दिने सर्व-दर्शन मिलि नइ चर्चायइ खोटो (कूडो, झूठउ) जाणीनइ (सर्वथा) निन्त्तर थाप्यो। जिन दर्शनि बाहिर कीधउ सही सही १०८ सर्व दर्शन सम्मत श्री अभयदेवसूरि नवाङ्गी वृत्तिकर्ता स्थभणा पार्श्व प्रकट कर्ता ते खरतर गच्छइ हुवा। पत्तनीय समस्त दर्शन विचारी मतं लिखत ॥+

अथ ग्रन्थ × साक्षि लिख्यते —

१ श्री तपागच्छीय श्री हेमहंससूरि कृत कल्पान्तर वाच्ये।
२ भारडहरा कृत गुरुपर्व प्रभाकर ग्रन्थे।
३ तपागच्छीय कृत आचारप्रदीपे।
४ तपागच्छीय कृत लघुशालीय पट्टावल्याम्।
५ सन्देह दोलावली खरतर ग्रन्थ प्रामाण्य साधकत्वेन।
६ कुमारगिरि स्थित तपा सामग्री साधु पट्टावल्याम्।
७ श्रीजिनवल्लभ सूरि कृत सार्द्ध शतक (डोढसया) कर्मग्रन्थ मध्ये
८ चित्रवाल गच्छीय धनेश्वरसूरि कृता वृत्ति परम्परा साधकत्वेन
९ तपा कल्याणरत्नसूरि कृत चरित्र टिप्पनकद्वये।
(कल्याणरत्नसूरि प्रबन्ध ग्रन्थ)

---

+ महोपाध्याय श्रीजयसोमजी कृत "प्रश्नोत्तर-विचारसार" और महोपाध्याय श्रीसमयसुन्दरजी कृत "समाचारी शतक' से यहा प्रकाशित किया गया है। इस मत-पत्रसे उस समयके गच्छ और आचार्योंके विषयमें अच्छा ज्ञातव्य मिलता है।

× इन ग्रन्थोंमेंसे अभी कई ग्रन्थ अनुपलब्ध हैं। उनकी खोज-शोधकी पूरा आवश्यकता है।

१० छापरिया पुनमिया पट्टावल्याम्।

११ साधुपुनमिया पट्टावल्याम्।

१२ गुरु पर्वावली ग्रन्थे।

१३ प्रभावक चरित्र १५ (१३) सर्गे श्लोक ५५ थी ६५ पर्य्यन्त श्रीअभयदेवसूरि चरित्रे।

१४ पल्लीवाल गच्छीय भ० आमदेवसूरिकृत प्रभावक चरित्रे (गद्यमये)।

१५ पीपलिया उदयरत्नसूरि प्रारम्भेण जीवानुशाशन वृत्ति।

१६ तथा श्रीसोमसुन्दरसूरि राज्ये कृनोपदेश-सत्तरी ग्रन्थे।

किम्बहुना ४१ ग्रन्थ मध्ये हुण्डो, खरतर गच्छीय श्रीअभयदेव सुरि नवाङ्गीवृत्ति-कारक स्थभना पार्श्वनाथ प्रकटकर्त्ता थया (बभूव) मूल्गा (लि) खत सर्व दर्शनि (जैन रा मता) पाटण रा भण्डार माहि मूक्या छे। ते उपरि ए परत लिखिछइ, जे न मानै ते निन्हव जाणिवा।

उस समयके तप-गच्छके आचार्य श्रीविजयदानसूरिजी भी परस्पर पूर्ववत् गच्छोंमे प्रेम बना रहे, और उत्सूत्र-प्ररूपणाकी वृद्धि न हो इसलिये धर्मसागरजीके बनाये हुए उत्सूत्र-कन्द-कुद्दाल और तत्वतरङ्गिणी ग्रन्थोंको जलशरण करवाया। और धर्मसागरजीको अपने गच्छसे वहिष्कृत कर दिया।

उन ग्रन्थोंको अमान्य ठहरानेके लिये सात बोल सर्वत्र प्रसिद्ध कर दिये, जिससे भविष्यमें कोई भी उन ग्रन्थोंको प्रमाणिक न समझे।

ग्रन्थोंको जल शरण करनेका उल्लेख तपगच्छकी पुस्तकोंमे इस प्रकार है —

"सवत सोल सतोतरइ निसुणी अवदात रे।"

× × ×

"धर्मसागर ते पण्डित लगइ, क्यों नवो एक ग्रन्थ रे।
नाम थी कुमति कुद्दालडो, माडी अभिनवउ पन्थ रे ॥१५५॥
आप वखाण करइ घणो निन्दइ पर तणउ धर्म रे।
एम अनेक विपरीत पणु, ग्रन्थ माहि घणा मर्म रे ॥१५६॥
माडी तेणइ तेह परुपणा, सुणी गच्छपतिरायरे।
वीसलनयरि विजयदानसूरि, आवी करइ उपाय रे ॥१५७॥
पाणी आणि कहइ श्री गुरु ग्रन्थ वोलावउ (डूबाओ) एह रे।
नयर बहु सङ्घनी साखि सु, ग्रन्थ वोलियउ तेह रे ॥१५८।
श्रीगुरू आण लही सही सूरचन्द्र पन्यास रे।
हाथिस्युं ग्रन्थ जलि वोलियउ, राखि परम्परा आश रे ॥१५९॥
ग्रन्थ वोलि सागर कहनइ (कन्हइ?) लीधु लिखित तस एक रे।
नवि एह ग्रथ प्ररूपणा, नवि धरवी वरि टेक रे ॥१६०॥"

(दर्शनविनय कृत विनयतिलकसूरि रास)

सुण्यो मरइ न पोनइ सागर राक तणी परि रोल्या।
कुमति-कुदाल नइ तत्व तरङ्गिणी, सघि पाणी माहे वोल्या ॥२४॥

(सिंहविजय कृत सागर-बावनी स० १६७८)

उ० धर्मसागरने भी स्वय उन वोलोंको स्वीकार करके अपनी की हुई उत्सूत्र-प्ररूपणाका "मिच्छामि दुक्कडम्" देकर अपने ग्रन्थ

कुमति (उत्सूत्र) कंद कुदाल को अश्रद्धेय, अमान्य, अप्रमाणिक रूप-, से प्रसिद्धि की थी। उस पत्र की नकल मासिक 'जैन युग' वर्ष ५, पृ० ४८३ से लेकर यहा उद्धृत करते हैं —

"स्वस्ति श्री शान्ति जिन प्रणम्य ॥ तिरवाडा नगरत परम गुरु श्रीविजयदानसूरि सेवी उ० श्रीधर्मसागर गणि लिखति समस्त नगर साधु-साध्वी श्रावक श्राविका योग्यम् ॥ आज पछी अमे पाच निन्हव न कहउं पाच †निन्हव कह्या हुइ ते' मिच्छामि दुक्कडम्" ॥ उत्सूत्र-कद-कुदाल ग्रन्थ न सद्दहउ, पूर्वइ सद्दह्यउ हुई ते "मिच्छामि-दुक्कडम्" ॥ पद्-पर्वी। चतु पर्वी आश्री जिम श्री पूज्य आसि (आदेश) देइ छइ ते प्रमाण ॥ छ ॥ सात बोल जिम भगवन आसि थइ छइ ते प्रमाण ॥ चतुर्विध सघ नी आसातना कीधी हुई ते "मिच्छामि-दुक्कडम्" ॥ आज पछी पाच ना चैत्य वादवा ॥ तिरवाटा माँहि श्री पूज्य परम-गुरु श्रीविजयदानसूरि नइ "मिच्छामि-दुक्कडम्" ॥ दीधउ छइ सघ समक्ष ए बोल आश्री जिणइ खोटो सद्दह्यउ हुवइ ते "मिच्छामि दुक्कडम्" देज्यो ॥ छ ॥"*

विजयदानसूरिजीके पट्टधर श्री हीरविजय सूरिजीने भी धर्म-

---

† पूनमिया, खरतर, आचलिया, साढ पूनमिया और आगमिया ये पाच (देखे ऐतिहासिक रास सग्रह भा ४ पृ ७)

* धर्मसागरके अप्रमाणिक ग्रन्थोंका आश्रय लेकर आज भी कई महा-कदाग्रही गच्छोंमें परस्पर वैमनस्य-वृद्धि कर रहे हैं, यह एक परम दु खकी बात है। उस समयके प्रभावक तपागच्छीय आचार्य श्रीविजयदानसूरि,

सागरके उत्सूत्रका निराकरण करनेके लिये १२ बोल निकाले थे, उसमे भी १० वा बोल यह है —

"तथा श्रीविजयदानसूरि बहुजन समक्ष जलशरण जे कीधु उत्सूत्र-कद-कुदाल ग्रन्थ तेह माँहिलु जे असम्मत अर्थ बीजा कोई ग्रन्थ माहिं आण्यउ हुवइ, तउ ते तिहाँ अर्थ अप्रमाण जाणिवउ।"

और श्रीविजयसेनसूरिने भी १० बोल प्रकट किये थ, जो कि "जैनयुग" मे छप चुके हैं।

इस प्रकार पाटणमे उ० धर्मसागरको परास्तकर श्रीजिनचन्द्र-सूरिजीने खरतर गच्छकी महान् सेवा की। इसी चातुर्मासमे आपने "पौषध-विधि प्रकरण" पर एक विशिष्ट वृत्ति रची, जिससे आपकी प्रकाण्ड-विद्वताका भली भांति परिचय मिलता है। उक्त ग्रंथकी प्रशस्तिका आवश्यक अंश यह है —

आदि —

*गोलक्ष्मलक्ष्य सुपलक्षित भाव लक्ष,*

*जाग्रत् प्रभाव विदित कनकावदातम्।*

*दान्तेन्द्रिय द्विरद वृन्दमद वाच,*

*वाचयमेन मनिश स्मरतादि देव ॥ १ ॥*

---

नीय, अमान्य, अप्रमाणिक सिद्ध कर दिया था और स्वय धर्मसागरने जिसे स्वीकृत कर "मिच्छामि-दुक्कडम्" (दुष्कृतको मिथ्या स्वीकारकर उसकी आलोचना करना) दिया था, आज उन्हींकी परम्परावाले उनग्रन्थोंको क्या उपादेय समझ प्रकाशित कर कलङ्कित हो रहे हैं !!!

× × ×

अत्य प्रशस्ति —

*तेपा गुरूणा शिष्येण, श्रीजिनचन्द्रसूरिणा*

*श्री पौषध विधेर्वृत्ति श्चक्रे स्वेष्ट प्रसादत ॥ २४ ॥*

*सयोज्य वृत्ति चूर्णी समाचारी विलोक्य सद्दृष्टया*

*पुनरपि तत्शास्त्र भाव मत्वासत्सप्रदायमपि ॥ २५ ॥*

*श्री पुण्यसागर महोपाध्यायै प.ठकोद्ग्रधनराजै*

*अपि साधुकीर्ति गणिना, सुशोधिता दीर्घ दृष्टेयम् ॥२६॥*

मुनि शशि विद्यादेवी प्रमिते वर्षेऽणहिल्लपुर नगरे ।

आश्विन विजयदशम्या सुमुहूर्ते पुण्य सयोगेन ॥ २७ ॥

प्रत्यक्षर गणनेन त्रिसहस्री पञ्चशतक सयुक्ता ।

चतुरधिकै पचाशत् श्लोकैरस्या॰ प्रमाणमिदम् ॥ २८ ॥

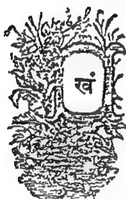
*इति पौषध विधि प्रकरण वृत्ति समाप्ता ग्र० ३५५४ पत्र ६७*

[ तत्कालीन प्रति, बीकानेर बृहत्ज्ञानभण्डारान्तर्गत' श्रीजिनहर्षसूरि-भण्डारे ]



# पांचवां प्रकरण

## "विहार और धर्म-प्रभावना"




भात संघके मुख्य श्रावक, वच्छराजका पुत्र कम्मा शाह आदि सूरिजीको चतुर्मास खंभातमें करनेके लिये आमन्त्रित करने आये। उनके विशेष आग्रहसे सूरि-महाराज खंभात पधारे, स्तम्भ-तीर्थकी यात्रा की और संघ-आग्रहसे सं० १६१८ का चातुर्मास खम्भातमे किया, वहाँकी धर्म-प्रभावनाका वर्णन कवि "कुशललाभ" ने अपने "श्रीपूज्य वाहण गीत" में इस प्रकार किया है—

"धर्ममार्ग उपदेशता करता विधइ विहार रे।
आव्याजी नगर त्रम्बावती श्रीसंघ हर्ष अपार रे॥ ३५॥
पूज्य आव्या ते आशा फली, श्री खरतर गच्छ गणधार रे।
श्रीजिनचन्द्र सूरि वादियइ साथइ साधु परिवार रे॥३६॥

× × ×

"प्रभु पाटि ए चउवीसमइ श्री पूज्य जिनचन्द्रसूरि।
उद्योतकारी अभिनवउ, उदयउ पुण्य अङ्कूर॥ ५५॥

शाह ( श्रावक ) भण्डारी वीरजी, शाह राका नइ गुरु राग ।
वर्द्धमान शाह विनयइ घणउ, शाह नागजी अधिक सोभागरे ॥५६॥
शाह वच्छा शाह पदमसी, देवजी नइ जैत शाह ।
श्रावक हरसा हीरजी, भाणजी अधिक उच्छाह ॥५७॥
भण्डारी माडण नइ भगति घणी शाह जावड नइ घणउ भाव ।
शाह मनुवा नइ शाह सहजिया, भडारी अमियउ अधिक उच्छाह ॥५८
नित मिलइ श्रावक श्राविका, सभलइ पूज्य वखाण ।
हियडउ उल्टइ उल्लसइ एम जीयउ जनम प्रमाण ॥५६॥
आग्रह देखि श्रीसघ नउ पूज्यजी रह्या चउमास ।
धर्म नउ मारग उपदिसइ इम पहुती मननी आश ॥६०॥
प्रतिमा प्रतिष्ठा थापना दीक्षा दियइ गुरु राज ।
इम सफल नर भव तेहनउ जे करइ सुकृत ना काज ॥६१॥"

इस प्रकार खभातमे जिन विम्ब-प्रतिष्ठा, शिष्य-दीक्षा आदि बहुतसे धर्मकृत्य हुए। वहासे ग्रामानुग्राम विहार करते हुए सम्वत् १६१६ मे श्री जिनचन्द्र सूरिजी महाराज "राजनगर" पधारे। वहा एक महाविद्वान् भट्ट अपनी विद्वताके अभिमानमे चूर हुआ फिरता था। उसे मत्रीश्वर "सारंगधर सत्यवादी" - उपाश्रयमे सूरि महाराजके पास लाया। सूरिजीने उसकी समस्या पूर्ण कर पराजित किया, जिसका वर्णन बीकानेर ज्ञान भण्डारकी एक १८ वीं शताब्दी मे लिखित पट्टावलीमे इस प्रकार है —

-इनका नाम जयसोमजी कृत प्रश्नोत्तर ग्रथमें आता है, ये खरतर गच्छ के परमभक्त और प्रतिभाशाली पुरुष थे। इनको सघपतिकी पदवी थी।

"वली स० १६१६ राजनगरइ एक भट्ट महा विद्यावन्त नगर मइ फिरइ, माथे अकुश पेटइ पटो वाध्यउ, एक चाकर रे माथे घडो पाणी रो बीजा रै माथि खड रो पूलो एहवउ अहङ्कार धरी नइ फिरइ। तरइ सत्यवादी सारगधर मन्त्री उपासरइ लेइ आयउ, पहिली जनिया सु वादका, वोल्या थाग न लाभइ, तरइ समस्या कही —

* "मक्षिका पादघातेन कम्पित जगत त्रयम्"

एह समस्या नउ अर्थ (पूर्ति) भाग्य नइ जोगइ युगप्रधानजी ए कह्यो —

÷ "समभित्तौ लिखित चित्र, धारिणा कुण्ड पूरितम्
मक्षिका पादघातेन, कम्पित जगत त्रयम् ॥"

एम कही भट्ट नइ हरायउ (भट्ट) पगे लाग्यउ।

वहासे विहार करके सूरि महाराज पाटण पधारे, स० १६१६ का चतुर्मास वहीं किया। स० १६२० मे आपका चातुर्मास वीसल नगर*

---

* "मक्षिकाके पैरो के आघात से तीन जगत कापने लगा।"

÷ "समान भींत (दिवार) पर तीन जगतको चित्रित करके, उसके नीचे जलसे भरा हुआ कुण्ड-पात्र रखा। उसमें त्रि-जगतके चित्रकी छाया पडने लगी, उस पानीके ऊपर मक्षिका के बैठनेसे पानी हिलने लगा। पानी हिलनेके साथ साथ तीन जगत की प्रति-छाया (प्रति बिम्ब) भी हिलने लगी, इससे "मक्षिका के पैरों के आघात से तीन जगत कापने लगा।

* विहार पत्र न० २ में बीसलनगरके स्थानपर बीकानेर लिखा है, किन्तु हमे बीसलनगर ही ठीक प्रतीत होता है।

हुआ। वहा से, बीकानेरके ,मन्त्रीश्वर श्री संग्राम सिंह बच्छावतके आग्रहसे बीकानेर पधारे। स० १६२१ का चातुर्मास बीकानेरमें किया।

बीकानेरके श्रीवासुपूज्यजीके मन्दिरमे श्री सुपार्श्वनाथजी की पञ्चतीर्थी धातु प्रतिमा स० १६२२ वैसाख शुक्ला ३ के दिन सूरिजीके कर कमलोंसे प्रतिष्ठित है जिसके लेखकी नकल इस प्रकार है --

"सवत १६२२ वर्षे वैसाख सुदि ३ सोमवारे उपकेश वशे। रासेचा गोत्रे शाह आपू तत्पुत्र साह माडकेन पुत्र सा० नींबा माडू मेपा। हेमराज धनु। श्री सुपार्श्व बिम्बं कारापितम्। खरतर गच्छे श्रीजिनमाणिक्यसूरि पट्टाधिप श्री जिनचन्द्र सूरिभि प्रतिष्ठितम्॥ शुभ भवतु॥"

यदि सूरिजीने उपरोक्त प्रतिमाजीकी प्रतिष्ठा बीकानेरमें की हो तब तो यह निस्सन्देह कहा जा सकता है कि सूरिजी अक्षय-तृतीयाके पश्चात् ही बीकानेरसे विहार करके जेसलमेर पधारे। स० १६२२ का चतुर्मास जेसलमेर किया। विहार पत्र नं० २ मे लिखा है "विचिनागौर हसनकुलीखान जयलाभ पडसारउ" इसका आशय हमारे समक्षमे पूरा नहीं आया किन्तु अनुमान किया जाता है कि सूरिजी बीकानेरसे जेसलमेर जाते या आते समय नागौर पधारे। वहापर "हसनकुली खान"* ने किसी युद्धादिके जयके लाभसे

* "हसन कुली खान" का नाम कर्मचन्द्रमन्त्री वश प्रबन्ध वृत्तिमें आता है। मन्त्रीश्वर संग्रामसिंहजीने इसके साथ सन्धि की थी। उपरोक्त विहारपत्रके "जयलाभ" का आशय सम्भव है, इसी छलसे हो?

लाभान्वित होकर सम्मान पूर्वक सूरि-महाराजका नगरमें प्रवेश कराया हो।

सम्वत् १६२२ का चतुर्मास जेसलमेर करके सूरिजी बीकानेर पधारे। सम्वत् १६२३ का चतुर्मास यहीं किया। खेतासर ग्रामके रहनेवाले चोपडा गोत्रीय सा० चापसीकी भार्या चापल देवी× के पुत्र-रत्न मानसिंहको मिती मार्गशीर्ष कृष्णा ५ को दीक्षा दी, उनका दीक्षा नाम "महिमराज"— रखा।

वहांसे विहार करके "नाडोलाई" पधारे, स० १६२४ का चतुर्मास वहीं हुआ। विहार-पत्र न० ७ में लिखा है "लष्करनउ भय काती सुदी १० निवर्त्यउ" इसका स्पष्टीकरण एक "बीकानेर ज्ञान-भण्डार" की पट्टावलीमें किया हुआ है——मुगल सेना उस नगर के बहुत ही निकट आ गई थी, लूटपाट और मारकाट के भयसे

---

× उपा० श्री क्षमाकल्याणजीगणि कृत खरतर गच्छ पट्टावलीमें मानसिंहजीको माताका नाम "चतुरङ्ग दे" लिखा है, किन्तु उ० श्री शिवनिधान और लब्धिकल्लोल आदि कृत प्राचीन गहूंलिया और श्री जिनकृपाचन्द्रसूरि ज्ञान भण्डारस्थ तत्कालीन लिखित "खरतर गच्छ पट्टावली" में माताका नाम चांपल देवी लिखा है। प्राचीन होनेसे यही ठीक प्रतीत होता है।

— ये महिमराजजी ( श्रीजिनसिंहसूरि ) बड़े प्रभावक और निर्मल चारित्रवान् प्रकाण्ड पण्डित हुए। सम्राट अकबरने इनके गुणोंसे मुग्ध होकर सूरिजीसे इन्हें "आचार्य-पद" दिलाया था। इसके विषयमें यथा-स्थान आगेके प्रकरणोंमें लिखा जायगा।

व्याकुल होकर वहाके लोग चारो तरफ भागने लगे। संघने मिलकर सूरि-महाराजसे भी निवेदन किया, किन्तु महापुरुष स्वयं निर्भय और दूसरोंके लिये भी अभयकारक हुआ करते हैं। सारा नगर खाली हो गया, परन्तु सूरि महाराज साधारण जनताकी भाँति सम्भ्रान्त न होकर उपाश्रयमें ही निश्चल ध्यान लगाके बैठे रहे। उनके ध्यान-बल से मुगल-सेना मार्ग भूल कर अन्यत्र चली गई। सब लोग प्रसन्नता पूर्वक अपने अपने घर आये, सूरिजीके योग बलसे चमत्कृत होकर उनकी भूरि भूरि प्रशंसा करने लगे।

उपरोक्त पट्टावलीमें इसका वर्णन इस प्रकार किया है —

"वलि जियइ नडुलाई नगर माँहि श्रीपूज्य जी हता, संघ मिली गुरु वीनव्या गुरु जी! मुगल नउ भय साभलियइ छइ। गुरे कह्यो महानुभाव! काइ विशेष नहीं। इम करता मुगल ढूकडा आव्या, तिवारइ सर्वलोक जीव लेइ दसोदिस नाठा (गयउ) पर श्रीपूज्यजी उपासरा माँहि थी हाल्या नहीं ध्यान बइठा, गुणना नइ प्रभावि मुगला नउ कटक मारग थकी चूकउ, बीजी ठामि गयउ। सर्वलोक आप आपणा घरे आव्या सघ मिली उपासरइ आवि देखइ तउ गुरुजी ध्यान करइ छइ। सब वादी, पूजी स्तवला करिवी माडी, सर्वलोक हर्षित थयउ ठाम ठाम शोभा थई।

वहासे विहार करके सूरिजी वापडाऊ (? वापेउ, बीकानेर से ४४ मील) पधारे। स० १६२५ का चतुर्मास सघके विनीत आग्रहसे वहीं किया। चातुर्मास पूर्णकर वहासे ग्रामानुग्राम विचरते हुए बीकानेर पधारे। स० १६२६ का चातुर्मास बीकानेर किया।

स० १६७७ का चातुर्मास महिम किया, वहासे साधु-विहार करते हुए मेवात देशमे होकर आगरा पधारे। विहारपत्रों मे लिखा है — "स० १६७७ महिम—आ० कु० अ० म० शुभ। चन्द्र० मू० स्थु० नेमि चैत्य विचि सौरीपुर यात्रा, चन्द्रवाडि हथिणाउरि पत्रइ आव्या।" इससे हस्तिनापुरमे शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अरिनाथ और मल्लिनाथजी के स्तूपो की और चन्द्रवाडमे श्री चन्द्रप्रभु भगवानकी यात्रा करना निश्चित है।

आगरेमे बहुतस धर्मकार्य हुए वहा १ महीनेका मास-कल्प स्थिति करके आप सौरीपुर पधारे। वहापर श्री नेमिनाथ स्वामीकी यात्रा की, और चन्द्रवाडि हस्तिनापुरकी यात्रा करके वापिस आगरे पधारे। वहासे चातुर्मास करनेके लिये ग्वालेर जाते थे परन्तु आगराके श्रीसधके विशेष आग्रहसे स० १६७८ का चतुर्मास वहीं किया। पर्यूपणा पर्व, धर्म ध्यान करते हुए सुख-पूर्वक व्यतीत हो जानेक पश्चात् सूरिजी ने एक पत्र "साभलि-नगर" के सघको दिया। यह असली मूल पत्र हमारे सग्रहमे है, इसम उपरोक्त तीर्थ-पर्य्यटन, विहार और धर्म कार्योका भी थोडा वणन है। उस पत्रकी नकल इस प्रकार है —

॥६०॥ स्वस्तिश्री शान्ति जिन प्रणम्य । श्रीआगरा नगरात् श्रीजिनचन्द्र सूरय प० आणदोदय गणि प० वीरोदय मुनि प० भक्तिरग गणि प० सकलचद्र गणि प० नयविलास मुनि प० हर्ष-निमल प० कल्याणकमल प० महिमराज प० समयराज प० धर्म-निधान प० रत्ननिधान श्रीपाल प्रमुख साधु १८ विहितोपाम्नय

श्री साभलि स्थाने श्रीदेव गुरु भक्तिकारक श्री जिनाज्ञा प्रतिपालक सा० मूला० मा० मामीदास मा० पूरू सा० पदू सा० वस्तू सा० गागू नाथू धम्मू पूरू लखू प्रमुख श्रीसघ समुदायक सादर धर्मलाभ पर्वक समादिशन्ति श्रेयोत्र श्रीदेव गुरु प्रसादात्। उपदेशो यथा॥ धम्मो मगल मुक्किठ, अहिंसा सजमो तवो। देवावि त नमसति जस्स धम्मे सयामणो॥१॥ इत्यादि धर्मोपदेश जाणी धर्मोद्यम करता लाभ छइ तथा महिम हुती विहार करी साधु विहार करता मेवात देश माहि थद नइ अत्र आव्या घणा धर्म ना लाभ थया। पछइ मास कल्प क (री नइ ?) सोरीपुर श्रीनेमिनाथनो यात्रा करी नइ अत्र आ (व्या) पछइ चउमासि उपरि ग्वालेर नइ चालता हुता प (र श्रीस) घनइ आग्रहइ अत्रेज रह्या। धर्म ध्यान करता करावता श्री पर्यूषणा पर्व आव्यइ सा० श्रीवच्छ सा० लक्ष्मीदासादि सपरिवारइ विधि पूर्वक पुस्तक वचाव्या वाचना प्रभावनादि धर्म करणी घणी हुई पोसहता १५१ हुया वीजाइ दान शील तप भावनादि धर्म करणी हुई एव जाणी तुहे अनुमोदिवा। आ सामग्री साधु साध्वी विशेषइ चिंता करवी। तथा तुम्हारा कागल आव्या समाचार परीछ्या। तुहे उत्तम सुश्रावक छउ सवली सामग्री आवइ तउ राखेज्यो ज्यु धर्म निर्वहइ एव समस्त संघ माहि धर्मलाभ कहेज्यो। एव परीछे॰ पारणइ पूर्व दिशइ तीर्थ यात्रा भणी विहार (करवाना भा ?) व छइ वली वर्तमान जोगि जाणिस्यइ॥ समस्त श्रावक श्राविका नइ धर्मलाभ कहेजो॥

इस पत्रके अनुसार यदि चतुर्मास पूर्णकर सूरिजी पूर्व देशीय

तीर्थोंकी यात्रा करने गये हो तब तो यथा-सभव सम्मेत शिखरजी, पावापुरीजी, चपापुरीजी, राजगृह आदि तीर्थोंके दर्शनकर आये होगे। तत्पश्चात स० १६२९ का चातुर्मास रुस्तक (रोहतक, दिल्लीके निकटवर्ती) किया। चातुर्मास पूर्णकर सूरि-महाराज ग्रामानुग्राम विचरते हुए बीकानेर पधारे। यहाके श्री ऋषभदेव भगवानके मन्दिरमे सूरिजीके कर कमलोमे प्रतिष्ठित श्रीअजितनाथ स्वामीकी धातु-प्रतिमा विद्यमान है, जिसपर निम्नोक्त लेख है —

"सवत् १६३० वर्षे माह सुदि १० दिने श्री उपकेश वशे छाजहड गोत्रे सा० झठा चा (?) तत्पुत्र सा० अमरसीकेन कारित श्रीअजित-नाथ विम्ब प्रतिष्ठित खरतर गच्छे श्रीजिनचन्द्र सूरिभि ।"

फाल्गुन मासमे "नयणा" नामक श्राविकाने सूरिजीसे बारह व्रत ग्रहण किये थे। तब साधुवर्द्धनके शिष्यने बारह व्रत रास बनाया जिसमे लिखा है —

*"खरतर गच्छ रउ राजियउ, जिनचन्द्र सूरि मुनि राय।*
*तासु पासइ ए विरति लेइ, श्राविका नयणा आय ॥४॥*
*सवत सोल् त्रीसोत्तरइ, फागुण मासि विशाल।*
*साधुवर्द्धन पसाउलइ, रची विरतरास रसाल ॥५॥*
*जिम शशि रवि भू अछइ, धरणीधर सुप्रसिद्ध।*
*तिमि अविचल होज्यो सही, एह विरत सम्बन्ध ॥६॥*

[अन्तिम पत्र, श्रीपूज्यजी क सग्रहमे]

सूरिजीके बीकानेर पधारनेसे बिम्ब-प्रतिष्ठा, व्रत ग्रहण आदि सूब धर्म कार्य होने लगे। लाभ जानकर सूरि-महाराजने स० १६३१ और १६३२ का चातुर्मास बीकानेर ही किया। वहाँसे विहारकर फलौधी पधारे, वहाके श्रीपार्श्वनाथ प्रभुके प्राचीन भव्य मन्दिर पर द्वेष-वश तपगच्छ वालो ने ताले लगा दिये। सूरि-महाराज प्रभु दर्शनार्थ पधार, किन्तु मन्दिरपर ताले लगे देखकर उन्होंने हाथका स्पर्श किया तब उनके प्रभावसे बिना चाबी लगाये ही ताले खुलकर पड गये॰।

सूरिजी तीर्थ दर्शनकर वहासे विहार करके जैसलमेर पधारे। स० १६३३ का चातुर्मास वहा किया, मिती माघ शुक्ला ५ के दिन श्राविका बींझूने सूरिजीसे १२ व्रत ग्रहण किये जिसका वर्णन बीकानेर ज्ञान भण्डार ( महिमाभक्ति विभाग पोथी न० ६३ ) मे गा० ५५ के बने हुए रासमे है —

*"शुभस्थान जेसलमेरु नयरइ, सुकृति करी हित कारणइ।*
*सवत सोल तेतीस वरसइ, माह सुदि पचम दिणइ ॥*
*गच्छराय श्रीजिनचन्द्रसूरि गुरु, सइ मुखइ सभासु ए।*
*श्राविका बींझू सुव्रत पालइ, धरि मनि उल्हासु ए ॥४५॥*

॰ देखो! क्षमाकल्याणजी कृत खरतर गच्छ पट्टावली और विहार पत्र आदि। एक प्राचीन पट्टावलीमे भी लिखा है —

फलोधी वीतराग देहरा नउ तालउ बिण कूची हाथ उपरि मूकी उखेलयउ
( बीकानेर ज्ञान भण्डार, पट्टावली पत्र ७ )

इसी वर्षमें मिती फाल्गुन कृष्णा ५ को श्राविका गेलीने सूरिजी से १२ व्रत ग्रहण किये थे। जिसका उल्लेख एक बारह व्रत रासकी प्रशस्ति*में इस प्रकार है —

"सम्वत सोलसय तेतीसइ, फागन वदि पञ्चमि उल्लासि।
खरतर गच्छि गरूयउ गुरु राजइ, श्रीजिनचन्द्रसूरि गुरू पासइ ॥६२॥
श्राविका गेली ए व्रत लीया, कीधा नरभव सफल आज।
पास पसायइ ए विधि करना, पामिम शिवनगरी नो राज ॥६३॥
बारह व्रत सूधा पालेवा, एम कहइ परिग्रह-परिमाण।
सीलविलास सदा सुख पामइ, वाधइ दिन-दिन कलाविनाण ॥६४॥

इति श्री इच्छा परिमाण टिप्पनके सं० १६३३ वर्षे फाल्गुन वदि ५ दिने श्रीमच्छ्री खरतर गच्छाधिराज श्रीजिनमाणिक्यसूरि पट्टालङ्कार श्रीजिनचन्द्र सूरि राजाना स्वहस्तेन गेली सुश्राविकया ग्रहीतम् ॥

(इसकी प्रति आमोदके यति चन्द्रविजयजीके पास है)

* यह प्रशस्ति हमने "जैन-गूर्जर-कविओ भा० १" से उद्धृत की है। इस ग्रंथमें यह रास श्रीजिनचन्द्रसूरिजीकी कृतियोंमें नोंध किया है, किन्तु इस प्रशस्तिसे यह सूरिजीकी कृति होनेका कोई प्रमाण नहीं मिलता। यथा-सम्भव अन्य बारह व्रत रासोंकी तरह यह रास भी किसी दूसरे कविने रचा होगा।

इसके अतिरिक्त 'जैन गूर्जर-कविओ'में (१) द्रौपदी रास, (२) बारह-भावनाधिकार, (३) शीलवती रास, (४) शाम्ब प्रद्युम्न चौपाइ (५) जिन बिम्ब-स्थापन स्तवन भी सूरिजीकी कृतियां लिखी है। हमें तो इन कृतियोंका भी सूरिजीकी रचना होनेमें सन्देह है। कृतियोंको देखकर इसका निर्णय करना आवश्यक है।

वहासे विहार करके सूरिजी देराउर पधारे वहा श्रीजिनकुशल सूरिजीके "स्वर्गस्थान" का दर्शन करके सं० १६३४ का चातुर्मास वहीं किया। इसके पश्चात् सं० १६३५ मे जैसलमेर, सं० १६३६ मे बीकानेर, म० १६३७ मे सेरूणा ( बीकानेरसे २८ मील पूर्व ), स० १६३८ मे बीकानेर, स० १६३६ मे जैसलमेर और सं० १६४० आसनीकोटमे क्रमश चातुर्मास किये। "आसनी कोट" चातुर्मास कर सूरिजी जैसलमेर पधारे वहा मिती माघ शुक्ला ५ के दिन अपने विद्वान शिष्य महिमराजजी को "वाचक" पदमे अलंकृत किया।

जैसलमेरसे विहारकर सूरि महाराज जालोर पधारे स० १६४१ का चतुर्मास वहीं किया। इस चतुर्मासमें ऋषिमती-तपागच्छवालोके साथ शास्त्रार्थ हुआ, इस शास्त्रार्थ में सूरिजी की विजय+ हुई। वहा से विहार करके पाटण पधारे, स० १६४२ का चतुर्मास वहा हुआ, वहा भी तप गच्छवालोके साथ हुए शास्त्रार्थ मे सूरिजी विजय-लक्ष्मी× को प्राप्त हुए।

वहासे विहार करके अहमदाबाद पधारे। स० १६४३ का चतुर्मास वहा किया। वहा धर्मसागर कृत उत्सूत्र-मय पुस्तक रूपी विष-वृक्षका उच्छेद किया जैसा कि + खरतर गच्छ पट्टावली न० १, और न० ३ मे लिखा है —

"पुन सं० १६४३ वर्षे ताद्य धर्मसागर कृत् ग्रन्थोच्छेद कृत्"

+ देखो विहार पत्र न० १, २

× देखो विहार पत्र नं० २

+ देखो पूरणचन्द्रजी नाहरकी प्रकाशित "खरतर गच्छ पट्टावली संग्रह"

सूरिजीने सं० १६४४ का चातुर्मास खम्भात किया। वहां श्री स्थम्भन तीर्थ और श्रीजिनकुशलसूरि-स्तूपके दर्शन किये। चातुर्मास पूर्ण हो जानेसे विहार करके अहमदाबाद पधारे। श्री गुणविनय कृत, बीकानेरसे शत्रुञ्जय यात्रार्थ निकले हुए सघके "चैत्य-परिपाटी-स्तवन" से जाना जाता है कि "बीकानेरसे सं० १६४४ के माघ महीनेमें तीर्थाधिराज श्री सिद्धाचलजीके यात्रार्थ सङ्घ निकला, वह विशाल यात्री सङ्घ रास्तेमें आये हुए समस्त तीर्थोंकी यात्रा करता हुआ क्रमशः सेरिसे, लोडण-पार्श्वनाथके तीर्थमें आया।

इधर अहमदाबादसे सङ्घपति योगीनाथ और सोमजीके सङ्घ सहित सूरिजी भी आकर सम्मिलित हुए। इस सङ्घमें चारों दिशाओंसे यात्री आये थे, जिनमेंसे—बीकानेर, मण्डोवर, सिन्धु देश, जैसलमेर, सीरोही, जालोर, सोरठ और चापानेरका नाम उल्लेखनीय है। इस विशाल यात्री सङ्घके साथ मिती चैत्र कृष्णा ४ के दिन सूरि-महाराजने महातीर्थ, सिद्धक्षेत्र श्री सिद्धाचलजीकी यात्रा की*।

---

* "संवत सोलह सइ चिम्मालइ, वरसि सवि सुखकार।
चतरशी चउथी दिनइ, बुध बहुल बुधवार॥ १० ॥ मेरो० ॥
सङ्घपति योगी सोमजी, मन धरि हरख तरङ्ग।
गच्छपति श्रीजिनचन्द्र नइ, यात्रा करावी रङ्ग ॥ ११ ॥ मेरो० ॥
सुविहित खरतर मव नउ, श्री आदि देव प्रमाण।
वाचनाचारिज इम भणइ, रत्ननिधान वचन्न ॥ १२ ॥ मेरो० ॥
[ वा० रत्ननिधान कृत स्तवन ]

वहांसे ग्रामानुग्राम विचरते हुए सूरि-महाराज सूरत पधारे। उनके आगमनसे सबमें बहुत प्रसन्नता हुई, सब लोग अधिकाधिक धर्म-ध्यान करने लगे। वर्षाकाल सन्निकट होनेसे सूरिजीने सम्वत् १६४५ का चातुर्मास सूरतमे किया।

स० १६४६ का अहमदाबाद और स० १६४७ का चातुर्मास पाटण किया। स० १६४७ मे श्राविका कोडाने आपसे बारह व्रत ग्रहण किये थे, जिसका रास श्री० जयसोमजी कृत ( कपडेपर लिखी हुई प्रति ) हमारे सग्रहमे है। आवश्यक अश इस प्रकार है :—

*"श्रीजिनचन्द्र सूरि श्रीमुखइ, श्राविका कौडा एह।*
*आदरइ बारह व्रत इसा, शुभ दिवस रे मन हर्ष धरेय ॥१८॥*

---

"हिव अहमदाबाद सुरम्म, योगीनाथ शाह सुधम्म।
शत्रुञ्जय भेटणि रगि, तेडावइ वेगि सुचगि ॥ १९ ॥
मेलि सहु सघ गुरु साथि, परघर रलचइ निज आथि।
यात्र्या भेटण गिरिराज, सघपति सोमजी सिरताज ॥ २० ॥

दोहा—पूरव पश्चिम उत्तरइ, दक्षिण चिहुं दिशि जाण ॥
सघ यात्रयउ शत्रुञ्जय भणी, प्रगटी महियल वाणि ॥ २१ ॥
विक्रमपुर मडोवरउ, सिन्धु जेसलमेर।
सीरोही जालोर नउ, सोरठ चापानेर ॥ २२ ॥
सघ अनेक तिहा आविया, भटण विमल गिरिन्द।
लोकतणो सख्या नहीं, साथि गुरू जिनचद ॥ २३ ॥ "
[ युग प्रधान श्रीजिनचन्द्र सूरि अकबर प्रतिबोध रास, स० १६४८ ]

*सोलहसइ सैंताल समइ, वैसाख सुदि दिन तीज ।*
*इम ढाल बन्धइ गुथिया, श्रावक व्रत रे जिह समकित बीज १९*
*जिनदत्तसूरि गुरु सानिधइ जिन कुशलसूरि सुपसाइ ।*
*जयसोम गणि इणि पर कहइ, शुभ भावइरे दिन दिन सुखथाइ २०*

पाटणमे विहार करके अहमदाबाद होते हुए सूरिजी खम्भात पधारे, वहा श्रीस्थभन पार्श्वनाथ प्रभुके तीर्थके दर्शन किये। खम्भात के सघने आपको वहीं चातुर्मास करनेके लिये विशेष आग्रह किया। सघके आग्रहसे सूरिजीने वहींपर अवस्थिति की।

आचार्य पद प्राप्तिके पश्चात् आपने निरन्तर सर्वत्र विहार करके अनेक जीवोंको प्रतिबोध दिया, और हजारो श्रावकोंको जैन दर्शनका सद्बोध देकर धर्ममे दृढ किया। इससे अनेक स्थानोमे जिनालय व जिन बिम्बोकी प्रतिष्ठाए, उपधान, व्रत-ग्रहण, इत्यादि प्रशसनीय धर्म-कृत्य हुए। अनेक सघ निकाले गये, जिनके साथ सूरि-महाराजने मारवाड, गुजरात और पूर्व प्रान्तीय तीर्थोंकी यात्रा की। परपक्षियोंके किये हुए आक्षेपोका उत्तर देनेमे और विद्या-भिमानी पण्डितोंको निरुत्तर करनेमे आपकी प्रतिभा बहुत बढी चढी थी। जैन दर्शनके तत्व-ज्ञानका प्रचार आपने खूब जोरोंसे किया। आपके सद्गुण और विद्वताकी सौरभ सर्वत्र प्रसरित होकर सम्राट अकबरके दरबार तक पहुच गयी थी।



## छट्ठा-प्रकरण

## अकबर-आमन्त्रण



म्राट् अकबर असाधारण धर्म-जिज्ञासु और समस्त धर्मोंके प्रति सहिष्णुता रखने वाले थे। अपने दरबारमें सब धर्मके विद्वानोंको बुलाकर प्रत्येक धर्मका उपादेय तत्त्व ग्रहण किया करते थे। यद्यपि वे मुसलमान कुलमें उत्पन्न हुए थे, तो भी उनके हृदयमें दयाके भाव अधिकाधिक थे। मुसलमान बादशाहोंमें उनके बराबर न्याय-प्रिय दूसरा कोई नहीं हुआ। सम्राट अकबर दीन-दुखियोंका उद्धार करना अपना परम कर्त्तव्य समझते थे जिसके अनेक उदाहरण उनके जीवनमें पाये जाते हैं। उनके राज्यमें हिन्दू और मुसलमान प्रजा जिस प्रकार सुख शान्तिसे रही वैसी सुखी किसी भी मुसलमान शासकके राज्य-कालमें नहीं रही* ।

---

*"बादशाह अपने दिलमें यही चाहता था कि किसी प्रकार मुझे धार्मिक सत्यकी बातें मालूम हों, बल्कि वह उनकी छोटी-छोटी बातोंका भी

वे शास्त्रार्थ, उपदेश, विद्वद्गोष्टी आदिके खूब प्रेमी थे इससे उनके दरबारमे चुने हुए विद्वान रहा करते थे, उनमे जैन विद्वान भी कई एक थे। नागपुरीय-तपागच्छके यति पद्मसुन्दरजी भी सम्राट् की सभामे कई वर्षों तक रहे हैं। सम्वत् १६७५ मे जब कि सम्राट् आगरेमे निवास करते थे तब भी इन्हे विद्वानोकी चर्चामे बहुत प्रमोद मिलता था। खरतर गच्छके वाचक दयाकलशजीन अपने विद्वान प्रशिष्य साधुकीर्तिजी आदिके साथ सं० १६२५ का चतुर्मास आगरेमे किया था उस समय शाही दरबारमे तपागच्छीय बुद्धिसागरजीके साथ पौषधके सम्बन्धमे साधुकीर्तिजीसे शास्त्रार्थ हुआ था। और पण्डित अनिरुद्धजी और पण्डित महादेव मिश्र आदि हजारो विद्वानोके समक्ष खरतरगच्छ वालोकी जीत हुई थी, इसके विषयमे आगे साधुकीर्तिजीके परिचयमे लिखा जायगा।

---

पूरा पता लगाना चाहता था। इसलिए वह प्रत्येक धर्मके विद्वानोको एकत्र करता था और उनसे सब बातोंका पता लगाया करता था।"

( अकबरी दरबार पृ० ७६ )

अकबर जैनियो और बौद्धोंके ग्रथ भी सुना करता था। हिन्दुओंके भी सैकड़ों सम्प्रदाय और हजारो धर्म-ग्रथ है। वह सब कुछ सुनता था और सबके सम्बन्धमे वाद-विवाद किया करता था।

( अकबरी दरबार पृ० १३२ )

जब उसने देशका शासन अपने हाथमे लिया, तब ऐसा ढंग निकाला जिससे साधारण भारतवासी यह न समझें कि विजातीय तुर्क और विधर्मी मुसलमान कहींसे आकर हमारा शासक बन गया है। इसलिए देशके लाभ और हितपर उसने किसी प्रकारका कोई बन्धन नहीं लगाया(वही पृ०११८)

सम्वत् १६३९ में तपागच्छके आचार्य श्रीहीरविजयसूरिजी भी सम्राटसे मिले थे उसके पश्चात् तो जैन विद्वानोंका समागम उन निरन्तर रहा, जिससे जैन दर्शनके प्रति उनका अनुराग दिनों दिन बढने लगा था* ।

---

* तप गच्छके प्रभावक आचार्य श्रीमान् हीरविजयसूरिजी के समागम से अकबर पर अच्छा प्रभाव पडा था, जिससे फल स्वरूप उसने जजिया कर वगरह छोड दिया । कई दिनों तक अ-मारि उद्घोषणाके फरमान पत्र प्रकाशित कर अनेक जीवोंको अभयदान दिया। उनके पश्चात् शान्तिचन्द्रजी, विनयसेनसूरिजी, भानुचन्द्रजी आदिने जैन धर्मका सदबोध दिया था, इन सब बातोंको जाननेके लिये "सूरीश्वर और सम्राट" आदि ग्रन्थोंको देखना चाहिये ।

खरतर गच्छके उ० श्री शिवनिधानजी के गुरु श्री हर्षसारजी भी सम्राटसे मिले थ जिसका उल्लेख शिवनिधानजी विरचित "सग्रहणी बालावबोध" में इस प्रकार है —

"श्रीमदकबर साहेर्मिलनाद्विस्तीर्ण वर्ण कीर्ति भर ।
वाक्पति वद गुररिह सक्रिय मुख्यो हर्षसार गणि ॥"

[ बीकानेर वृहत् ज्ञान भण्डार ]

महोपाध्याय श्री जयसोमजी भी सम्राट अकबरसे मिले थे। और उन्होंने शाही-सभामें किसी विद्वानको परास्त करके विजय पाई थी जिसका वर्णन "जैन साहित्य नो इतिहास" पृष्ट न० ५८८ में इस प्रकार किया है —

"जयसोमे अकबर शाहनी सभा मा जय मेलव्यो हतो एम तेमना शिष्य गुणविनय, पोताना खंड प्रशस्ति काव्यनो प्रशस्ति मां जणावे छे ।"

एक दिन लाहौरकी राज्यसभामे बैठे हुए सम्राट अकबरने उपस्थित विद्वानोसे ( हमारे चरित्र नायक ) श्रीजिनचन्द्रसूरिजीकी महती प्रशसा सुनी। वे विद्वान लोग उनकी अत्यधिक श्लाघा करते थे इससे सम्राटको सूरिजीके दर्शन करने और जैन धर्मका विशेष बोध प्राप्त करनेके लिये उत्कट इच्छा हुई। उन्होने पूछा "यहा सूरिजी का भक्त शिष्य कौन है ? जिससे उनका पता लगाया जाय।" तब पण्डितोने कहा "मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र हैं।" तब सम्राटने मन्त्रीश्वर को बुलाकर सत्कार सहित पूछा "हे मन्त्रीश्वर! तुम्हारे गुरु श्री जिनचन्द्रसूरिजी अभी कहा विराजते हैं ? वे किसी भी प्रकार शीघ्र यहा पधारें ऐसा उपाय करो। तब मन्त्रीश्वरने विनयपूर्वक उत्तर दिया "वे अभी खम्भातमे विराजते हैं किन्तु अभी ग्रीष्म ऋतुमे दूर देशसे आना कठिन है क्योंकि वे किसी सवारीपर तो चढते नहीं हैं और इस कडे धूपमे वृद्धावस्थाके कारण आनेमे उन्हे कष्ट होगा" तब सम्राटने कहा "अगर वे शीघ्र न आ सकें तो उनके शिष्यको तो यहा अवश्य बुलानेके लिए दो शाही पुरुषोको भेज

इसके अनुसार यदि खड प्रशस्ति-काव्यकी प्रशस्तिमें यह उल्लेख हो तो स० १६४१ के पहिले ही अकबरकी सभामें उनका विजयी होना सिद्ध होता है क्योंकि यह वृत्ति स० १६४१ में रची जानेका उल्लेख उसी ग्रथके पृ० ५८९ में है। इस घटनाका उल्लेख कर्मचन्द्र-मत्री-वश-प्रबध वृत्ति, जो कि स० १६५६ में इनके शिष्य उ० गुणविनयजी ने बनाई है, उसमें भी इस प्रकार है —

"श्री जयसोम गुरूणा, शाहि सभा लब्ध विजय कमलानाम्"

दो" तब मन्त्रीश्वरने वाचक मानसिंहजी (महिमराज) को बुलानेके लिए शाही दूतको विनतीपत्र सहित सूरिजीके पास भेजा।

सूरिजीने विनतीपत्र पाते ही वाचक श्रीमहिमराजजी को अन्य ६ साधुओके साथ लाहोर भेज दिया। वे निरन्तर विहार करते हुए कुछ दिनोमे लाहोर पहुचे। वाचकजीके दर्शनसे सम्राट बहुत प्रसन्न हुआ। उसने उत्सुकतापूर्वक मन्त्रीश्वरसे पूछा कि वे जगद्गुरु जिनचन्द्र सूरिजी कब आवेगे ? जिनके दर्शनसे चित्त रंजित होता है और अनेक लोग जिनकी चरण सेवा कर सुखी होते हैं। तब मन्त्रीश्वरने कहा "अब चौमासा निकट आ रहा है अतएव उनका विहार नहीं हो सकता।" तब सम्राट्ने कहा "मैं उनका दर्शन कर उनसे उपदेश ग्रहण करके अपना जीवन सफल करूगा और अनेक जीवोको अभय दान देकर उन्हे सन्तुष्ट करूगा। अतएव वे यहा अवश्य पधारे।" ऐसा कहकर सम्राटने विनती-पत्र लिखाकर मन्त्रीश्वरको दिया। मन्त्रीश्वरने भी बहुत आग्रहपूर्वक लाहोर आनेके लिये विनती लिखकर शीघ्रगामी चतुर मेवडा दूतोके साथ खम्भात भेज दिया।

कुछ दिनो मे वे दूत खम्भात पहुचे। वहा सूरिजी के दर्शन कर प्रसन्न चित्तसे उन्हें विनती-पत्र देकर लाहोर चलने के लिये विनयपूर्वक प्रार्थना की।

सूरिजी विनती-पत्र पढकर विचार करने लगे कि मुझे अवश्य लाहोर जाना चाहिये, क्योंकि सम्राट अकबर धर्मजिज्ञासु है, यदि वह जैन धर्मका अनुकरण करने लग जायगा तो "यथा राजा तथा

प्रजा"के नियमानुसार जैन धर्मकी बहुत उन्नति होगी। जब भारत-वर्षके राजा जैन-धर्मावलम्बी थे तब जैनोंकी संख्या भी बहुत थी और सर्वत्र शान्ति विराजमान थी। अब भी यदि गुरुदेवकी कृपासे अकबरके हृदयमें जैन धर्मके उच्च सिद्धान्त बैठ जायेंगे तो वर्तमान समय मे आर्य्य प्रजापर होनेवाले अत्याचारों का सर्वथा विनाश हो जायगा। अतएव वहां जाकर सम्राट को जैन धर्मके सूक्ष्म तत्वोंका दिग्दर्शन कराना अति उपयोगी होगा।

सूरिजीके खम्भात से विहार करनेका दृढ निश्चय देखकर समस्त संघने एकत्र होकर उनसे प्रार्थना की "हे गुरुदेव! चातुर्मास निकट है आप दूर देश कैसे पहुचेंगे, अतएव यहीं विराजे।" तब सूरिजीने संघको समझाकर महान् लाभके कारण वहांसे, मिती आषाढ शुद्धा ८ को प्रस्थान कर नवमी के दिन विहार किया। मार्गमे अच्छे शकुन मिले, जिससे सारा संघ प्रमुदित हुआ। सूरिजी आषाढ सुदि १३ के दिन अहमदाबाद पधारे। श्रीसंघने उत्सव-पूर्वक नगरमें प्रवेश कराया। उपाश्रयमें आनेके पश्चात् सूरिजी श्रीसंघ से परामर्श करने लगे कि चतुर्मास मे साधु-विहार कैसे होगा? उस समय फिर दो शाही फरमान आये, जिसमे मन्त्रीश्वरने भी आग्रहपूर्वक लिखा था कि "आप वर्षाकाल* और लोकापवाद की

* चातुर्मासमें निष्प्रयोजन साधुओंको विहार न करके एक ही स्थानमें रहनेकी जिनाज्ञा है लेकिन विशेष धर्म प्रभावना और अरिष्ट कारक संयोग होनेसे आचार्य, गीतार्थादि महानुभावोंको देश, काल, भाव विचार कर विहार करनेकी जो अपवाद मार्गसे जिनाज्ञा है। पूर्व कालमें भी ऐसे संयोगोंमें चतुर्मासमें विहार करनेके कई प्रमाण मिलते हैं।

ओर लक्ष्य न देकर अति सत्वर लाहोर पधारे, आपके यहा पधारने से धर्मकी वहुत प्रभावना होगी।" तब सूरिजी ने संघ की सम्मति से वहासे लाहोर जानेके लिये विहार कर दिया। म्हेसाणा ग्राम होते हुए सिद्धपुर पधारे। वहा वन्ना शाहने नगर-प्रवेशोत्सव कराया और वहुतसा द्रव्य व्यय करके पूजा प्रभावनादि किये, वहा पाटणका सघ सूरिजी के दर्शनार्थ आया। वहासे विहार करके पाल्हणपुर पधारे, पाटणका सघ लाहण आदि करके वापिस चला गया। वहासे विहार करके सूरिजी शिवपुरी आये। उनके आगमनसे महुर और शिवपुरीका संघ वहुत हर्षित हुआ। सूरिजी के पाल्हणपुर पधारने के समाचार जब सीरोही के राव सुरतान×ने सुने, तब उन्होने जैन सघको एकत्रित करके आज्ञा दी कि "सूरिजी को पाल्हनपुर से यहा आमन्त्रित करने के लिए मैं अपने प्रधान पुरुषोको आपके साथ भेजता हू, तुम लोग जल्दीसे जाकर उन्हे यहा पधारनेके लिये विनती करो।" तब श्रीसघ और सीरोही-पतिके प्रेषित पुरुष पाल्हणपुर जाकर सूरिजी को आमन्त्रित कर आये। सूरिजी भी ग्रामनगर विचरते हुए सीरोही पधारे। उनका स्वागत करनेके लिये असंख्य जनता सामने आई, पचशब्द निशाण,

× ये सं० १६२८ में मात्र १२ वर्ष की अवस्थामें सीरोही की राजगद्दीपर वैठे। ये बडे वीर, उदार और महाराणा प्रतापकी भाति स्वाधीनताके उपासक थे। इन्होने अपने जीवनमें ५१ युद्ध किये थे। इनकी वीरताके सामने वडी भारी सेना भी भय खाती थी। विशेष जाननेके लिये देखो सिरोही राज्यका इतिहास पृ० २१७ से २४४ तक।

नेजा, मादल, शङ्ख, झालर, भेरी आदि नाना प्रकार के वाजित्र बज रहे थे, सधवा स्त्रिया गुरु-गुण गाती हुई पीछे-पीछे आ रही थीं, भक्तिवान् कुलवन्ती स्त्रिया मुक्ताफलोंसे वधा रही थी, जय-जय शब्दका उच्चारण, मघकी गर्जनासा प्रतीत होता था। इस प्रकार सूरिजी सीरोही नगरके राज-मार्गसे होते हुए श्रीऋषभदेव स्वामीके मन्दिरमे पधारे। वहा प्रभुके दर्शन स्तुति आदि करके उपाश्रयमे पधारे, वहा स्वर्णगिरिका सघ, सूरिजीके दर्शनार्थ आया। राय सुरताननें आडम्बर सहित आकर सूरिजी को वन्दना नमस्कार करके पर्यूषण पर्व सीरोहीमे करनेको विनती की। सूरिजीने सघ और नृप-आग्रहसे पर्यूषण पर्वके ८ दिन सीरोहीमें ही विताये। सूरिजी के सीरोही विराजने से बहुत धर्म ध्यान हुआ। जिनपूजन, तपश्चर्या आदि बहुत से धर्म कार्य्य हुए। आठ दिन तक अमारि उद्घोषणा करके अनेक जीवोंको अभयदान दिया गया। समस्त सीरोही राज्यमे जीव-हिंसा बन्द करनेके लिये सूरिजीने राजाको उपदेश दिया, तब राजाने पूर्णिमा के दिन जीवहिंसा दूर करने के लिये उद्घोषणा कर दी और भी राजाने सूरिजी की बहुत भक्ति की। पर्युषणके पश्चात् वहासे विहार करके सूरिजी जावालपुर (जालोर) पधारे। शाह वन्नाने उत्सवपूर्वक नगरमें प्रवेश कराया।

उस समय लाहोरसे सम्राटने दो व्यक्तियोंके साथ फरमान-पत्र सूरिजी को भेजा, जिसमे लिखा था कि चातुर्मास मे आपको आनेमे कष्ट होता होगा ? अतएव चातुर्मास पूरा करके शीघ्र ही पधारे, किन्तु पीछे बिलकुल विलम्ब न करे। तब सूरिजी कार्तिक

चउमास तक जालोर ही विराजे। चातुर्मास पूर्ण हो जानेसे मिगसर महीनेमे पुष्य नक्षत्रके दिन शुभ मुहूर्तमे बहुतसे साधुओ के परिवार सहित विहार किया, उनके साथ चतुर्विध सघ और शाही पुरुप भी थे। विमल यशोगान करनेवाले भोजक, भाट, चारण और दक्ष गाधर्व प्रस्तावोचित सूरिजीका गुण-गान करके श्रीमन्त श्रावकोंके पास समुचित पुरस्कार पाते थे। सूरिजी ग्रामानुग्राम विचरते हुए देठर, सराणउ, भमराणी, खाडपरङ्गी वगैरह ग्रामोमे आये। विक्रमपुरका सघ वदनार्थ आया और लाहिणीकी। वहासे द्रुणाडइ नगर पधारे, वहा जेसलमेरका सघ आया। वहासे विहार करके रोहीठ नगर पधारे, वहाके शाह थिरा और मेराने बहुत उत्सवपूर्वक नगर-प्रवेश कराया और याचकोको दान देकर सन्तुष्ट किया। वहा जोधपुरका वडा (विस्तृत) सघ वंदनार्थ आया, सूरिजी के दर्शन कर लाहणी आदि करके स्वधर्मी-भक्ति करके वापिस चला गया। चार व्यक्तियोने नन्दी महोत्सव आदि रचना कर सूरिजी से चतुर्थ व्रत अर्थात ब्रह्मचर्य्य व्रत धारण किया, और भी कईश्रावकोने यथाशक्ति व्रत प्रत्याख्यानादि किये। वहाके ठाकुरने अपने राज्यमे बारस तिथिके दिन सूरिजीके उपदेश से जीवो को अभयदान दिया। वहासे विहार करके पाली नगरमे पधारे, नंदी मंडा कर व्रतादि दिये। वहाके सघने बहुत हर्षित होकर चारो प्रकारके धर्मकी विशेष रूपसे आराधना की। वहासे लाम्बिया ग्राम होते हुए सोजत पधारे, प्रभुके मन्दिरके दर्शन किये। वहासे चीलाडा पधारे, वहाके सुप्रसिद्ध कटारिया जातिके श्रावकने नगर प्रवेशोत्सव कराया वहासे जयतारण नगर होते हुए मेडता नगर पधारे।

उस समय मेडता बहुतसे समृद्धिशाली श्रावकोंका लीला स्थान था, बहुतसे जैन मन्दिर नगरकी शोभा बढाते थे। मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रके पराक्रमी और बुद्धिशाली पुत्र भाग्यचन्द्र, लक्ष्मीचन्द्र वहा निवास करते थे, उन्होने हाथी, घोडा, रथ और पैदल पुरुषोंके साथ पचशब्द ढोल, नगारा निशाणकी मधुर ध्वनि से समारोह पूर्वक सूरिजीका नगरमे प्रवेश कराया। मन्त्रीश्वरने महाजनोको एकत्रित कर फोफल दान नारियलकी प्रभावना की। सारे नगरमे लाहिणीकी याचकोंको इच्छित दान दिया। जिन मन्दिरोंमे बडी पूजायें और नदि महोत्सवादि कराये, बहुतसे भव्य श्रावकोंने व्रत उच्चारण किये। वहा फिर शाही फरमान आया। वहासे समस्त सघके साथ फलोधी पधारे। वहा श्री पार्श्वनाथ प्रभुके प्राचीन मन्दिरमे प्रभुके दर्शन किये।

वहासे विहार करके सूरिजी नागोर पधारे, प्रसन्नचित से मन्त्रीश्वर मेहाने द्रव्य व्यय करके स्वागत पूर्वक नगर प्रवेशोत्सव किया। वहा बीकानेरका सघ सूरिजीको वदना करनेके लिये आया। उस सघके साथ ३०० सिजवाला ( पालकी ) और ४०० प्रवहण थे भक्ति पूर्वक स्वधर्मी-वात्सल्यादि करके वापिसगया। वहासे सूरिजी विहार करके बापेऊ, पडिहारा, मालासर आदि ग्रामोसे होते हुए रिणी -- ( बीकानेरमे १४४ मील ) पधारे, वहाके लोग उत्साह पूर्वक

* यह रिणी शहर बहुत प्राचीन है, यहा आगे दहालिय रानाका राज्य था। यहा स० ९८६ के लगभग बना हुआ श्री शीतलनाथ स्वामीका मन्दिर अब तक विद्यमान है। जो इतना सगीन और मजबूत है कि आजका सा बना हुआ प्रतीत होता है। कई जगह इसका निर्माणकाल सवत् ९९९ भी लिखा है।

सूरिजी का स्वागत करनेके लिये आये। समस्त सघके साथ मत्री श्रीठाकुरसिंहके पुत्र मत्री श्रीरायसिंहने प्रवेशोत्सवादि करके गुरु भक्ति की। वहा महिम का सघ सूरिजी के दर्शन करनेके लिये आया। श्रीशीतलनाथ स्वामीके प्राचीन भव्य जिनालयके दर्शन पूजन कर, सूरिजी को वदन कर वापिस गया। वहासे सूरिजी ने विहार किया, मार्गमें लाहौर तक भक्ति करनेके लिये शाह शाकर सुत वीरदास साथमें हो गया। सूरिजी क्रमसे सरस्वतीपत्तन ( सरसा ) और कसूर होते हुए हापाणइ पधारे, वहासे लाहौर केवल चालीस कोस रहा। सूरिजी के शुभागमनका सदेश लेकर जो व्यक्ति लाहौर गया उसका मंत्रीश्वरने बहुत ही सन्मान किया और उसे सोनेकी रसना ( जिह्वा ) और कर-कंकण आदि बहुमूल्य वस्तुओंका पुरष्कार देकर सन्तुष्ट किया।






सूरिजीका विहार मार्ग

# सातवाँ-प्रकरण

## अकबर-प्रतिबोध



रिजीके हापाणइ पधारनेके शुभ सम्वादको सुन कर लाहोरके सघको अपार हर्ष हुआ और व लोग मत्रीश्वरके साथ आपके दर्शनार्थ वहा गन। फिर सूरि-महाराजको वीनति करके भक्ति पूर्वक और समारोह सहित लाहोर ले आये। नगरक समीप पहुचने पर मत्रीश्वरने सम्राटको निवेदन किया कि "आपके निमन्त्रित सूरि-महाराज पधारे हैं।" जिसे सुनकर अकबर अति प्रसन्न हुआ और उत्सुकता पूर्वक उन्हे बुलानेको कहा। इस आशयको एक कविने इस प्रकार व्यक्त किया है —

*पूज्य पधारया जाणिकरि मेली सत्र सवात।*
*पहुता श्रीगुरु वादवा सफल करइ निज आथ ॥८३॥*
*तेडी डेरइ आणि करि कहइ शाह नइ मत्रीश।*
*जे तुम सुगुरु तेडाविया, ते आव्या सुरीश ॥८४॥*

अकवर वलतो इम भणइ तेडउ ते गणधार।

दर्शन तसु कउ चाहियइ, जिम हुइ हर्ष अपार ॥८५॥

सूरिजीके साथ वा० जयसोम, कनकसोम, वा० महिमराज, वा० रत्ननिधान विद्वत् गुणविनय और समयसुन्दर आदि बडे बडे प्रकाण्ड विद्वान यशस्वी और निर्मल चारित्रको पालन करनेवाले ३१ साधु थे। स० १६४८ के फाल्गुन शुक्ला १२ के दिन पुण्य-योगमें सूरिजीने लाहोर नगरमें प्रवेश किया। उस दिन मुसलमानोंके ईदका पर्व था।

मन्त्रीश्वरने सूरिजीके स्वागतोपलक्षमें बहुत द्रव्य व्यय करके महोत्सव किया जिसका वर्णन किसी कविने इस प्रकार किया है —

घडी पन्नो मद गयन शीश सिन्दूर सवारै।
चवर अमोलख चार चामरा चाचरा सुधारै॥
घणीनाद वीर-घट इणि उपरि अंबारी।
गूघर पाखर पेखता क्षु थरहराए भारी॥
फरतिख धजा फरनिजा इम सामेले सचरे।
जिनचन्द्रसूरि आया जुगति इम कर्मचद उच्छव करै॥२॥

* * * * *

श्रीमहाराज पधारे लाहौर, अकबर शाह मतगज्ज जूथ समेला।
चढे हैं नवाव वडे उमराव, नगाराकी घूस सुहोत समेला॥

*बजे हैं आरबिच थटे हैं झिण्डा, फरांट निशान घुरे हैं नौबत अराबा सचेला।*

*पातिशाह अकबर देस प्रताप, कहे जिनचद्रका सूर्य उजेला ॥१॥*

सूरिजोका स्वागत करनेके लिये राजा, महाराजा, मल्लिक, खान, शेख, सूबेदार, अमीर, उमराव, आदि सभी प्रतिष्ठित शाही-पुरुष और असख्य नागरिक आये थे। सम्राट अकबर स्वय राज-महलके गवाक्षमे बैठे हुए सूरि-महाराजकी वाट जोह रहे थे। वे दूरसे ही सूरिजीको आते हुए देखकर अत्यन्त प्रसन्नता-पूर्वक नीचे उतर आये और बहुत भक्ति और विनय पूर्वक सूरिजीको वन्दन करके उनके विहारकी सुख-शाता पूछने लगे, "हे भगवन ! आपको खम्भातसे यहा आनेमे मार्ग-श्रम तो हुआ ही होगा ! किन्तु मैने भविष्यमे जीव-दया प्रचारके हेतु ही यहा आपको बुलाया था। अब आपने यहा पधारकर मेरे पर असीम कृपा की है ! मैं अब आपसे जैन धर्मका विशेष बोध प्राप्तकर जीवोको अभय दानादि देकर आपका खेद ( मार्ग-श्रम ) दूर करूगा ! "

सम्राटके इन विनीत वचनोको सुनकर सूरि-महाराजने मृदु-वचनोसे कहा "सद् धर्मका प्रचार करना ही केवल हमारा ध्येय है और सर्वत्र विचरते रहना ही हमारा आचार है ! अत हमे मार्ग श्रमका जरा भी खेद नहीं है। हम अपना कर्तव्य पालन करनेके लिये ही यहा आये हैं। आपकी धर्म-जिज्ञासुता देखकर हमे परम आनन्द हुआ।

इस प्रकार वार्तालाप करते हुए सम्राट अत्यन्त हर्षित हुए। वे बड़े सन्मानके साथ सूरिजीसे हाथ मिलाये हुए उन्हें ड्योढ़ी-महल में ले गये। जिसका वर्णन एक कविने इस प्रकार किया है —

*पहुता गुरु दीवाण देखी अकबर, आवइ साम्हा ऊमही ए।*

*वदी गुरुना पाय मॉहि पधारिया, सइ हथि गुरु नौ कर ग्रहीए ८?*

*पहुता ड्योढी मॉहि सहगुरु शाहजी, धर्म बात रंगे करइ ए।*

*चिन्ते श्रीजी देखि (ए) गुरु सेवता, पाप ताप दूरइ हरइ ए॥८९॥*

[ यु० श्रीजिनचन्द्र सूरि अकबर प्रतिबोध रास ]

महलमें यथा-स्थन बैठ जानेके पश्चात परस्पर धर्म-गोष्ठी करने लगे। सूरिजीने अपनी ओजस्वी वाणी द्वारा प्रभावशाली शब्दोंमें इस प्रकार उपदेश देना आरम्भ किया —

आत्मा एक सनातन सत्य पदार्थ है, जिसका आस्तित्व अनुभवादि द्वारा सिद्ध है। वह ज्ञान, दर्शन, चरित्र आदि सद्गुणोंका समुद्र है, और चैतन्य उसका लक्षण है। जब वह अपने सद्गुणों में स्थित और लीन रहती है तब तक उसमें अति शुद्धता बनी रहती है। काम, क्रोध, मोह, अज्ञान, आदि गुणोंके सम्बन्ध होनेपर उसके साथ कर्मोंका बन्धन हो जाता है। उन कर्मोंके कारण ही विविध योनियें नाना प्रकारके रूप धारण करके जीव कभी मनुष्य कभी पशु-पक्षी और कभी देव रूपमें अवतीर्ण होता है। अपने पुण्य पापके कारण कभी कभी रंक कभी सबल कभी दुर्बल कभी सत्ताधीश और कभी भिक्षुक आदि नामोंमें जगतमें अपना परिचय देता हुआ सुख दुखका अनुभव करता है।

प्रत्येक आत्माने ऐसे अनेक पर्य्यायोंको धारण किया है, और जब तक उसके साथ कर्मो का सम्बन्ध है, करता ही रहेगा। कर्मो का सर्वथा विनाश हो जानेसे आत्माका शुद्ध स्वभाव प्रकट हो जाता है। आत्माकी इस अवस्थाको ही जैन-दर्शनमे परमात्मा या ईश्वर कहते हैं। इस विवेचनसे यह स्पष्ट है कि प्रत्येक जीव परमात्मा हो सकता है। अत प्रत्येक प्राणीका यह कर्तव्य है कि वह परमात्मा बननेके कारणोंको समझकर उनके अनुकूल वर्त्तन करे।

आत्माके परमात्मा बननेके जो मार्ग है, उन्हे धर्म या साधक अवस्थाके नामसे सम्बोधित किया जाता है और दुर्भावोंको पैदाकर कर्म बन्धके जितने भी कारण हैं उनको पाप या बाधक अवस्था कहते हैं। प्रत्येक प्राणीको साधक और बाधक मार्गो का ज्ञान नहीं होता अत जो तत्व-ज्ञानके गहरे अध्ययन द्वारा उन्हें यथावत् जानकर साधक-मार्गका आश्रय लेते हैं। और दूसरोंको सन्मार्ग बतलाते हैं उन्हे जैन-दर्शनमे गुरुके नामसे सम्बोधित किया है। वस्तुत आत्मा न पुरुष है न स्त्री, न निर्बल है न सबल, न धनी है न रक, क्यों कि ये सब अवस्थायें तो कर्म-जनित हैं और आत्मा शुद्ध सच्चिदानन्द हैं। आत्माए, सत्ता, द्रव्य, गुण और शक्तिकी अपेक्षा से समान है अत सभी जीव मित्रवत् होनेसे परस्पर प्रेम के पात्र हैं। जैसे अपनेको जीवन प्यारा है वैसे सभी जीवोंको जीवन प्यारा और मरण भयावह है। अतएव उन सबको सुख पूर्वक जीने देना ही आत्माका प्रथम कर्तव्य है। परमात्म-अवस्था प्राप्तिके साधनोंमे समस्त जीवोंके साथ मित्रता या प्रेम-भावका व्यवहार करना सर्वो-

त्तम प्रधान साधन या धर्म है। इसी धर्मको 'अहिंसा' नामसे भी पुकारते हैं।

जब एक सत्ता-प्राप्त प्राणी एक निर्बल और क्षुद्र जीवको सताने को उतारू होता है तब वह अपने आप ही दूसरेको, अपनेको सताने के लिये आह्वान करता है और उसके मनकी कठोर वृत्तियाँ पापमय व्यापारोंकी ओर उसे झुकाती है। जहा समस्त आत्माओंको मैत्री-भाव रूप समान स्थान दिया जाता है, वहा विश्व-प्रेम, सहिष्णुता, उदारता आदि सद्गुणोंका श्रोत प्रवाहित होने लगता है। अपना आधिपत्य जमानेके लिये मनुष्यको विश्व-प्रेम द्वारा सर्व जन्तुओंके कल्याणका ध्यान करना चाहिए, क्योंकि दूसरेको सता कर स्वय कोई सुखी नहीं रह सकता है। अपने मनोभावों द्वारा किसी प्राणीका अहित चिन्तन किये जानेको जैनदर्शनमें "हिंसा" नामसे सम्बोधित किया गया है। जहा हिंसाका इतना सूक्ष्म-तया विवेचन है, वहा यह बतलानेकी आवश्यता नहीं पडती कि किसी जीवको मारनेमें अधर्म या पाप नहीं है।

जिस देश या ग्रामका शासक अपनी प्रजाको सुखी नहीं रख सकता, उसके प्रति वात्सल्य नहीं रखता और राज्यमें नाना प्रकारके कर लगा देता है, उस राज्यमे शान्ति और सुख-सम्राज्यकी आशा ही नहीं की जा सकती, यह प्रत्यक्ष है। इसलिए अपने आधिपत्य मे रहे हुए प्राणी जिससे शान्ति-पूर्वक जीवन निर्वाह कर सकें वैसा निरन्तर ध्यान रखना चाहिये। सारे जगतका कल्याण हो, सब सुखी हों, कोई भी दुःखी न रहे, इस प्रकारकी हितेच्छु-वृत्ति को

अहिंसा कहते हैं। जहा अहिंसा है, अर्थात किसी प्राणीको दु ख न पहुचाना ही जहा का प्रधान लक्ष्य है, वहा अन्य कई गुण स्वत आकर निवास करते हैं। दयालु आत्माके समीप छल, प्रपच, चिंता आदि वासनाए और असद् व्यवहार प्रवृतियें कभी नहीं फटकती। वह सब ससारको अपनाकर लेता है, जहा जाता है वहीं अन्य जीवो के अभयकारक होनेसे पूज्य रूपमे देखा जाता है। अहिंसा तत्वमें रमण करने वाले योगियोके पास सिंह और बकरी वैर भावोका त्याग कर बैठते हैं। उनके दर्शन मात्रसे ही अद्भुत प्रभाव पडता है, बिना कहे सहस्रो नर नारी उनकी सेवामे उद्यत रहते हैं। अपने हृदयकी पवित्रता दूसरेके पाप भावोको भुलाकर हित चिन्तनकी ओर ही झुकाती है। जो दूसरोको अभयकारक होता है वह स्वय सर्वदाके लिये अभय बन जाता है। ससारमे जहा जहा दूसरों को कष्ट पहुचानेकी नीति है वहा अशान्ति, कलह सदाके लिये निवास करते हैं इसलिए प्रजापर अपना प्रभाव डालनेके हेतु उनके कल्याण-मार्ग और सुख शान्तिके उपायोकी ओर ही लक्ष्य रखना चाहिये। जहा स्वार्थ-साधनके हेतु मनुष्य अन्धा बन जाता है वहा असत्य भाषण, चोरी, परस्त्री ससर्ग आदि विकृत भावोकी लहरें लहराती हैं। किन्तु जहा अहिंसा रूपी सद्गुण का निवास होता है वहा ये दुर्गुण नहीं आ सकते, क्योंकि किसीकी चोरी करना, परस्त्रीके प्रति बुरे भाव रखना, हिंसा भावके बिना नहीं हो सकते। यदि सब मनुष्योपर हिंसा-भावकी अशुभ भावना अरूढ हो जाय तो जगत-व्यवहारमे अनेक अडचनें उपस्थित हो जॉय इसलिये स्वकल्याण चाहने

वाले मनुष्यको हिंसा भावको सर्वदा त्याग करना चाहिये। राजनीति मे प्रजापर वात्सल्य रखना और उसे सुख शान्तिसे रहने देना ही प्रजापालकका धर्म कहा गया है। मनुष्य तो क्या पशु पक्षी भी जो अपने राज्यमे रहते हैं, वे भी प्रजा ही हैं उन्हें प्राण रहित करना राजनीति कदापि नहीं हो सकती अत उन्हे भी निर्भीक रहने देना चाहिये। धर्मके साथ आत्माका पूर्ण सम्बन्ध है। किसीको अपने धर्मसे छुडाना और धर्म-पालनमे बाधा देकर धार्मिक आघात पहुचाना भी प्रजाको विद्रोही बनाना है, अत शासकको मत सहिष्णुताका गुण अवश्य धारण करना चाहिये। शासकका प्रजावात्सल्य ही एकमात्र प्रजाके हृदय-सम्राट बननेका हेतु है। अतएव सर्वदा उदार वृत्ति और हृदय निर्मल पवित्र रखना चाहिये। हृदय निर्मल रखनेके लिये सात व्यसनोका अवश्य त्याग करना चाहिये —जूआ खेलना, मास भक्षण, मदिरा पान, शिकार, प्राणी हिसा, चोरी करना और परस्त्री गमन इन्हे त्यागने वालोको सदा जय होती है और कीर्ति फैलती है। अहिंसा रूपी सद्गुण धारण करनेसे सतत् श्रीवृद्धि होती है, लाखो प्राणियोका आशीर्वाद मिलता है। प्राचीन इतिहाससे यह स्पष्ट है कि जिस समय जैनो और बौद्धोका अहिंसा प्रचार अति जोरो पर था तब राज्योसे कलह, विग्रह और अशान्ति चिरकालके लिये अन्तर्ध्यान हो गई थी।

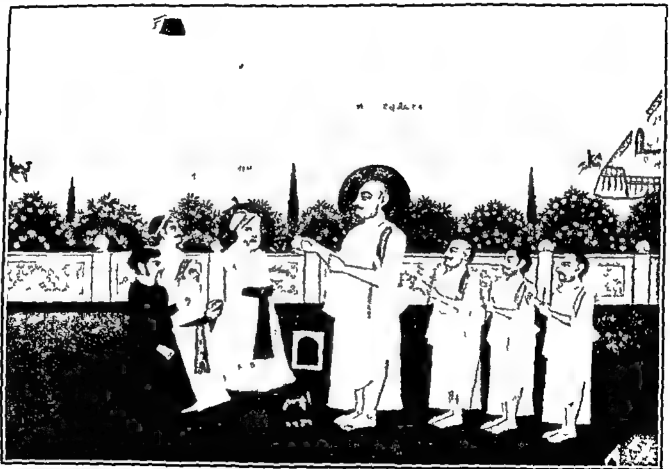
सूरिजीके अमृत मय उपदेश श्रवण करनेसे सम्राटके चित्तमें अत्यन्त प्रभाव पडा और करुणाका बीज परिपुष्ट हुआ। उनके प्रति पूज्य भाव और भक्तिका आदुर्भाव हुआ। उसने वस्त्र और स्वर्ण-

मुद्रायें लाकर भक्ति पूर्वक सूरिजीके सन्मुख रखकर निवेदन किया "हे गुरुवर्य्य! आप इनमें से अपनी आवश्यकतानुसार कुछ लेकर मुझे अनुगृहीत करें।" तब सूरिजी ने कहा "साधुओंको परिग्रह रखना उचित नहीं, अतः हम इन सबका क्या करें।" सूरिजी के इस निर्लोभीपनको देखकर सम्राट मन ही मन बहुत प्रसन्न हुआ और उन्हें अपने हृदय मन्दिरमें आराध्य गुरु करके स्थापित किया। इसके पश्चात सम्राट, सूरिजी के साथ महलसे बाहर आये, और समस्त सभाजन, दीवानों और काजियोंको सम्बोधित कर कहने लगे "ये जैनाचार्य, धैर्य्यवान धर्मधुरन्धर और विशिष्ट गुणोंके समुद्र हैं। हमारा आज अहो भाग्य है हमारी ऋद्धि धन और राज्य सम्पदा आज सफल है जो कि इनके दर्शन हुए।"

सम्राटने सूरिजीसे निवेदन किया "हे पूज्यवर! आपने यहा पधारकर हमारे पर महती कृपा की है। अब प्रति दिन अवश्य एकवार धर्मोपदेश सुनाने और दर्शन देनेके लिये हमारे महलमें पधारा करें ×। जैसी मेरी दया-धर्म पर स्थिर मति है वैसी मेरे अन्त पुर और सन्तानकी भी दया बुद्धि हो ऐसी मेरी अभिलाषा है। अब आप खुशीसे उपाश्रय पधारें और संघकी आशा पूर्ण करें।"

सम्राटने मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रको आज्ञा दी कि हाथी, घोड़ा और वाजित्र परिवार ले कर उत्सव के साथ गुरु महाराज को उपाश्रय

× एकशोदर्शनं देयं युष्माभिः प्रति वासरम्।
अस्माकं धर्म वृद्धयर्थमवारितं गतागते ॥ ९० ॥
[ कर्मचन्द्र मन्त्रिवंश प्रबन्ध. ]



मुद्रायें लाकर भक्ति पूर्वक सूरिजीके सन्मुख रखकर निवेदन किया "हे गुरुवर्य्य ! आप इनमे से अपनी आवश्यकतानुसार कुछ लेकर मुझे अनुगृहीत करें।" तब सूरिजी ने कहा "साधुओंको परिग्रह रखना उचित नहीं, अत हम इन सबका क्या करें।" सूरिजी क इस निर्लोभीपनको देखकर सम्राट मन ही मन बहुत प्रसन्न हुआ और उन्हें अपने हृदय मन्दिरमें आराध्य गुरु करके स्थापित किया। इसके पश्चात सम्राट, सूरिजी के साथ महलसे बाहर आये, और समस्त सभाजन, दीवानो और काजियोको सबोधित कर कहने लगे "ये जैनाचार्य, धैर्य्यवान धर्मधुरन्धर और विशिष्ट गुणोंके समुद्र हैं। हमारा आज अहो भाग्य है हमारी ऋद्धि धन और राज्य सम्पदा आज सफल है जो कि इनके दर्शन हुए।"

सम्राटने सूरिजीसे निवेदन किया "हे पूज्यवर ! आपने यहा पधारकर हमारे पर महती कृपा की है। अब प्रति दिन अवश्य एकवार धर्मोपदेश सुनाने और दर्शन देनेके लिये हमारे महलमे पधारा करें ×। जैसी मेरी दया-धर्म पर स्थिर मति है वैसी मेरे अन्त पुर और सन्तानकी भी दया बुद्धि हो ऐसी मेरी अभिलाषा है। अब आप खुशीसे उपाश्रय पधारें और सघकी आशा पूर्ण करें।"

सम्राटने मत्रीश्वर कर्मचन्द्रको आज्ञा दी कि हाथी, घोडा और वाजित्र परिवार ले कर उत्सव के साथ गुरु महाराज को उपाश्रय

× एकशोदर्शनं देय युष्माभि प्रति वासरम्।
अस्माक धर्म वृद्धयर्थमवारित गतागतं ॥ ९० ॥
[ कर्मचन्द्र मत्रिवश प्रबन्ध. ]

पहुचाओ !" तब सूरिजी ने कहा "नहीं, राजन्! हमारे लिये उत्सव आडम्बरकी कोई आवश्यकता नहीं है। दयामय जैन धर्मका प्रचार ही हमारे लिये परम उत्सव रूप है!" परन्तु सम्राट अकबरने अत्यन्त आग्रह पूर्वक महान् उत्सवके साथ सूरि महाराज को पहुचानेके लिये मन्त्रीश्वरको फिरसे आज्ञा दी।

परम धर्मिष्ठ लाहौरके जौहरी "परवत शाह" ने मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रसे विनती की "यहासे उपाश्रय तक प्रवेशोत्सव करानेका लाभ मुझे लेने दें।" फिर मन्त्रीश्वरकी आज्ञा प्राप्त करके उसने हाथी, घोडा, पैदल सिपाही और शाही वाजित्रोके साथ सूरिजीको उपाश्रयमे पहुचाया। अन्य श्रावकोने भी चित्त और वित्तसे धर्मकी प्रभावना की। सधवा स्त्रियोने मुक्ताफलोंसे वधाया और भक्तिसे गुरु-गुण-गर्भित गीत गाये। भाट, भोजक आदि याचकोने सूरिजीकी प्रशस्त कीर्तिका गुणानुवाद करके श्रावकोंसे मनोवाञ्छित द्रव्य पाया।

सूरि-महाराजने उपाश्रयमे पधारकर मधुर ध्वनिसे मङ्गलमय देशना दी, जिससे संघपर अनुपम प्रभाव पडा। सब लोग धन्य-धन्य, जय-जय करते हुए अपने-अपने घर गये।

सूरिजीके लाहौर पधारनेसे प्रतिदिन अधिकाधिक धर्म-ध्यान होने लगे। यह सब श्रेय सम्राट अकबर और मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रजीको ही था, जिन्होने दूर देशसे आमन्त्रितकर सूरि-महाराजको

म्राटके विनीत-आग्रहसे सूरिजी प्रतिदिन शाही महलमें जाकर देश देने लगे। जैन धर्मकी सर्वोत्तम विशेषताएं और ाका स्वरूप सम्राटको भली भांति बतला दिया, जिससे वे त धर्मपरायण और दयालु हो गये।

म्राट अपने दरबारमें सूरिजीकी सतत प्रशंसा × किया करते श्वेताम्बरादि यति साधु मैंने बहुत-से देखे हैं। अनेक धर्मके िका सत्संग किया है, परन्तु इनके सदृश शान्त, त्यागी, और निराभिमानी किसीको नहीं पाया। इनके दर्शन और मसे हमारा जन्म सफल हुआ है।

ूरिजीको सम्राट 'बड़े गुरु' * नामसे सम्बोधन किया करते थे,

---

दिन प्रति श्रीजी सु चलि मिलता, बधिउ अधिक सनेह।
गुरनी सूरति देखी अकबर, कहइ जगि धन धन एह ॥ ७ ॥
केई क्रोधी केई लोभी कूडे, केइ मनि धरइ गुमान।
षट् दर्शन मइ नयण निहाले नहीं कोई एह समान ॥ ८ ॥

[ यु० प्र० जिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास ]

जिनचन्द्रसूरि सम को नहीं रे, गच्छ चौरासी माहि।
राग प्रधान सबे इनो रे, कहइ अकबर पातिशाहि ॥ ३ ॥
× × ×
श्वेताम्बर हम बहु मिले रे, इन सम और न कोई।
अम्बर तारा गण घणा रे, दिनकर सम कुण होई ॥ ५ ॥

[ विमलविनय कृत गीत गा ७ ]

वृहद गुरु तया पूज्या ख्याति माप्ता पुरेऽखिले।
शाहि सम्मानतो यस्मा ज्जना वृद्धानुगामिन ॥ ९८ ॥

इससे हमारे चरित्रनायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी 'बड़े गुरु' के नामसे सर्वत्र प्रसिद्ध हुए। राजा, महाराजा, सूबेदार, मुसाहिब और सम्राटका सारा परिवार उनके परम भक्त बन गये।

एक दिन सम्राटने सूरिजीसे धर्म-चर्चा करते हुए भक्तिके उल्लासमें आकर एक सौ स्वर्ण-मुद्राएं उनके सन्मुख रखी। उन्होंने साध्वाचारका स्वरूप दर्शाते हुए कहा,—"सम्राट्! द्रव्यग्रहण करना तो क्या उसे छूना भी साध्वाचारसे विपरीत है, क्योंकि द्रव्यसे ममत्वादि अनेक दुर्गुणोंकी उत्पत्ति होती है, जैन साधुओंके लिये वस्त्र, पात्र यावत् अपने शरीरपर भी मूर्च्छा—आसक्ति करना निषिद्ध है। अपने माता, पिता, कुटुम्ब, परिवार और धन-दौलत त्याग करनेसे ही जैन-दीक्षा ग्रहण की जाती है और आजीवन उन्हें पांच कठिन प्रतिज्ञाएं ग्रहण करनी पड़ती हैं, जिनका संक्षिप्त स्वरूप इस प्रकार है —

( १ ) समस्त प्रकारकी हिंसा, मन वचन और कायासे, करने कराने अनुमोदन करनेका त्याग।

( २ ) सब प्रकारसे मिथ्या भाषणका उपरोक्त त्रिकरण, तीन योगसे त्याग।

( ३ ) किसीके बिना दी हुई छोटी-से-छोटी वस्तुके ग्रहणका त्रिकरण, त्रियोगसे त्याग।

( ४ ) समस्त प्रकारकी काम-वासनाओंका उपरोक्त त्रिकरण, तीन योगसे त्याग।

( ५ ) समस्त प्रकारके द्रव्योंकी मूर्च्छाका त्रिकरण, तीन योग-से त्याग।

इसीसे जैन साधु निग्रन्थ कहे जाते हैं। अत हमारे लिए द्रव्य सर्वथा अग्राह्य है।"

सूरिजीके इन निर्लोभी वचनोंको सुनकर सम्राट् अत्यन्त चकित और हर्षित हुआ। उस द्रव्यको धर्म-कार्यमे खर्च करनेके लिये मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रको सौंप दिया। उन्होंने उसे धर्म-स्थानमे व्यय कर दिया।

एक समय सम्राट अकबरके पुत्र सलीम सुरत्राणके मूल नक्षत्रके प्रथम पादमे कन्याका जन्म हुआ। ज्योतिषी लोगोंने कहा कि इसका जन्मयोग पिताके लिये अनिष्टकारक है। उसका मुख भी नहीं देखकर परित्याग कर देना चाहिये। तब सम्राटने शेख अबुलफजल आदि विद्वानोंको बुलाकर मूल-नक्षत्रके जन्म-दोषका प्रतिकार पूछा। उनसे परामर्श करके मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रको पूछकर सम्राटने आज्ञा दी,—हे मन्त्री! जैन दर्शनके अनुसार इस दोषकी उपशान्ति करनेके लिये शान्ति-विधि आदिका उचित प्रबन्ध करो।

सम्राटकी आज्ञा पाकर मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रने विशेष विधिसे सोने-चाँदीके घडो द्वारा महान् उत्सवके साथ मिती चैत्र शुक्ला १५ * के

---

* इम चैत्री पुनम दिवस शान्तिक, शाहि हुकम मुहते कीयउ।
जिनराज जिनचन्द्रसूरि वन्दी, दान याचक नइ दीयउ॥ १२॥
[ यु० प्र० जिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास ]

पछी शेखजी गुण नी पेटी, तेह नइ आवी मूल मा बेटी।
तेडया पण्डित जोशी जेहो, बोल्या जन्मा मूको एहो॥ ३८॥

* * *

इससे हमारे चरित्रनायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी 'बडे गुरु' के नामसे सर्वत्र प्रसिद्ध हुए। राजा, महाराजा, सूबेदार, मुसाहिब और सम्राटका सारा परिवार उनके परम भक्त बन गये।

एक दिन सम्राटने सूरिजीसे धर्म-चर्चा करते हुए भक्तिके उल्लासमे आकर एक सौ स्वर्ण-मुद्राएं उनके सन्मुख रखी। उन्होने साध्वाचारका स्वरूप दर्शाते हुए कहा,—"सम्राट्! द्रव्यग्रहण करना तो क्या उसे छूना भी साध्वाचारसे विपरीत है, क्योकि द्रव्यसे ममत्वादि अनेक दुर्गुणोकी उत्पत्ति होती है, जैन साधुओंके लिये वस्त्र, पात्र यावत् अपने शरीरपर भी मूर्च्छा—आसक्ति करना निषिद्ध है। अपने माता, पिता, कुटुम्ब, परिवार और धन-दौलत त्याग करनेसे ही जैन-दीक्षा ग्रहण की जाती है और आजीवन उन्हें पाच कठिन प्रतिज्ञाए ग्रहण करनी पडती हैं, जिनका संक्षिप्त स्वरूप इस प्रकार है —

( १ ) समस्त प्रकारकी हिंसा, मन वचन और कायासे, करने कराने अनुमोदन करनेका त्याग।

( २ ) सब प्रकारसे मिथ्या भाषणका उपरोक्त त्रिकरण, तीन योगसे त्याग।

( ३ ) किसीके बिना दी हुई छोटी-से-छोटी वस्तुके ग्रहणका त्रिकरण, त्रियोगसे त्याग।

( ४ ) समस्त प्रकारकी काम-वासनाओंका उपरोक्त त्रिकरण, तीन योगसे त्याग।

( ५ ) समस्त प्रकारके द्रव्योकी मूर्च्छाका त्रिकरण, तीन योग-से त्याग।

मुसाहिबोंके साथ वहा आए और १००००) रुपये जिनेन्द्र भगवानके सन्मुख भेंट कर प्रभु-भक्ति और जिन शासनका गौरव बढाया।

शान्तिके निमित्त मन्त्रीश्वरके कथनसे प्रभुके स्नात्रजलको सम्राटने मँगाकर अपने दोनो नेत्रोंपर लगाया और अन्तःपुरमें भी उस न्हवण-जलको भक्तिपूर्वक लगानेके लिये भेजा। इस अष्टोत्तरी स्नात्रके पवित्र दिवसमें समस्त श्रावक श्राविकाओने आम्बिलकी तपश्चर्या की। इस अष्टोत्तरी स्नात्रके अनुष्ठानसे सर्व दोष उपशान्त हुए, जिससे सम्राटको परम हर्ष हुआ।

सम्राट अकबरके मुसलमान होते हुए भी जैन-विधिसे शान्तिक स्नात्र कराना, जैन धर्मके प्रति उनकी विशेष श्रद्धा-भक्ति और अनुपम आदरका परिचायक है।

धर्म गोष्ठीपरायण सम्राट अकबर के आग्रह से सूरिजी ने भविष्यमें जैन धर्मकी विशेष प्रभावनाके हेतु स० १६४६ का चातुर्मास लाहोर मे करना निश्चित किया।



दिन ( श्री सुपार्श्वनाथजीका ) अष्टोत्तरी स्नात्र कराया, जिसमे लगभग एक लाख रुपये खरच हुए । वा० श्री मानसिंहजी (महिमराज) ने समस्त शास्त्रोक्त विधि सम्पन्न कराई । इस उपलक्ष्मे श्रीजिन-चन्द्रसूरिजीके आदेशसे श्री जयसोमजीने अष्टोत्तरी स्नात्रकी विधि गद्य भाषामें बनाई — ।

पूजन शेष हो जानेके अनन्तर मङ्गल दीपक और आरतीके समय सम्राट और उनके पुत्र शेखुजी ( सलीम-शाहजादा ) अनेक

---

मुनि कहै हत्या नवि छीजै, स्नात्र अष्टोत्तरी कीजै ।
पातस्या हरख्यो तेणिवार, कुट्टण वामण बडे गवार ॥ ४० ॥

*　　　*　　　*

झूठे वामण ऋषि भली वात, करो अष्टोत्तरी स्नात्र ।
हुकुम करमचन्द नइ दीधो, मानसिंहे अष्टोत्तरी कीधो ॥ ४२ ॥
थानसिंह भानुकल्याण करि स्नात्र उपासरइ जाण ।
पातस्या शेखनी आवइ, लाख रुपइया खरचावे ॥ ४३ ॥
स्नात्र उपास नु करता, श्राद्ध श्राविका आम्बिल धरता ।
जिनशासन नी उन्नति थाय, विघ्नपातशाह फेरू जाय ॥ ४४ ॥

[ कवि ऋषभदास कृत हीरविजयसूरि रास ]

इसके विषयमें विशेष जाननेके लिये "सूरीश्वर और सम्राट" पृ० १९८ कर्मचन्द्र-मन्त्रि-वंश प्रबन्ध वृत्ति और भानुचन्द्र-चरित्र देखो ।

— श्रीजिनचन्द्र गुरूणामादेशा (त्) लाभपुरे लिखिता ।
जयसोमोपाध्यायै स्नात्र विधि पुण्य वृद्धि कृता ॥ १ ॥

इसकी हस्तलिखित प्रति बीकानेरके ज्ञानभण्डार और उ० जयचन्द्रजी-के भण्डारमें है ।

मे तुरसमखान ने सोरोहीपर चढाई की थी। तब १०५० धातुकी जैन प्रतिमाए वहासे लूटकर फतैपुर सीकरीमे सम्राटके पास लाया। वह उन प्रतिमाओको गलाकर सोना निकालना चाहता था, किन्तु नीति-परायण सम्राट अकबरने उसे ऐसा न करने देकर प्रतिमाओको सुरक्षित रखा। उसके पश्चात् स० १६३६ मे आषाढ शुक्ला ११ के दिन बीकानेरके मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रने सम्राटको प्रसन्न कर प्रतिमाए बीकानेर लाकर विराजमान की, जो अभी तक यहाके श्री चिन्तामणिजीके मन्दिरमे विद्यमान हैं, इस विषयमें विशेष आगेके प्रकरणमे लिखा जायगा।

जब हमारे चरित्र-नायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी लाहौरमे विराजते थे, तब भी एक ऐसी दु खद घटनाका समाचार मत्रीश्वर कर्मचन्द्रको मिला कि नौरङ्गखान नामक किसी मुसलमान अधिकारीने द्वारिकाके जैन-मन्दिरोका विनाश कर दिया है। यह सुनकर मत्रीश्वरने सूरि-महाराजको निवेदन किया "हे भगवन्! यदि सम्राटको उपदेश देकर तीर्थ-रक्षाके लिये कुछ उपाय न किया गया, तो यवन लोग द्वारिकाकी भाति अन्य तीर्थोंका भी विनाश करत देर नहीं लगावेंगे।"

सूरि-महाराजने इस कार्यको आवश्यक जानकर सम्राटके समक्ष शत्रुञ्जय प्रभृति तीर्थोंका महात्म्य बतलाया और साथ-साथ उनके उचित प्रबन्ध करनेकी भी सूचना दी। सम्राटने सूरिजीकी इस पवित्र आज्ञाको शिरोधार्य करके प्रसन्नतापूर्वक समस्त तीर्थोंकी रक्षाके लिए एक फरमान-पत्र लिखवाया और उसके उपर अपनी

# आठवां प्रकरण

## युग-प्रधान पद प्राप्ति




र्य देवमन्दिरोंका विध्वंश करना मुसलमानोंका स्वाभाविक दोष था। यद्यपि सम्राट अकबरके सुख-साम्राज्यमें ऐसा दुष्कृत्य करना सर्वथा निषिद्ध था, तो भी "जाति स्वभाव न मुञ्चते" नीति वाक्यके अनुसार ऐसी घटनाएं बहुधा हुआ करती थीं, यह तत्कालीन इतिहाससे स्पष्ट है*। सं० १६३३

---

* सम्राटके समयमें जिनप्रतिमाकी आसातना होनेका उल्लेख "हीर-विजयसूरि रास" में कवि ऋषभदास ने भी इस प्रकार किया है —

"पाटण थी पछइ करइ विहार, अम्बावती मा आवणहार।
सोजितरै रह्या कारणवती, आशातना हुई प्रतिमा अती ॥ १८ ॥
अहमदाबाद अकबर शाह जिसै, पासे आजमखान सही तिसै।
खडी प्रतिमा पास नो त्याहि, लव्यु आव्यु अम्बावती माहि ॥१९॥
हाकिम हसनखान कर करी, आसातना प्रतिमाकी करी।
सुणी हीर सोजितरै रह्या, बोरमदें पछे गुरुजी गया ॥ २० ॥"

[ आनन्द-काव्य-महोदधि मौ० ५ पृ० ८८ ]

में तुरसमखान ने सोरोहीपर चढ़ाई की थी। तब १०५० धातुकी जैन प्रतिमाएं वहांसे लूटकर फतेपुर सीकरीमें सम्राटके पास लाया। वह उन प्रतिमाओंको गलाकर सोना निकालना चाहता था, किन्तु नीति-परायण सम्राट अकबरने उसे ऐसा न करने देकर प्रतिमाओंको सुरक्षित रखा। उसके पश्चात् सं० १६३६ में आषाढ शुक्ला ११ के दिन बीकानेरके मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रने सम्राटको प्रसन्न कर प्रतिमाएं बीकानेर लाकर विराजमान की, जो अभी तक यहांके श्री चिन्तामणिजीके मन्दिरमें विद्यमान हैं, इस विषयमें विशेष आगेके प्रकरणमें लिखा जायगा।

जब हमारे चरित्र-नायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी लाहौरमें विराजते थे, तब भी एक ऐसी दु:खद घटनाका समाचार मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रको मिला कि नौरङ्गखान नामक किसी मुसलमान अधिकारीने द्वारिकाके जैन-मन्दिरोंका विनाश कर दिया है। यह सुनकर मंत्रीश्वरने सूरि-महाराजको निवेदन किया "हे भगवन्! यदि सम्राटको उपदेश देकर तीर्थ-रक्षाके लिये कुछ उपाय न किया गया, तो यवन लोग द्वारिकाकी भांति अन्य तीर्थोंका भी विनाश करते देर नहीं लगावेंगे।"

सूरि-महाराजने इस कार्यको आवश्यक जानकर सम्राटके समक्ष शत्रुञ्जय प्रभृति तीर्थोंका महात्म्य बतलाया और साथ-साथ उनके उचित प्रबन्ध करनेकी भी सूचना दी। सम्राटने सूरिजीकी इस पवित्र आज्ञाको शिरोधार्य करके प्रसन्नतापूर्वक समस्त तीर्थोंकी रक्षाके लिए एक फरमान-पत्र लिखवाया और उसके ऊपर अपनी

मुद्रिका ( मोहर ) लगाकर मन्त्रीश्वरको समर्पित किया। उस फरमान-पत्रमे लिखा था कि आजसे समस्त जैन तीर्थ मन्त्रीश्वरके आधीन कर दिये गये हैं †।

सम्राटने अहमदाबादके तत्कालीन सूबेदार आजमखान × को शत्रुञ्जय, गिरनार आदि तीर्थों की रक्षा का सख्त हुक्म देकर फरमान भेजा। जिससे महातीर्थ श्री शत्रुञ्जय पर म्लेच्छोंका किया हुआ उपद्रव निवारण हुआ।

यह फरमान पत्र इलाही सन् ३६ के सहरयुर महीनेमे लिखा गया था, जिसका उल्लेख इसी आशयके एक फरमानके भाषानुवादमे है, जिसकी नकल बीकानेर "ज्ञान भण्डार" से लेकर इस पुस्तकके परिशिष्ट मे प्रकाशित की गई है।

---

† अन्यदा द्वारिका सत्कचैत्य ध्वंशोऽमुना श्रुते।
श्री जैन चैत्य रक्षायै विज्ञप्त श्रीजलालदी ॥ ३९६ ॥
तायेनाथ प्रसन्नेन जैनास्तीर्था समेऽपिहि।
मन्त्रिमाद्विहिता ( चक्रिरे ) नूनं, पुण्डरीकाचलादय ॥ ३९७ ॥
आजमखानमुद्दिश्य मुद्रितं निज मुद्रया।
फुरमाणमदात् शाहिर्यस्मै प्रीणित मानस ॥ ३९८ ॥
उद्धारान् सप्त चैत्याना कारणा द्विदशु पुरा।
मदात पुण्डरीकाद्री रक्षणात्स कृतोऽमुना ॥ ३९९ ॥
[ कर्मचन्द्र मन्त्रिवंश प्रबन्ध ]

× यह आजमखान सन् १५८७ से १५९२ तक अहमदाबादका सूबेदार था। खानेआजम या मिर्जा अजीज कोकाके नामसे भी यह पहचाना जाता है। विशेष परिचयके लिए "मीराते सिकन्दरी" का गुजराती अनुवाद देखना चाहिए।

एक वार सम्राट अकवरको काश्मीर विजय करनेके निमित्त जानेकी इच्छा हुई, तव मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रको कहा कि वडे गुरु श्रीजिनचन्द्रसूरिजीको बुलाओ। उनके दर्शनकर धर्मलाभ रूपी आशीर्वाद प्राप्त करनेकी मेरी अभिलाषा है, जिससे मेरी मनोकामना पूर्ण होगी।" सम्राटकी इस आज्ञासे मन्त्रीश्वरने सूरि-महाराजको शाही दरवारमें वुलाया *। उनके दर्शनकर सम्राट अत्यन्त प्रसन्न हुए। सम्राटके हृदयमें यह निश्चय हो गया कि हमारी अवश्य ही विजय होगी, क्योंकि सूरिजीपर सम्राटकी असीम श्रद्धा और भक्ति थी।

सूरिजीकी अमृतमय वाणी और अहिंसात्मक उपदेश श्रवणकर सम्राटका हृदय दयासे ओत-प्रोत हो गया और प्रति वर्ष आषाढ़ शुक्ला ६ से पूर्णिमा पर्य्यन्त १२ सूवों— में समस्त जीवोंको अभय-

---

* काश्मीरान् गन्तुकामेनान्यदा नौमध्यवर्त्तिना।
शाहिना मुदितेनैवमुदितो मन्त्रि नायक ॥ ४०० ॥
जिनचन्द्रास्त्वया तूर्णं माह्वया वचसा मम।
धमलाभो महास्तेषा ममादेयोऽस्ति वाञ्छित ॥ ४०१ ॥
पूज्याअपि तथा हूता नायक श्री शाहि सन्निधा
श्री गुरोर्दर्शनादेषा नन्दितो भून्नराधिप ॥ ४०२ ॥
शुचि मासे शुचौ पक्षे प्रसन्नो दिन सप्तकम्।
नवमीतो ददौशाहि रमारि गुण पावनम् ॥ ४०३ ॥
[ जयसोमजी कृत कर्मचन्द्र-मन्त्रि वंश प्रबन्ध ]

— कई जगह ११ सूवोंका ही उल्लेख है, किन्तु समयसुन्दरजी अपनी "कल्पलता"की प्रशस्तिमें इस प्रकार लिखते हैं —

दान देनेके लिये १२ शाही फरमान ( अमारि-घोषणा ) लिखकर भेजे * ।

इन फरमानोंमेसे मुलतानके सूबेका फरमान पत्र खो जानेसे स० १६६०-६१ ( ता० ३१ खुरदाद इलाही सन् ४६ ) मे उसकी पुनरावृत्ति करते हुए फिरसे एक फरमान श्रीजिनसिंहसूरिजीको सम्राटने दिया था, जिसकी नकल परिशिष्टमे दी गई है ।

---

अकबर रञ्जन पूर्वं द्वादश सूबेपु सर्व देशेपु ।
स्फुटतरममारि पटहः प्रवादितो यैश्च सूरिवरै ॥ ७ ॥

* सद्गुरु वाणि सुणी शाहि अकबर परमानद मनि पाए ।
हप्तह रोज अमारि पलण कु तिणि फुरमाण पठाए ॥ २ ॥
[ समयसुन्दरजी कृत जिनचन्द्र० गीत ]

सात दिवस जिनि सब जीवनकी हिंसा दूर निवारी ।
देश देशि फुरमाण पठाए सब जन कु उपगारी ॥ ३ ॥
[ गुणविनयकृत जिनचन्द्र० गीत ]

आठ दिवस आषाढ के अट्ठाहि निरधारि ।
सब दुनिया मॉहि शाश्वती पालावी अमारि ॥ ८ ॥
[ श्रीसुन्दर कृत जिनचन्द्र० गीत ]

गुर्जर मण्डल ते बोलाए, सतण सुख सुणि जसु गुण गान ।
बहुत पडूर सगुरु पडधारइ, अगत योग लाहोर सुथान ॥ २ ॥
अर्थ विचार पूछि सहु विध विध, रीझे अकबर शाहि सुजान ।
बहुत बहुत दर्शन मइ देखे, को न कहू या सुगुरु समान ॥ ३ ॥
भाग सोभाग अधिक या गुर को सूरति पाक अमृत सम वान ।
पेश करइ अकबर अण मॉग्य सब दुनिया माहि अभयादान ॥ ४ ॥
[ गुणविनय कृत जिनचन्द्र० गीत ]

सम्राटके अमारि फरमान प्रकाशित करनेसे अन्य राजाओंपर बहुत प्रभाव पड़ा। उन्होंने भी सम्राटका अनुकरण करके अपने-अपने राज्योंमें किसीने १० दिन, किसीने १५ दिन, किसीने २० दिन, किसीने २५ दिन, किसीने १ महीने और किसीने २ मास तक भी सब जीवोंको अभयदानकी उद्घोषणा करा दी *। जिससे सम्राटको परम हर्ष हुआ और जैन धर्मकी महान् प्रभावना हुई। सूरिजीके इस उपदेशके फल-स्वरूप असंख्य जीवोंको सुख-शान्ति मिली।

अपने काश्मीरके प्रवासमें भी धर्मगोष्ठी, धर्म-चर्चा होती रहे और वहां भी दया-धर्मका प्रचार हो इस हेतुसे सम्राटने मन्त्रीश्वर को निर्देश करके सूरिजीसे निवेदन किया "सूरिमहाराज लाहोरमें ही सुखसे विराजें और हमारे साथ धर्म-चर्चा करने और दयाका उप-देश देकर अनार्य देशको भी आर्य रूपमें करनेके लिये मानसिंहको अवश्य भेजें। तब मन्त्रीश्वरने सम्राटके कथनका समर्थन करते हुए वाचकजीको भेजनेमें जो एक बाधा थी उसका प्रतिकार करते हुए सूरिमहाराजसे विनय पूर्वक प्रार्थना की "यद्यपि वह अनार्य देश है इससे मुनियोंको आहार-पानी मिलनेमें असुविधा

* पातिशाहि मनोल्हाद हेतवे निखिलैरपि।
देशाधीशै स्वदेशेषु दश पञ्चाधिकान्दिनान् ॥ ४०५ ॥
दिनानां विंशतिं केश्चिदन्यै स्तु पञ्चविंशतिं।
मास मास द्वयं यावद् परैरभय ददे ॥ ४०६ ॥
[ कर्मचन्द्र मन्त्रि वंश प्रबन्ध ]

होना संभव है, तथापि हम बहुतसे श्रावक लोग भी यात्रामे सम्राटके साथ रहेगे। इससे साधु धर्मके पालन करनेमे किसी तरहकी बाधा नहीं होगी। उसदेशमे विहार करनेसे दया-धर्मके प्रचारका महान् लाभ और जैन-धर्मकी प्रभावना होगी। अत उन्हे अवश्य भेजिये।" सूरिजीने लाभ जानकर स्वीकार कर लिया।

कश्मीर यात्राके लिये तैयारिया होने लगी, सम्राटने सारा सैन्य सुसज्जित करके स० १६४६ मिती श्रावण शुक्ला १३ (ता० २२ जुलाई सन् १५६२ *) को प्रथम प्रयाण * राज श्रीरामदास * की वाटिकामे किया। वहा उसी दिन सध्याके समय एक सभा एकत्र हुई, जिसमे सम्राट अकबर, शाहजादा सलीम, बडे बडे सामन्त, मण्डलिक राजा, महाराजा और अनेक वैय्याकरण तार्किक उद्भट विद्वान (भट्ट) भी सम्मिलित हुए। उस सभामे श्रीजिनचन्द्रसूरिजीको अपने शिष्य-मण्डलके साथ अतिशय सम्मान और बहुमान पूर्वक निमन्त्रित किया गया।

---

* देखो अकबर नामा।

* ये ५०० सेनाके स्वामी थे, "सूरीश्वर और सम्राट" में इनका प्रसिद्ध नाम करणराज कछवाहा भी लिखा हैं इन्हें राजाकी उपाधि थी विशेष जाननेके लिये आईन-ई-अकबरीका अग्रेजी अनुवाद देखना चाहिये।

* श्रीमोहनलाल द० देशाई B A. L L B महोदयने यह सभा "काश्मीर देशपर विजय कर्योते निमित्ते" लिखा है, किन्तु अष्टलक्षीकी प्रशस्तिमें "काश्मीर देश विजय मुद्दिश्य श्रीराज श्रीरामदास वाटिकाया कृत प्रथम प्रयाणेन" लिखा है। इस वाक्यसे काश्मीर विजय करनेके उद्देश्यसे प्रथम प्रयाण किया गया था तब सभा एकत्र होना सिद्ध है।

इससे पहले किसी समय सम्राटकी सभा में विद्वद्गोष्टी करते हुए किसी विद्वानने जैन-धर्मके "एगस्स सुत्तस्स अनन्तो अत्थो" वाक्यपर उपहास किया। यह बात सूरिजीके प्रशिष्य विद्वद् शिरोमणि श्रीसमयसुन्दरजीको अखरी। उन्होंने जैन-दर्शनके इस वाक्यकी सार्थकता दर्शानेके निमित्त "राजानो ददते सौख्य" इस वाक्यपर व्याकरण-सिद्ध दश लाख बाईस हजार चार सौ सात (१०२२४०७) अर्थ किये। उनमें कहीं कोई अर्थ समन्वय न हो या अर्थ योजनामें युक्ति युक्त न हो इस लिये २२४०७ अर्थोंको उनकी पूर्तिके लिये छोडकर उस ग्रंथका नाम "अष्टलक्षी" रखा। सम्राटको इस ग्रंथ-निर्माणकी सूचना मिलनेसे हर्षित होकर उन्होंने उस ग्रंथको देखने और श्रवण करनेकी उत्कट इच्छा प्रकट की थी। इस सभामें उस ग्रंथको सुननेका सुअवसर प्राप्तकर कविवर समयसुन्दरजीको वह ग्रंथ पढकर सुनानेके लिये सम्राटने आग्रह पूर्वक कहा। सूरि महाराजकी आज्ञा प्राप्तकर समयसुन्दरजीने उस विद्वत सभाके समक्ष साहित्य ससारमे अपूर्व और अनुपम ग्रंथ-रत्न "अष्ट लक्षी" को पढकर सुनाया। इस चमत्कृत अद्भुत ग्रंथको मनोयोगसे श्रवणकर सम्राट और उपस्थित विद्वानोंके चित्तमें अत्यन्त आश्चर्य और कौतूहल उत्पन्न हुआ। सब लोग समयसुन्दरजीकी विद्वताकी भूरि भूरि प्रशंसा करने लगे। सम्राटने उस ग्रंथ-रत्नकी अत्यधिक श्लाघा की और उसे अपने हाथमें लेकर उसके सौभाग्यशाली निर्माता श्रीसमयसुन्दरजीके कर-कमलोंमें समर्पणकर

+ देखो "विजयधर्म सूरिजी कृत "धर्म देशना" पृ० २

उस ग्रंथको प्रमाणिक सिद्ध किया। और उन्होने यह भी इच्छा प्रकट की कि इस अभूतपूर्व ग्रंथको पढा जाय, और बहुत सी नकलें कराके सर्वत्र प्रचार किया जाय *।

सूरि महाराजने सम्राटके साथ काश्मीर प्रवासमें वा० मानसिंह जी श्रीहर्षविशालजी × आदिको भेजा। और सम्राटके निर्देश किये हुए सावद्य व्यापार, कि जो साध्वाचारसे विपरीत हो उन्हे परिशीलन करनेके लिये मन्त्र, तंत्रादिमें निपुण मेघमाली गुरुके विनयी शिष्य महात्मा पञ्चाननको भी साथ भेजा।

मन्त्रीश्वरने साधुओंको निर्वद्य अन्न-पानादि प्राप्त करने, और साधु-धर्मका सुखपूर्वक पालन करनेमे सुविधा हो इसलिये अपने साथ और भी बहुतसे श्रावक लिये थे। लाहोरसे क्रमश काश्मीर को प्रयाण करते हुए रोहितासपुर पहुचे। सम्राटने अपने अन्त पुरकी

* देखो 'अष्टलक्षी' ग्रथकी प्रशस्ति, इस ग्रथका दूसरा नाम 'अर्थरत्नावली' भी है। यह ग्रथ और भी अनेकार्थ-साहित्य के साथ "अनेकार्थ रत्नमजूषा" के नामसे "देवचद लालभाई जैन पुस्तकोद्धार फड" गोपीपुरा, सूरतसे प्रकाशित हुआ है। "अष्ट लक्षी" जैन साहित्यका एक महान् गौरवपूर्ण ग्रथ है। इसकी समता करने वाला समस्त विश्व के अनेकार्थ साहित्यमें कोई दूसरा ग्रथ नहीं है।

× कर्मचन्द्र मन्त्रि-वंश-प्रबन्धमें इनका नाम डुगरजी लिखा है किन्तु उसकी वृत्तिमें दीक्षा नाम हर्षविशाल होनेके कारण हमने यही लिखा है।

रक्षा करने के लिए अपने परम विश्वासभाजन मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रको वहीं रहनेकी आज्ञा दी। अत मन्त्रीश्वरको वहीं ठहरना पडा *।

सम्राट सैन्यसहित क्रमश प्रयाण करते हुए काश्मीर पहुचे। रास्तेमे जहा जहा पडाव डालते थे वहा वहा वाचकजीके साथ धर्म-गोष्ठी किया करते थे। उनके उपदेशसे सम्राटने कई जगह तालावोंके जलचर जीवोंकी हिंसा बन्द कराई। मार्ग वहुत विपम था, पथरीले रास्तोंमे उन्हे पैदल विहार करते देखकर सम्राटके चित्तमे वाचकजीकी साधु-धर्मपर निश्चलता और क्रियाकी कठिनताका गहरा प्रभाव पडा।

काश्मीर देश पर विजय प्राप्तकर सम्राट 'श्रीनगर' आये। वहाँ अपनी विजयके उपलक्षमे वाचकजी के कथन से आठ दिन तक अ-मारि उद्घोषणा की ※।

---

* तथेत्युक्त्वा सम मंत्री शाहिना चालयत्तराम।
मानसिंहान् निराबाध सयमन् डुंगरान्विताम् ॥ ४०९ ॥
शाहि निर्दिष्ट सावद्य व्यापार परिशीलनात्।
मुनिना मा वृताचार विलोपो भवतादिति ॥ ४१० ॥
विभाव्य मत्र तन्त्रादि निपुण दत्तवान् सम।
पञ्चानन महात्माना विनेयं मेघ मालिन ॥ ४११ ॥
* * * *
स्वय तु शाहि वाक्येन रोहितास पुरे स्थित।
अवरोधस्य रक्षार्थे विश्वासास्पदमोशितु ॥ ४१४ ॥

※ श्रीगुरु वाणी श्रीजी नित सुणइ, धर्म मूरति मन २ सइ भणइ।
शुभ दिनइ रिपुवल हेलि भजी, नयर श्रीपुरि उतरि।
अमारि तिहा दिन आठ पाली देश साधो जय वरी ॥
(जिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास)

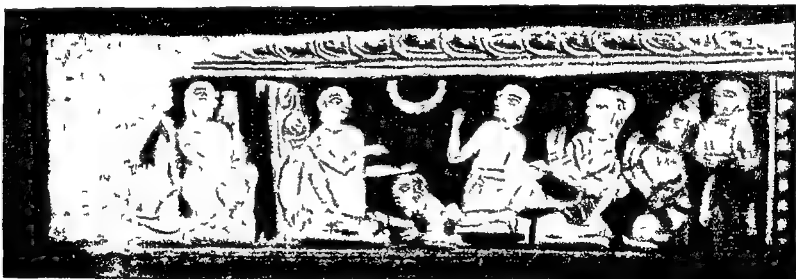
काश्मीर दिग्विजय करके क्रमश प्रयाण करते हुए सन् १५
ई० ता० २६ दिसम्बर ( स० १६४६ के माघ महीनेमें ) को सम्र
लाहोर वापस आये। इस विजय के उपलक्ष्य मे प्रजाने खूब हर्ष मना
नगरमे वाजित्र वजने लगे। सूरिजी भी वा० जयसोम, वा० र
निधान, प० गुणविनय, समयसुन्दर आदि विद्वत् मुनि मंडलीके स
सम्राटसे मिले और उन्हे धर्म-लाभ रूपी आशीर्वाद दिया। सू
महाराज का दर्शन कर सम्राट अत्यन्त प्रमुदित हुए।

एक दिन धर्मगोष्ठी करते हुए सम्राटने सूरि महाराजसे कहा
आपके ( जैन ) दर्शन के सदृश मैंने किसी दर्शनको नहीं देखा, औ
आपके समान निर्मल चरित्रवान् साधु नहीं देखा। काश्मीर यात्रामे मु
श्रीमानसिंहजी के सद्गुणो का भी बहुत कुछ अनुभव हुआ है। ऐ
पथरीले विकट मार्ग मे जहा रथ वगैरह का जाना भी कठिन है वहा पैद
विहार करके इन्होंने अपने आचार को जिस दृढता के साथ पाल
किया है, उसका मैं कितना वर्णन करू, अनेको कष्ट सहन करके भ
और हमारे बहुत कहनेपर भी ये अपनी प्रतिज्ञाओसे विचलि
नहीं हुए। इनकी कर्तव्य-निष्टा और निरीहता हर समय मेरे हृदय
आश्चर्य और आनन्द उत्पन्न करती है। इनके उपदेशसे काश्मीरमे मैं
तालावोके मछली आदि जलचर जीवोको अभय दान दिया था। अ
कृपा करके आप इन्हे (मानसिंहजीको) अपने पट्ट पर स्थापित क
जैन-शासनका सर्वोत्कृष्ट आचार्य पद प्रदान कीजिये। क्योकि
सर्वथा योग्य हैं, एव दुद्धर्ष संयम पालनेमे निश्चल हैं।

अकबरके इस आग्रह और वाचकजीकी योग्यतापर विचार करते हुए सूरिजीने उन्हें आचार्य पद देना स्वीकार कर लिया। तब सम्राटने मन्त्रीश्वर कर्मचन्दसे पूछा कि जैन शासनमें विशिष्ट महत्व का कौनसा पद है ? (जिस पदसे सूरिजीको अलङ्कृत किया जाय) तब मन्त्रीश्वरने कहा जैन शासनमें सुप्रसिद्ध और हमारे खरतर गच्छमें जो पहिले भी श्रीजिनदत्तसूरिजीको देवताने दिया था वह "युग प्रधान" पद है। यह सुनकर सम्राटने उत्सुकता पूर्वक पूछा कि वह पद देवता द्वारा कैसे और किस प्रकार दिया गया ? यह हमारी जाननेकी इच्छा है। मन्त्रीश्वरने श्रीजिनदत्तसूरिजीका जीवन चरित्र साद्योपान्त कह सुनाया और "युग प्रधान" पदके विषयमें विशेष स्पष्टी-करण करते हुए इस प्रकार कहा —

"एक बार नागदेव श्रावकने युग में प्रधान सद्गुरुकी खोज करने के लिये श्रीगिरनारजी पर अष्टम तप करके "अम्बिका देवी" की आराधना की। देवीने प्रकट होकर उसके हाथमें स्वर्णाक्षरोंसे श्लोक * अङ्कित कर दिया और कहा कि जो इन अक्षरोंको पढ सकेंगे वे ही "युग-प्रधान" हैं। उस श्रावकने सर्वत्र भ्रमण कर लिया किन्तु उसे कहीं भी श्लोक पढने वाला न मिला अन्तमें श्रीजिनदत्तसूरिजीके पास आकर हाथ दिखाया। उनके वासक्षेप डालने पर शिष्यने पढके सुनाया कि यह श्रीगुरुमहाराज की स्तुति है और उन्हें देवताने "युगप्रधान" पदसे अलङ्कृतकिया है।"

* यह श्लोक यह था —
दासानुदासा इव सर्व देवा, यदीय पादाब्जतले लुठन्ति।
मरुस्थली कल्पतरु सजीयात्, युगप्रधानो जिनदत्तसूरि ॥



प्रकट-प्रभावी योगीन्द्र युगप्रधान दादा श्रीजिनदत्तसूरिजी
( जेसलमेर भाण्डागारीय प्राचीन ताडपत्रीय प्रति के काष्ट-फलक पर चित्रित )

अकबरके इस आग्रह और वाचकजीकी योग्यतापर विचार करते हुए सूरिजीने उन्हें आचार्य पद देना स्वीकार कर लिया। तब सम्राटने मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रसे पूछा कि जैन शासनमें विशिष्ट महत्व का कौनसा पद है ? (जिस पदसे सूरिजीको अलङ्कृत किया जाय) तब मन्त्रीश्वरने कहा जैन शासनमें सुप्रसिद्ध और हमारे खरतर गच्छमें जो पहिले भी श्रीजिनदत्तसूरिजीको देवताने दिया था वह "युग प्रधान" पद है। यह सुनकर सम्राटने उत्सुकता पूर्वक पूछा कि वह पद देवता द्वारा कैसे और किस प्रकार दिया गया ? यह हमारी जाननेकी इच्छा है। मन्त्रीश्वरने श्रीजिनदत्तसूरिजीका जीवन चरित्र आद्योपान्त कह सुनाया और "युग प्रधान" पदके विषयमें विशेष स्पष्टी-करण करते हुए इस प्रकार कहा —

"एक बार नागदेव श्रावकने युग में प्रधान सद्गुरुकी खोज करनेके लिये श्रीगिरनारजी पर अष्टम तप करके "अम्बिका देवी" की आराधना की। देवीने प्रकट होकर उसके हाथमें स्वर्णाक्षरोंसे श्लोक * अङ्कित कर दिया और कहा कि जो इन अक्षरोंको पढ सकेंगे वे ही "युग-प्रधान" हैं। उस श्रावकने सर्वत्र भ्रमण कर लिया किन्तु उसे कहीं भी श्लोक पढने वाला न मिला अन्तमें श्रीजिनदत्तसूरिजीके पास आकर हाथ दिखाया। उनके वासक्षेप डालने पर शिष्यने पढके सुनाया कि यह श्रीगुरुमहाराज की स्तुति है और उन्हें देवताने "युगप्रधान" पदसे अलङ्कृतकिया है।"

* वह श्लोक यह था —
दासानुदासा इव सर्व देवा, यदीय पादाब्जतले लुठन्ती।
मरुस्थली कल्पतरु सजीयात्, युगप्रधाना जिनदत्तसूरि ॥

दादा श्रीजिनदत्त-सूरिजी का चरित्र श्रवणकर सम्राट अकबरके चित्तमे अद्भुत चमत्कार और कौतुहल उत्पन्न हुआ। अकबरने इस पदके सर्वथा योग्य हमारे चरित्रनायक श्रीजिनचन्द्र सूरिजी को ही समझ कर उन्हे *"युग-प्रधान"* × पद दिया। और वाचक मानसिंहजी ( महिमराज जी ) को आचार्य पद देकर सिंह के तुल्य होनेके कारण *'श्रीजिनसिंह सूरि'* नाम देनेका निर्देश किया। तत्पश्चात् मन्त्रीश्वरको आज्ञा दी कि जैन-दर्शन की विधि के अनुसार संघ की साक्षी से उत्सव-महोत्सव पूर्वक शुभ दिन देखकर अद्वितीय समारोह के साथ हर्ष उत्कर्षसे इस उत्सवकी तैयारी करो।

सम्राट की आज्ञा पाकर मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र ने बीकानेर नरेश रायसिंहजीसे सारा वृत्तान्त निवेदन किया उन्होने भी इस शुभ कार्य मे अपनी सम्मति और आज्ञा प्रदान की। इसके पश्चात् पौषध-शालामे जैन संघको एकत्र कर विनीत वचनोसे मंत्रीश्वरने निवेदन

---

× अकबर साहि हरख भरि कीनौ, युगप्रधान पदधारी।
खंभायत में साहि हुकुम सइ जलचर जीव उबारी॥ २॥
[ गुणविनयकृत जिनचन्द्रसूरि गीत ]

उत्तम काम अथलिये कीधो, युगप्रधान पद दीधो।
तिणि अवसर सागाखत भावइ, सवा कोडि वित्त वावइ॥
[ रत्ननिधान कृत गहूंली ]

युगप्रधान पदवी भली आपइ अकबर राज।
सइ मुख हरखे इम कहइण, ■ गुरु सब सिरताज॥
[ सं० १६४९ चै० कृ० ९ कृतसमयप्रमोद कृत जिनचन्द्र ० गीत ]

किया "यद्यपि सघ सब कुछ कार्य करनेको समर्थ है तथापि इस महान् उत्सवका लाभ कृपया मुझे ही लेनेकी आज्ञा दें।" श्रीसघने मन्त्रीश्वर के इस प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार कर आज्ञा दे दी।

सघ की आज्ञा प्राप्तकर मन्त्रीश्वरने महोत्सव की तैयारिया आरम्भ कर दी। अच्छा दिन देखकर मिती फाल्गुन बदी १०*से अष्टान्हिका महोत्सव मनाया जाने लगा। सघमें सर्वत्र आनन्द छा गया, भक्तिपूर्वक रात्रिजागरणमे श्राविकाओने एकत्र होकर देव, गुरु और धर्मके माङ्गलिक गीत गाये। मन्त्रीश्वर ने समस्त साधर्मियोके घर पूगीफल, एक सेर प्रमाण मिश्री, और सुरगी चुनडियें भेजी।

अष्टान्हिका महोत्सव खूब आनन्द उत्सव से मनाया गया, मिती फाल्गुन शुक्ला २ जया-तिथि को मध्याह्नके समय अच्छे मुहूर्त मे आगमोक्त विधि से श्रीजिनचन्द्रसूरिजीमहाराज ने वाचक श्रीमहिमराजजी को "सूरि मन्त्र" देकर आचार्य पदसे अलकृत किया। सम्राट के कथन से उनका नाम *"श्रीजिनसिंहसूरिजी"* रखा गया। इसी समय वा० जयसोमजी और रत्ननिधानजीको "उपाध्याय पद" प० गुणविनयजी और समयसुन्दरजीको "वाचनाचार्य" पद प्रदान किया।

* संवत्नद समुद्र षट्शशि मिते श्रीफाल्गुने मासिये।
न प्राक् श्रीदशमी तिथौ (?) सत्पुण्या सतानदिन ॥
शाहि दत्त युगप्रधान विरुदा आनन्द कन्दान्विते।
श्रीमच्छ्रीजिनचन्द्रसूरि गुरवो जीवन्तु विश्वश्चिरम् ॥४॥
हमे यह श्लोक अशुद्ध ही मिला है।

उस समय का दृश्य अत्यन्त मनोहर और दर्शनीय था, जिस सखवाल गोत्रीय श्रावक साधुदेव के बनवाये हुये उपाश्रय मे उन्हे आचार्य पद दिया गया था, उसे खूब ध्वजा पताकाओंसे सजाया गया कीमती मोतियो के जडे हुए चन्द्रवे और पूठिये सजाये गये। भगवानका चतुर्मुख (नन्दि) समवशरण विराजमान कर उसके सन्मुख सर्व विधि सम्पन्न हुई। इस महोत्सवमे स्वगच्छ परगच्छ स्वधर्म और परधर्म के भेदभावो को त्याग कर असख्य नागरिक और राज्यके बडे बडे प्राय सभी अधिकारी सम्मिलित हुए थे। शाही वाजित्रोकी ध्वनिसे सारा नगर आनन्द का निकेतन बन गया था।

सम्राट अकबर ने इस आनन्दोत्सव के उपलक्ष मे सूरिजी के उपदेश से स्तम्भतीर्थीय समुद्रके असख्य जलचर जीवो को वर्षावधि अभयदान देने के लिए फरमानपत्र प्रकाशित किया † और लाहौरमे भी उस दिन शाही-नौवत बजाकर अमारि-उद्घोषणा की गई।

इस धार्मिक हर्षोत्सव मे मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रजी बच्छावतने अपने द्रव्यका सद्व्यय करनेमे कोई कसर नहीं रखी। जिसने जो मागा वही प्रदान कर अपनी प्रशस्त कीर्ति चिर स्थापित और दिगत

† जग सगले जस पामियउ, प्रतिबोधी पातसाह।
खभायत दधि माछली राखी अधिक उच्छाह॥
* * * * * *
खभायत दरियावके जी रे जी पूज जी छोडाया सहु जाल।
[ श्रीसुन्दर कृत गीतद्वये ],

व्यापी की। "युगप्रधान" नाम स्थापनपर याचकोंको नव हाथी, पाच सौ घोडे, नवग्राम और सवा करोड रुपयेका अभूतपूर्व दान दिया, जिसका उल्लेख तत्कालीन ग्रन्थ कर्मचन्द्र मन्त्रि वश प्रबन्ध वृत्ति (स० १६५०)*, जयसोमजी कृत प्रश्नोत्तर ग्रन्थ × (प्रश्न न०

* इस ग्रन्थमें इस प्रकरणमें उल्लिखित प्राय सभी बातोंका विस्तृत वर्णन है, ग्रन्थविस्तारके भयसे उसके श्लोक यहाँ नहीं दिये गये हैं।

× इस ग्रन्थमें कई विशेष ज्ञातव्य बातोंके साथ इस प्रकार वर्णन है —

"हिवणा श्री लाहोर माहि श्रीअकबर जलालुदी पातस्या श्री बृहत् खरतर गच्छनायक श्रीजिनमाणिक्यसूरि पट्टालङ्कार श्री जिनचन्द्रसूरिजी नै योग्यता जाणी खुसी थइ न युगप्रधान नामे बोलाव्या, श्रीकर्मचन्द्र मन्त्रीश्वरे याचका ने ९ हाथी, ५०० घोडा, ९ ग्राम, एव सवा कोडि नु दान आप्या, महामहोच्छव कीधा। लाहोर माहि अमारि घोषाइ पातिशाहि नोबति बजाइ वलीमुहते पातिसाहजीने १२००० रुपईया १२ हाथी १२ घोडा २७ तुरकस पेस कीधा श्रीजीये १२(?) रूपईया राख्या बीना सर्व सुरताने ज बकस्या एव महामहोत्सव पूर्वक सर्व लोक समक्ष युगप्रधान थाप्या। तउ तेह ना शिष्य तथा श्रावक युगप्रधान कहे तिहा स्यो दूषण थाइ × × × × वली युगप्रधान नामि दूहावो ते स्यु ? आज प्रभृत वली श्रीजिनशासन माँहि किणइ आचार्य नइ जगद्गुरु कहया हुवइ तो तुम्हें दिखाडो ! तमारा ऋषिमतोना भट्टारक नै श्रावक श्राविका जगत्-गुरु कही गावे छे तुम्हे साभली खुसी थाओ छो श्रीजिनच द्रसूरिजी ना नाम युगप्रधान साभली दुहवाओ तेह स्यु ? जइ पातिशाह जगत्गुरु एहवा नाम साभलै (तउ) फजीत करे श्री सेख अबुलफजल हजूर जगत्गुरु नाम कहता सेखे अर्ज हजूर रीस करी भानुचन्द्र पन्यास नै जे बोल कह्या ते

१३४ के उत्तर ) आदिमे मिलता है। इस विषयका एक प्राचीन कवित्त हीरकलश शिष्य हेमाणंद कृत "भोज चरित्र चौपइ", जो कि स० १६५४ दीवाली के दिन 'भट्टाणइ' ग्राम मे बनाई है, उसकी प्रशस्ति मे इसप्रकार लिखा है —

*"नव हाथी दिन्हे नरेश, मदस्यौं मतवाले।*
*ऐरासी पचसइ, लोकत पावइ नित हालइ॥*
*नवइ गाव बगसीस, सइ तु सहू को जाणइ।*
*सवा कोडिका दान, "मल्लवि" साच बखाणइ॥*
*को राइ न राणा करि सकइ, समाम नदन जो किया।*
*युगप्रधान के नाम कु, कर्मचन्द इतना दिया।"*

सचमुच यह दान अभूतपूर्व था, पदस्थापनाके समय इस प्रकार का दान आगे किसीने नहीं किया। ऐसे दानी महानुभावोसे जैन शासन गौरवान्वित है।

लाहोरके सबने एकत्र होकर मंत्रीश्वरके घर आकर उन्हें यश-स्तिलक करके सम्मानित किया।

सम्राट अकबरको भी इस महोत्सवके उपलक्षमे मत्रीश्वरने शेख अबुलफजलको साथ लेकर १००००) रुपये, १० हाथी, १२घोडे और २७ तुक्कस भेंट स्वरूप पेश किये। सम्राटने मङ्गलके निमित्त

---

भानुचन्द्र जाणे छै, पली लोका ना कह्या तथा एहवा नाम मानौ छो एव विचारता तुमने ए प्रश्न अजाणपणो जणावै छै।"

इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि श्रीमान् हीरविजयसूरिजीका जगद्गुरु पद उनके भक्त श्रावक श्राविकाओंद्वारा रखा हुआ गुरु भक्तिसूचक मात्र था, किन्तु सम्राट अकबरने उन्हें जगद्गुरुका कोई विरुद नहीं दिया था।

रु०१) रख कर बाकी सब मन्त्रीश्वरको वापिस दे दिये। इसी प्रकार शाहजादा सलीम और शेख अबुलफजल आदि सम्राटके आत्मीय-जनोंका भेटपूर्वक सत्कार किया। मंत्रीश्वर सम्राटके सामाजिकाध्यक्ष पदपर नियुक्त थे। इसलिये उस विभागके समस्त कर्मचारियों और अन्य अधिकारियों का भी उचित सम्मान किया।

इस प्रकार यह महान् महोत्सव अवर्णनीय आनन्द, अनुपम उत्साह, असाधारण भक्तिके साथ सम्पन्न हुआ। उससमय के उल्लसित शुभभाव और हर्ष का अनुभव जो उस महोत्सव में सम्मिलित हुए वे ही कर सकते थे। इस जड लेखनी द्वारा उस आनन्द का वर्णन करना असमर्थ है। तो भी संक्षिप्तमे इतना तो अवश्य कहना होगा कि वह उत्सव अदृष्टपूर्व, परम गौरवसम्पन्न और जैन शासनकी उन्नति, उत्कर्ष करने में अद्वितीय था।

सूरि महाराजने पाक्षिक चातुर्मासिक और सांवत्सरिक पर्वों के दिन "जयतिहुअण" पढने का शाश्वता आदेश बोहित्थ वंश की सन्तति को दिया और उन्हीं पर्वों के प्रतिक्रमण मे स्तुति बोलने का आदेश श्रीमालो को दिया †

† बोहित्थ संतति नइ दियइ, युगप्रधान गणधारो रे।
पक्ष चउमास पजूसणइ, श्री जयतिहुअण सारो रे॥ ७८॥
तिम चौमासइ पाखियइ, संवत्सरियइ शुद्ध रे।
पडिकमणइ सध्यातणै, श्रीमाला नइ हुइ रे॥ ७९॥
[ कर्मचन्द्र वंशावली प्रबन्ध चौ० ]

बीकानेरमें अभीतक खरतरगच्छ में बच्छावतों को धार्मिक कार्यों में अच्छा सम्मान है।

बीकानेर महाराज रायसिंहजी * सूरि-महाराजके परम भक्त थे। हम पहले लिख चुके हैं कि इस उत्सव पर वे भी लाहोरमे ही थे। उन्होने इसके १० दिन पश्चात् अर्थात् मिती फाल्गुन शुक्ला १२ को कई ग्रन्थ सूरिजीको आग्रहपूर्वक समर्पण किये थे। सूरिजीने उन ग्रन्थोको बीकानेरके स्थापित ज्ञानभण्डार* मे रखे थे, उनमेसे दो ग्रन्थ हमें उपलब्ध हुए हैं, जिनका पुष्पिका लेख इस प्रकार है —

"सं० १६४९ वर्षे फाल्गुन शुक्ल द्वादश्या श्री लाभपुर नगरे पातशाह श्री अकबर प्रदत्त युग-प्रधान पद समलङ्कृत खर (तर) गच्छेश भट्टारक युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिराजाना। श्री जिनसिंह सूरि युताना भृङ्गक चक्र चर्चित चरणारविन्द महाराजाधिराज श्री

* इनका जन्म स० १५९८ श्रा० कृ० १२ को हुआ, स० १६२८ वैशाख शुक्ल १ को बीकानेरकी राजगद्दीपर बैठे। ये सूर वीर और दानी नरेश थे। बादशाहने प्रसन्न होकर इन्हें 'राजा' पदवी, पाचहजारीका मनसब और ५२ परगने जागीरमे दिये। स० १६६८ में इनका स्वर्गवास हुआ। विशेष जाननेके लिये "बीकानेर राज्यका इतिहास" "भारतके प्राचीन राजवंश" और 'कर्मचन्द्र वंश प्रबन्ध' देखने चाहिये।

* साहित्यकी रक्षा और अभिवृद्धि करनेके लिये सूरि महाराजने कई जगह ज्ञानभण्डार स्थापित किये थे। बीकानेर ज्ञानभण्डारमें रखी जानेका और भी कई पुस्तकोंकी प्रशस्तिसे जाना जाता है, जिसमें अनेक भक्त श्रावकोंने ग्रन्थ लिखाके रखे थे। कई पुस्तकोंकी प्रशस्तिसे ज्ञात होता है कि आपने खम्भातके "ज्ञानभण्डार" में भी कई ग्रन्थ स्थापित किये थे।

रायसिंघे कुवर श्री दलपतिप्रभृति परिवार युतै पुस्तकमिद विहारित। तेऽच ज्ञान वृद्धयर्थं श्रीविक्रमनगरे वित्कोपे स्थापितम्। शिष्यादिभिर्वाच्यमान चद्रार्कं चिरनद्यात्।"

[ बन्धस्वामित्व पडशीतिवृत्ति पत्र ५० श्रीपूज्यजीके सग्रहसे ]

"स० १६४६ वर्षे फाल्गुन शुक्ल द्वादश्या गुरौ पुण्ययोगे श्री लाभपुरे जतु जाता हि शाहि श्री अकबर प्रदत्त युगप्रधान प० समलकृत श्री खरतरतर गच्छाधिप भट्टारक श्री जिनसिंह सूरि सयुताना। सदा सुप्रसन्न वडनारसिन्ह महाराजाधिराज श्री विहारित पुस्तकमिद ज्ञान वृद्धयर्थं च श्री विक्रम पुरनरे तेऽच भाण्डागारे स्थापितम्। शिष्य

[ हमारे सग्रहमे, चूहोके काटे हुए पन्नवणासूत्र मे ]

कहा जाता है कि सूरि-महाराज ने जब शाहीदरबार मे प्रवेश किया और बादशाह स्वागतार्थ सम्मुख आया उस समय मार्गके किसी नालेमे एक बकरी रखी गई थी। सम्राटने जब उन्हे आगे पधारनेकी विज्ञप्ति की। तब सूरिजी ने अपने योगबलसे भूगर्भ-स्थित बकरी का स्वरूप जान, रुककर कहा "नालेमे जीव रहे हुए हैं उन्हें उल्लघन कर नहीं आ सकते" सम्राटने कहा "कितने जीव हैं?" सूरिजीने कहा "तीन जीव हैं" सम्राटने चकित होकर सोचा इसके नीचे एक ही बकरी रखी गई थी तीन कैसे हो सकते है। परन्तु जब उस नालेको उद्घाटन कर देखा गया तो तीन ही जीव मिले। क्योंकि बकरीके सगर्भा होनेके कारण भूमिके ससर्ग दो बच्चे उत्पन्न

हो गए थे। इस आश्चर्यजनक घटनासे सम्राटके दिलमें सूरिजी के प्रति अत्यन्त श्रद्धा-भक्ति उत्पन्न हो गई ×।

इसी प्रकार एक समय सम्राटको सूरि-महाराजका भक्त देखकर ईर्षासे जले हुए काजीने सम्राटके समक्ष सूरिजीको नीचा दिखानेके लिए मन्त्रबल से अपनी टोपी उडाई। सूरिजीने अपने बुद्धि-वैभवसे काजीके अभिप्रायको जानकर जैन-शासनकी अवहेलना न हो इसलिए टोपीको वापिस लानेके लिये मन्त्र-शक्ति द्वारा रजोहरणको उसके पीछे छोडा। सूरि-महाराजके प्रेषित रजोहरणने काजीकी टोपीको ताडित करते हुए वापस लाकर काजीके मस्तक पर रख दिया। इससे काजीने विफल प्रयत्न होकर अपना ईर्षा अभिमान त्याग दिया *।

---

×सं० १७१२ के लगभग लिखी हुई बीकानेर ज्ञानभण्डारकी एक पट्टावलीमें इस घटनाका इस प्रकार भी उल्लेख है —

"जियारड अतिशय देखी नइ पातिशाहइ युगप्रधान पदवी दीधी ते अतिशय कहइ छइ एकदा कियइ एके शाहि नइ कह्यउ एह गुरु ज्ञानी छइ का एक ज्ञान पूछउ तरइ पातसाहइ पोतारइ सिंघासण नीचे परवर्ती गर्भ-वती एक छाली घालि नइ आप उपरि बइठा तरइ गुरा नइ पूछड—मेरे नीचे क्या है ? गुरे लग्न लेइ नइ कह्यो एक नर छइ बि मादो छइ, शाहि काढी जोयउ छाली ब्याइ, ज्ञान मिल्यो तरइ युग-प्रधान पदवी दीधी।

इसके अतिरिक्त और भी कई कवित्तोंमें तीन बकरियोंके भेदको बत-लानेका जिक्र है।

* बीकानेर स्टेट लायब्रेरीमें जिनसागरसूरि शाखाकी एक १८ वीं शताब्दिमें लिखित पट्टावलीमें लिखा है कि जिनसिंहसूरिजीको बादशाहने

एक तीसरी चमत्कारिक घटना भी इस प्रकार कही जाती है कि आहार के लिये परिभ्रमण करते हुए सूरिजी के एक शिष्यने मौलवीके तिथि पूछनेपर अमावस्याके बदले भूलसे पूर्णिमा बतला दी। इस वाक्यपर मौलवी ने उपहास करते हुए उत्तर दिया "वाह महाराज! मैने सुना है कि जैन-साधु झूठ नहीं बोलते, किन्तु यह तो सरासर झूठ है, अब देखेंगे कि किस प्रकार आज पूर्णिमाका चाद प्रकाशमान होगा।" उन साधुजीको भी अपनी भूल स्मरण हो आई, किन्तु वचन मुखसे निकले बाद पराया हो जाता है अत उन्होने उपाश्रयमे जाकर सूरि-महाराजसे सारा वृतान्त निवेदन किया।

इधर मौलवी साहबने सब जगह यावत् सम्राटके दरबार तक यह खबर पहुचादी कि जैन साधुओके कथानानुसार आज चॉद उदय होगा। तब सूरिजीने जैन-शासनकी अवहेलना न हो इसलिये किसी श्रावक के यहासे स्वर्णथाल मगवा कर उसे आकाशमें उडा दिया। सूरिजीके प्रतापसे वह थाल पूर्णिमाके चद्रमाकी भान्ति सर्वत्र प्रकाश करने लगा। सम्राटने इसकी जाच करनेके लिये अपने घुड सवार बारह बारह कोस तक भेजे किन्तु सर्वत्र प्रकाश ही प्रकाश हुआ सुन सम्राट अत्यन्त चकित और विस्मित हो गया।

करामात दिखानेको कहा तब उन्होने कहा हम भिक्षु करामात क्या जानें! इतनेमें काजीने अपनी टोपी मत्र शक्तिसे आसमानमें उडाई और जिनसिंह सूरिजीने ओघेसे वापस आकर्षण की, इत्यादि।

* इस घटनाका हमें कोई प्राचीन प्रमाण न मिला। आधुनिक बीसवीं शताब्दिके प्रकाशित ग्रन्थोंमें—महो० रामलालजीगणि कृत

सूरिजीके लाहोर विराजनेसे अनेक धर्मकृत्य हुए। लोगोंके हृदयमे सद्भावनाका श्रोत प्रवाहित होने लगा। जैन धर्मकी अतिशय प्रभावना हुई।

वहासे विहार करके सूरि-महाराज हापाणइ पधारे स० १६५० का चातुर्मास वहीं किया। एक दिन रात्रिके समय उपाश्रयमें चोर आगए। किन्तु उनके लिये वहा कौनसा धन-माल रखा था! अगर था तो केवल साधुओ के पढने के ग्रथ और भिक्षाके निमित्त काष्टके पात्र, किन्तु चोरोने तो उन्हे भी नहीं छोडा, पुस्तकें बटोर

---

"दादाजीकी पूजा" और आचार्य श्रीजयसागर सूरिजी सम्पादित "गणधर सार्ध शतक भाषान्तर", श्रीजिनदत्तसूरि ज्ञान-भडार बम्बईसे प्रकाशित "श्रीजिनचन्द्रसूरि चरित्र" आदिमें इसका उल्लेख पाया जाता है। एव चित्रोंमे भी इस चमत्कारिक घटनाका भाव चित्रित मिलता है। खरतर-गच्छकी एक पट्टावलीमे श्रीजिनप्रभसूरिजीके सम्बन्धमें "अम्मावस्या पूर्णिमा कृता येन द्वादश योजन यावत् चन्द्रोद्योतो जात" लिखा है।

उपरोक्त तीनों चमत्कारिक घटनाओ सहित सूरिजी के अकबर मिलनके प्राचीन चित्र, बीकानेर ज्ञान भडार, श्रीपूज्यजीके संग्रह, उ० जयचन्दजीका ज्ञान भडार, यति मुकुन्दचन्द्रजीके पास, बाबू पूरणचन्द्रजी नाहरके सग्रहमें और बीकानेर दुर्गान्तर्गत 'गजमन्दिर' मे पाये जाते हैं। वह चित्र "श्रीजिन कृपाचन्द्रसूरे ज्ञानभण्डार" इन्दोर की तरफसे छप भी चुका है।

बाबू पूरणचद्रजी नाहर M A B L के यहाँ अकबर मिलन समय का सूरिजीका प्राचीन चित्र है उसमें उपरोक्त तीसरी चमत्कारिक घटनाका भाव न होकर उसके बदलेमें उस चित्रमे एक भैंसा चित्रित है जो कि श्री जिनप्रभ सूरिजीके विषयमें "कियो महिष मुखि वाद नयर दिल्लह

कर चम्पत होने लगे। परन्तु सूरिजीके योग-बलसे चोर दिग्मूढ और अन्धे हो गए और पुस्तकें वापिस आ गईं।*

इस चमत्कार पूर्ण घटनासे सब लोग सूरि-महाराजके तपोबल की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। सूरिजीके "हापाणा" विराजने से वहाँ अधिकाधिक धर्म-ध्यान होने लगे।

---

नरनारी।' इस चमत्कारका स्मृति सूचक भाव आना जाता है हमारे समक्ष में "अम्मावसका चन्द्रोदय" और "महिप मुख वाद" का चमत्कार जिनप्रभसूरिजीसे सम्बन्ध रखनेवाला ही है। उन चमत्कारोंकी प्रसिद्धि होनेके कारण संभवत सूरिजीके चित्रके साथ लगा दिये गये हों। उपा० जयचन्द्रजी गणिके पास जो चित्र है उसमें तो चारों ही चमत्कार सूरिजीके चित्रमें चित्रित है।

* विहार पत्र नं० १ में ' रातइ चोर पइठा पुस्तक सर्व ऐइ गया पर अन्धा थया, पुस्तक आया पाछा।"

बीकानेरके ज्ञान भण्डारकी एक पट्टावलीमें —हापाणि ग्रामे ध्यान बलइ भियइ चोर निप्तेज कीधा।



# नवां प्रकरण

## सम्राट पर प्रभाव



म्राट अकबर सूरि-महाराजके परम भक्त बन चुके थे। उनके खंभातमें चातुर्मास करनेके समय भी सम्राट उन्हें निरन्तर स्मरण किया करते थे। सूरिजीके आदेशसे परम गीतार्थ उ० श्री जयसोमजी आदिने सं० १६५० का चातुर्मास भी लाहौर ही किया *। वे बहुधा शाही दरबारमें जाया करते, सम्राट उनके साथ अनेक प्रकारकी धर्म-चर्चा करके ज्ञान प्राप्त किया करते थे। वे समय-समयपर उनसे सूरि-महाराजके सुख-शाताके संवाद पूछकर सुखी होते थे।

चातुर्मास पूर्ण हो जानेके पश्चात् सम्राटने सूरि महाराजको लाहौर पधारनेके लिए विनीत-आमन्त्रण भेजा। सम्राटके आग्रहसे सूरिजी लाहौर पधारे। सं० १६५१ का चातुर्मास भी उन्होंने वहीं

---

* जयसोमजीने इसी चातुर्मासमें विजयादशमीके दिन "कर्मचन्द्र मंत्रि वंश प्रबन्ध" नामक संस्कृत पद्य ग्रंथ रचकर पूर्ण किया था।

किया। इनके समागम से सम्राट पर अलौकिक प्रभाव पड़ा था। मेडता के "नवामन्दिर" के शिलालेखों* से ज्ञात होता है कि सूरिजी के उपदेश से सम्राट ने गत प्रकरण मे उल्लिखित प्रति वर्ष आषाढी अष्टान्हिका अमारि, खम्भातके दरियाके जलचर जीवोकी रक्षा और युगप्रधान पद प्रदानके अतिरिक्त और भी कई महत्वपूर्ण कार्य किये थे, वे इस प्रकार हैं —

(१) प्रतिवर्षमे सब मिलाकर छ महीनेपर्य्यन्त अपने समग्र राज्यमे जीवहिंसानिषेध।

(२) शत्रुञ्जय तीर्थका कर-मोचन।

(३) सर्वत्र गो-रक्षाका प्रचार।

जैन दर्शन के अहिंसा-तत्वका सूक्ष्म स्वरूप सूरिमहाराज ने सम्राटको भली भांति बतला दिया। जिसके प्रभावसे सम्राटका हृदय इतना कोमल और दयार्द्र हो गया × कि उन्हे जीव-हिंसाका

* श्री अकब्बर साहि प्रदत्त युगप्रधानपद प्रवरै प्रतिवर्षाषाढीयाष्टाह्निकादि षाण्मसिकामारि प्रवर्त्तकै। श्रीपत (? स्तम्भ) तीर्थोदधिमीनादि जीवरक्षकै। श्री शत्रुञ्जयादि तीर्थकरमोचकै। सर्व्वत्र गोरक्षाकारकै पचनदी पीर साधकै। युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभि। आचार्य श्री जिनसिंहसूरि श्री समयराजोपाध्याय वा० हस प्रमोद वा० समयसुन्दर वा पुण्यप्रधानादि साधुयुतै॥

[श्री जिनविजयजी सपादित 'प्राचीन जैन लेख सग्रह' लेखाङ्क ४४३]

× सम्राट अपने दयालु विचार सूरिजीको दिये हुए फरमान पत्रमे इस प्रकार प्रकट करते है —

"असल बात तो यह है कि जब परमेश्वरने आदमीके वास्ते भांति-भांतिके पदार्थ उपजाये हैं, तब वह कभी किसी जानवरको दुःख न दे और अपने पेटको पशुओंका मरघट न बनावे।"

नाम सुनना भी असह्य-सा हो गया और मांस-भक्षणके प्रति उन्हे घृणा हो गयी थी। इस बातको सम्राट जहाँगीर, अपनी 'आत्म-जीवनी' मे अपने राज्यारोहणके पश्चात् प्रकाशित १२ आज्ञाओमेसे ११ वीं आज्ञा इस प्रकार लिखते हैं —

"আমার জন্ম মাসে সমগ্র রাজ্যে মাংসাহার নিষিদ্ধ এবং বৎসরের মধ্যে এমন এক এক দিন নির্দ্দিষ্ট থাকিবে যে দিন সর্ব্ব প্রকার পশু হত্যা নিষিদ্ধ। আমার রাজ্যারোহণের দিন বৃহস্পতিবার, সে দিন এবং রবিবার কেহ মাংসাহার করিতে পারিবে না। কেননা সে দিন জগৎ সৃষ্টি সম্পূর্ণ হইয়াছিল সে দিন কোন জীবের প্রাণ হরণ করা অন্যায়। ১১ বৎসের অধিক কাল আমার পিতা এই নিয়ম পালন করিয়াছেন এবং এই সময়ের মধ্যে রবিবার দিন তিনি কখনও মাংসাহার করেন নাই। সুতরাং আমার রাজ্যে আমিও এই দিনে মাংসাহার নিষিদ্ধ বলিয়া ঘোষণা করিতেছি।"

[ জহাংগীরের আত্ম জীবনী by কুমুদিনী মিত্র পৃ০ ১০।১১ ]

अर्थात् —मेरे जन्ममासमे, सारे राज्यमे मांसाहार निषिद्ध रहेगा। वर्षमे एक-एक दिन इस प्रकारके रहेगे, जिसमे सर्व प्रकारकी पशु-हत्याका निषेध हो। मेरे राज्याभिषेकका दिन अर्थात् बृहस्पतिवार और रविवारके दिन भी कोई मांसाहार नहीं कर सकेगा। क्योंकि संसारका सृष्टि-सर्जन सम्पूर्ण हुआ था उस दिन किसी भी जन्तुका प्राणघात करना अन्याय है। मेरे पिताने ग्यारह वर्षोंसे अधिक समय तक इन नियमोका पालन किया है और उस समय रविवारके दिन उन्होंने कदापि मांसाहार नहीं किया। अत. मेरे राज्यमे मैं भी उन दिनोमे जीवहिन्सा निषेधात्मक उद्घोषणा करता हूं।

सम्राटके जीवहिंसा निषेध करनेका सारा श्रेय जैन साधुओंके समागमका ही है, यह बात प्रसिद्ध अंग्रेज इतिहासकार श्री विंसेन्ट ए० स्मिथ अपनी पुस्तक Akbar The Great Mogal के सन् १९१७ के संस्करणके पृ० १६७ पर लिखते हैं —

"Akbar's action in abstaining almost wholly from eating meat and in issuing stringent prohibitions, resembling those of Ashoka, restricting *to the narrowest possible limits the destruction* of animal life, certainly was taken in obedience to the doctrines of his Jain Teachers. The infliction of capital penalty on a human being for causing the death of an animal, was *in accordance* with the practice of several famous ancient and Buddhist and Jain Kings. The regulations must have inflicted much hardship on many of Akbar's subjects and especially on the Mahammadans."

*अर्थात् अकबर का लगभग पूर्ण रूपसे मांसका परित्याग करना,* एव अशोकके समान क्षुद्र-से-क्षुद्र जीवहिन्साका निषेध करने के लिए सख्त आज्ञाओंका जारी करना, अपने जैन गुरुओं के सिद्धान्त के अनुसार आचरण करने ही के परिणाम थे। हिन्सा करनेवाले मनुष्यों को कडी सजा देना यह कार्य प्राचीन प्रसिद्ध बौद्ध और जैन सम्राटों ही के अनुसार था। इन आज्ञाओं से अकबरकी प्रजा में से बहुत लोगों को और विशेष रूप से मुसलमानों को बहुत कष्ट हुआ होगा।

फिर भी डा० विसेन्ट स्मिथ अपनी पुस्तक "अकबर" के पृष्ट नम्बर ३३५ मे स्पष्टतया लिखते हैं कि —

' He cared little for flesh food, and gave up the use of it almost entirely in later year's, of his life, when he came under Jain influence "

अर्थात्—"मासाहार पर सम्राट को विल्कुल रुचि नहीं थी और अपने जीवन के अन्तिम भाग मे तो जब से वह जैनो के समागम मे आया, तभी से उसने उसको सर्वथा ही त्याग कर दिया।"

बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर M. A B L M R A S महोदयके सगहस्थ एक गुटकेमे प्राचीन कवित्त इस प्रकार लिखा मिला है —

*आदरियो चडोजती ताइ अकबर, लोक हुआ सहु लवे लवं ।*
*गढजिणि जवे कीजती गाया, जीवनके को तठे जवे ।।१।।*
*पति असुरा लागौ आइ, पाए कवे चरणा दिसि करि ।*
*मडलि तियाले सुरहे मारता, मुरगा हीटला तेथ मर ।।२।।*
*एहवो धरम आदरे अकबर, जिण धर्म देसी बारडो जत्त ।*
*भोजन किनला तिके भखता, पर मम खावा लियो परत्त ।।३।।*

भावार्थ—सूरिजी को वन्दनार्थ सम्राट सामने गए उनके साथ उनकी प्रजा और अनुगामी अमीर उमराव भी थे। गुरुके चरणोमे सम्राटने दोनो हाथ जोड कर प्रणाम किया। उनके उपदेश से सम्राट जैन धर्म का इतना आदर करने लगा कि उसके फल स्वरूप

जिस किल्ले मे गायें कत्ल होती थी, मुर्गे, हिटले आदि जानवर मारे जाते थे अब उनका कत्ल होना बंद हो गया। इतना ही नहीं सम्राट ने मास भक्षण, जो पहले करता था उसका त्याग कर दिया।

सम्राट जहाँगीर कथित शेष ग्यारह वर्षसे अधिक समय तक और डा० विन्सेन्ट स्मिथका अपने जीवन के अन्तिम भाग के कथन से स्पष्ट है कि सम्राट के हृदय में इतने गहरे दया-भाव के होने का प्रबल कारण जिनचन्द्रसूरिजी और उनके शिष्य श्रीजिनसिंहसूरिजी के धर्मोपदेश ही हैं। क्योंकि स० १६६२ मे अकबर का देहान्त हुआ और स० १६४८ से अकबर को सूरिजी के सत्समागम का लाभ मिला। सूरिजी स० १६५१ मे अकबर के पास ही थे। इससे ऊपर के उभय कथनों की परिपुष्टि होती है।

इस कथनकी पुष्टि करनेवाले और भी बहुतसे प्रमाण मिलते हैं। डा० स्मिथने आगे इस प्रकार लिखा है —

"But the Jain holy men undoubtedly gave Akbar prolonged instruction for years, which largely influenced his actions and they secured his assent to their doctrines so far that he was reputed to have been converted to Jainism

—"Jain Teachers of Akbar"

अर्थात्—मगर जैन साधुओंने वर्षों तक अकबरको उपदेश दिया था अकबरके कार्यों पर उस उपदेशका बहुत प्रभाव पडा था। उन्होंने अपने सिद्धान्त यहा तक मनवा दिये थे कि लोग सम्राटको जैन समझने लग गये थे। लोगोंकी यह समझ केवल अनुमानसे ही

नहीं थी किन्तु उसमें वास्तविकता भी थी। कई विदेशी मुसाफिरो को भी अकबर के व्यवहारो से यह निश्चित हो गया था कि अकबर जैन सिद्धान्तो का अनुयायी था।

इसके सम्बन्ध में डा० स्मिथ अपने "अकबर" नामक ग्रन्थ मे एक मार्के की बात प्रगट करते हैं। उसने उक्त पुस्तकके २६२ वें पृष्ठमें पिनहेरो ( Pinheiro ) नामके एक पोर्चुगीज़ पादरीके पत्रके उस अशको उद्धृत किया है जो उपर्युक्त कथनको प्रमाणित करता है। यह पत्र उसने लाहोरसे ता० ३ दिसम्बर सन् १५९५ को लिखा था, जो इस प्रकार है —

He follows the sect of the Jains ( Vertei )

अर्थात्—अकबर जैन सिद्धान्तो का अनुयायी है ( उसने कई जैन सिद्धान्त भी उस पत्र मे लिखे हैं )।

इस पत्रके लेखनका समय स० १६५२ ( सन् १५९५ ) है। करीब उसी समय श्रीजिनचन्द्रसूरिजी महाराज, श्रीजिनसिंहसूरिजी आदि लाहोर मे अकबर के पास थे। अत अकबर को जैन-धर्मानुयायी कहलाने का श्रेय सूरिजी को ही है। क्योकि यह प्रभाव सूरिजी के सतत धर्मोपदेश का ही है।

प्रोफेसर ईश्वरीप्रसाद अपनी पुस्तक A short History of Muslim Rule in India प्रथम सस्करणके पृष्ट न० ४०६ पर लिखते हैं —

"The Jain teachers who are said to have greatly influenced the emperor's religious out-

Jook were *Hiravijaya Suri, Vijayasena Suri,* Bha-nuchandra Upadhya-ya and Jinchandra From 1578 onwards one or two Jain teachers always remained at the court of the Emperor From the first he received instructions in the Jain doctrine at Fatehpur and received him with great courtesy and respect The last (i e Jinchandra) is reported to have converted the emperor to Jainism Yet the Jains exercised a far greater influence on his habits and made of life than the jesuits The tax on pilgrims to the Shatrunjaya hills was abolished and the holy places of the Jains were placed under his control In short, Akbar's giving up of meat, the prohibition of injury to animal life were due to the influence of Jain teacher's

अर्थात्—वे जैनगुरु जिनके विषयमें किम्वदन्ती है कि उन्होंने सम्राटके धार्मिक विचारों पर भारी प्रभाव डाला, हीरविजयसूरि, विजयसेन सूरि, भानुचन्द्र उपाध्याय और *जिनचन्द्र* थे। सन् १५७८ के पश्चात् एक या दो जैन गुरु सम्राट की राज सभा में सदैव रहा करते थे। प्रारम्भ से उसने (अर्थात् सम्राट अकबर ने) जैन सिद्धांतों की शिक्षा फतहपुर में प्राप्त की थी और जैन गुरु को वह अत्यन्त श्रद्धा एवं आदर के साथ स्वागत करता था। कहा जाता है कि जिनचन्द्र सूरिने सम्राटको जैन-धर्ममें दीक्षित कर लिया था

... तिसपर भी जैन लोगोंका सम्राटके आचरण और चालढाल पर जैसुएट लोगोंकी अपेक्षा बहुत अधिक प्रभाव था ...।

शत्रुञ्जय पर्वतके यात्रियो पर का कर हटा दिया गया था और जैनो के तीर्थ-स्थान सम्राट की सरक्षता मे रखे गये थे। सक्षेप मे मासाहारपरित्याग और जीव-हिंसा का विरोध जैन गुरुओ के प्रभाव के द्वारा ही हुए थे।

साहित्य महारथी श्रीमान् मोहनलाल दलीचंद देसाइ B A. L L B. (Vakil High-Court, Bombay) अपनी पुस्तक "जैन साहित्य नो इतिहास पृ० ५५६मे भी इसप्रकार लिखते हैं —

"तेमज खरतर गच्छ ना जिनचन्द्रसूरि आदि ए सम्राट अकबर पर धीमे धीमे उत्तरोत्तर विशेष प्रमाण मा-प्रभाव पाडी तेने जीव दया ना पूरा रंगवालो कर्यो हतो तेमा किञ्चित् मात्र शक नथी ए वात नी साक्षीते बादशाह् बाहर पाडेला फरमानो पर थी, तेमज अबुल-फजलनी 'आइन-इ-अकबरी', बदाऊनीना "अल-बदाउनि", 'अकबर नामा' वगेरे मुसलमान लेखकोए लखेला ग्रन्थोपर थी स्पष्ट जणाय छे।"

केवल अकबर पर ही नहीं, किन्तु उनके पुत्र सलीम आदि पर भी सूरिजीका प्रभाव यथेष्ट था। उनका सारा परिवार सूरि-महाराजका परम भक्त हो गया था। सम्राटके सभासद गण आदि पर भी सूरिजीका खासा प्रभाव था। जिनमे शेख अबुलफजल आजम

---

* अबुलफजलका जन्म स० १५५१ ई० (हि० स० ९५८ के मोहर्रम की छठी तारीखको) मे हुआ था। सन् १५७४ में वह अकबरके दरबारमें दाखिल हुआ। धीरे २ पद वृद्धि होती गई ई० स० १६०२ मे उसे पाच हजारीका मनसब मिला। सम्राट उसके शान्तस्वभाव, निष्कपटवृत्ति

खान, खानखाना अब्दुर्रहीम× एवं नवाब मुकुरबखान आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। इनका उल्लेख तत्कालीन सूरिजी की गहूलियों में पाया जाता है†।

सं० १६१७में पाटणमें धर्मसागर नामक तपागच्छीय उपाध्याय-को ८४ गच्छ ने एकत्र होकर संघ से बहिष्कृत किया और उनके तत्त्व तरङ्गिणी वृत्ति* आदि ग्रंथोंको अप्रमाणिक ठहराया और अमान्य ग्रंथोंको जलशरण कर दिये गये थे। एवं धर्मसागरने उस दुष्कृत्य का सङ्घ के समक्ष "मिच्छामि दुक्कडम्" दिया। यह सब वर्णन हम

और स्वामी-भक्ति पर विशेष स्नेह और विश्वास रखते थे। अबुलफजल अकबरका सर्वस्व था, इस कथनमें भी अतिशयोक्ति नहीं होगी।

× खानखाना का जन्म सं० १६१३ मार्गशीर्ष शु० १४ को हुआ था इसका पूरा नाम 'खानखानान मिर्जा अब्दुर्रहीम' था, उसके पिताका नाम बैरम खाँ था। इसके गुजरात विजय करने पर सम्राटने प्रसन्न हो कर खानखानाका खिताब दिया और पांच हजार फौजका सेनापति बनाया इसके विषयमें विशेष देखो "खानखाना-नामा" और आइन ए-अकबरी।

† अवधिवड अकबर, ताह अंगज, सबल साहि सलेम।
सेख अबुल, आजम, खानखाना, मानसिंह सु प्रेम ॥१॥
गच्छपति गाइयइ जिनचन्द सूरि मुनि महिराण।
[ समयसुन्दर कृत जिनचन्द सू० गीत ]

* आ तत्वतरंगिणी वृत्ति नी सं० १६१७ नी लिखित प्रत पाटण ना वाडी पार्श्वनाथ भंडार डा० १५ मांछे तेमा जणाव्यु छ के आ ग्रंथ नो कर्त्ता सर्वगच्छ सूरिओ थी जिन शासन माथी उत्सूत्र प्ररूपणा करवा माटे बहिष्कृत करेल धर्मसागर छे।
[ जैन साहित्य नो संक्षिप्त इतिहास पृ० ५८२ ]

चौथे प्रकरणमे कर चुके हैं। इतना होनेपर भी सागरजीने अपनी कुटेव न छोडी, क्योंकि जिसका जैसा स्वभाव और अभ्यास हो जाता है, उसे छोडना असाध्य नहीं तो दु साध्य अवश्य ही होता है। किसी राजस्थानी कविने क्या ही अच्छा कहा है —

*"ज्यारा पडया स्वभाव क जासी जीय सु*

*नीम न मीठा होय सींचो गुड घीय सु ॥"*

यह कहावत सागरजी पर पूर्णत चरितार्थ हुई। सं० १६२६ में उन्होने फिर "प्रवचन-परीक्षा" नामक विषैला और साहित्यमे

---

सुप्रसिद्ध साहित्य-सेवी विद्वान मुनि श्री विद्याविजयजी "ऐतिहासिक रास सग्रह भा० ४" में उत्सूत्र कद-कुद्दाल ग्रथको स० १६८३ की लिखित प्रतिके पुष्पिका लेखसे धर्मसागरजीका बनाया हुआ न होकर सद्द्यवच्छ श्वानक के भण्डार से सप्राप्त प्राचीन ग्रथ है। ऐसी अपनी सम्मति प्रकट करते है। लेकिन दर्शनविजयजी कृत "विजयतिलकसूरि रास" आदिके वाक्योंपर विचार करने से उक्त ग्रन्थ धर्मसागरजीका ही बनाया हुआ सुनिश्चित है। स० १६८३ की प्रशस्ति लेखकने धर्मसागरजीके पक्ष या अहकारमें आकर ही उस ग्रन्थको प्राचीन प्रमाणित करनेका दुस्साहस किया ज्ञात होता है। और सागरजी के स्वभाव पर मनन करते हुए यह बात विशेष सम्भव पर है।

धर्मसागरजीके विषयमें विशेष जाननेके लिये देखें (१) धर्मसागर गणि रास और श्री जिनविजयजी का "महोपाध्याय धर्मसागर" नामक लेख ( आत्मानन्द प्रकाश पु० १९ ) और उनकी उत्सूत्र-प्ररूपणाके लिए देखो तपागच्छीय कृत निम्नोक्त ग्रन्थ —

कलङ्कभूत ग्रन्थ निर्माण किया। जिसमें अनेक जैन सम्प्रदायोका खण्डन और केवल अपनी आचरणाको सत्य बतलानेका निष्फल प्रयत्न किया। इस ग्रन्थके सिवाय और भी उन्होंने इसी वर्षमे 'इर्यापथिकी षट्त्रिंशिका" और स० १६२८ में "कल्प किरणावली" नामक वृत्ति बनाई। कहना न होगा कि सागरजी ने अपने स्वभावानुसार इन ग्रन्थोंको विकृत और खण्डनात्मक शैलीसे ही रचा था। अपनी विद्या के अभिमान मे उन्मत्त होकर भयङ्कर असत्य आक्षेपोंके साथ असभ्य और अति कटु-वचनोंसे श्री जिनदत्त सूरिजी आदि युग-प्रधान प्रभावक महापुरुषोंके अवरणवाद गाए।

---

(१) कुमुताहि विष जागुली (२) षट्त्रिंशज्जल्प विचार (३) सर्व हितोपदेश (४) बारहबोल रास (५) सोहम कुल पट्टावली (६) कल्प सुबोधिका वृत्ति (७) विजयतिलकसूरि रास (८) षट्त्रिंश सभ्यस्य जल्प विचार (९) लघुषट्त्रिंश जल्प विचार (१०) १०८ बोल सज्झाय (११) छत्तीस बोल बारह बोल संग्रह (पाटण) (१२) केवली स्वरूप सज्झाय (१३) विजयदान, विजयहीर और विजयसेनसूरिके ७-१२ और २० बोल इत्यादि।

*खरतर गच्छवालों ने अपने गच्छको आचरणाको सिद्धान्त युक्त* प्रमाणित सिद्ध करते हुए धर्मसागरजी के उत्सूत्रों का खडन रूपमें (१-२) जयसोमजी कृत प्रश्नोत्तर द्वय (२६-१४१ प्रश्न), (३) गुणविनयजी कृत कुमति मत खण्डन (स० १६६९), (४) उन्हीं की ९१ बोल चौपइ सवृत्ति तथा (५) लघु तपोट विचार सार (६) धर्मसागर खडन आदि ग्रन्थ बनाए।

सागरजी का 'मिथ्या दुष्कृत' भी कल्पसूत्रवृत्तिमें कुम्भारके "मिच्छामि दुक्कडम्" कथानकके सदृश्य ही हुआ, उनकी इस प्रवृत्तिसे जैन शासनमें द्वेषाग्निकी ज्वाला प्रज्वलित हो उठी जिसका कुफल आज भी गच्छोंके पारस्परिक वैमनस्य रूप में भोगा जा रहा है। अन्य गच्छवालोंको इससे विशेष क्षति नहीं हुई किन्तु तप-गच्छ वालोंके कितने ही विद्वानोंने उनका पक्ष लिया जिसके परिणाम स्वरूप इस गच्छकी सगठन शक्ति बहुत क्षीयमान हो गई और आपसी द्वेष इतना अधिक वृद्धिगत हुआ जिससे 'आणन्द सूर' और 'देव सूर' के नामसे सदाके लिये गच्छ-भेद हो गया।

हमारे चरित्रनायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी ने सम्राट के सामने उपस्थित विद्वन् मडली मे उपरोक्त प्रवचन-परीक्षादि ग्रन्थों की नि सारता और असभ्यता को सिद्ध किया विद्वानो ने भी उसे अप्रमाणित और अमान्य प्रमाणित किया †।

चातुर्मास पूर्ण हो जानेके पश्चात् सूरिजी ने लाहोरसे विहार किया। उस समय उनके साथ वहुतसा सघ था। उसके साथ सूरि-

---

† वितथतया श्रीशाहिराज समक्ष निराकृत (दूरीकृत) कुमति कृतोत्सूत्राप कुवचनमय (असभ्य वचनमय) प्रवचन परीक्षादि व्याख्यान विचारै।

[स० १६६२ में प्रतिष्ठित श्रीबीकानेर, ऋषभदेवजीकी प्रतिमापर लेख]

"वली तपाइ घणीवार पोथी नइ भामरइ पातस्या अकबर हजूरि पोथी खोटी करी जय पाम्या।"

(जिनकृपाचन्द्रसूरिज्ञान-भण्डार पट्टावली)

महाराजने गुरु-मुकुट× स्थानमें मन्त्रीश्वरकर्मचन्द्रके बनवाए हुए श्रीजिनकुशलसूरिजी के स्थानकी यात्रा की जिसका उल्लेख रत्न-निधानजी कृत 'जिनकुशल सूरि स्तवन' में इस प्रकार है —

*मतिसागर कर्मचन्द्र मन्त्रीश्वर सगिण जन दुख काटइ ।*
*थिरथानक गुरु पगला थापी महिमण्डलि जस खाटइ ॥ ३ ॥*
*युगप्रधान जिनचन्द्र महामुनि जिनमाणिक सूरि पाटइ ।*
*श्री लाहोर सकल सघ सेती जातरा करत सुहु घाटइ ॥४॥*

वहासे ग्रामानुग्राम विचरते हुए सूरि-महाराज हापाणइ पधारे। वहाके सघके विशेष आग्रहसे उन्होंने स० १६५२ का चतुर्मास हापाणइ किया। सूरीश्वरके विराजनेसे धर्म-जागृति एव प्रभावना-उन्नति अच्छी हुई।

× यह गुरु मुकुट स्थान लाहौरके समीप हो विद्यमान है दादाजी के चरणोंके लेखके विषयमें श्रीमान् प्रो० बनारसीदास जैन एम० ए० से ज्ञात हुआ कि वे अक्षर घिस जानेके कारण पढे नहीं जाते।



## दसवां-प्रकरण

# पंच-नदी साधना और प्रतिष्ठाएं



लाहोरमे सम्राट ने श्रीजिनदत्तसूरिजी के चरित्र को श्रवण करते हुए पंच नदी के पीरोंके साधन प्रसगसे विशेप चमत्कृत हो सूरिजीको भी साधन करनेके लिये विनती की थी। सम्राटके कथन* एव सघकी उन्नति के हेतु सूरिजी ने पच नदी साधन करनेका विचार किया। उस प्रसगको विशेप अनुकूलता प्राप्तकर आपने वहासे विहार किया। ग्रामानुग्राम मे धर्म प्रभावना करते हुए सघ के साथ मुलतान पधारे

---

* पाटणके श्री वाडी पार्श्वनाथ मन्दिरके शिलालेख ( स० १६५२ ) में इस प्रकार लिखा है।

श्री जिनमाणिक्यसूरि तत्पट्टालङ्कार सार दुर्व्वार वादि विजयलक्ष्मी शरण पूर्व क्रिया समुद्धरण स्थान-स्थान प्राप्त जय प्रतिदिन वर्द्धमानोदय सदय सन्नय त्रिभुवन जन वशीकरण प्रवण प्रणव ध्यानोपशोभित पवित्र सूरि मत्र विहित भव दूरि कृत सकल वादिम्मय निज पाद विहार पाविता वनितल अनुक्रमेण सवत १६४८ श्री स्तम्भ तीर्थ चतुर्मासक स्थान समुद्भूता मित महिम श्रवण दर्शनोत्कण्ठित जलालुदीन प्रभु पातिसाहि श्रीमदकब्बर

सूरिजीका आवागमन सुनकर नगरके सारे लोग जिनमें खान, मल्लिक और सेख आदि भी आये थे। सूरिजीके दर्शनसे हर्षित होकर खूब धूमधामसे उनका नगर प्रवेशोत्सव किया गया। धर्म प्रभावना करते हुए सूरिजी वहांसे पच नदीके तटपर चन्दुवेलि पत्तन मे पधारे। इस प्रवासमें सूरिजीको सम्राटकी आज्ञा से सर्वत्र अनुकूलता रही। स्थान-स्थानपर आपको आदर, सन्मान मिला। अभयदानादि धर्म-तत्त्वोका अच्छा प्रचार हुआ ×। सिन्धु देश और पजाब प्रान्तमे आपकी प्रशस्त कीर्ति फैली एव जैन धर्म की उन्नति और महती वृद्धि हुई।

---

समाकारण मिलन स्वगुण गण तन्मनोनुरञ्जन समासादित सकल भूतलाखिल जन्तु सुखकारि आषाढाष्टाह्निकामारि फुरमान श्री स्तम्भ तीर्थ समुद्र मीन रक्षण फुरमाण तत्प्रदत्त श्री सत्तम युग-प्रधान पद धारक तद्वचनेन च नयन सर रस रमा मित ( १६५२ ) सवति माघ सित द्वादशी शुभ तिथौ अपूर्व पूर्व गुर्वाम्नाय साधित पच नदी प्रगटी कृत पञ्च पीर प्राप्त परम वरत दादि। निक्षेप श्री सद्योन्नतिकारक विजयमान गुरु युगप्रधान श्री १०८ श्रीजिनचन्द्रसूरीश्वराणा ।

हमे इस शिलालेखका फोटू खरतरगच्छनायक श्रीजिनकृपाचन्द्र सूरिजीके विद्वान शिष्य प्रवर्त्तक मुनिराज श्री सुखसागरजी से मिला और इसकी नकले गणाधीश श्री हरिसागरजी और विद्वद मुनिवर्य्य श्री रत्न मुनिजीसे प्राप्त हुई है।

हुकमि श्री शाहि नइ पच नदी साधि नइ, उदय कियो सघ नो सवायो।
सघपति सोमजी सुणो मुझ वीनति, सोय जिणचद गुरु आज आयो॥
[ लब्धिकल्लोल कृत गहूली ]

× ठामि ठामि हुकम श्री शाहि नें, कहता धर्म विचार।
अभयदान महियलि वरतावता, सघ उच्छ्य जयकार॥ ५॥
[ पद्मराज कृत पच नदी साधन-गीत ]

सं० १६५२ माघ शु० १२ रविवार पुष्य नक्षत्रके दिन शुभ मुहूर्त मे आयम्बिल और अष्टम तप पूर्वक निश्चल ध्यानके साथ नौकामे बैठकर पंच नदियोके संगम स्थानमें पधारे वहापर पाचो नदिये अपने तीव्र वेगसे प्रवाहित होती हुई आ मिली थीं* । वहा सूरिजीके निश्चल ध्यानसे नौका स्थम्भित हो गई। आपश्री परमपवित्र देवाधिष्ठित सूरि-मन्त्र का ध्यान करने लगे। आपके निर्मल ध्यान एव शील तपादि सद्गुणोसे आकृष्ट हो, माणिभद्रादि यक्ष, पंच नदीके पाच पीर, खोडियादि क्षेत्रपाल आपकी सेवामे उपस्थित हुए, और धर्मोन्नतिमे सहाय्य करने का वचन दिया।

---

* पच नदी पाचे पीर साध्या, खोडिया क्षेत्रपाल ।
जल वहै जेथ अगाध, प्रवहण थामिया तत्काल ॥
[ समयसुन्दर कृत जिनचन्द्र० गीत ]

पच नदी साधनेकी विधिकी तत्कालीन लिखी हुई प्रति ( प० ३ ) बीकानेर में श्रीपूज्यजी श्रीजिनचरित्रसूरिजी के सग्रह में है, उसकी नकल हमारे पास है उसमें पाच पीरों के नाम इस प्रकार लिखे हैं —

( १ ) खदिर ( २ ) कान्हू ( ३ ) छजा ( ४ ) सोमराज ( ५ ) खजा। ये पीर क्रमश इन नदियोंके अधिष्ठाता हैं —

१ विहत्थ (झेलम), २ राव्य (रावी), ३ चिन्नाह (चिनाव), ४ व्याह (व्यास) ५ सिन्ध ।

इन पांचो के सिवाय बीबीराल्नी और माणिभद्र यक्ष खोडिया क्षेत्रपाल को भी साधा जाता है ।

सूरि महाराजका पच नदी साधते हुए भावका सुन्दर चित्र बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर के सग्रह में है ।

सूरिजी पच नदी (के अधिष्ठाता देवोका) साधन× करके प्रात -काल पत्तनमे पधारे। वाजित्र वजने लगे, नगरमे अपार आनन्द छा गया। भक्त श्रावकोने याचको को मुह मागा दान दिया। घोरवाड कुलोत्पन्न शाह नानिगके सुपुत्र राजपाल ने अपने द्रव्यका सदुपयोग कर, सुयश प्राप्त किया। सूरिजी वहा से उच्चनगर आए। वहा शातिदायक सोलहवें तीर्थङ्कर श्री शातिनाथजी के दर्शन, वन्दन करके "दरावर" पधारे। प्रकट प्रभावी दादा साहेब श्री जिनकुशलसूरिजी के स्वर्गस्थान में चमत्कारि गुरु चरणो के दर्शन किए।

× पंचनदी की साधना सव की समुन्नतिके लिये श्रीजिनदत्तसूरिजी ने सर्व प्रथम की थी। उनके पश्चात् जिनसमुद्रसूरिजी और जिनमाणिक्य सूरिजी के साधन करने का उल्लेख पट्टावलियोंमें मिलता है। पच नदी साधना के विषय मे श्रीजिनविजयजी सम्पादित 'खरतरगच्छपट्टावली संग्रह' ( पट्टावली नं० ३ ) में कुछ विशेष ज्ञातव्य मिलता है। यद्यपि इस साधनामें अप्काय के जीवों की विराधना का प्रश्न है तथापि कारणवश नदी पार करने की जिनागमो मे आज्ञा है। इस प्रश्न का विशेष स्पष्टीकरण उ० जयसोमजी ने अपने 'प्रश्नोत्तर ग्रन्थ' के प्रश्न नं० १३९ के उत्तर में इस प्रकार किया है '—

"जे खरतर गच्छि पचनदी साधै छे वली क्षेत्रपाल योगिनी नदी प्रमुख धमार्थी नइ साधवा गयी कहा ते पिण साधै छै वली इहा घणी जीव विराधना था(य)इ छै ते स्यु ? तत्रार्थे —श्रीसघ नइ समाधान निमित्ति श्रीयुगप्रधान श्रीजिनदत्तसूरिजी ए ५ नदीया ना देवता सूरि-मंत्र नइ गुणगे तथा तप संयमइ सवोप्या हुता देवताइ पिण सन्तुष्ट थए थके वाचा लीधी हुती जे इणइ देश माहि तुमारा गच्छनायक आवै ते इहा ५ नदी नइ एक-

वहाँसे विहार करके जैसलमेर आते हुए सूरिजीने मार्गमे अपने गुरु श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी के निर्वाण-स्थान पर उनके सुन्दर स्तूप का दर्शन किया। और नवहरपुर मे पार्श्वनाथजी की यात्रा

---

थइ मेल थए सूरि मंत्र जाप करे, अम्है पिण सघ ना विघ्न वारीस्या एतलै घर दीधै थके श्रावक श्राविकाए पुणि तेह देवता ने वलि बाकुल नी पूजा साहम्मी भणी कीधी एतलै मेलि संघ नइ कार्यें आज पिण ५ नदी साधै छै ए-चालि छै तथा ठाणाग सूत्र माहि पाचमें ठाणै पाच महानदी नउ कारणे "उत्तरिसएवा सतरित्तएवा" इत्यादि पाठ जोज्यौ जे ऊतरता पिण जीव विराधना थावा इरियावही प्रमुख पडिक्कमे एवं विचारिज्यौ तथा श्रुत देवता, क्षेत्र देवता, भुवनदेवता ना काउसग्ग पडिकमणा माहि करी थुइ प्रमुख कहे छै ते विमासिज्यो दृष्टिराग छोड़ेज्यो। वलि इम लोक कहावत सामली छइ जे ऋषीमती हीरविजयसूरि, गच्छ नइ उदय निमत्त उच्छिष्ट चण्डालिनी देवता महूले प्रकारि साधवी माडी हती पण किणहीक मेलि न सधाणी किंतु कोपित थइ, पछी यति शत २ तथा २५० यती ना यान दीधा पछै वली फेरी साधी गच्छ प्रतिष्ठा पिण थइ इहा जूठ साच केवली जाणे वली धाणधार देशें मगरवाड गाम पाल्हणपुर ने पासि माणिभद्र नामें लोक प्रसिद्ध सिद्धक्षेत्रपाल छै सिंदूर तेल तिलवटीइ पूजाइ छै तिहा लहुडी पोसाल ना तपा आचार्य पद स्थापना नइ अधिकारि सवा मण गुल पापडी करी पूजी एक राति गुणणा करी तेहनइ आराधै छै पातिसाह पास जाता ऋषमती हीरविजयसूरिइ पिग तेवली विधि गुल पापडी करावी पाल्हणपुर ना श्रावका पासें पूजा करावी गुणणा करी श्रीजीपातिसाह पास गया, समहता थया ए वात सर्व लोक जाणै छै पाल्हणपुर ना लोक ने पूछी चौकस करिज्यो इम श्री मगरवडि यक्ष आराधता मिथ्यात न थाइ एवं विमासिज्यो।

करके मिती फाल्गुन शुक्ला २ के दिन जैसलमेर पधारे। वहा के सघ को हर्ष का पारावार न रहा। स० १६३६ के पश्चात् पूज्यश्री का जैसलमेर पधारना नहीं हुआ था, इससे लोगो के हृदयमे गुरु-दर्शन की अधिकाधिक अभिलाषा थी। वहा के रावल भीमजी × और

× ये रावल हरराजजी के पुत्र थे। इनका राज्यकाल सं० १६५० से १६६३ तक है। इनका कुछ परिचय पृ० २४ में लिख चुके हैं। ये सूरिजी के अनन्य भक्त थे जैसा कि वा० समयसुन्दरजी कहते हैं —

रायसिंह राजा भीम राउल, सूर नय (इ?) सुरतान।
वडा वडा महीपति वयण मानइ, दियें आदरमान ॥ गच्छपति० ॥

इनके विषयमें वा० गुणविनयजी भी अपने जिनचन्द्र सूरि गहूँली मे लिखते हैं —

"राउल श्री भीम इम कहइ जी, यादव वश वदीत रे।
पधारो जैसलमेरु नइ जी, प्रीति धरी निज चित्त रे ॥ १ ॥

ये जैन साधुओं का खूब आदर करते थे। वा० समयसुन्दरजी ने इन्हे उपदेश देकर इनके राज्यमें मयणो ( मीना-जगली जाति ) द्वारा मार जाते हुए साँडोंको छुडाया —

जीव दया जश लीध, राउल रजी हो भीम जेशल गिरी।
करणी उत्तम कीध, साडा छोडाया हो देश में मारता ॥ ३ ७
[ राजसोमजी कृत, महो० समयसुन्दरजी गीत ]

साडा छोडाया मयणे मारता थी, राउल भीम हजूर ॥ समय० ॥
[ हर्षनन्दन वादी कृत, समयसुन्दर गीत ]

वा० राजसमुद्रजी ( श्रीजिनराज सूरि ) ने रावलजी की सभामें तपा-गच्छवालों को शास्त्रार्थ में परास्त किया था। जिसका उल्लेख श्रीसार कृत 'जिनराजसूरि रास' में है —

"जेसलमेरु दुरग गढि, राउल भीम हजूरि।
वादइ तपा हराविया, विद्या प्रबल पडूरि ॥

सघ ने सूरि-महाराज का प्रवेशोत्सव खूब धूमधाम से किया। संघ और रावलजी के विशेष आग्रह होने के कारण उन्होने सं० १६५५ का चातुर्मास जैसलमेर मे किया *।

चातुर्मास पूर्ण हो जानेके पश्चात शीघ्र ही प्राग्वाट ज्ञातीय जोगी शाहके पुत्ररत्न सघपति सोमजी के नव्य-निर्मित जिनालय की प्रतिष्ठा के हेतु विनती आने के कारण सूरि महाराज जैसलमेर से विहार कर ग्रामानुग्राम विचरते हुए अहमदाबाद पधारे। वहाँ मिती माघ शुक्ला १० सोमवारको श्री आदिनाथजी आदि तीर्थंकरो के अनेक बिम्बोकी प्रतिष्ठा की ×। आचार्य श्रीजिनसिंहसूरिजी उ० श्री समयराज उ० रत्ननिधान आदि अनेक विद्वान मुनि आपश्री के साथ मे थे =। सघपति सोमजी, शिवाजी ने बहुत सा द्रव्य व्यय किया था, एक पट्टावलीमे इस प्रसंगपर ३६०००) रुपया व्यय करनेका लिखा है। उ० रत्ननिधानजी अपनी जिनचन्द्रसूरि गहूलीमे इस प्रकार लिखते हैं —

---

* सूरिजी के पच-नदी साधन समयसे यहा तक का सारा वर्णन श्री० पद्मराजजी कृत "पच नदी साधन (जिनचन्द्र सूरि) गीत" गा० १९ से किया गया है।

× इसी समय सूरिजी की प्रतिष्ठित श्रीशान्तिनाथजी की धातु-प्रतिमा जयपुर के श्री सुमतिनाथजी के मन्दिर में है जिसका लेख बाबू पूरणचन्द्रजी नाहरके सम्पादित "जैन लेख संग्रह" के लेखाङ्क ११९६ में छप चुका है।

= गणाधीश श्री० हरिसागरजी महाराज द्वारा सोमजी शिवा के मंदिर के लेख प्राप्त हुए हैं,उनमे इन मुनियोका सूरिजीके साथ होनेका उल्लेख है

*राजनगर प्रतिष्ठा करी, सकल मण्डाण गुरुराइ रे।*
*सघवी सोमजी लाछिनउ, लाह लियइ तिणठाई रे ॥११॥*

सूरिजी ने स० १६५४ का चातुर्मास अहमदाबाद में ही किया। उसके पश्चात् ग्रामानुग्राम विचरते हुए खम्भात पधारे, स० १६५५ का चातुर्मास वहीं किया। विहार पत्र न० १ में "*श्रीराजाजी ना तेडाव्या*" लिखा है। किन्तु प्रमाणाभावसे किस भक्त नृपति का आमन्त्रण था, यह नहीं कहा जा सकता।

खम्भात से विहार करके सूरीश्वर अहमदाबाद पधारे। सवत् १६५६ का चातुर्मास वहीं किया। सम्राट अकबर उस समय बरहानपुर आये हुए थे, उन्होंने सूरिजी को स्मर्ण किया, पश्चात् ईडर आदि ग्रामों में बहुत सी धर्मोन्नति करते हुए राजनगर पधारे। यहा पर मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रजी का देहान्त हुआ इस से सारे सघ मे शोक छा गया। क्योंकि मन्त्रीश्वर सतरहवीं शताब्दिके एक उज्ज्वल रत्न थे। वे जैन शासन और देशकी सेवा और उन्नति करने में अग्रगण्य थे।

इन बातोंका उल्लेख विहारपत्र न० १ मे इस प्रकार है —

"तत्र बरहानपुरि श्रीजीये चीताया पछइ ईडर प्रमुख ग्रामे थइ घणा लाभ लेइ राजनगरि आव्या, अत्र श्रीकर्मचन्द्र मत्री परोक्ष थया।"

मत्रीश्वर कर्मचन्द्रकी मृत्युका सवत् साहित्य ससार मे अज्ञात है। इससे उनके सम्बन्धमे ... किम्वदन्तिया प्रचलित

हैं, विहार-पत्र के द्वारा इस महत्त्वपूर्ण संवत् के निर्णय के साथ-साथ अनेक भ्रम निवारण हो जाते हैं। इस विषय मे विशेष उहापोह मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रके जीवन-परिचयमे की जायगी।

श्रीसुन्दर कवि कृत "विमलाचल स्तवन" गा० ९ से ज्ञात होता है कि इसी वर्ष मे माधव शुक्ला २ को सघ के साथ सूरि-महाराज ने गिरिराज विमलाचल की यात्रा की थी ×।

सूरीश्वर ने स० १६५७ का चातुर्मास पाटणमे किया। वहा पर अनेक धर्म-कृत्य हुए। चातुर्मासके अनन्तर सूरिजी सीरोही पधारे, वहा के नरेश महाराव-सुरतान सूरिजीके परम भक्त थे उन्होने तथा सघ ने आपकी अच्छी भक्ति की। मिती माघ शुक्ला १० के दिन सीरोही मे प्रतिष्ठित अष्टदल कमलाकार श्रीपार्श्वनाथप्रभु की धातु-मूर्ति बीकानेरके श्री चन्द्रप्रभ स्वामी के मन्दिरमें है, उसका लेख इस प्रकार है —

स० १६५७ वर्षे माघ सुदि दसमी दिने श्री सीरोही नगरे राजाधिराज श्री सुरतान विजय राज्ये ऊपकेश वंशे बोहित्थराय गोत्रे विक्रमपुर वास्तव्य म० दस्सू पौत्र म० खेतसी पुत्र म० रूदाकेन सपरिकरेण कमलाकार देव गृह मण्डित पार्श्वनाथ बिम्बं कारित प्रतिष्ठितं च श्रीवृहत् खरतरगच्छाधिप श्री जिनमाणिक्य सूरि पट्टालंकार दिल्लीपति •• •••• • • •

× सोल छप्पन माधव सुदि बीजइ, सघ सहित परिवार।
युगप्रधान जिनचन्द्र जुहारिया, श्रीसुन्दर सुखकार ॥ ९ ॥

वाचक साधु सयुतैं पूज्यमान वद्ममान चिरनदतु। लि० उ० समयराजै *।

यहासे विहार करके सूरि-महाराज खम्भात पधारे स० १६५८ का चातुर्मास वहाँ किया। इसके पश्चात् स० १६५६ का चातुर्मास अहमदाबाद किया। वहा से विहार कर के पाटण पधारे।

स० १६६० मे पाटण चौमासा करके ग्रामानुग्राम विहार करते हुए महेवा पधारे। स० १६६१ का चौमासा वहा हुआ। श्रीनाकोडा पार्श्वनाथजो की यात्रा की एव बहुत से धर्मकार्य हुए। काकरिया गोत्र का कम्मा श्रेष्ठि वहा आपका भक्त श्रावक था उसने वहा सूरिजी के कर-कमलो से प्रतिष्ठा कराई §।

---

* सूरिजी के प्रतिष्ठित अष्ट दल कमलाकार जिन प्रतिमाए बीकानेर के और भी कई मन्दिरोंमें है। इस कमलाकार देव गृह की ८ पखडियोंमें दो नहीं मिलने के कारण इस लेख का मध्यभाग असम्पूर्ण रह गया है।

§ विहार पत्र नं० १ में 'का० कम्मइ प्रतिष्ठा करावी' लिखा है। इसके साथ और भी कई जिन बिम्बोंकी प्रतिष्ठा हुई थी जिनम से एक मूर्ति बीकानेरस्थ कोचरोंकी गुवाड के आदिनाथ मन्दिर में है, जिसका लेख इस प्रकार है —

"स० १६६१ वर्षे मार्गशीर्ष मासे प्रथम पक्षे पंचमी वासरे गुरुवारे ऊकेश वश बहुरा गोत्रे शाह अमरसो पुत्र साह राम पुत्ररत्न

रेण श्री शान्तिनाथ बिबकारित श्रीवृद्द सरे

युग प्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभि ।

भरच के मुनिसुव्रत जिनालय मे इसो मिती की प्रतिष्ठित विमलनाथ प्रभु की प्रतिमा है। जिसका लेख जैन धातु प्रतिमा लेख संग्रह भा० २ में छपा है।

स० १६३८ के वाद सूरिजीका वीकानेर चातुर्मास नहीं हुआ था, इससे वीकानेर का संघ उन के दर्शनो के लिये उत्कठित था, सूरिजी को अपने निकटवर्ती आये जानकर अत्यन्त हर्ष के साथ वहा पधारनेके लिये "वीनति पत्र" लेकर सघके मुख्य भक्त-श्रावकगण महेवा गये। अति आग्रह-पूर्वक वीकानेर चतुर्मास करने के लिये प्रार्थना की। संघकी अतीव भक्ति एव आग्रहके वशीभूत हो कर आप वीकानेर पधारे। आपके शुभागमनसे वहा के महाराजा रायसिंहजी और श्रीसघने हर्षान्वित होकर आपका नगर प्रवेश खूब समारोह के साथ कराया। वहुत वर्षोके पश्चात् आनेके कारण सवमे प्रचुर भक्ति और धर्म-परायणता का श्रोत वहने लगा। चातुर्मास मे धर्म प्रभावना खूब अच्छी हुई।

खरतर संघ ने नाहटोकी गुवाड मे श्रीशत्रुञ्जयावतार श्रीऋषभ जिनालयका निर्माण कराया। जिसकी प्रतिष्ठा स० १६६२ चैत्र कृष्णा ७ के दिन सूरिजीने सविधि सम्पन्न की। उस समय पाषाण की ४० जिन मूर्तियो की प्रतिष्ठा की ×, जिनमे से अधिकाश मूर्तिये वहा अद्यावधि विद्यमान है। कई मूर्तिये अन्यत्र भी पाई जाती हैं जिनमे तीन मूर्तियें श्रीसुपार्श्वनाथजी के मन्दिर मे और एक मूर्ति चौरासैरीके उपाश्रयस्थ देहरासरमे मूलनायक रूपमे विराजमान हैं।

× अडमठ अगुल प्रतिमा वडी, उज्वल दल आरासे घडी।
झिगमिग ज्योतितणो विस्तार, जय जय शत्रुजय अवतार ॥२॥
* * * *
दोइ रस शशि मित वरसैरे, चेत वदी सातम दिवसैरे।
युगवर श्रीजि न्द यतीशैरे, प्रतिष्ठा कीधी जगीशैरे ॥५॥

इस प्रतिष्ठाके समय सूरिजीके साथ उनके शिष्य आचार्य श्रीजिनसिंहसूरिजी उ० श्रीसमयराजजी उ० रत्ननिधानजी वाचक पुण्यप्रधानजी आदि थे। * पाषाण प्रतिमाओ के अतिरिक्त इसी समयकी प्रतिष्ठित कई अष्टदल कमलाकार मूर्तियें भी मिलती हैं जिनमें से १ आदिनाथजी के मन्दिर मे और कइ अन्य मन्दिरो मे भी देखी गई हैं।

इसके पहिले स० १६६२ मिती वैसाख वदी ११ के दिन प्रतिष्टित धातु मूर्ति भी श्रीसुपार्श्वनाथजी के मन्दिर में है जिनका लेख इस प्रकार है —

---

वलि श्रावक श्राविकारी रे, प्रतिमा चालीश विचारीरे।
उच्छव करि इहा विस वावइ रे, निज ऋद्धि तगो फल भावइरे ॥६॥
( स० १६६८ पोष सुदी ९ सुमतिकल्लोल कृत ऋषभस्तवन )

"सवत सोल बासठि समइ, चैत सातमि वदि जेहो जी।
युगप्रधान जिनचन्द्रजी बिम्बप्रतिष्ठया एहो जी ॥८॥
मूलनायक प्रतिमा नमू, आदीसर निसदोसो जी।
सुन्दर रूप सुहामणउ, बीजा वलि च्यालीसो जी ॥९ श्री॥
(समयसुन्दर कृत स्तवन गा-११)

* इन सबका नाम बीकानेरके श्री ऋषभदेवजीके मन्दिर के लेखों में पाया जाता है। ये सब लेख हमारे सग्रह में हैं। मूलनायकजी का लेख विस्तृत होनेके कारण यहा नहीं दिया। बीकानेरके समस्त लेखोको भविष्यमें पुस्तकाकार प्रकाशित करनेकी हमारी शुभाकाक्षा है।

"स० १६६२ वर्षे वैसाख वदी ११ शुक्रे उ० जातीय शिवराज सुत पासा भा० सादिक सुत कुवरसी भा० • • • •दि सपरिवारै श्रीमुनिसुव्रत विम्बं का० प्र० श्रीवृहत •• ••• • श्रीजिनचन्द्र"

सूरिजीने स० १६६३ का चातुर्मास भी लाभ जानकर बीकानेर मे ही किया विहारपत्र मे "तत्र प्रतिष्ठा" लिखा है। सम्भव है कि डागोंकी गुवाडवाले श्रीमहावीर स्वामी के मन्दिर की प्रतिष्ठा कराई हो किन्तु वहा कोई शिलालेखादि न मिलने से हम निश्चय-पूर्वक नहीं कह सकते। इसी मन्दिर मे स० १६६४ मिती वैसाख सुदी ७ को प्रतिष्ठित धातु प्रतिमा है, जिसका लेख इस प्रकार है।

"स० १६६४ वर्षे वैसाख सुदि ७ गुरुवारे राजा श्रीरायसिंह विजयराज्ये श्रीविक्रमनगर वास्तव्य श्रीओसवाल ज्ञातीय बोहित्थर गोत्रीय सा० वणवीर भार्या वीरमदे पुत्र हीरा भार्या हीरादे पुत्र पास भार्या पाटम दे पुत्र तिलोकसी भार्या तारा दे पुत्ररत्न लखमसी केन अपर मातृ रंगा दे पुत्र चोला सपरिवार मश्रीकेन श्रीकुंथुनाथ विम्बकारित प्रतिष्ठित च श्रीवृहत्खरतरगच्छाधिराज श्रीजिनमाणिक्य सूरि पट्टालंकार युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभि पूज्यमान चिर नदतु ॥ कल्याण मस्तु ॥"

'श्रीचिन्तामणिजी' मन्दिर के गुप्त-भडार में भी इसी दिन की प्रतिष्ठित धातु मूर्ति है, जिसका लेख यह है —

"स० १६६४ प्रमिते वेसाख सुदि ७ गुरु पुण्ये राजा श्रीरायसिंह जी विजय राज्ये श्री विक्रम नगर वास्तव्य श्री ओसवाल ज्ञातीय गोलवच्छा गोत्रीय सा०रूपा भार्या रूपा दे पुत्र मिन्ना भार्या माणक

दे पुत्ररत्न सा०वन्नाकेन वद्धादे पुत्र नयमल कपूरचन्द्र प्रमुख परिवार सश्रीकेन श्री श्रेयास बिंबकारितं प्रतिष्ठितं च श्रीवृहत्खरतर गच्छाधिराज श्रीजिनमाणिक्यसूरि पट्टालंकार हार श्रीशाहि प्रतिबोधक युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभिः पूज्यमानं चिरं नदतु ॥ श्रेय ॥"

मिती वैसाख सुदि ७ के अनन्तर विहार करके लवेरा पधारे, सं० १६६४ का चातुर्मास वहांपर हुआ। जोधपुर से राजा सूरसिंहजी वंदनार्थ आये वे सूरिजी से धर्मगोष्ठि करके हर्षित हुए और युगप्रधान गुरुवर्य का सन्मान बढ़ाने के लिये अपने राज्य मे सूरिजी को सर्वत्र वाजित्र बजाते हुए श्रावक लोगों के ले जाने मे कोई बाधा न दे, इसलिये परवाना लिखकर दिया, जिसकी नकल इसी पुस्तक के परिशिष्ट में छपी है। ये महाराजा सूरसिंहजी सूरिजी के प्रसिद्ध भक्त थे, जिसका नामोल्लेख समयसुन्दरजी अपने (अपूर्ण) आलिजा गीत मे इस प्रकार करते हैं —

---

* ये सं० १६५२ के श्रावण महीने में लाहोर में अपने पिता उदयसिंह के उत्तराधिकारी हुए। माघ शुक्ल ५ जोधपुर में राज्याभिषेक हुआ। इन्हें सम्राट ने दो हजारी जात और सवामात हजारों का मनसब दिया। ये बड़े वीर, दानी और नीतिचतुर विद्वान थे एक ही दिन में इन्होंने चार कविओं को १ लाख का दान दिया था। सं० १६७० में इनका स्वर्गवास हुआ।

× एक पट्टावली में सं० १६६८ माघ शुक्ला म तीर्थाधिराज श्रीशत्रुञ्जय पर नव्य जिन प्रासाद में सूरिजी के करकमलों से अर्हद् बिम्बों की प्रतिष्ठा कराने का उल्लेख इसप्रकार है —

*शाहि सलेम सहु उमरा, भीम सूर भूपाल।*

*चीतारइ तुनइ चाह सु, पूज्यजी पधारो कृपाल ॥५॥*

सूरिजी लवेरा से विहार करके मेडता पधारे। सं० १६६५ का चातुर्मास मेडता मे किया। अहमदाबाद के विनीत आमन्त्रण से सूरिमहाराज राजनगर पधारे। वहा से ग्रामानुग्राम विचरते हुए खम्भात पधारे। स० १६६६ का चातुर्मास खम्भात में किया। उसके पश्चात् स० १६६७ का चातुर्मास अहमदाबाद मे करके पाटण पधारे। सं० १६६८ का चातुर्मास पाटण मे किया। इन वर्षों मे और भी बहुत-सी जिन मन्दिरो की प्रतिष्ठाए सूरिजी के कर कमलोंसे हुई।

---

"सवत् १६६८ वर्षे माघ वदि मांहे श्रीशत्रुञ्जय उपरि नवीन प्रासाद, तिहा इज प्रतिमा नी प्रतिष्ठा कीधी, बीजी पणि घणी प्रतिष्ठा कीधी।"

[ बीकानेर ज्ञानभण्डार—पट्टावली ]

इसी वर्ष में प्रतिष्ठित श्रीधर्मनाथ बिम्ब का लेख बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर के जैन लेख सग्रह में भी इस प्रकार है —

"स० १६६८ श्रीधर्मनाथ बिंब का॰ सा० हीरानंदेन प्र० श्रीजिनचन्द्र सूरिभि"

उ० क्षमाकल्याणजी गणि कृत पट्टावली मे श्रीजिनसिंहसूरिजी के शिष्य राजसमुद्रजी (श्रीजिनराजसूरि) को इसी वर्ष मे आसावलीपुर में वाचक पद देनेका उल्लेख इस प्रकार है —

"स० १६६८ आसाउलीपुरे श्रीजिनचन्द्रसूरिभि वाचक पद प्रदत्तम्" श्रीसार कवि कृत "जिनराजसूरि रास" में भी वाचक पद देनेका इस प्रकार उल्लेख है —

"वाचनाचारज पद दियउ, श्रीजिनचन्द्रसूरिन्द।
पाटोधर प्रतपउ सदा, रलिय रंग आणंद ॥ ६ ॥

## ग्यारहवां प्रकरण

## महान् शासन-सेवा



सम्राट अकबर न्यायपरायणता से राज्यशासन करते हुए वि० सं० १६६२ मिती कार्तिक सुदी १४ मंगलवार की रात्रि को कालधर्म प्राप्त हुए। सम्राट के सब धर्मोंपर समान भाव और प्रजावात्सल्य गुणपर प्रजा बड़ी प्रसन्न थी। मुसलमान शासकोंमें यही एक ऐसे सम्राट हो गये हैं, जिनके समय में हिन्दू और मुसलमान दोनोंने खूब शान्ति से जीवननिर्वाह किया। सम्राट की मृत्यु के अनन्तर हिन्दू और मुसलमान दोनों के हृदय शोकाकुल हो गये, सर्वत्र हाहाकार छा गया, जिसका कुछ वर्णन "बनारसी-विलास" में पाया जाता है। सम्राट के देहावसान के अनन्तर उनके पुत्र शाहजादा सलीम "नूरुद्दीन जहांगीर" की उपाधि धारण कर आगरेके सिंहासना-रूढ हुए। सूरिजी के लाहौर पधारने के समय से ही शाहजादा सलीम उनको सम्मान की दृष्टि से देखा करता था और उनका भक्त हो गया था।

*शाहि सलेम सहु उमरा, भीम सूर भूपाल।*

*चीतारइ तुनइ चाह सु, पूज्यजी पधारो कृपाल ॥५॥*

सूरिजी लवेरा से विहार करके मेड़ता पधारे। सं० १६६५ का चातुर्मास मेड़ता में किया। अहमदाबाद के विनीत आमन्त्रण से सूरिमहाराज राजनगर पधारे। वहां से ग्रामानुग्राम विचरते हुए खम्भात पधारे। सं० १६६६ का चातुर्मास खम्भात में किया। उसके पश्चात् सं० १६६७ का चातुर्मास अहमदाबाद में करके पाटण पधारे। सं० १६६८ का चातुर्मास पाटण में किया। इन वर्षों में और भी बहुत-सी जिन मन्दिरों की प्रतिष्ठाएं सूरिजी के कर कमलोंसे हुई।

"संवत् १६६८ वर्षे माघ सुदि माहें श्रीशत्रुञ्जय उपरि नवीन प्रासाद तिहां इज प्रतिमा नी प्रतिष्ठा कीधी, बीजी पणि घणी प्रतिष्ठा कीधी।"

[ बीकानेर ज्ञानभण्डार—पट्टावली

इसी वर्ष में प्रतिष्ठित श्रीधर्मनाथ बिम्ब का लेख बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर के जैन लेख संग्रह में भी इस प्रकार है —

"सं० १६६८ श्रीधर्मनाथ बिंब का० सा० हीरामदेन प्र० श्रीजिनचन्द्र सूरिभि"

उ० क्षमाकल्याणजी गणि कृत पट्टावली में श्रीजिनसिंहसूरिजी के शिष्य राजसमुद्रजी (श्रीजिनराजसूरि) को इसी वर्ष में आसावलीपुर में वाचक पद देनेका उल्लेख इस प्रकार है —

"सं० १६६८ आसाउलीपुरे श्रीजिनचन्द्रसूरिभि वाचक पद प्रदत्तम्" श्रीसार कवि कृत "जिनराजसूरि रास" में भी वाचक पद देनेका इस प्रकार उल्लेख है —

"वाचनाचारज पद दियउ, श्रीजिनचन्द्रसूरिन्द।
पाटोधर प्रतपउ सदा, रलिय रंग आणंद ॥ ९ ॥

यति-साधुओंके चरित्रके विषयमें शंकित होकर अपने शीघ्र कोपशील स्वभावानुसार यह हुक्म सर्वत्र जारी कर दिया कि—मेरे राज्यमें

यावज्जन सनीर्थ दण्ड करयो , समोचना स्यात्ये ।
गोरक्षा जल जीव रक्षणविधि प्राप्त प्रतिष्ठाश्रये ॥३॥
देशाकर्षण साधु दु ख दलनात कारुण्यपुण्याशये ।
त तद्भूप विलोक रंजितमन श्री नूरदी रञ्जनात् ।
श्री मच्छ्री जिनचन्द्र सूरि सगुरो योगप्रधाने चिर ।
राज्यं कुर्वंति जैनसिंह सगुरो सद्योवराज्येकिल ॥४॥

जिनसागर सूरि रासमें—

संवत् सोल गुणहत्तरइ, वृक्षवि साहि सलेम ।
जिनशासन सुगतउ कर्मा, खरतरगच्छ मइ खेम ॥१३॥

( ऐ० जै० का० सं० पृ—१७९ )

संवत् १६७० चैत्र सुदी १० को दिये पत्रम भी साधु सघकी रक्षा करनेका उल्लेख है, देखो परिशिष्ट न० ( घ )

शिला-लेखोंमें भी—"कुपित जहांगीर साहिरंजक तत्स्वमंडल यहिष्कृत साधुरक्षक युगप्रधान श्रीजिनचन्द सूरि ।"

( प्राचीन जैनलेख सग्रह लेखाक १७ )

– कविवर समयसुन्दर कृत खरतरगच्छ पट्टावलीमें—

"पुन गुरूणा एक दर्शनितोऽनाचार दृष्ट्वा कुपितेन साहिना सर्व गच्छीय दर्शनिषु देशेभ्यो निष्कासितेषु पत्तनाद्विहृत्य आगरायां गत्वा श्री साहि समक्ष अपराध मोचनेन सर्व दर्शनिना सर्वत्र विहार कारित ।

कविवर अपने छन्दमें भी यही स्पष्ट कहते हैं—"दर्शनी एक आचार चको ।"

सम्राट जहाँगीर अत्यधिक मद्यपान * किया करते थे और शीघ्र क्रोधी स्वभावी थे, इन दोनोमेंसे एक भी दुर्गुण हो तो मनुष्य अनेक अविचार और अनर्थमय कार्य कर डालता है, तो जहा दोनोकी विद्यमानता हो वहा तो कहना ही क्या ?

स० १६६८× मे एक– शिथिलाचारी वेषधारी दर्शनीको अनाचार सेवन करते जान, सम्राटने उसे देश निकाला दे दिया और अन्य सर्व

* सम्राट् स्वय अपनी आत्म-जीवनी (जहागीर नामा) में इसे स्वीकार करते है।

× विहारपत्र नं० १ और लब्धिशेखर कृत जिनचन्द्रसूरि गीत (अवतरण पृष्ठ १८६) से यह घटना स० १६६८ में हुई थी, सिद्ध होता है। गीत से तो यह भी ज्ञात होता है कि स० १६६८ में, जब कि सूरिजी का चातुर्मास पाटणमें था आगरे सघका विज्ञप्तिपत्र ( चातुर्मासके समय ही ) आया था और चातुर्मासके सम्पूर्ण होनेपर शीघ्र ही विहार कर सूरिजी आगरे पधारे थे। सवत् १६६९ मे तो सूरिजीने सम्राट्को प्रतिबोध देकर साधुविहार प्रतिबधक हुक्मको उन्मूलन करवाके साधुसङ्घकी महान् रक्षाके साथ जैन शासन की अपूर्व सेवा करनेका सौभाग्य प्राप्त किया था, यह स० १६६९ मे ही रचित हर्षनन्दन कृत 'आचार दिनकर प्रशस्ति' से सिद्ध होता है—

"राज्ये राउल भीम नाम नृपते कल्याणमल्लस्य च।
वर्षे विक्रम तस्तु षोडश शते, एकोनसत्तसते ॥१॥
बृहद् खरतरगच्छे श्री मज्जिनभद्रसूरि सन्ताने।
श्री जिनमाणिक्य यतीश्वर पट्टालङ्कार दिनकरि।
जाग्रद् भाग्यजये प्रवुद्ध यवनाधीश प्रदत्ताभये।
साक्षात् पचनदीश साधन विधौ, सप्राप्त लोकस्मये ॥२॥

यति-साधुओके चरित्रके विषयमें शंकित होकर अपने शीघ्र कोपशील स्वभावानुसार यह हुक्म सर्वत्र जारी कर दिया कि—मेरे राज्यमे

यावज्जन स्तीर्थ दण्ड करयो , समोचना स्यालये ।
गोरक्षा जल जीव रक्षणविधि प्रास प्रतिष्ठाश्रये ॥३॥
देशाकर्पण साधु दु स दलनात् कारण्यपुण्याशये ।
न तद्रूप विलोक रंजितमन श्री नूरदी रङ्गनात् ।
श्री मच्छ्री जिनचन्द्र सूरि सुगुरौ योगप्रधाने चिर ।
राज्यं कुर्वति जेनसिंह सुगुरो सयोवराज्येक्ति ॥४॥

जिनसागर सूरि रासमें—

संवत् सोल गुणहत्तरइ, यूझवि साहि सल्लेम ।
जिनशासन मुगतउ कर्मो, खरतरगच्छ मइ खेम ॥१३॥
( ऐ० जै० का० सं० पृ—१७९ )

संवत् १६७० चैत्र सुदी १० को दिये पत्रमें भी साधु संघकी रक्षा करनेका उल्लेख है, देखे परिशिष्ट नं० ( घ )

शिला-लेखोंमें भी—"कुपित जहांगीर साहिरजक तत्त्वमंडल बहिष्कृत साधुरक्षक युगप्रधान श्रीजिनचन्द सूरि ।"
( प्राचीन जैनलेख संग्रह लेखांक १७ )

– कविवर समयसुन्दर कृत खरतरगच्छ पट्टावलीमें—

"पुन गुरुणा एक दर्शनितोऽनाचार दृष्ट्वा कुपितेन साहिना सर्व गच्छीय दर्शनिषु देशेभ्यो निष्कासितेषु पत्तनाद्विहन्य आगराया गत्वा श्री साहि समक्ष अपराध मोचनन सर्व दर्शनिना सर्वत्र विहार कारित ।

कविवर अपने छन्दमें भी यही स्पष्ट कहते है—"दर्शनी एक आचार चको ।"

जहाँ कहीं दर्शनी, सेवडे हैं, उन्हें गृहस्थ-वेषधारक बना दिये जाय अन्यथा मेरे राज्यमेंसे बाहर निकाल दिये जॉय *

इस कठोर और अन्यायपूर्ण शाही हुक्म को सुनकर दर्शनी लोग इतस्ततः भागने लगे, कइ जङ्गलोंमें कइ गुफाओंमें कइ अनान्य देशोंमे चले गये। कुछ लोग तो भयके मारे पृथ्वीके भीतरी, तलघरोंमें जा छिपे, इस प्रकार जिसने जिधर अनुकूलता देखी—

* खरतरगच्छीय साहित्यमें तो इस घटनाका विस्तृत वर्णन मिलता ही है, जिसके कई प्रमाण आगेकी फुट नोटमें दिये जायेंगे। तपागच्छीय साहित्यमें भी इस प्रकार उल्लेख है—

"एहवइ पृथ्वीपति जहागीर, कोपी वचने लागो वीर।
नेषधारी उपर कोपीयो, मुतकलनइ देसोटो दियो।
मलेछ न जाणइ तेह विचार, आचारी मोकल अणगार॥ ४३६॥
नासगइ पडियो वहु देसि, भला हुता तेणे राख्या वेष।

( विजयतिलक सूरि रास, ऐ० रा० स० पृष्ट ३३ )

इस घटनाका विशेष ज्ञातव्य, भानुचन्द्र चरित्र, जहागीरनामा, क्षमाकल्याणजी कृत पट्टावली आदि मे भी पाया जाता है।

वास्तवमें सम्राट्का एक व्यक्ति विशेषके अनाचार से सारे साधुसघको अनाचारी मान सबको देश निर्वासनका हुक्म देना अन्यायपूर्ण था। हमारे चरित्र नायकने सम्राट्को उसकी इस गहरी भूलको सुझाकर उस घातक हुक्मको रद्द या उन्मूलन करानेका गौरव प्राप्त किया था, यह तत्कालीन अनेको प्रमाणोंसे भलीभांति सिद्ध है।"

भाग निकले। उनमे से कितनो को पलायमान होते हुए देखकर यवनोने पकडकर गिरफ्तार कर लिये और उन्हे काल-कोठरीमे डाल दिया, जहापर अन्न-जल भी नहीं दिया जाता था * ।

---

* पातिसाहि सलेम सटोप, कियउ दर्शनिया सु कोप।
ए कामणगारा कामी, दरबार थी दूरि हरामी ॥ १७॥
एकन कु पाग बन्धावो, एकन कु ना आस अणावो।
एकन कु देसवटउ जगल दीजइ, एकन कु पत्राली कीजइ ॥१८॥
ए साहि हुकम साभलिया, सउ खडफ थकी खलभलीया।
अजमान मिली सजतना, दरहाल करे गुर जतना ॥१९॥
क नासि हिन्दू पूठि वहिया, केइ मइवासइ जइ चढिया।
केइ ऊगए जाइ बइठा, केइ दौडि गुफा माहि (जइ) पइठा ॥२०॥
जे नासत यवने झाल्या, ते आणि भाखसी घाल्या।
पाणी नइ अन्न जल पाल्या, ववरीडा थयग सु साल्या ॥२१॥
इम साभलि शासन हीला, जिणचन्द सूरीश छबीला।
गुजरात धरा थी पधारइ, जिन शासन वान वधारइ ॥२२॥
अति आसति वलि गुरुवाली, असुग भय दूरइ टाली।
उग्रसेन पुरइ पउधारइ, पूज्य साहि तणइ दरबारइ ॥२३॥
पूज्य देखि दीवारइ मिलिया, पतिसाह तणा कोप गलिया।
गुजरात धरा क्यु आए, पतिसाहि गुरु वतराए ॥२४॥
पतिसाहि कु देण आशीस, इम आए शाहि-जगीस।
काहे पाया दु ख शरीर, जाओ जउख करो गुरपीर ॥२५॥
इक साहि हुकुम जउ पावा, बन्दिखडा बन्दि (घ) छुडावा।
पतिशाहि खयरात करीजइ, दरशणिया पुरु (दूमो) दीजइ ॥२६॥

इस प्रकार की विकट परिस्थिति के कारण आगरा सघ ने सूरि जीको समर्थ जानकर उनको पत्र द्वारा सकटनिवारणार्थ आगरा पधारने की विनती की †। इस पत्र से वहा की सारी परिस्थिति से ज्ञात होकर जैन शासन की अवहेलना दूर कर रक्षा करने के लिये सूरिजी ने महान् साहस करके आगरे की ओर विहार किया। त्वरासे विहार करते हुए थोडे दिनो मे सूरिजी अपनी शिष्य-मडली के साथ आगरा पहुचे, और शाहीदरबार मे जाकर सम्राट से

---

पतिशाहि हुतउ जे जूठउ, पूज्य भाग बलइ अति तूठउ।
जाउ विचरउ देश हमारे, तुम्ह फिरता कोइ न वारइ ॥२७॥
धन २ खरतरगच्छराया, दर्शनिया दड छुडाया।
पूज्य सयश करि जगि छाया, फिरि सहरि मेडतइ आया ॥२८॥
[ युग-प्रधान-निर्वाण रास ]

अनुक्रमि श्रीगुरु विहरता सहि ए, आया पाटण माँहि।
चउमासो प्रभु तिहा करइ सहि ए, मन आणी उच्छाह ॥४॥
लेख आयउ आगरा थकी सहि ए, जाणी सगली वात।
साहि सलेम कोपइ चढइ सहि ए, कुमति बाध्या रात ॥५॥
चउमासउ करि पागुर्या सहि ए, करता देश विहार।
उग्रसेनपुर आविया सहि ए, वरत्या जय जय कार ॥६॥
श्री पातिसाह बोलाविया सहिए, जगम जुगह प्रधान।
धरम मरम कहि वूझव्यउ सहि ए, तुरत दियउ फरमान ॥७॥
जिन शासन उजवालियो सहि ए, शाह श्रीवत कुलचद।
साधु विहार मुगता किया सहि ए, खरतर पति जिणचन्द ॥८॥
[ लब्धिशेखर कृत गहुली ]

मिले। अपने पूज्य युगप्रधान गुरुको आये देखकर सम्राट जहांगीर अत्यन्त प्रमुदित हुए, उनके दर्शनमात्र से सम्राट का क्रोध शान्त हो गया और नम्रतापूर्वक वार्तालाप करने लगा।

"आपने वृद्धावस्थामें गुजरात से यहा तक पधारनेका कष्ट क्यो किया, सेवा फरमावें।" जहांगीरने कहा।

"सम्राट! तुम्हें आशीर्वाद देने के लिये हम यहा आये हैं।"

"यह मेरा अहोभाग्य है, आपको इतनी दूर से पधारने में शारीरिक कष्ट हुआ होगा, अत अभी जाकर विश्राम लें।"

"अभी विश्राम करनेका समय नहीं है। तुम्हारे फरमानसे जैनसंघ मे जो अशान्ति फैल रही है, उसे निवारणार्थ ही मेरा यहा आगमन हुआ है। एक व्यक्ति के दोष से सारा समाज दण्डनीय नहीं हो जाता। सब मनुष्य एक समान प्रकृतिवाले नहीं होते, बडो-बडो की भी भूल हो जाती है। अत हे सम्राट! विचार करो। तुमने जो साधु विहार बन्द किया है, उसे मुक्त कर दो।" सूरिजीने उद्देश्य स्पष्ट कर कहा।

"आपने जो कहा वह ठीक है, किन्तु मेरी समझ मे भुक्तभोगी होकर साधु बनना निरापद होता है।" सम्राटने अपना गन्तव्य प्रकट किया।

"सम्राट! चिरकाल से आत्मा इन्द्रियोके विषयो में आशक्त बनी हुई है। अत गृहस्थावासमे रहकर उन विषय-वासनाओ से विरक्त होने की भावना का उद्भूत होना बहुत कठिन है। क्योंकि आत्माको ये सदा से प्रिय हैं। अत विषय-वासना के साधनोको

पहले ही त्याग कर देना अच्छा है। ब्रह्मचर्य्य को जैन-दर्शन मे बहुत ही ऊचा स्थान दिया गया है। उसके पालन और रक्षाके हेतु नव कडी आज्ञाएँ शास्त्रकारोने बतला दी है, जिन मे सुखपूर्वक निर्विघ्नतया ब्रह्मचर्य्य व्रत स्थिर रख सके, वे इस प्रकार हैं —

( १ ) जहा स्त्री, पुरुष, पशु और नपुसक निवास करते हो, उस स्थान मे नहीं रहना।

( २ ) विषय विकारो की जागृति और अभिवृद्धि करनेवाली वार्ताएं तक न करना और न सुनना।

( ३ ) जहा स्त्री बैठी हो, उस स्थान व उस आसनपर दो घडी तक न बैठना।

( ४ ) दीवाल की ओट मे भी जहा स्त्री पुरुष काम-क्रीडा और प्रेम वार्ता करते हो, वहा न ठहरना और न उसे सुनना।

( ५ ) पूर्वावस्था के भुक्त भोगो को स्मरण तक न करना।

( ६ ) सरस स्निग्ध भोजन और कामोद्दीपक पदार्थों का उपभोग नहीं करना।

( ७ ) स्त्री-पुरुष किसी को भी सराग दृष्टि न देखना।

( ८ ) सर्वदा आवश्यकता से भी कम भोजन करना, जिमसे आलस्य और विकार उत्पन्न न हो।

( ९ ) शरीर को किसी भी प्रकार से शृङ्गार या शोभा न करना ताकि सराग दशा जागृत न हो।

अब तुम स्वय विचार कर देखो कि इन प्रतिज्ञाओ को निभाने वाला किम प्रकार आचारच्युत हो सकता है। हा! जो भ्रष्ट

हुए हैं वे इन नियमो को यथावत् न पालन करने के कारण ही। जैन शासन उन्हे किसी भी हालत मे उपादेय नहीं समझता और न सहानुभूति ही रखता है। अत समस्त साधुओ पर अश्रद्धा ला कर उन्हे कष्ट पहुचाना तुम्हारे जैसे विचारशील न्यायवान और प्रजा हितेच्छु सम्राट के लिये उचित नहीं कहा जा सकता।" सूरिजी ने सम्राट की युक्ति का निराकरण करते हुए कहा।

'अच्छा, मेरे राज्य मे जहा इच्छा हो, बिना रोक टोक के विचरें, किसी को कोई विघ्न नहीं होगा।"

"तो फिर शीघ्र ही गिरफ्तार किये हुए छोड दिये जाँय। और भविष्य के लिये अप्रतिबन्ध साधु विहार होने के लिये सर्वत्र शाही फरमान जाहिर कर दिये जॉय।"

"हा गुरुदेव! ऐसा ही होगा। आप निश्चिन्त रहिये।"

इस प्रकार वार्त्तालाप होनेके अनन्तर सूरिजी उपाश्रय मे पधारे। सम्राट के द्वारा फरमान जाहिर कर दिया गया। श्री सङ्घ के हर्ष का पारावार न रहा। सूरिजी ने सङ्घ के आग्रह से स० १६६९ का चातुर्मास वहीं किया। उपरोक्त घटना का वर्णन कविवर समयसुन्दरजी ने अपने छद इस प्रकार किया है —

*सुगुरु जिणचन्द्र सौभाग्य मसरौ लियो,*
*चिहु दिशै चन्द्र नामौ सवायौ।*
*जैन शासन जिके डोलतौ राखियौ,*
*साखियौ जगत सगले कहायौ॥ १॥*

एक दिन पातिशाह आगरै कोपियौ,
दर्शनी एक आचार चूकौ।
शहर थी दूरि काढौ सवे सेवडा,
मेवडा हाथ फुरमाण मूक्यो ॥ २ ॥
आगरै शहर नागौर अरु मेडतै,
महिम लाहोर गुजराति माहे।
देश दन्दोल सबलौ पड्यौ तिहा किणे,
तुरत ना पथिया तुरक वाहे ॥ ३ ॥
दर्शनी केई पर द्वीप में चढि गया,
केइ नासी गया कच्छ देशे।
केइ लाहोर केइ रह्या भूहि मा,
दर्शनी केई पाताल पैसे ॥ ४ ॥
तिण समय युगप्रधान जगि राजियौ,
श्री जिनचन्द्र तेजे सवायौ।
पूज्य अणगार पाटण थकी पागुर्या,
आगरै पातिश्या पास आयौ ॥ ५ ॥
तुरत गुरु राय नै पातशाह तेडिया,
देखि दीदार अति मान दीधा।

अजब की छाप फुरमाण करि आपिया,
केडला गुनहु सहु माफ कीधा ॥ ६ ॥
जैन शासनतणी टेक राखी खरी,
ताहरे आज कोई न तोले ।
खरतर गच्छ नै शोभ चाढी करी,
समयसुन्दर निरद साच बोले ॥ ७ ॥

सम्राट पर सूरिजी का कितना गहरा और जबरदस्त प्रभाव था यह इस घटना से भली भांति जाना जाता है। जैन शासन की अति प्रभावना करने के कारण आपश्री की "सवाई युगप्रधान" नाम से प्रसिद्धि हुई।*

कहा जाता है कि जब सूरिजी आगरा पधारे और सम्राट को युगप्रधान बड़े गुरु के पधारने के समाचार मिले, तब उन्होंने अपनी आज्ञाका भङ्ग न हो, इसलिये सूरिजी को राज-मार्ग से न पधार कर लोकोत्तर मार्ग से आने का कहलाया, तब शासन की प्रभावना के हेतु सूरिजी ने ऊनी कम्बल या लोबडी यमुना नदी में बिछा कर मन्त्र-शक्ति द्वारा उसी के ऊपर बैठे हुए पार होकर सम्राट से मिले थे। इस अद्भुत शक्ति को देख कर सम्राट अत्यन्त चकित हो गये।

---

* श्री साहि सलेम राज्ये साच ( तपा ) कृत जिनशासन मालिन्यत श्री साधु विहारो निषिद्ध साहिना तदावसरे श्री उग्रसेनपुरे गत्वा साहि प्रतिबोध्य च साधुना विहार स्थिरी कृत तदा लब्ध "सवाई युग-प्रधान" बडागुररिति विरुदो येन गुरुणा ।

[ तत्कालीन पट्टावली ]

एक दिन कोई विद्वान् भट्ट, जिसने काशी † के पण्डितो को विजय कर लिया था, जहागीर के दरबार मे आया और गर्वपूर्वक शास्त्रार्थ या वाद करने की उद्घोषणा करने लगा। तब सम्राटने अपने गुरु श्री जिनचन्द्रसूरिजी को उससे वाद करने मे समर्थ समझ कर उन्हे शास्त्रार्थ करने के लिये विनम्र निवेदन किया। सूरिजी ने अपनी असाधारण विद्वता से उसे परास्त करके प्रसिद्धि प्राप्त की। शास्त्रार्थ मे भट्ट को हराने से "युगप्रधान भट्टारक" पद की ख्याति प्राप्ति की। इस विषय का एक ( प्राचीन ) प्रसिद्ध कवित्त यहा लिखते हैं —

"मसूर पठान (?) गरब्ब कियौ भैया वाद वद् कोई पडित जागै।
शाहि सलेम बुलाय श्रीपूज्य कु मोहि भरोसौ चन्द्र न भागै॥
भट्ट हार गयो इक चोट शब्द की जीत भई यु जैन के तागै।
वाद जित्यउ जिणचन्द भट्टारक यु पतिशाहि दिल्लीपति आगै॥

सूरि-महाराज के आगरे मे चातुर्मास करने से सघ मे खूब धर्म-ध्यान होता रहा। उन्होने सम्राट जहागीरपर अलौकिक और अनुपम प्रभाव डाल कर जो स्तुत्य शासन-सेवा की वह शब्दो द्वारा वर्णन नहीं की जा सकती। यह प्रकरण पढने से पाठको को श्री जिनचन्द्रसूरिजी की अनुकरणीय शासन सेवा, अदम्य उत्साह, अटूट साहस, निर्मल तप सयम और धैर्य्य-गम्भीरादि गुणो का कुछ परिचय हुआ ही होगा।

† "जित काशी जद पामियउ, करि गौतम ज्यु सिद्धि वाधी रे ॥ ११ ॥
[ युगप्रधान निर्वाण रास ]

# बारहवां-प्रकरण

## निर्वाण



आगरे मे अद्वितीय शासन-प्रभावना करके सूरि-महाराज मेडता पधारे। वहा चोपडा गोत्रीय श्रेष्ठि आसकरण आदि अनेको धनवान और राज्यमान्य श्रावक सूरिजी के परम-भक्त थे। सूरि महाराज के पधारने से सघ मे अधिकाधिक धर्म ध्यान होने लगे।

सूरिजी का मेडता नगर मे आगमन सुन कर बीलाडे के सघ को अत्यन्त हर्ष हुआ। उन्होने एकत्र होकर सूरिजी को बीलाडा मे चातुर्मास करने के लिये आमन्त्रित करने का परामर्श किया। वे मात्र विचार करके ही नहीं रह गये, परन्तु तत्काल ही सघ के प्रतिष्ठित व्यक्ति जिनमे कटारिया गोत्र के श्रावक प्रधान थे, मिल कर मेडता आये। सूरि महाराज को वन्दना करने के अनन्तर अत्यन्त अनुनय विनय पूर्वक वहा चातुर्मास के निमित्त पधारने की नम्र विज्ञप्ति की। उनके आग्रह से सूरिमहाराज बीलाडा पधारे। उस समय आप के साथ वा० सुमति कल्लोल, वा० पुण्यप्रधान, प० मुनिवल्लभ, प० अमीपाल आदि साधु थे। स० १६७० का चातुर्मास वहीं किया।

---

* जेसलमेर से वा० विमलतिलक आदि ने मिती चत्र सुद १० को सूरि-

सूरि-महाराज के विराजने से वहा संघ मे अधिकाधिक धर्म ध्यान हुए। मुनिगण स्वाध्याय, ध्यान, सयम और तपश्चर्या करने मे विशेष रूप से तल्लीन हुए। धर्मिष्ठ श्रावकगण पौषध, प्रतिक्रमण, शास्त्र-श्रवण और द्रव्य का सद्व्यय करने मे खूब प्रवृत्ति-शील बने। पर्यूषण पर्वाधिराज के दिनो की तो बात ही क्या? सर्वत्र धर्म-भावना का श्रोत प्रवाहित हो चला, जिसका वर्णन करना लेखनशक्ति से बाहर है।

पर्यूषण पर्व सानन्द आराधन करने के पश्चात् सूरिजी ने ज्ञानोपयोग से अपना आयुष्य निकट जानकर शिष्य-वर्ग को विशेष रूप से शिक्षा देना प्रारम्भ किया—"तुम लोग जैन शासन की उन्नति करने के साथ-साथ आत्मोन्नति मे सदा कटिबद्ध रहना। गच्छ का भार आचार्य "जिनसिंहसूरि" निर्वाहेंगे, तुम लोग सदा तत्परता से उनकी आज्ञा का पालन करना। इत्यादि।

स्थानीय श्रावक, श्राविका को भी उनके उचित हित-शिक्षा देते हुए चतुर्विध सङ्घ से क्षमत-क्षामणा की। अन्य देश-देशान्तरो के सङ्घ को भी पत्र द्वारा धर्मलाभ, क्षमत-क्षामणा लिखवाये। तत्पश्चात् चौरासी लक्ष जीवा योनि को शुद्ध मन से क्षमत-क्षामणा कर

---

जीके प्रति एक पत्र दिया, जिसमे ये नाम लिखे हैं, वह सस्कृत पत्र इसी पुस्तकके परिशिष्टमें छपा है। उसमें जिनसिंहसूरिजी का नाम नहीं है, इससे ज्ञात होता है कि उस समय वे सूरिजी के साथ नहीं थे। पीछे चातुर्मास के समय गुरु महाराज के पास बोलाडा आये होगे।

पापस्थानकों की निन्दा करते हुए समाधि से अनशन ग्रहण कर लिया। चार प्रहर के अनशन को पालते हुए उत्कृष्ट धर्म ध्यान मे लीन हो कर अपने पौद्गलिक देह को विसर्जन कर मिती आश्विन कृष्णा २ के दिन स्वर्गधाम सिधारे।

वह जगत् की ज्योति सदा के लिये विलीन हो गई। दुर्दैव कराल काल ने ऐसे महापुरुषों को भी न छोड़ा। पुद्गल की नि सारता ने आज अपना स्पष्ट परिचय दे दिया, उस सुन्दर और पूज्य देह ने सर्वदा के लिये रूखा उत्तर दे दिया। समस्त देश मे विषाद और हाहाकार छा गया। सर्वत्र दिन होते हुए भी अन्धकार अनुभूत होने लगा। वह तेजमयी प्रभा सदा के लिये अदृश्य हो गई। वह दीप्त ज्ञानप्रदीप काल-वायु के उद्दड झकोरो से अन्धकार के अन्तस्थल मे जा छिपा। गुरु-विरह की दारुण ज्वाला लोगोके हृदय मे प्रज्वलित हो उठी, नेत्रों से वह ज्वाला अश्रुओं का रूप धारण कर झड़ी-सी उमड पडी। उस समय का दृश्य अति दयनीय और नेत्रो से न देखे जाने योग्य हो गया। सब लोग म्लान मुख होकर शोक-सागर मे डूबने लगे।

सूरिजी की अन्त्येष्ठि क्रिया करने के लिये स्थानीय सङ्घ ने सुन्दर विमान के सदृश मढी बनाई और शोकाकुल हृदय से शव को निर्मल गगोदक से प्रक्षालन कर चन्दनादि का विलेपन किया। कृष्णागरके सुगन्धित धूपसे अर्चित करते हुए उसे विमानमे रखा। वाजित्रादिके साथ शवको उत्सव पूर्वक ग्रामके मध्य २ होकर ले जाने लगे। मार्ग मे गुरु दर्शनार्थ लोगो की भीड से विस्तृत

रास्ते भी संकुचित मालूम होने लगे। क्रमसे बाणगङ्गाका तट निकट आनेपर पवित्र स्थान में सूरिजी का शव रखा गया। चन्दन की चिता सजाकर घृतादिसे देहका अग्नि संस्कार कर दिया गया वह पुद्गल पुञ्ज सबके देखते २ क्षारके रूपमें अवतीर्ण हो गया सूरिजीके अतिशय से उनकी मुहपत्ति (मुखवस्त्रिका) नहीं जली* लोगोंने इस प्रकट चमत्कारको आश्चर्य सहित देखा। श्री शान्तिनाथ भगवानका नाम स्मरण करते हुए संघ वापिस स्वस्थान आया।

लोग अपने विरह दुःखको इस प्रकार प्रकट करने लगे — 'हा गुरुदेव! आप कहा चले गये? हमसे ऐसा क्या अपराध हुआ। अब हमें किसका आधार है? जैन संघकी विपत्ति अवहेलना आदि को कौन मिटावेगा। हे ज्ञाननिधान! आपके बिना अब हमारा संशय कौन दूर करेगा? हे युगप्रधान! अब हम गुरुजी कहकर किसे पुकारेंगे।" इत्यादि ×।

* देखो निर्वाण रास और जयरंग कृत पट्टावलीमें भी इस प्रकार लिखा है —

वैश्वानर केहनउ सगउ, पण अतिशय संजोग।
नवि दाझो पूज्य मुहपति, देखइ सगलो लोग॥
(निर्वाण रास)

येषां विशिष्टातिशयेन देहे दग्धेप्यधाक्षीन्नहि वस्त्रवासः।
प्रोद्यत् प्रभाव प्रथिता जयन्तु युगप्रधान जिनचन्द्र पूज्याः॥ २॥

× यहाँ तक का सारा वृतान्त कवि समयप्रमोद कृत "युगप्रधान निर्वाण रास" से लिया गया है। यह रास हमारी ओर से प्रकाशित "ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह" में देखना चाहिये।

जिस स्थान पर सूरिजी का अग्नि सस्कार हुआ वहा पर बीलाडा के सघ ने उनके स्मारक रूपमें एक सुन्दर स्तूप बनवाया और उसमे सूरिजी की चरण पादुकाए स्थापित कराईं, जो अद्या-वधि बाणगगा के तट पर विद्यमान है। जिसका लेख इस प्रकार है —

"संवत् १६७० मगसर सुदि १० गुरुवासरे सवाई युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि चरणपादुके कारापित श्री बीलाडा श्री सघेन प्र० श्री जिनसिंह सूरिभि ।"

और भी अनेक स्थानो मे आपके चरण स्थापित किये गये थे, बीकानेरमें शहरके बाहर एक स्थान मे आपकी चरण पादुकाए स्थापित हैं जिसे आजकल "रल दादाजी" कहते हैं। अनेको भक्त लोग गुरु दर्शनार्थ नित्य, (विशेषतया सोमवारको) जाया करते हैं। दादाजी श्री जिनचन्द्रसूरिजी भक्तोंके मन वाछित पूर्ण करनेवाले हैं, अनेक चमत्कार भी सुननेमे आते हैं। वहा का पादुका लेख यह है —

"स० १६७३ वर्षे वैशाख मासे अक्षय तृतीयाया सोमवारे श्री खरतरगच्छे श्रीजिनमाणिक्यसूरि पट्टालकारहार युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरिणा पादुके श्री विक्रमनगर वास्तव्य समस्त श्रीसघेन कारिते शुभम् ।"

बीकानेरके नाहटोंकी गवाडमे श्री ऋषभदेव भगवान के मन्दिर मे मूल गम्भारे के दाहिनी तरफ सूरिजी की पाषाण-निर्मित अति सुन्दर मूर्ति है जिसका लेख इस प्रकार है—

"सं० १६८६ वर्षे चैत्र वदि ४ दिने श्री खरतरगच्छाधीश्वर युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरिणा प्रतिमा का० जयमा श्रा० प्र० श्री युग-प्रधान श्री जिनराजसूरिराजै ।"

जैसलमेरमे भी शहरके उत्तरकी ओर १ मील पर देदानसर नामक तालावके पास श्री जिनकुशल सूरिजी का स्थान है वहा भी आपकी पादुकाए हैं जिसका लेख इसप्रकार है —

स० १६७२ वर्षे वैशाख सुदि ६ सोमवारे भट्टारक सवाइ युगप्रधान श्री श्री श्री श्री । श्री जिनचन्द्रसुरि पादुका प्रतिष्ठिता ।

(जैन लेख संग्रह भा० ३ By P C Nahar)

उसी दिनका लेख दादाजी के स्थानके पूर्व की तरफ स्थम्भके आले मे निम्नोक्त लेख छ पंक्तियो मे खुदा है —

सवत् १६७२ वर्षे वैसाख सुदि ६ दिने सोमवारे श्री जैसलमेर वास्तव्य राउल श्री कल्याणदासजो विजयराज्ये कुवर श्री मनोहर दासजी। सवाई युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरीश्वर पादुके कारित युगप्रधान भट्टारक श्री जिनसिंहसूरि ॥ श्री खरतर सघेन तैव सर्वदा श्री सघस्य समुन्नति सुख श्रेयो वृद्धि । वाचयेतामिति ॥ प० उदयसिंह लिपि कृतम् ॥ श्री श्री श्री ॥

(जैन लेख संग्रह भा० ३ By P C Nahar)

स्तम्भ तीर्थ मे भी सूरिजीके चरण पादुके विद्यमान है जिसका लेख इस प्रकार है —

"स० १६७७ (?) वर्षे माघ वदि १० दिने गुरुवारे युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरीणा पादुके कारित खरतरगच्छे ओस वशे

" ते स० जसराज भार्या जसल दे पुत्र मं० माडण केन प्रति० युगप्रधान श्री जिनसिंह सूरिवरै ।"

( जैन धातु प्रतिमा लेख संग्रह भाग २ लेखाक ८८२ )

इन स्थानोके अतिरिक्त मुलतान, अहमदाबाद, बाहडमेर, पाटण, आदि स्थानोमे भी आपश्री को चरण पादुकाएं और मूर्तियें प्रतिष्ठित होने का उल्लेख पाया जाता है* ।

सूरिजी की स्वर्ग-तिथि मिती आश्विन कृष्णा २ ( गुजराती भादवा वदि २ ) को अब भी बम्बई भाईखला, सूरत, भरुच, पाटण आदि नगरोमे 'गुरु दूज' के नामसे दादा साहबके स्थान पर मेला होता है ।

---

* जससमुद्र कृत गीत में —

श्री जिनचन्द्र सूरीश्वरू, खरतर गच्छ गणधार मेरे सुगवर ।
थुम्भ सकल थिर थापना, विक्रमपुर सिणगार मेर सुगवर ॥ १ ॥

कुंभकरण कृत गीतमें —

मूलथक (मुल्तान) में थुंभ महानो, परतउ सहु मउ पूरे ।
कुम्भकरण जपइ कर जोडी, दुष्मण करि सहुदूर ॥ ३ ॥

हेममन्दिर कृत गुरु गीत में —

जिहो मूल थम्भ अति सुन्दरू, दादा चोलाडे थिर ठाम ।
जीहो राजनगर विक्रमपुरे, दादा पूर वछित काम ॥ ६ ॥ स० ॥
जीहो बाहडमेरइ दीपतउ, दादा जेसाणइ मुल्तान ।
जीहो अणहिल्लपुर खभाइतइ, — ॥ ७ ॥ स० ॥

यद्यपि सूरिजी का नश्वर पौद्गलिक देह आज हमारे प्रत्यक्ष नहीं है तथापि उनकी मूर्तिमान् अमरआत्मा और अनुकरणीय गुण समूह आज भी हमे आदर्श मार्ग सुझाने को परम साधन-भूत हैं। उनके पावन कृत्य और प्रशस्त कीर्ति की गौरव-गाथा सारे विश्व मे दीप्तमान आलोककी भाँति चिरस्थायी रहेगी।

कविवर समयसुन्दरजी क्या ही मार्मिक शब्दो मे कहते हैं —

*मुयइ कहइ ते मूढ नर, जीवइ जिनचन्द सूरि।*
*जग जपइ जस जेहनो, पुहवी कीरति पडूर॥ ८॥*
*चतुर्विध सघ चीतारस्यइ, जा जीविस्यइ ता सीम।*
*वीसारया किम वीसरइ, हो निर्मल तप जप नीम॥९॥*



सैंकड़ो नवीन जिन-प्रासाद और जिन-बिम्बों की प्रतिष्ठाए हुईं। धार्मिक सप्त-क्षेत्रोंमे करोडो रुपये वितरण किये गए। संक्षिप्त मे इतना ही कहना पर्य्याप्त होगा कि उनके चारित्र के तेजोमय प्रताप से ही सम्राट अकबर और जहाँगीर आदि मुग्ध हो गए और कठिन से कठिन कार्य भी सुगमता से सफल होने लगे।

कहा जाता है कि सूरिजी का आज्ञानुयायी साधु-समुदाय २००० से भी अधिक संख्या मे था ×। आपने इतने विपुल प्रमाण में साधु साध्वियोंको दीक्षित किये थे कि उतनी संख्यामें बहुत ही कम आचार्यों ने दीक्षित किये होंगे। साधु बनने के पश्चात् पूर्वावस्थाका नाम परिवर्त्तन कर खरतर गच्छ मे जिन ८४ नन्दियों * मे से नाम स्थापना करनेकी प्रणाली है उन चौरासी में से ४४ नन्दियों मे नाम स्थापना करने का सौभाग्य सूरि-महाराज को प्राप्त हुआ था। प्रत्येक नन्दि में २०।२५ साधुओं के दीक्षित होने का अनुमान किया जाय तो भी सूरिजी के हस्त-दीक्षित और उपसम्पदा ग्रहित साधुओं की संख्या लगभग एक हजार से ऊपर ही होती है।

यह बात केवल कल्पना ही नहीं, किन्तु तथ्य के बहुत सन्निकट है क्योंकि क्षमाकल्याणजी अपनी पट्टावली मे आपके ९५ शिष्य होने का उल्लेख करते हैं। हमने भी बहुतसी खोज शोध करके

---

×'श्रीजिनदत्तसूरि ज्ञान भण्डार' बम्बई से प्रकाशित 'यु० जिनचन्द्रसूरि जीवन चरित्र' पृ० ११ मे है।

* ४४ नन्दिके नाम परिशिष्ट में 'विहार पत्र' के साथ देखिये। इसके विषय में कभी स्वतन्त्र लेख में आलोचना करेंगे।

उनमें से २५-३० शिष्यों के नाम एकत्र किये हैं, जिनका संक्षिप्त परिचय आगे लिखा जायगा। प्रत्येक शिष्य के अगर कमसे कम पांच-पांच शिष्य प्रशिष्य भी अनुमानित † किये जाय तो ५०० के लगभग इनकी संख्या भी हो जाती है। तो उससमय और भी कई शाखाओं के जैसे —जिनदत्तसूरि-संतानीय, जिनकुशलसूरि—क्षेमकीर्ति-शाखा, सागरचन्द्रसूरि-शाखा, जिनभद्रसूरि-शाखा, जिनहंससूरि-शाखा और जिनमाणिक्यसूरि-शाखा× के विद्वान,

† सूरिजी के समय में उनके प्रशिष्यों के भी प्रशिष्य विद्यमान होने के प्रमाण मिलते हैं। जैसे—उ० श्रीसमयसुन्दरजी आपके प्रशिष्य थे और उनके शिष्य वादी हर्षनन्दनजी के शिष्य जयकीर्तिजी आदि भी सूरिजी के ही दीक्षित थे। सूरिजी के कई शिष्यों के शिष्य प्रशिष्यों आदि की संख्या १०-१५ तक की भी मिली है तथापि हमने साधारणतया गढ में केवल ५ ही लिखी है।

× एक प्राचीन पट्टावली में लिखा है कि इन्होंने एक ही नन्दि में ६४ साधुओं को दीक्षा दी थी और १२ मुनियों को "उपाध्याय" पद प्रदान किया था। इसी ग्रंथ के २३ वें पेज में आपके २४ शिष्य होने का उल्लेख कर चुके हैं उनमें से हमें ६ नाम उपलब्ध भी हुए हैं —

( १ ) कविकनक —मेघ कुमार चोढालिया कर्ता।

( २ ) विनयसोम —इनका "फलोधी पार्श्व स्त०" गा० १७ का हमारे संग्रह में है।

( ३ ) वा० विनयसमुद्र —इनका "ऋषभ स्त०" गा० २२ का हमारे संग्रह में है। इनके वा० हर्षशील (विशाल), गुणरत्न आदि कई शिष्य थे। हर्ष विशालजीके शिष्य उ० ज्ञानसमुद्रके शिष्य वा० ज्ञानराजके शि० लब्धोदयजी अच्छे कवि हुए हैं। इनकी "पद्मिनी चरित्र चोपई" (सं० १७०७चैत्री

उपाध्याय और साधु सैंकड़ो थे उनके शिष्य प्रशिष्य भी सूरिजी ने

पूनम), गुणावली चौ० ( उदयपुर ) उपलब्ध है, इस चौपइ में आपके इससे पूर्व अन्य ८ चौपईयें रचने का उल्लेख है । गुणरत्नजी ने स० १६३० में श्री जिनचन्द्रसूरिजी के आदेश से संयति सन्धि (पत्र ४ स्वामी नरोत्तमदास जी एम० ए० के संग्रह में) बनाई । इनकी विशिष्ट कृति 'नमस्कार प्रथम पद अर्था'' अनेकार्थरत्न मञ्जूषा'' नामक ग्रन्थमें छपी है । इनके शिष्य वा० रत्नविशाल शि० त्रिभुवनसेन शि० मतिहंस शि० महिमोदय जी भी अच्छे कवि हुए हैं, इनके श्रीपाल रास ( स० १७२२ मिगसर तेरस जहानाबाद ), गणित साठिसो, जन्मपत्री पद्धति ( पत्र ११८ श्रीपूज्यजी के संग्रह में ), स० १७२२ ज्योतिष रत्नाकर, पट-पंचा सखावृत्तिबाला० (श्रीपूज्यजी सं०) आदि ग्रन्थ प्राप्त हैं । त्रिभुवनसेनके गुरु भ्राता लब्धि विजय इनके विद्यागुरु थे ।

( ४ ) भुवनधीर —हमारे संग्रह की आदिनाथ स्तोत्र की ऐतिह प्रशस्ति से ज्ञात होता है कि ये भी श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी के शिष्य थे ।

( ५ ) वा० कल्याणधीर —ये पारख गोत्रीय, अच्छे विद्वान थे। इनके शिष्य ( १ ) धर्मरत्न कृत जयविजय चौपई ( सं० १६४१ विजया दशमी, आगरा ) उपलब्ध है। ( २ ) भणसाली गोत्रीय वा० कल्याणलाभजी थे इनके शिष्य ( A ) कमलकीर्ति ने जिनवल्लभसूरिजी कृत वीर चारित्र बाला० ( स० १६९८ श्रा० कृ० ९ जेसलमेर में कृत और लिखित प्रति बाबू अमरचन्दजी बोथरा नाल्नगर, के संग्रह में है ), महीपाल चरित्र ( स० १६७६ विजयादसमी हाजीखानदेरा—इनके शिष्य चारित्रलाभ लिखित, जयचन्दजी के भण्डार में है ) और कल्पसूत्र टबार्थ पत्र ९९ ( स० १७०१ मरोट में शि० चारित्रलाभ पठनार्थ लि० जयचन्दजी के भण्डार में है ) । इनके शि० समतिलाभ, शि० सुमतिमंदिर, शि० जयनंदन शि० लब्धि सागर कृत ध्वजभुजंग कुमार चौ ( स० १७७० आश्विन वदी ९ चूरु) उपलब्ध है (B) कुशलधीरजी एक उत्तम कवि हुए हैं, इनके रचित ( १ ) भोज चौपई ( स० १७२९ माघ वदि १३ सोजत, शि० धर्मसागर

दीक्षित किये थे — अतएव उन सब की संख्या भी कम से कम उतनी ही मान ली जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

सूरिजी की दीक्षित साध्वियों के नाम की 'नन्दियें' अद्यावधि हमें उपलब्ध नहीं हैं अतः हम उनकी संख्या का ठीक ठीक निर्णय नहीं कर सकते किन्तु साधु-संघ से साध्वियों की संख्या भी कम नहीं कही जा सकती। इस आंकडे से अगर संख्या की कुछ न्यू-

आग्रहात्) (२) लीलावती रास (सं० १७२८ सोजत) (३) पृथ्वीराज कृत वेलि बाला० (सं० १६९६ विजया दशमी शिष्य भावसिंह के आग्रह से, माहरजी के संग्रहमें गु० नं० ९०)। (४) उद्यम कर्म संवाद और अनेक स्तवनादि भी उपलब्ध है। (C) कनकविमल—इनका नाम वेलि बाला० की प्रशस्ति में है। (९) धर्मप्रमोद—इनकी कृति "महा-शतक श्रावक सन्धि" हमारे संग्रहमें है और चैत्यवन्दन-भाष्य वृत्ति (तत्त्वार्थ दीपिका सं० १६६४ पो० ब० १०) बीकानेर ज्ञान-भण्डार में है।

(६) क्षेमरंग —इनके लिखित बन्धस्वामित्व-स्तवावचूरि श्रीपूज्यजी के संग्रह में है।

श्रीजिनमाणिक्यसूरि शाखा में और भी कतिपय विद्वान और कवि हुए हैं। सं० १७०० में जिनरंगसूरिजी से गच्छभेद हुआ उस समय मे कुशलधीरजी आदि के अतिरिक्त जिनमाणिक्यसूरिजी का शिष्य परिवार उनका आज्ञानुगामी हो गया था।

* 'क्रियोद्धार नियमपत्र' से ज्ञात होता है कि दीक्षा देने का अधिकार गच्छनायक को ही था यदि अन्य दीक्षित करते तो भी उनकी आज्ञा से, और खासकर बडी दीक्षा तो सूरिजी ही देते थे। जिनसिंहसूरिजी दीक्षित राजसमुद्रजी और सिद्धसेनजी को बडी दीक्षा भी श्रीजिनचन्द्रसूरिजी ने दी थी।

नता भी रही हो तो भी पूर्व दीक्षित आज्ञानुवर्ती साधु-साध्वियों की संख्या मिला देने से कुल २००० से ऊपर ही सिद्ध होती है।

'विहार पत्र' के साथ जिन ४४ नन्दियों के नाम है वे नाम भी अनुक्रम से लिखे गये हैं, यह एक महत्व की बात है। इससे उस समय के सारे विद्वानों के दीक्षा-समय का निर्णय करने में सुगमता और सहायता मिलती है, अगर इसके साथ संवतानुक्रम रहता तो सोने में सुगन्ध का सा काम होता, अस्तु।

हम इस प्रकरणमें नन्दि-अनुक्रम के अनुसार ही सूरिजी के शिष्य समुदाय का संक्षिप्त परिचय देंगे।

**(१) सकलचन्द्र गणि**—आप रीहड गोत्रीय, सूरिजी के प्रथम शिष्य थे। आगरे से दिये हुए सं० १६२८ के पत्र में, जो कि इसी ग्रथके पृ० ५३ में छपा है, आपका नाम है। आपके रचित एक गहूली गा०७ † के अतिरिक्त अभी तक दूसरी कोई कृति नहीं मिली। आपके चरणपादुके बीकानेर से ४ कोश "नाल" नामक ग्राम में सूरिजी के प्रतिष्ठित विद्यमान हैं जिसका लेख इस प्रकार है —

" वर्षे ... सुदि ३ दिने शनै सिद्धि योगे श्रीजिनचन्दसूरि शिष्यमुख्य पं० सकल चरणपादुका

---

† स० १९८६ में जब रतलाम से श्रो० नथमलजी गादिया परमपूज्य आचार्य श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरिजी के दर्शनार्थ बीकानेर आये थे तब उनकी धर्म-पत्नी ने व्याख्यान के समय यह गहूली गाई थी, हमने वही संग्रह कर ली है, इसकी हस्तलिखित प्रति हमें नहीं मिली।

श्रीखरतरगच्छाधीश्वर युगप्रधान प्रभुश्री "श्रीजिनचन्द्रसूरिभिः प्रतिष्ठितं हड जयवत लूणाभ्या कारिते ॥"

स्तूप के आले का मुख सकीर्ण होने से यह लेख बहुत प्रयत्न करने पर भी सपूर्ण नहीं पढ सके इससे इनका स्वर्गवास का सवत् निर्णय न हो सका।

प्रख्यात कविश्रेष्ठ महोपाध्याय *समयसुन्दरजी* आपके ही शिष्यरत्न थे। उनका जन्म साचौर वास्तव्य पोरवाड शाह रूपसी की भार्या लीलादेवी की कुक्षि से हुआ था। लघुवय मे आपने सूरिजी के पास चारित्र ग्रहण किया। इनके विद्यागुरु वा० महिमराजजी और वा० समयराजजी थे। आपकी विद्वत्ताकी प्रतिभा बहुत बढी चढी थी। स० १६४९ मे सूरिजीके साथ आप भी लाहौर पधारे थे। वहा अकबर की सभा मे "अष्टलक्षी" जैसा विद्वत्तापूर्ण ग्रथ सुनाकर मिती फाल्गुन शुक्ला २ को वाचक पद प्राप्त करने का उल्लेख हम इसी पुस्तक के आठवे प्रकरणमे कर चुके हैं। सिन्धु देशमे विहार करके मखनूमशेख को प्रतिबोध देकर पाचनदी के जलचर जीवो और विशेषतया गायो की रक्षाका प्रशसनीय कार्य किया था। जेसलमेर मे रावल भीमजी को उपदेश देकर साडा जीवो को साँनोसे मारते हुए छुडाया था। मण्डोवर व मेडताधिपति को रजित करके शासन शोभा बढाई थी। स० १६७१ मे जिनसिंहसूरिजी ने 'लवेरे" मे आपको उपाध्याय पद दिया था। स० १६८७।८८ मे दुष्काल के कारण साधु-धर्म मे किञ्चित् शिथिलता आ गयी थी उसका परित्याग करते हुए स० १६९१ मे क्रियोद्धार किया।

आपने हजारो स्तवन सज्ञाय और सैकडों ग्रथ रच कर साहित्य की अनमोल सेवा की थी। साहित्य-ससार मे इनका नाम सदा स्वर्णाक्षरोसे अङ्कित रहेगा। आपका विस्तृत जीवन चरित्र भविष्य में हम आपकी कृतियो के साथ प्रकाशित करेंगे अत यहा विशेष नहीं लिखा गया है। सं० १७०२ मे चैत्र शुक्ला १३ को अहमदाबाद मे आप स्वर्ग सिधारे।

सवत् अनुक्रम से आपकी कृतियो की सूची इस प्रकार है :—

"सं० १६४१ भावशतक (खभात), स० १६४६ लाहौर में अष्ट-लक्षी (अर्थ-रत्नावली), सं० १६५१ जिनकुशलसूरि-अष्टक और २४ जिन २४ गुरु नाम गर्भित पार्श्वस्तवन, सं० १६५२ विजयदशमी खभातमें जिनचन्द्रसूरि गीत, सं० १६५६ अक्षयतृतीया जेसलमेर मे २७ राग गर्भित स्तवन, स० १६५७ चैत्रवदी ४ आबूतीर्थयात्रा स्तवन, स० १६५८ चैत्री पूर्णिमा शत्रुजय यात्रा स्तवन, और विजय-दशमी अहमदाबाद में सघपति सोमजी अभ्यर्थना से चौवीसी और इसी संवत मे अष्टापद स्तवन, सं० १६५६ विजयदशमी खभात मे शाबप्रद्युम्न चौपइ, स० १६६१ चैत्र वदी ५ नागोर मे पार्श्वनाथ स्तवन, स० १६६२ सागानेरमे दानादि चौढालिया, इसी संवतके माघ महीने मे घंघाणी पद्मप्रभु स्तवन, स १६६३(४?) रूपकमाला चूर्णि (वृति जे० भ० सू०)स० १६६४ फाल्गुन-आगरामे करकंडु प्रत्येक बुद्ध रास, चैत्र वदी १३ को दुमुह प्रत्येक बुद्ध रास, जंबू रास (जेसल०भ०)और नमि प्रत्ये० रास,स० १६६५ ज्येष्ठ शुक्ल १५को नग्गइ प्रत्ये० रास,इसी संवत् मे चैत्र शुक्ल १० अमरसर मे चातुर्मासिक व्याख्यान पद्धति,

स० १६६६ वीरमपुरमें कालिकाचार्यकथा, स० १६६७ मि० सु० १० मरोट मे पोपधविधि स्तवन, इसी सवत् मे उच्चनगर मे श्रावकाराधना, स० १६६८ मुलतान में मृगावतीरास और माघ शुक्ल ६ को यहा ही कर्म-छत्तीसी, स० १६६६ सिद्धपुर मे पुण्यछत्तीसी, यहा ही समाचारीशतक नामक विशाल ग्रथ रचना प्रारम्भ किया, स० १६६६ (?) शील छत्तीसी, स० १६७० आसोज अहमदावाद मे नववाड शील सझाय, सं० १६७१ आबू स्तवन, स० १६७२ मेडता, समाचारी शतक की समाप्ति, इसी समय ही सिंहलसुत प्रियमेलक रास बनाया, इसी सवतमें पोपदशमी को यहा पर ही विशेपशतक, स० १६७२(३?) भादवा मे पुण्यसारचौपई, स० १६७३ वसत मेडतामें ही नलदमयंती चौपइ और कार्तिक शुद्ध ५ को गाथालक्षण, सवत १६७४ में भी यहीं विचारशतक, स० १६७६ मिगसर राणकपुर यात्रा स्तवन,-(स० १६७७ ज्येष्ठ वदी ५ प्रतिष्ठासमय मे मेडते में थे देखो 'जैनलेख सग्रह' लेख ङ्क ४४३) स० १६७७ माह महीना साचोरमें महावीर स्तवन, यहीं सीताराम चौ० की १ ढाल, (स० १६७६ भादवा वदि ११ गुर्वावली पत्र १ स्वय लिखित हमारे संग्रहमें) स० १६८१ नभ मास जैसलमेर मे गणधरवसही स्तवन, इसी संवत में यहीं वल्कलचीरीरास और मौनएकादशी स्तवन, स० १६८१ कार्तिक शुद्धा १५ को लोद्रवपुर यात्रा स्तवन, स० १६८२ श्रावण नागोरमे शत्रुजयरास, इसी वर्ष तिमरीपुर मे वस्तुपाल-तेजपाल रास, सं० १६८३ मिगसर बीकानेरमें आदिनाथ स्तवन, सवत् १६८३ (८१-८६ पाठान्तर) यहा पर ही श्रावक १२ व्रत कुलक, स० १६८४ श्रावण लूणकरणसर मे दुरियर

वृत्ति, इसी सवत मे यहीं सतोपछत्तीसी और कल्पसूत्र पर कल्पलता नामक वृत्तिका प्रारम्भ, सं० १६८५ फाल्गुनमे यहीं विशेपसग्रह, इसी सवत् मे विसंवादशतक और बारह व्रत रास ( जे० भ० सू० ) स० १६८५ रिणी मे 'यति आराधना' और यहीं कल्पलतावृत्ति सपूर्ण की, स० १६८६ गाथासहस्री, स० १६८७ पाटणमे जयतिहुअण-वृत्ति, इसी सवत् मे भक्तामर सुबोधनी वृत्ति, यहीं विशेपशतक लेखन समय दुष्काल वर्णन श्लोक, स० १६८८ अहमदाबाद मे दुष्कालवर्णन (गा० ३६) यहीं कार्तिक मास नवतत्त्वशब्दार्थ वृति, सं० १६८६ अहमदाबाद मे ही स्थूलिभद्र सझाय और राजधानी मे दु खित गुरु वचनम्, स० १६६० खम्भातमे सवैयाछत्तीसी, स० १६६१मे यहीं पर दशवैकालिक सूत्र वृत्ति, काती वदी ३ थावच्चा चौ०, दिवाली को ४७ दोप सझाय, सं० १६६२ माधव महीनेमे यहीं रघुवश वृति, सं० १६९३ ज्येष्ठ मे अहमदाबाद मे सदेहदोलावली पर्याय, स० १६६४ दिवाली जालोर मे वृतरत्नाकरवृति, यहां चौमासे में क्षुल्लककुमार रास, स० १६६५ जालोरमे ही चम्पकश्रेष्टि चौपइ, सप्तस्मरण वृति (सुखबोधिका), स० १६६५ फाल्गुण शुक्ला १५ को प्रल्हादनपुर में कल्याणमंदिर वृत्ति, आकेठ मे गौतमपृच्छाचौपइ, स० १६६६ नभमास वदि अहमदाबाद मे दण्डकवृत्ति, आसोजमे धनदत्त चौपई, सं० १६६७ चैत्र मे वहीं साधुवदना, सं० १६६८ श्रावण शुक्ल ५ को पुञ्जरत्न ऋपि रास इसी संवत मे वहीं आलोयण छतीसी, स० १७०० माह मासमें वहा द्रौपदीचौपइ की वृद्धावस्था होने पर भी रचना की। वहीं पर आपका स्वर्गवास हुआ।

विना संवत्‌की वडी २ और उल्लेखनीय कृतिया निम्नोक्त हैं —

(१) समाचारीशतक (२) सीतारामचौपड (३) कल्पलता (इनका उल्लेख उपरोक्त नोध मे आ चुका है), (४) सारस्वत-रहस्य (५) मानिट धातु (६) खरतरगच्छ पट्टावली (७) विमलयमल स्तुति वृत्ति (८) अल्पाबहुत्वगर्भितस्तव स्वोपज्ञटीका (९) ऋषभभक्तामर (१०) द्रौपदी सहरण (११) महावीर २७ भव, (१२) षडावश्यक बालावबोध (१३) प्रश्नोत्तर पत्र (विचार जे० भ० सू०),(१४) वाग्भट्टालकार वृत्ति (१५) भोजनविच्छत्ती, इत्यादि । छोटे बडे स्तवन सज्झाय अष्टक आदि मिलाकर सैकडो की सख्या मे हमारे सग्रहमे हैं जिन्हें यथा-समय प्रकाशित करेंगे ।

उ० समयसुन्दरजी के अनेको विद्वान शिष्य थे जिनका परिचय कविवर के जीवनचरित्र मे दिया जायगा। यहा मात्र उनके उद्भट विद्वान शिष्य वादी हर्षनदनजी का कुछ परिचय दिया जाता है ।

वादी हर्षनदनजी प्रकाण्ड विद्वान थे इनके विद्वता की प्रशसा कविवर भी अपनी कल्पलता-वृत्ति आदि मे करते हैं। न्याय और व्याकरणके विषय मे तो आपकी विद्वता विशेष उल्लेखनीय हैं। "चिन्तामणि महाभाष्य" जैसे महान् उत्कृष्ट ग्रथोको आपने अध्ययन किए थे। इनके बनाये हुए १ मध्यान्ह व्याख्या० पद्धति (स० १६७३ पाटण) २ ऋषिमडल वृत्ति ४ खण्ड (स० १७०५ वीकानेर)३ स्थानाग गाथागत वृत्ति ( स० १७०५ वा० सुमतिकल्लोल के साथ ) लींबडी भ०, ४ उत्तराध्ययन वृत्ति स० १७११ वीकानेर ज्ञान० ) ५ आदिनाथ-व्याख्यान ६ आचारदिनकरप्रशस्ति ७ शत्रुजय

यात्रा परिपाटी स्तवन सं० १६७१, तथा गौडीस्त० १६८३ एव अन्य स्तवन गहुलिया इत्यादि उपलब्ध हैं।

(२) **नयविलासः**—इनका नाम भी आगरे से दिये हुए पत्र मे आता है। इनका बनाया हुआ लोकनाल-बालावबोध ( सं० १६५४ लिखित ) श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरि ज्ञान-भंडार, बीकानेर मे है।

(३) **ज्ञानविलासः**—आपके शिष्य समयप्रमोदजी कृत (१) जिनचन्द्रसूरि निर्वाण रास (२) चौपर्वी चौपई ( सं० १६७३ जूठा ग्रामे पत्र १४ स्वय लिखित) बीकानेर ज्ञान भण्डार मे है, (३) अभयदेवसूरि कृत साहम्मीकुलक टबा ( स० १६६१ फा० कृ० ७ वीरम पुरे कृत व लिखित ), (४) जिनचन्द्रसूरिजी गीत ( सं० १६४६ ) इत्यादि, छोटी मोटी कई कृतिया उपलब्ध है।

हमारे सग्रहस्थ भगवती सूत्र की प्रशस्ति ( स० १६७६ ) से ज्ञात होता है कि ज्ञानविलासजी के लब्धिशेखर, ज्ञानविमल, नयनकलस आदि और भी कई शिष्य थे।

(४) **हर्षविमलः**—इनका नाम स० १६२८ के आगरे वाले पत्र मे आता है।

इनके शिष्य श्रीसुन्दरजी थे जिनका बनाया हुआ अगडदत्त प्रबन्ध पत्र ६ हमारे संग्रह मे है और छोटी-कृतिया भी कई उपलब्ध हैं।स० १६६१ मि० व० ५ के लेख में भी आपका नाम आता है ( जैन धातु प्रतिमा लेख सग्रह भा० २।

(५) **कल्याणकमलः**—इनका नाम भी उपरोक्त पत्र मे आता है। इनका (१) "जिनप्रभसूरि कृत षट्भाषा स्त० अवचूरि" ( पत्र २

हमारे संग्रह मे है )। (२) सनत्कुमार चौपई तथा नेमिनाथ स्त०, ऋषभ स्त० आदि भी उपलब्ध हैं।

**(६) वा० तिलककमल:**—इनके शिष्य वा० पद्महेम (गोलच्छा गोत्रीय) थे। जिन्होने वाडीपार्श्वनाथ ( पाटण ), और जिनदत्तसूरि स्तूप ( मुलतान ) की प्रतिष्ठा की। उनके शिष्य (१) वा० दानराज ( *गोलच्छा गोत्रीय* ) (२) *वा० निलयसुन्दर* (३) *वा० नेमसुन्दर* (४) प० आनन्दवर्द्धन (५) हर्षराज आदि बहुतसे शिष्य हुए। वा० दानराजजी के शिष्य वा० हीरकीर्ति—गोलच्छा गोत्रीय थे, इनका स्वर्गवास सं० १७२६ आ० शु० १४ को जोधपुर मे हुआ। इनके शिष्य (A) वा० राजहर्ष (B) मतिहर्ष थे। (A) वा० राजहर्षके शिष्य *वा० राजलाभजी* अच्छे कवि हुए हैं, *इनकी धन्ना-शालिभद्र* चौपई ( स० १७२६ आ० शु० ५ वणाड, बीकानेर ज्ञान-भण्डार ) भद्रानद संधि आदि अनेक कृतियां उपलब्ध हैं, जिनका परिचय स्वतन्त्र निबन्ध मे देंगे। राजलाभजी के शिष्य प० राजसुन्दर, क्षमाधीर और उनके शिष्य गुणभद्र, नयणरग आदि थे। हीरकीर्तिजी के दूसरे शिष्य (B) मतिहर्षजी के वा० भुवनलाभ और महिमामाणिक्य नामक दो शिष्य थे। वा० भुवनलाभजी के तेजसुन्दर और महिमामाणिक्यजी के महिमसुन्दर, मुक्तिसुन्दर, श्रीचन्द्रादि *शिष्य थे।*

**(७) नयनकमल:**—इनके शिष्य जयमन्दिरजी के शि० कनककीर्ति अच्छे कवि हुए हैं। जिनका (१) नेमिनाथ रास (स० १६९२ माघ सुदि ५ बीकानेर ), (२) द्रौपदी रास ( स० १६९३ वैसाख सु० १३ जैसलमेर ) आदि उपलब्ध हैं।

**(८) युगप्रधान श्रीजिनसिंहसूरि**—ये बड़े प्रतिभाशाली और दिग्गज विद्वान थे। गुरुदेव के साथ वर्षों तक रहकर इन्होंने विनय, विद्वता, व्याख्यानकलादि गुण प्राप्त किये थे। संक्षेप में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि सूरिजी के अधिकांश गुण इन में आ गये थे। आपने सम्राट् अकबर के दरबार में सूरिजी से भी पहले जाकर उन्हें अपनी लोकोत्तर प्रतिभा से जैन-धर्मका अनुरागी बनाया था। सं० १६२८ के आगरे के पत्र में सूरिजी के साथ आपका भी नाम पाया जाता है।

इनका जन्म सं० १६१५ के मार्गशीर्ष शुक्ला १५ को खेतासर ग्राम में हुआ। इनके पिताका नाम चोपड़ा गोत्रीय शाह चांपसी और माताका नाम चांपल देवी था। इनका मूलनाम मानसिंह था, इससे सम्राट अकबर इन्हें इसी नाम से सम्बोधन किया करते थे। हम इस पुस्तक के "पांचवें प्रकरण" में लिख चुके हैं कि सं० १६२३ में जब श्रीजिनचन्द्रसूरिजी बीकानेर पधारे थे, तब आपने केवल आठ वर्षकी अवस्था में वैराग्य वासित होकर सूरि-महाराजके पास भागवती-दीक्षा ग्रहण की थी। सूरिजी ने इनका नाम "महिमराजजी" रखा और विद्वान, निर्मल-चरित्रपात्र और विनयवान होने के कारण सं० १६४० में माघ शुक्ला ५ को जैसलमेर में सूरिजी ने इन्हें वाचक पद से अलंकृत किया।

"श्रीजिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास"से जाना जाता है कि सम्राट अकबर के आमन्त्रण से सूरि-महाराज ने अन्य ६ साधुओंके

साथ आपको ही सम्राट के दरबार मे भेजा था। इनके दर्शन से सम्राट अत्यन्त प्रसन्न हुए और प्रतिदिन धर्म-चर्चा करने लगे।

हम सातवें प्रकरणमे लिख चुके हैं कि जब शाहजादा सलीम के मूल नक्षत्र में कन्याका जन्म हुआ था, तब मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र के प्रबन्ध से आपने ही दोषनिवारणार्थ 'अष्टोत्तरी-स्नात्र' सविधि सम्पन्न कराया था। सूरिजी की आज्ञा से सम्राट के साथ काश्मीर-विहार कर जैन धर्म की अतिशय उन्नति की। गजनी और गोलकुण्डा जैसे देशोमें तथा काबुल पर्यन्त अमारि उद्घोषणा करवाई। रास्तेमे आये हुए तालावो के जलचर जीवों की रक्षा की। काश्मीर विजय करने के पश्चात् श्रीनगर मे सम्राट को उपदेश देकर आठ दिनकी अमारि उद्घोषणा प्रकाशित कराई।

इनके सहवास से सम्राट पर अमित प्रभाव पडा उन्होंने सूरिजीसे निवेदन कर इन्हे आचार्य-पद दिलाया, अपने मुखसे "जिनसिंहसूरि" नाम स्थापन करनेका निर्देश किया तथा उस अवसर पर मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र ने जो करोडो रुपये व्यय कर उत्सव मनाया, वह सब अगले प्रकरणोमे लिख चुके हैं। अत यहा दुहराना अनावश्यक है।

इसके बाद कहीं सूरिजी के साथ और कहीं उनकी आज्ञा से अन्यत्र चातुर्मास किये, अनेक शिलालेखो और ग्रन्थ प्रशस्तियो मे, आपका नाम मिलता है।

स० १६५६ के मिती मार्गशीर्ष शुक्ला १३ को बीकानेर से बोथरा गोत्रीय धर्मसी शाहकी भार्या धारलदेवी के पुत्र राजसिंह को दीक्षा दी। वहा से विहारकर जब सूरिजी के पास आए, तब उन्हे बडी दीक्षा दिलाई और 'राजसमुद्र' नाम रखा।

स० १६६१ के माघ शुक्ला ७ को बीकानेर के शाह बच्छरा
के पुत्र चोला को अमरसर मे दीक्षा दी, उसके साथ उसके बड़े भा
विक्रम और माता मिरगादेवी ने भी दीक्षा ली थी। थानसि
श्रीमाल ने दीक्षा-महोत्सव किया। चोला को राजनगर मे श्रीजिन
चन्द्रसूरिजी ने बडी दीक्षा देकर सिद्धसेन मुनि नाम दिया। उप
रोक्त राजसमुद्रजी और सिद्धसेनजी दोनो जिनसिंहसूरिजी
पट्टधर आचार्य बने, वे "जिनराजसूरि" और "जिनसागरसूरि
नाम से प्रसिद्ध हुए।

सं० १६६०-६१ के लगभग (इलाही सन् ४६ ता० ३१ खुरदाद
अपाढी अष्टान्हिका फरमान के खो जाने से इन्होने नया फरमान
सम्राट अकबर से प्राप्त किया था, जिसका उल्लेख उसी फरमान मे
सम्राट ने किया है।

स० १६६२ के चैत्र कृष्णा ७ को जब बीकानेर मे सूरिजी ने
श्रीऋषभदेवस्वामी के मन्दिर की प्रतिष्ठा की, उस समय आप भी
सूरिजी के साथ थे, ऐसा यहा के लेखो से जाना जाता है। सं०१६६
के लखमे भी आपका नाम है।

सुप्रसिद्ध विद्वान कविवर समयसुन्दरजी के आप विद्या-गुरु
थे और आपने स० १६७१ मे लवेरे मे उन्हे उपाध्याय पद दिया था।

राजसमुद्र कृत "श्रीजिनसिंहसूरि गीत" से ज्ञात होता है कि
सम्राट जहाँगीर को अपनी अलौकिक प्रतिभा से प्रतिबोध देकर
अभयदान का पटह बजवाया था *। सम्राट ने प्रसन्न होकर

* वचन चातुरी गुरु प्रति बूझवा, शाह सलेम नरिन्दो जी।
अभयदान नउ पडह बजावियो, श्रीजिनसिंह सुरिन्दो जी ॥२॥
( राजसमुद्र कृत गीत )

अपने पिता का अनुकरण करते हुए आचार्य-महाराज को मुकरबखान नवाब को भेज कर युग-प्रधान पद दिया था ×।

स० १६७० का चातुर्मास गुरुदेव के साथ बेनातट (बीलाडा) मे किया था। उसके पश्चात् गच्छनायक-पद प्राप्त कर अनेक स्थानो मे विहार करने लगे। स० १६७१ मे मेडता वास्तव्य चोपडा गोत्रीय शाह आसकरण ने शत्रुञ्जय महातीर्थ के यात्रार्थ सघ निकालने का विचार किया तब आपको भी वीनति-पत्र भेज कर इस सघ मे सम्मिलित हो गिरि राज की यात्रार्थ बुलाए थे। मिती पौष शुक्ला १३ को मेडते से सघ ने प्रयाण किया और गूढा आए वहा बीकानेर का विशाल सघ भी इस सघ के साथ हो गया। स्थानो २ पर देववन्दन पूजनादि कर आबू तीर्थ की यात्रा का लाभ लेते हुए मिती चैत शुक्ला १५ के दिन गिरिराज श्रीसिद्धाचलजी पर युगादि-जिनेश्वर के दर्शन किए।

सघपति आसकरण को गच्छनायक श्रीजिनसिंहसूरिजी ने 'सघपति' पद प्रदान किया +।

गिरिराज की यात्रा कर खभात आये वहा स्तभना पार्श्वनाथजी के दर्शनकर पाटण, अहमदाबाद होते हुए वडली पधार, वहा

× जेहनो गुग परपरा चित्तने विषे धरी जहागीर-सलेम सतुष्टहृदय थका श्रीमुकरबखानइ पोते माकलो महोत्सव पूर्वक युगप्रधान पदवी (दोधी) इइवा श्रीजिनसिंहसूरि। [ जिनरगसूरि राज्ये लि० चौमासो व्याख्यान ]

श्रीसिंघ रे युगप्रधान पदवी लही, आया मुकरबखान रे।
साजण मन चिन्ता हुआ, मरया दुरजन मान रे॥ ८॥

[ हर्षनन्दन कृत गीत ]

+ इस यात्राके वर्णनात्मक दो "चैत्य परिपाटी स्तवन" हमारे सग्रहमें हैं।

श्रीजिनदत्तसूरिजी के चरण-पादुकाओ के पुनीत दर्शन किए। वहा से विहार कर गच्छनायक श्रीजिनसिंहसूरिजी सीरोही पधारे। सघ ने हर्पित होकर उत्सव पूर्वक नगर-प्रवेश कराया। वहा के राजा राजसिंह ने आपकी खूब भक्ति की। वहा से विहार कर जालोर पधारे, श्रीसंघ ने समारोह पूर्वक आपका स्वागत किया वहा से खडप और द्रूणाडइ होते हुए घघाणी पधारे। वहा प्राचीन [ इन मूर्तियो की प्राचीनता आदि के विपय मे "समयसुन्दरजी कृत घघानी स्तवन" में अच्छा वर्णन है। ] मूर्तियो ‐ के दर्शन किये। वहा से अनुक्रम से विहार कर बीकानेर पधारे।

शाह थाघमल ने आपका धूमधाम से प्रवेशोत्सव किया। सं० १६७४ का चातुर्मास वहीं किया, धर्म प्रभावना अच्छी हुई।

सम्राट जहागीर बहुत वर्षो से आप के दर्शनाभिलापी थे। आप का चातुर्मास बीकानेर मे ज्ञात होने से उसने अपने प्रधान उमरावों को शाही-फरमान देकर भेजे और उन को आग्रह पूर्वक दर्शन देने की विनती लिखी। शाही-पुरुप बीकानेर मे आए और फरमान देते हुए आगरे पधारने को वीनति की *। बीकानेर का सघ एकत्र होकर

* हिव श्रीशाहि सलेम, मानसिंह सु धरि प्रेम।
वड वडा साहस धीर, मूकइ आपणा वजीर ॥१॥
तुम्हे बीकाणइ जाउ, मानसिंहजी कु बुलावो।
इक वेर मानसिंह आवइ, तउ मन मुझ सुख पावइ ॥२॥
ते बीकाणइ आया, प्रणमइ मानसिंह पाया।
दीधा मन महिराण, पतिशाही फुरमाण ॥३॥
मिलियउ सघ सुजाण, वाच्या ते फुरमाण।
तेडाया पतिशाह, सहुको धरइ उच्छाह ॥४॥
[ श्रीसार कृत "जिनराजसूरिरास" स० १६८१ ]

फरमान पढ कर खूब आनन्दित हुआ। आचार्य महाराज ने सम्राट का आग्रह जान कर वहा जाना आवश्यक समझा। बीकानेर से विहार कर मेडता पधारे, वहा के संघ की अतिशय भक्ति देख कर एक महीने तक वहीं विराजे। उसके पश्चात् वहा से विहार कर सम्राट के पास जाने के लिये प्रयाण किया। परन्तु मनुष्य का विचारा कुछ नहीं होता दुर्दैव काल ने किसी को नहीं छोडा, आपका शरीर अस्वस्थ हो गया इस से आगे न बढ कर वापिस मेडता आना पडा। अपना आयुष्य सन्निकट जान कर उन्होने अनशन ग्रहण कर लिया। चौरासीलक्ष जीवायोनि से क्षमतक्षामणा कर शुद्ध ध्यान मे लीन हो स० १६७४ के मिती पोष शुक्ला १३ को श्रीजिनसिंहसूरिजी स्वर्ग सिधारे। सारे संघ मे शोक छा गया, क्योंकि वे एक प्रतिभाशाली और महान् प्रभावक आचार्य थे। श्रीसारजी कृत "जिनराजसूरि रास" मे लिखा है कि आप प्रथमदवलोक- मे महर्द्धिक देव हुए।

---

आणइ चउमासो करि, आया मेवडा वटु हित धरि।
तेडावइ श्रीशाहि सलेम, मेडता आया कुशले क्षेम ॥६६॥
[ धर्मकीर्ति कृत "जिनसागरसूरि रास" स० १६८१ ]

विशेष जानने के लिये हमारी ओर से प्रकाशित "ऐतिहासिकजैनकाव्य-संग्रह' देखना चाहिये।

* सइ मुखि लीधउ सथारउ, कीधउ सफल जमारो।
शुद्ध मनइ गहगहता, पहिलइ देवलोक पहुता ॥ ९० ॥

सम्राट अकबर को जैन-धर्मानुरागी बनाने में जिनचन्द्रसूरिजी के साथ साथ आपका भी बहुत कुछ प्रभाव था। काश्मीर विहार में सम्राट पर इनके पवित्र चारित्र का जो प्रभाव पडा, उसी के फल स्वरूप सम्राटने सूरिजो से इन्हें आचार्य पद दिलाया था उसका हम शब्दो द्वारा वर्णन नहीं कर सकते। सम्राट जहांगीर आपको बहुत सम्मान की दृष्टि से देखते थे। नवाब मुकरबखान आदि पर भी आपका गहरा प्रभाव था *।

आपने कई जगह प्रतिष्ठाएं भी की थी जिनका लेख "जैन-धातु-प्रतिमा-लेख सग्रह" आदि में है। साध्वी विद्यासिद्धि कृत 'गुरणी-गीत' से जाना जाता है कि उनकी गुरुणी को 'पहुत्तणी' पद आपने ही दिया था।

आपको स्तवन, सझायादि कतिपय छोटी कृतिया भी मिली हैं।

बीकानेर के श्री रेल दादाजी मे आपकी पादुकाऐ एक स्तूप में प्रतिष्ठित हैं जिनका लेख इस प्रकार है —

"स० १६७६ वर्षे जेष्ट वदि ११ दिने युग-प्रधान श्री ६ श्रीजिनसिंहसूरि सूरीश्वराणा पादुके कारिते प्रतिष्ठिते च ॥ शुभ भवतु ॥"

बीकानेर मे नाहटो की गुवाडके श्री ऋषभदेवजी के मन्दिर में आपकी पादुकाए हैं, जिनका लेख इस प्रकार है —

---

*समरइ सगला उमरा, मुकरबखान नवाब हो।

*　　*　　*　　*

ए पतिशाही मेवडउ, कमउ करइ अरदास हो।
एक घडी पडखु नहीं, चाहो श्रीजी पास हो ॥ ७ ॥
[ वादी हर्षनन्दन कृत 'आलिजा गीत' ]

"सवत १६८६ वर्षे चैत्र वदि ४ दिने युगप्रधान श्रीजिनसिंह सूरिणा पादुके कारिते जयमा श्राविकया भट्टारक युगप्रधान श्रीजिन राजसूरिराजे।"

आपके बहुत से विद्वान शिष्य थे, जिनमे से कइयो के नाम भी हमे उपलब्ध हुए हैं। उन सब को बडी दीक्षा युगप्रधान श्रीजिन चन्द्रसूरिजी ने प्रदान की थी, इससे उनके नाम भी नन्दि अनुक्रम से लिखते हैं —

(१) *हेममन्दिर*—आप प्रकाण्ड विद्वान थे। बीकानेर ज्ञान-भडार मे, आपको श्रावक श्राविकाओ द्वारा वहराये हुए ग्रन्थो की कई प्रतियें विद्यमान हैं। आपका एक श्रीजिनकुशल सूरि स्थान स्तवन गा० ६ का उपलब्ध है।

(२) *हीरनन्दन*—ये भी आपके शिष्य थे, इनके शिष्य लालचन्दजी अच्छे कवि हुए हैं, जिनकी (१) मौन एकादशी स्त० गा० १७ (स० १६६८ लि०), (२) अदत्तादानविषये देवकुमारचौपाई ( स० १६७२ श्रा० सु० ५ अलवर, यति सूर्यमलजी के सग्रह में ), (३) हरिश्चन्द्र रास (स० १६७६ काती पूनम, घघाणी, श्रीपूज्यजी के सग्रह मे ), (४) वैराग्य बावनी गा० ५३ पत्र २ (स० १६६५ भाद्रवा सुदि १५) आदि कृतियें उपलब्ध हैं।

(३) *श्रीजिनराजसूरि*—आपका दीक्षा नाम राजसमुद्र था। आप एक प्रतिभाशाली और अच्छे विद्वान आचार्य हुए हैं। इनके रचित (१) ठाणागवृत्ति (२) नैषध काव्य वृत्ति (ग्र० ३६०००) अलभ्य है और (३) धनाशालिभद्र रास (स० १६७८) (४) जसूराम (स० १६६६ अहमदाबाद ) (५) चौवीसी (६) वीसी आदि बहुतसी

कृतिया उपलब्ध हैं। आपका विस्तृत परिचय हमारी ओर से प्रकाशित 'ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह' मे देखना चाहिये।

*(४) पद्मकीर्ति*—ये भी आपके विद्वान शिष्य थे। इनके शिष्य पद्मरगजी के २ शिष्य थे। (१) पद्मचद्र —इनका जबूरास ( स० १७१४ का० सु० १३ सरसा ) उपलब्ध है। (२) रामचन्द्र—ये भी अच्छे विद्वान, कवि और वैद्यक शास्त्र वेत्ता थे। इनकी कृतियों मे वैद्य विनोद चौपाई ( सं० १७२० मि० सु० १३ बुधवार, हमारे सग्रह मे) और दस पचक्खाण स्त० (स० १७३१ पोष सुदि १०) उपलब्ध है।

*(५) श्रीजिनसागरसूरि*—इनका दीक्षा नाम सिद्धसेन था। इनका विशेष परिचय प्राप्त करने के लिए भी "ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह" देखना चाहिये।

*(६) जीवरग*—ये भी आप के शिष्य थे। स० १६८२ के मिती मिगसर सुदि १३ को इनके लिखी हुई "मुनि मालका" पत्र ८ ( हमारे सग्रह मे अ० प्र० न० १२२ ) उपलब्ध है।

जिनसिंहसूरिजी के शिष्यो के नाम और भी कई ग्रन्थो एव प्रशस्तियो मे पाये जाते हैं, परन्तु खरतर गच्छ मे इस नाम के तीन आचार्य भिन्न २ शाखाओ मे उसी समय हो गए हैं। इस लिये अनिश्चित होने से उनका परिचय नहीं दिया गया है।

**(९) समयराजोपाध्याय**—आप सूरिजी के प्रधान शिष्या मे से थे। आगरेके सं० १६२८ वाले पत्रमे आपका नाम भी है। आप अच्छे विद्वान् थे, "अष्टलक्षी" की प्रशस्ति मे इन्हे कविवर

समयसुन्दरजी अपना विद्यागुरु बतलाते हैं। इनके बनाई हुई कृतियो मे (१) धर्ममजरी चौ० (स० १६६२ मा० सु० १० बीकानेर), पर्यूषण-व्याख्यान-पद्धति पत्र १२ (हमारे सग्रहमे), शत्रुजय ऋषभ-स्त० गा० १४ अवचूरि और सस्कृत व भाषा के कई स्तवन उपलब्ध हैं।

स० १६७७ ज्येष्ठ वदी ५ मेडता के शिलालेख मे आपका नाम आता है। इनके शिष्य अभयसुन्दर, उनके शिष्य कमललाभोपाध्याय शि० लब्धिकीर्ति शि० राजहस शि० देवविजय शि० चरणकुमारके लिखे हुइ "सारस्वत" की प्रति श्रीपूज्यजी के सग्रहमे है।

**(१०) धर्मनिधानोपाध्याय**—इनका नाम भी आगरा-वाले पत्रमें होनसे स० १६२८ के पूर्व दीक्षित होना सुनिश्चित है। इनका "जीरावला पार्श्व स्त०" और "चतुर्विंशति जिन० स्त०" (प्राकृत) उपलब्ध हैं। इनके शिष्य (१) सुमतिसुन्दर का शान्तिस्तवन (स० १६५० का० सु० १३ वीरमपुर) और अन्य कई छोटी कृतिया उपलब्ध हैं। (२) धर्मकीर्ति—ये अच्छे कवि थे। इनकी कृतियो (१) नेमिरास (स० १६७५ फा० सु० ५ रवि) (२) मृगाङ्क पद्मावती चौ० (अपूर्ण हमारे सग्रह मे) (३) जिनसागरसूरि रास (सं० १६८१ पौष सुदी ५), (४) २४ जिन २४ बोल० स्त० (५) साधुसमाचारीबाला० (स० १६६६ मा० सु० ४ बीकानेर लि०) (६) सत्तरीसय बाला० (पत्र ४ क्षमाकल्याण भण्डार) और कई स्तवनादि उपलब्ध हैं। इनके शिष्य 'दयासार" थे, जिन्होने इलापुत्रचौ० (दयासारचौ० स० १७१० नभसुदि६सुहावानगर) और अमरसेन वयरसेन-चौ०

( स० १७०६ विजया-दशमी शीतपुर ) रची, क्षमाकल्याणजी के भण्डार मे है। धर्मकीर्तिजीके विद्यासार, महिमसार, राजसार आदि और भी कई शिष्य थे जिनमे राजसार कृत कुलध्वज-रास ( स० १७०४ आ० सु० ५ रवि० ) उपलब्ध हैं। (३) समयकीर्ति, इनके लि० स० १६७५ मि० व० १० "पञ्चस्थान-निर्युक्ति" बीकानेर ज्ञानभडार मे है। आपके शिष्य श्रीसोम ने "भुवनानन्द चौ०" ( स० १७२५ मि० सु० ५ आसनीकोट मे अपने शिष्य सुमतिधर्म के लिए) बनाई।

स० १६७५ वै० सु० १३ के शत्रुजय के शिलालेख मे धर्मनिधान जी का नाम है। स० १६७४ मि० व० ५ जेसलमेरसे इनके साथ धर्मकीर्ति जी भी थे ऐसा वहा के लेख से मालुम होता है

**(११) रत्ननिधानोपाध्याय**—आपका नाम भी स० १६२८ के आगरेवाले पत्र मे है। आपका सं० १६३३ का नवहरपार्श्व स्त० उपलब्ध है। सं० १६४६ मे सूरिजी के साथ आप भी लाहौर गये थे, वहा मिती फाल्गुन शुक्ला २ को आपको उपाध्याय पद मिला, जिसका उल्लेख आगेके प्रकरणो मे हो चुका है। आपका नाम कई प्रशस्तियो मे मिलता है, जिनसे ज्ञात होता है कि आप अधिकाश सूरिजीके साथ हो रहे थे।

आप व्याकरणके प्रकाण्ड विद्वान थे। वा० गुणविनयजी ने कर्मचन्द्रमंत्रि वंश प्रबन्ध वृत्ति ( १६५६ स० ) में इनको "सारहैमा-न्द्रानुशासनाध्येतार " लिखा है। कविवर समयसुन्दरजी कृत रूपक-

मालाचूर्णि का आपने ही संशोधन किया था। आपके बनाये हुए बहुत से स्तवन उपलब्ध हैं।

इनके शिष्य रत्नसुन्दर थे जिनके भी कई स्तवनादि मिलते हैं।

(१२) **रंगनिधान**—इनका नाम 'नित्य-विनय-मणि जीवन जैन लायब्रेरी' की कालिकाचार्यकथा की प्रशस्ति में पाया जाता है।

(१३) **कल्याणतिलक**—इनके पठनार्थ सं० १६३० का लिखा हुआ "मृगध्वजचरित्र" श्रीपूज्यजीके संग्रह में है।

(१४) **सुमतिकल्लोल**—इनकी (१) एक शुकराज चौ० (सं० १६६० चैत्र दशमी—प्रथमाभ्यास, जय० भण्डार पत्र १४) (२) स्थानांगसूत्रवृत्ति गत गाथा पर 'वृत्ति' वादी हर्षनन्दन के साथ सं० १७०५ की रचित, लींबडी के भण्डार में है। (३) बीकानेर ऋषभ स्त० (सं० १६६४) आदि कई कृतियां उपलब्ध हैं। आपके संशोधित पिण्डविशुद्धि की प्रति (शि० विद्यासागर पठनार्थ), श्री-पूज्यजी के संग्रह में है। इन्हीं विद्यासागर लिखित "प्राकृतव्याकरण दोधकावचूरि" उपलब्ध है।

(१५) **वा० हर्षवल्लभ**—आपकी मयणरेहा चौ० (सं० १६६० महिमावती) गा० ३७७ पत्र ९ हमारे संग्रह में है। दूसरी कृति उपासक दशांग बाला० (सं० १६९०) उपलब्ध है।

(१६) **पुण्यप्रधान**—आप भी सूरिजी के विद्वान शिष्य थे। बीकानेर आदिनाथ-प्रशस्ति लेखमें आपका नाम है। सं० १६७७

ज्येष्ठ वदि ५ मेडता के शिलालेख में भी आपका नाम आता है। इनका गोडी पार्श्व स्त० मिलता है। आपके सुमतिसागरो पाध्याय नामक विद्वान शिष्य थे जिनका सिद्धाचल स्त० गा० १२ ( स० १६८५ फा० कृ० १४ ) का उपलब्ध है।

सुमतिसागरजी के शिष्य ( १ ) ज्ञानचन्द्र—ऋषिदत्ता चौ० ( मुलतान, जिनसागरसूरि राज्ये ) और प्रदेशी चौ०, ये दोनों कृतियां बीकानेर—ज्ञानभण्डार में हैं, अपूर्ण हमारे संग्रह में भी हैं। इनके शिष्य रंगप्रमोद थे जिनकी "चम्पकचौपाई" ( १७१५ वै० वदि ३ मुलतान) उपलब्ध है। (२) साधुरंग—इनकी 'दयाछत्तीसी' (स० १६८५ अहमदाबाद ) हमारे संग्रह में है। वा० साधुरंगजी के शिष्य विनयप्रमोद शि० विनयलाभ ( बालचन्द ) थे इनकी वच्छराज देवराज चौ० ( स० १७३० मुलतान ), सिंहासनबत्तीसी ( स० १७४८ श्रावण वदि ७ फलोधी, पूनमचन्दजीयति के संग्रह में है ), 'सवैयाबावनी' गा० ५६ हमारे संग्रह में है। वा० साधुरंगजी के शि० महोपाध्याय राजसागरजी थे, इनके शिष्य ज्ञानधर्मजीके शि० दीपचन्द्र गणिके शि० देवचन्द्रजी हुए। ये सुप्रसिद्ध विद्वान और अध्यात्मतत्त्वके वेत्ता थे। इनके जीवन के लिए 'देवविलास' और कृतियोंके लिये 'श्रीमद् देवचन्द्र' भाग १-२-३ देखना चाहिए। उनके अतिरिक्त हमें (१) शान्तरस-भावना (२) सप्तस्मर्ण टबा (३) आत्म-शिक्षा और कई स्तवनादि उपलब्ध हुए हैं। श्रीमद् देवचन्द्रजीके मनरूप, विजयचन्द्र और रायचन्द्र आदि कई शिष्य थे। विजयचन्द्रके रूपचन्द्र नामक शिष्य थे।

**(१७) महो०सुमतिशेखर**—इनके शि० (१) ज्ञानहर्ष जी थे, जिन्होंने खेतसी शिष्यके साथ 'पर्यूषण व्या० पद्धति' पत्र (लिखा १२ स० १७०५ प्र० आ० कृ० १४ बुध जिनरत्नसूरि राज्ये), हमारे संग्रह में है। इन्हीं ज्ञानहर्षजी का पार्श्वस्त गा० १३ उपलब्ध है। (२) वा० चरित्रविजय (३) महिमाकुशल (४) रत्नविमल (५) महिमाविमल थे, इन्होंने स० १७३३ का चातुर्मास सक्कीग्राम में किया, उस समय महिमाकुशल के ( मिति भाद्रवा सुदि ६ ) लिखित "नाहर जटमल कृत बावनी" पत्र० श्रीपूज्यजीके संग्रहमें है।

**(१८) दयाशेखर**—इनके लिखा हुआ नवकार बाला० पत्र ४ श्रीपूज्यजीके संग्रहमें है।

**(१९) भुवनमेरु**—इनके शिष्य पुण्यरत्न शि० दया-कुशल शि० धर्ममन्दिर एक अच्छे कवि हुए हैं। उनकी कृतियोंमे (१) मुनिपतिचरित्र ( स० १७२५ पाटण ), (२) दयादीपिका चौपाई ( स० १७४० मुलतान ), (३) मोह-विवेक रास (स० १७४१ मि० सु० १० मुलतान ), (४) परमात्म-प्रकाश चौपई ( स० १७४२ का० सु० ४ मुलतान ), (५) आत्मभदप्रकाश (६) नवकाररास ( बृहत्स्तवनावलीमे मुद्रित ), चौमासी व्याख्यान ( जैन ग्रन्थावली पृ० ३४३ ), संखेश्वर स्त० ( स० १७२३ ) आदि कई उपलब्ध हैं।

**(२०) लालकलश**—इनके शिष्य ज्ञानसागर शि० कमलहर्ष के सं० १६६४ चैत्र सु० ७ राजनगर मे लिखित "गुजराती टीका" पत्र १११ श्रीपूज्यजी के संग्रह मे है।

पृष्ठमें कर चुके हैं। सूरिजी आपको आदर की दृष्टिसे देखते थे। समय-समयपर सैद्धान्तिक विषयों और विधि मार्ग के विषयों में आपसे परामर्श लिया करते थे *। आपके रचित निम्नोक्त ग्रन्थ उपलब्ध हैं —

(१) सुबाहुसन्धि (सं० १६०४ श्रीजिनमाणिक्यसूरि आदेशात्), (२) मुनिमालका (जिनचन्द्रसूरि उपदेशात्), (३) प्रश्नोत्तर काव्य वृत्ति (सं० १६४०), (४) जंबूद्वीप पन्नति वृत्ति (१६४५ जेसलमेर रा०भीम राज्ये), (५) नमि राजर्षि गीत गा० ५४, (६) पैंतीस वाणी अतिशय गर्भित स्त० गा० २७, (७) पचकल्याण स्त०, (८) पार्श्व जन्माभिषेक गा० १९ (९) महावीर स्त० गा० २१, (१०) आदिनाथ स्तवन गा० २६ (बीकानेर), (११) अजित स्तवन आदि छोटी कृतिया बहुत-सी उपलब्ध हैं। आपकी कृतियों की भाषा, प्रौढ और शैली प्राचीन है।

आपने सं० १६५० में जेसलमेरमें जिनकुशलसूरिजीकी पादुकायें प्रतिष्ठित की थी। सम्भव है कि इसके थोडे समय पश्चात् वहीं आपका स्वर्गवास हुआ हो। क्योंकि उस समय आपकी अवस्था लगभग ८०-९० वर्ष की होगी। आपके उ० पद्मराज, हर्षकुल, जीवराज आदि कई शिष्य थे, जिनमें पद्मराजजी अच्छे विद्वान थे,

* देखो शिवनिधान कृत 'लघु विधिप्रपा'। जिनसिंहसूरिजो लि० सामाचारी विषयक पत्र हमारे सग्रह में है, जिसमें लिखा है —

ए व्यवस्था। श्रीजिनचन्द्रसूरिजी यइ श्रीपुण्यसागर महोपाध्याय श्री साधुकीर्त्युपाध्याय नइ पूछी नइ कीधी छइ [illegible] ॥

उनके बनाए हुए (१) भुवनहिताचार्य कृत रुचिरदण्डक वृत्ति (सं० १६४४), (२) अभयकुमार चौ० (१६५० जैसलमेर) (३) सनत्कुमार रास (सं० १६६६ जैं० गु० क०) (४) क्षुल्लकऋषिप्रबन्ध (सं० १६६० मुलतान गा० १४१ हमारे संग्रह में) उपलब्ध हैं इनके अतिरिक्त छोटी-मोटी और भी कई कृतियां मिलती हैं। सं० १६४५ में जम्बूद्वीपपन्नत्ति-वृत्तिकी रचनामें, अपने गुरुश्री को बहुत कुछ सहाय्य दिया था।

इनके शिष्य वा० ज्ञानतिलक जी भी अच्छे विद्वान थे, सं० १६६० दीवालीके दिन उन्होंने "गौतम-कुलक" पर विस्तृत टीका रची थी। जम्बूद्वीपपन्नत्तिवृत्ति के प्रथमादर्शके लेखक आपही थे। इनके भी रचित कई स्तवनादि उपलब्ध हैं।

महोपाध्यायजीके विषयमें विशेष ज्ञातव्य "ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह" में देखना चाहिये। सं० १६१७ पाटणमें श्रीजिनचन्द्रसूरिजी कृत "पौषध प्रकरण वृत्ति" का आपने संशोधन किया था।

**(२) धनराजोपाध्यायः**—आप अच्छे विद्वान थे। सं० १६१७ में रचित श्रीजिनचन्द्रसूरिजी की 'पौषधप्रकरण वृत्ति' के संशोधकों में आपका भी नाम आता है। 'आत्मानन्द प्रकाश' में प्रकाशित 'महो० धर्मसागर गणि' नामक लेख में उनके शिष्य के लिखित पत्रोंकी नकल में सं० १६१७ की अभयदेवसूरि सम्बन्धी चर्चा में आपको धर्मसागरका प्रतिद्वन्दी लिखा है। आपकी चरण-पादुका बीकानेर (नाहटोंकी गुवाड) के श्री आदिनाथजी के मन्दिरमें है, जिसका लेख इस प्रकार है —

"सं० १६६२ चैत्र वदि ७ दिने श्रीधनराजोपाध्याय पादुके।"

(३) **महोपाध्याय साधुकीर्ति**—जिनभद्रसूरिजीकी परम्परामे वा० दयाकुशलजी के शिष्य वा० अमरमाणिक्यजी के आप नामाङ्कित शिष्यो मे से थे। आप ओसवाल-वंश के सुचिंती गोत्रीय वस्तुपाल जी की सुशीला पत्नी खेमलदेवी के पुत्र थे। सं० १६१७ मे रचित 'पौषध प्रकरण वृत्ति' के संशोधको मे से आपभी एक थे। सं० १६२५ आगरे मे सम्राट अकबर की सभा मे पौषध के विषय मे शास्त्रार्थ करके तपागच्छवालों को निरुत्तर किया था। सं० १६३२ मे मावन सुदि १५ को श्री जिनचन्द्रसूरिजी ने आपको 'उपाध्याय' पद से अलंकृत किया था। समय-समय पर सूरिजी आपसे सेद्धान्तिक विषयो मे परामर्श किया करते थे। सं० १६४६ मे माघ वदि १४ को जालोर मे आपका स्वर्गवास हुआ। वहा आपका स्तूप भी संघ ने बनवाया था। इनके विषय मे भी विशेष जानने के लिए "ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह" देखना चाहिये। इनकी कृतिया निम्नाङ्कित उपलब्ध है।

सं० १६११ दीवाली, सप्तस्मरण बाला० (बीकानेर, मन्त्रीश्वर संग्रामसिंह की अभ्यर्थना से), सं० १६१८ श्रा० शु० ५ पाटण मे "सतरहभेदी' पूजा, सं० १६२४ विजयादशमी, दिल्ली मे "आषाढ-भूति प्रबन्ध" और 'मौनेकादशी स्त०' सं० १६३५ ज्येष्ठ शुक्ला ३ भक्तामर स्तोत्रावचूरि (शि० वच्छा पठनार्थं स्वयलिखित प्रति, हमारे संग्रहमे है) सं० १६३६ नागौर मे जिनचन्द्रसूरिजी के आदेश से नमिराजर्षि चौपइ सं० १६३८ अमरसर शीतल जिन स्त०,

शेषनाममाला ( पत्र ४२ श्री पूज्यजी के सग्रह मे ) , दीपावहार-बालावबोध और बहुतसे स्तवन आदि मिलते हैं।

आपके शिष्य (१) वा० विमलतिलक, (२) साधुसुन्दर (३) महिमसुन्दर आदि अच्छे विद्वान थे ।

*(१) वा० विमलतिलकजी*—इनके शिष्य विमलकीर्ति-रचित चन्द्रदूतकाव्य (स० १६८१), पद-व्यवस्था, दडक-बाला०, नवतत्त्व बाला०, जीवविचार बाला०, जयतिहुअण बाला०, प्रतिक्रमण विधि-स्तवनादि उपलब्ध हैं ।

*(२) साधुसुन्दर*—ये व्याकरण के दिग्गज विद्वान थे, इनकी कृतियो मे (१) उक्तिरत्नाकर (स० १६७०-७४), (२) धातुरत्नाकर (स० १६८० दीवाली), (३) शब्दरत्नाकर ( शब्दप्रभेदनाममाला ) तीनो ग्रथ श्रीपूज्यजी के सग्रह मे है । (४) पार्श्वस्तुति (स०१६८३) आदि उपलब्ध हैं। इनके शिष्य उदयकीर्ति कृत पदव्यवस्था-टीका स० १६८१ मे रचित उपलब्ध है ।

*(३) महिमसुन्दर*—इनका (१) शत्रुञ्जयतीर्थोद्धार-कल्प गा० ११६ का ( स० १६६१ ज्येष्ट शुक्ला ८ जेसलमेर मे रचित ) बीकानेर ज्ञानभडार मे, ( २ ) नेमि-विवाहला ( स० १६६५ भा० सु० ६ ) उपलब्ध है । इनके शिष्य (१) नयमेरजी थे । उनके शिष्य केशवदासजी थे जिनकी एक बावनी (स० १७३६ श्रा० सु० ५ म०), वीरभाण उदयभाण रास ( स० १७४५ विजयदशमी नवानगर ) उपलब्ध है। (२) ज्ञानमेरुजी थे, जिनकी गुणावली चौ० (स० १६७६ आ० १३ विगयपुर ? फतहपुर ) और विजयसेठ-विजया-प्रबन्ध

"सं० १६६२ चैत्र वदि ७ दिने श्रीधनराजोपाध्याय पादुके।"

**(३) महोपाध्याय साधुकीर्त्ति**—जिनभद्रसूरिजीकी परम्परामें वा० दयाकुशलजी के शिष्य वा० अमरमाणिक्यजी के आप नामाङ्कित शिष्यों में से थे। आप ओसवाल-वंश के सुचिंती गोत्रीय वस्तुपाल जी की सुशीला पत्नी खेमलदेवी के पुत्र थे। सं० १६१७ में रचित 'पौषध प्रकरण वृत्ति' के संशोधकों में से आपभी एक थे। सं० १६२५ आगरे में सम्राट अकबर की सभा में पौषध के विषय में शास्त्रार्थ करके तपागच्छवालों को निरुत्तर किया था। सं० १६३२ में माघव सुदि १५ को श्री जिनचन्द्रसूरिजी ने आपको 'उपाध्याय' पद से अलंकृत किया था। समय-समय पर सूरिजी आपसे सैद्धान्तिक विषयों में परामर्श किया करते थे। सं० १६४६ में माघ वदि १४ को जालोर में आपका स्वर्गवास हुआ। वहां आपका स्तूप भी संघ ने बनवाया था। इनके विषय में भी विशेष जानने के लिए "ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह" देखना चाहिये। इनकी कृतियां निम्नाङ्कित उपलब्ध हैं।

सं० १६११ दीवाली, सप्तस्मरण बाला० ( बीकानेर, मन्त्रीश्वर संग्रामसिंह की अभ्यर्थना से ), सं० १६१८ श्रा० शु० ५ पाटण में "सतरहभेदी" पूजा, सं० १६२४ विजयादशमी, दिल्ली में "आषाढ-भूति प्रबन्ध" और 'मौनेकादशी स्त०' सं० १६२५ ज्येष्ट शुक्ला ३ भक्तामर स्तोत्रावचूरि ( शि० वच्छा पठनार्थ स्वयलिखित प्रति, हमारे संग्रहमें है ) सं० १६३६ नागौर में जिनचन्द्रसूरिजी के आदेश से नमिराजर्षि चौपइ सं० १६३८ अमरसर शीतल जिन स्त०,

शेषनाममाला ( पत्र ४२ श्री पूज्यजी के संग्रह में ), शेषावहार-बालावबोध और बहुतसे स्तवन आदि मिलते हैं।

आपके शिष्य (१) वा० विमलतिलक, (२) साधुसुन्दर (३) महिमसुन्दर आदि अच्छे विद्वान थे।

*(१) वा० विमलतिलकजी*—इनके शिष्य विमलकीर्ति-रचित चन्द्रदूतकाव्य (सं० १६८१), पद-व्यवस्था, दंडक-बाला०, नवतत्त्व बाला०, जीवविचार बाला०, जयतिहुअण बाला०, प्रतिक्रमण विधि-स्तवनादि उपलब्ध हैं।

*(२) साधुसुन्दर*—ये व्याकरण के दिग्गज विद्वान थे, इनकी कृतियों में (१) उक्तिरत्नाकर (सं० १६७०-७४), (२) धातुरत्नाकर (सं० १६८० दीवाली), (३) शब्दरत्नाकर ( शब्दप्रभेदनाममाला ) तीनों ग्रंथ श्रीपूज्यजी के संग्रह में हैं। (४) पार्श्वस्तुति (सं०१६८३) आदि उपलब्ध हैं। इनके शिष्य उदयकीर्ति कृत पदव्यवस्था-टीका सं० १६८१ में रचित उपलब्ध है।

*(३) महिमसुन्दर*—इनका (१) शत्रुञ्जयतीर्थोद्धार-कल्प गा० ११६ का ( सं० १६६१ ज्येष्ठ शुक्ला ८ जैसलमेर में रचित ) बीकानेर ज्ञानभंडार में, ( २ ) नेमि-विवाहला ( सं० १६६५ भा० सु० ६ ) उपलब्ध है। इनके शिष्य (१) नयमेरुजी थे। उनके शिष्य केशवदासजी थे जिनकी एक बावनी (सं० १७३६ आ० सु० ५ म०), वीरभाण उदयभाण रास ( सं० १७४५ विजयदशमी नवानगर ) उपलब्ध है। (२) ज्ञानमेरुजी थे, जिनकी गुणावली चौ० (सं० १६७६ आ० १३ विगयपुर ? फतहपुर ) और विजयसेठ-विजया-प्रबन्ध

"सं० १६६२ चैत्र वदि ७ दिने श्रीधनराजोपाध्याय पादुके।"

**(३) महोपाध्याय साधुकीर्ति**—जिनभद्रसूरिजीकी परम्परामे वा० दयाकुशलजी के शिष्य वा० अमरमाणिक्यजी के आप नामाङ्कित शिष्यों मे से थे। आप ओसवाल-वंश के सुचिती गोत्रीय वस्तुपाल जी की सुशीला पत्नी खेमलदेवी के पुत्र थे। सं० १६१७ मे रचित 'पौपध प्रकरण वृत्ति' के संशोधकों मे से आपभी एक थे। सं० १६२५ आगरे मे सम्राट अकबर की सभा मे पौपध के विपय में शास्त्रार्थ करके तपागच्छवालो को निरुत्तर किया था। सं० १६३२ मे माघव सुदि १५ को श्री जिनचन्द्रसूरिजी ने आपको 'उपाध्याय' पद से अलकृत किया था। समय-समय पर सूरिजी आपसे सैद्धान्तिक विपयो मे परामर्श किया करते थे। सं० १६४६ मे माघ वदि १४ को जालोर मे आपका स्वर्गवास हुआ। वहा आपका स्तूप भी सघ ने बनवाया था। इनके विपय मे भी विशेप जानने के लिए "ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह" देखना चाहिये। इनकी कृतिया निम्नाङ्कित उपलब्ध है।

सं० १६११ दीवाली, सप्तस्मरण बाला० (बीकानेर, मंत्रीश्वर सग्रामसिंह की अभ्यर्थना से), स० १६१८ श्रा० शु० ५ पाटण मे "सतरहभेदी" पूजा, स० १६२४ विजयादशमी, दिल्ली मे "आपाढ-भूति प्रबन्ध" और 'मौनेकादशी स्त०' स० १६३५ ज्येष्ट शुक्ला ३ भक्तामर स्तोत्रावचूरि (शि० वच्छा पठनार्थ स्वयलिखित प्रति, हमारे सग्रहमे है) स० १६३६ नागौर मे जिनचन्द्रसूरिजी के आदेश से नमिराजर्षि चौपइ स० १६३८ अमरसर शीतल जिन स्त०,

(स० १६१६ फा० सु० १३ जैसलमेर), और (२) ढोला-मारवण चौ० (स० १६१७ वै० सु० ३ जैसलमेर) आनदकाव्य महोदधि मौ० ७ मे प्रकाशित हैं। (३) तेजसार रास (स० १६२४ वीरमगाव), (४) अगडदत्त रास (स० १६२६ वीरमगाव), (५) पूज्य वाहणगीत (देखो हमारी ओरसे प्रकाशित ऐ० जैन काव्य सग्रह) (६) स्तभना पार्श्व स्त० (७) नवकार छद (८) भवानी छद (९) गौडी पार्श्व छद आदि उपलब्ध हैं।

(७) **चारित्रसिंह**—आप वा० मतिभद्र जी के शिष्य थे। विद्वान और कवि थे। इनकी निम्नोक्त कृतियें उपलब्ध हैं —

(१) चतु शरण प्रकीर्णक सन्धि गा० ६१ (स० १६३१ जैसलमेर), अन्तिम पत्र हमारे सग्रह मे) (२) सम्यक्त्व विचार स्तव० बाला० (स० १६३३ झझरपुर—अन्तिम २ पत्र हमारे सग्रह मे है) (३) कातत्र-विभ्रमावचूर्णि (सं० १६३५ ? धवलकपुर—श्रीपूज्जी के स० और कृपा० भ० में है), (४) मुनिमालका (स० १६३६ रिणी—हमारी ओर से प्रकाशित अभयरत्नसार मे) (५) रूपकमाला-वृत्ति पत्र ३ (जिनचन्द्रसूरिराज्ये—हमारे सग्रह मे), (६) शास्वत-चैत्य स्त० गा० ३८, (७) खरतर गच्छ गुर्वावली गा० २१, (८) अल्पाबहुत्व स्त० गा० २० इत्यादि, कई स्तवन हमारे सग्रह मे है, एव श्रीपूज्यजी के सग्रह मे स० १६३७ के लिखे हुए गुटके मे आपके ११ स्तवन, सज्झायादि हैं।

(८) **महो जयसोमजी**—आप क्षेमशाखा मे प्रमोदमाणिक्यजी के शिष्य थे। श्री जिनमाणिक्यसूरिजी ने स० १६०५-१२

सम्बोध चरित्र ( स० १६२४ विजयादसमी, वालापताकापुरी ), (४) केशी प्रदेशी सन्धि (गा० ७२, हमारे सग्रह मे), (५) गौतम पृच्छा गा० ५७ (हमारे सग्रह मे), (६) जिन प्रतिमा छत्तीसी गा० ३५, और (७) कल्याणक स्त० गा० ३१, दोनो श्री पूज्यजी के सग्रह मे है, और भी कई स्तवनादि छोटी कृतिये उपलब्ध हैं।

इनके विमलविनयजी नामक शिष्य थे, जिनकी अनाथी सन्धि गा० ७२ (स० १६४७ फा० सु० ३ कपूरपुर, हमारे सग्रह मे है ) एव कई स्तवनादि प्राप्त हैं। इनके राजसिंह, धर्ममन्दिर आदि कई शिष्य थे। जिनमे राजसिंह कृत (१) आरामशोभा चौ० ( स० १६८७ जे० सु० वाहडमेर ) पार्श्व-स्तवन, विमल-स्तवन और जिनराजसूरि गीत हमारे संग्रह मे है। धर्ममन्दिरजी की भावारिवारण स्तोत्र, स० १६५१ सरस्वतीपत्तन मे लिखित प्रति प्राप्त है। धर्ममन्दिरजी के शिष्य महो० पुण्यकलश जी के भी कई स्तवन, हमारे सग्रह मे है। इनके शिष्य जयरंग (जैतसीजी) अच्छे कवि हुए हैं, जिनके रचित (१) अमरसेन वयरसेन चौ० ( स० १७०० दीवाली जेसलमेर) (२) कयवन्ना चौ० (स० १७२१ बीकानेर) और दशवैकालिक सज्झायादि उपलब्ध है। जयरंगजी के तिलकचन्द्र नामक शिष्य भी अच्छे कवि थे, इनकी प्रदेशी सम्बन्ध ( सं० १७४१ जालोर ) नामक कृति जैन गूर्जर कवियो के दूसरे भाग मे नौंध की हुई है।

**(६) वा० कुशललाभ**—आप वा० अभयधर्मजी के शिष्य थे। आप अच्छे कवि थे, आपकी कृतियें (१) माधवानल चौपई

(सं० १६१६ फा० सु० १३ जैसलमेर), और (२) ढोला-मारवण चौ० (स० १६१७ वै० सु० ३ जैसलमेर) आनंदकाव्य महोदधि मौ० ७ मे प्रकाशित हैं। (३) तेजसार रास (स० १६२४ वीरमगाव), (४) अगडदत्त रास (स० १६२६ वीरमगाव), (५) पूज्य वाहणगीत ( देखो हमारी ओरसे प्रकाशित ऐ० जैन काव्य सग्रह ) (६) स्तभ ना पार्श्व स्त० (७) नवकार छद (८) भवानी छद (९) गौडी पार्श्व छद आदि उपलब्ध हैं।

(७) **चारित्रसिंह**—आप वा० मतिभद्र जी के शिष्य थे। विद्वान और कवि थे। इनकी निम्नोक्त कृतियें उपलब्ध हैं —

(१) चतु शरण प्रकीर्णक सन्धि गा० ६१ (स० १६३१ जैसलमेर), अन्तिम पत्र हमारे सग्रह मे ) (२) सम्यक्त्व विचार स्तव० वाला० (स० १६३३ झझंरपुर—अन्तिम २ पत्र हमारे सग्रह मे हैं ) (३) कातन्त्र-विभ्रमावचूर्णि ( स० १६३५ ? धवलकपुर—श्रीपूज्यजी के स० और कृपा० भं० मे हैं ), ( ४ ) मुनिमालका (स० १६३६ रिणी—हमारी ओर से प्रकाशित अभयरत्नसार मे ) (५) रूपकमाला-वृत्ति पत्र ३ (जिनचन्द्रसूरिराज्ये—हमारे सग्रह में ), (६) शास्वत-चैत्य स्त० गा० ३८, (७) खरतर गच्छ गुर्वावली गा० २१, (८) अल्पाबहुत्व स्त० गा० २० इत्यादि, कई स्तवन हमारे सग्रह मे हैं, एव श्रीपूज्यजी के सग्रह मे स० १६३७ के लिखे हुए गुटके मे आपके ११ स्तवन, सज्झायादि हैं।

(८) **महो जयसोमजी**—आप क्षेमशाखा मे प्रमोदमाणिक्यजी के शिष्य थे। श्री जिनमाणिक्यसूरिजी ने स० १६०५-१२

के बीच मे इन्हे दीक्षित कर जयसोम नाम रखा था, इससे पहले स० १६०५ की प्रशस्ति मे आपका पूर्व नाम जेसिंघ लिखा है। ये असाधारण मेधावी और प्रकाण्ड विद्वान थे। सं० १६४६ के पूर्व मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रने आप के पास बीकानेर में ११ अग श्रवण किए थे। स० १६४६ मे सूरिजी के साथ आप भी अकबर के पास लाहौर गए थे। सूरिजी ने वहा मिती फाल्गुण शुक्ला २ के दिन आपको उपाध्याय पद्से अलकृत किया था। इन्होने सम्राट् की सभा मे किसी विद्वान को शास्त्रार्थ मे निरुत्तर किया था। स० १६७५ मे वैसाख सुदि १३ को शत्रुजय प्रतिष्ठा के समय आप भी श्री जिनराजसूरि-जी के साथ थे। आपने श्रीजिनचन्द्रसूरि विरचित पोषधविधि प्रकरण वृत्ति (रचा स० १६१७ पाटण) का पुन अवलोकन करके संशोधित प्रति लिखी थी। कविवर समयसुन्दरजी ने आपका "सिद्धान्तचक्रचक्रवर्ती" विशेषण लिखा है। उपा० रत्ननिधानजी* आदि भी आपसे सैद्धान्तिक विषयोमे प्रश्नोत्तर किया करते थे। आप कवि भी उच्च कोटि के थे, संस्कृत, प्राकृत और प्रचलित लोक भाषा मे बहुत से गद्य और पद्य ग्रंथो की रचना की, जिनकी सक्षिप्त सूची इस प्रकार है—

(१) इर्यावही षट्त्रिंशिका (स १६४० जिनचन्द्रसूरि आदेशात्) प्राकृत गा० ३६, स्वोपज्ञ वृत्ति (स० १६४१), (२) पोषध षट्त्रिंशिका (स० १६४३) प्रा०, स्वोपज्ञवृत्ति (स १६४५), ये

* राधनपुर में ,२४ प्रश्न इन्होने निवेदन किए थे जिसकी प्रति का समयसुन्दरजी लिखित प्रथम पत्र ज्ञानभण्डारमें है।

दोनों ग्रन्थ "जिनदत्तसूरि ज्ञानभण्डार" सूरत से छपे हैं। (३) स्थापनापट्त्रिंशिका (वृत्ति)—इसका उल्लेख कर्मचन्द्र मन्त्रि-वंश प्रबन्ध वृत्ति में है। (४) कोडा श्राविकाव्रत ग्रहण रास, (सं० १६४७ अक्षयतृतीया), (५) अष्टोत्तरी-स्नात्र विधि (लाहौर में जिनचन्द्रसूरि) कर्मचन्द्र-मन्त्रि-वंश प्रबन्ध (सं० १६५० विजयादशमी, लाहौर) जिनचन्द्रसूरि आदेशात् (६) श्राविकारेखा व्रत-ग्रहण रास (सं० १६५० कार्तिक सुदि ३), (७) २६ प्रश्नोत्तर-ग्रन्थ (मुल्तानवास्तव्य गोलछा ठाकुरसी कृत प्रश्नों के उत्तर, जिनसिंहसूरिजी की आज्ञा से लाहौर में), (८) १४१ प्रश्नोत्तर, (विचाररत्नसंग्रह), (६) आदिजिन स्त० (सं० १६५५ फाल्गुण), (१०) चौवीस जिन गणधर संख्या स्त० (सं० १६५६) (११) वयर स्वामी चौ० (सं० १६५६), (१२) बारहभावना सन्धि (बीकानेर सं० १६७६-४६) और भी अनेक स्तवन, सज्झाय, प्रश्नोत्तर उपलब्ध हैं।

इनके बड़े गुरुभ्राता पद्ममन्दिर, गुणरंग और दयारंग थे इनका नाम सं० १६०८ में लिखित "सारस्वत-दीपिका" की प्रशस्ति में आता है। वा० गुणरङ्ग कृत शत्रुंजय यात्रा-परिपाटी (सं० १६१६), सामायक वृद्धिस्त० (सं० १६४६ कार्तिक) गा० ३२, अजितसमोसरण स्त०, और अष्टोत्तरशत नवकरवाली मनका स्तवन उपलब्ध है। इनके शिष्य ज्ञान-विलास के शि० लावण्यकीर्ति अच्छे कवि थे। जिनका (१) रामकृष्ण चौपई (सं० १६७७ वै० सु० ५ बीकानेर साधन भुवनकीर्त्ति के साथ), (२) गजसुकुमाल रास उपलब्ध है।

महो० जयसोमजी के उ० गुणविनयजी, विजयतिलक, सुयशकीर्ति आदि कई विद्वान शिष्य थे। इनमें उ० गुणविनयजी इस शताब्दी के नामाङ्कित विद्वानोंमेंसे एक थे। जिनकी प्रतिभा लगभग समय-सुन्दरजी से समता रखनेवाली है आपकी कृतियोकी सख्या भी बहुत विशाल है किन्तु उनके सदृश प्रसिद्धि नहीं है। स० १६४६मे सूरिजी के साथ आप भी लाहोर पधारे थे, वहा आपको समयसुन्दरजी के साथ ही वाचक पद मिला था। स० १६७५ शत्रुजय प्रतिष्ठा के समय आप भी वहीं पर थे। सवतानुक्रम से आपकी कृतियाँ निम्नाङ्कित हैं —

स० १६४१ खड-प्रशस्ति-काव्य वृत्ति (श्रीपूज्यजी स०), स० १६४४ नेमिदूतकाव्य-वृत्ति—बीकानेर (सेठिया लाय०), स० १६४६ नल-दमयन्ती चपूवृत्ति (सेठिया ला०) और रघुवश टीका (बीकानेर) सं० १६४७ प्राकृतवैराग्यशतक वृत्ति०, सं० १६५१ सबोध-सप्तति-वृत्ति० सं० १६५४ कयवन्ना सन्धि (नेमिजन्म—महिमपुर), स० १६५५मा० व० १० सधरनगरकर्मचन्द्रमंत्रि वशावलीरास,स० १६५६ तोसामपुर मे कर्मचन्द्रमंत्रिवश-प्रबन्ध वृत्ति, सं० १६५७ विचार-रत्नसग्रह लेखनम्, सं० १६५७ आषाढपूनम पार्श्वस्त० गा० ७७, सं० १६५६ लघुशान्ति टीका (पत्र ४ हमारे सग्रह में), सं० १६६० चार मगल गीत गा० ३२, सं० १६६२ चै० सु० १३ बु० अजना-सुन्दरी प्रबन्ध, स० १६६३ फा० सु० १३ शत्रुजय यात्रा स्त०, स० १६६३ चै० शु० ६ खम्भात-ऋषिदत्ताचौ०, सं० १६६४ इन्द्रिय-पराजयशतक वृत्ति, स० १६६५ गुणसुन्

प्रबन्ध नवानगर व्या० कृ० ६ (हमारे संग्रह में) और कुमतिमत खण्डन (नवानगर—जिनसिंहसूरि आदेशान्-'जिनदत्तसूरि ज्ञान-भण्डार" सूरत से प्रकाशित, सं० १६७० आ० शु० १० बाहडमेर जम्बूरास (हमारे संग्रह में), सं० १६७२ जैसलमेर पार्श्व स्त० गा० १६ संस्कृत, सं० १६७४ फतेपूनम—धन्ना शालिभद्र चौ० (श्रीमालमानसिंह आग्रहसे-बीकानेर ज्ञान भं०), सं० १६७८ माघ सु० ६ बुध मालपुर—अचलमत स्वरूप वर्णन, सं० १६७६ जिनराजसूरि अष्टक और इसी सम्वत के चैत्र कृ० ७ गिनाजि पार्श्व-नाथ स्त०, सं० १६७६ राडद्रहपुर तपा ५१ बोल चौपइ सटीक—आपका यह अन्तिम ग्रन्थ समस्त कृतियोंके कलश या शिखरक सदृश है, इसमें सैकड़ो ग्रंथोके प्रमाण उद्धृत करके तपा गच्छवाला के ५१ बोलो का निराकरण किया है।

इस कृति के पत्र ८ से ४० स्वयं लिखित श्रीपूज्यजी क संग्रह में है, मूल मात्र की सम्पूर्ण नकल हमारे संग्रह में है।

बिना सवत् की स्वयं लिखित पचासो छोटी कृतियें हमारे संग्रह में है, किन्तु ग्रंथ-विस्तारके भयसे उन सबका उल्लेख नहीं किया गया है। कतिपय उल्लेखनीय अन्य कृतियों की सूची इसप्रकार है —

(१) लुपकमततमोदिनकर चौ० (पत्र १३४ जयपुर ज्ञान-भण्डार), (२) जिनवल्लभीय अजित-शान्ति वृत्ति, (३) सन्देह शब्दार्थ समुच्चय, (४) चरण-सत्तरी करण-सत्तरी भेद (हमारे संग्रह में), (५) साधु समाचारी व्या० (प० १६ श्रीपूज्यजी सं०) (६) विजयतिलकोपाध्याय कृत आदिस्त० बाला० (ज्ञानभण्

के आग्रह से वापडाउ मे रचित, अन्तिम पत्र संग्रह मे ), ( ७ ) प्रणिपातवरदण्डकवाग ( णमुत्थुण वाला० स्वयलिखित हमारे संग्रह मे है ), (८) प्रश्नोत्तर (ज्ञान-भण्डार), (९) अगडदत्तरास ( प्रथम पत्र संग्रहमे), (१०) शत्रुञ्जय-यात्रा परिपाटी स्त० गा० ३२ ( सं० १६४४. बीकानेरी संघ का—हमारे संग्रह मे पत्र २ ), ( ११ ) खरतर गच्छ गुर्वावली गीत इत्यादि।

आपके गुरुभ्राता (१) विजयतिलक शि० तिलकप्रमोद शि० भाग्य विशाल थे, जिनकी लिखी हुई गुणावली चौ० पत्र ७ बीकानेर ज्ञान-भण्डार (महिमाभक्ति विभाग) में है। (२) सुयशकीर्ति का सखेश्वर पार्श्व स्त० गा० २५ ( स० १६६६ ) हमारे संग्रह मे है।

वा० गुणविनयजी के मतिकीर्ति नामक अच्छे विद्वान शिष्य थे, जिनकी ( १ ) निर्युक्ति स्थापन ( स० १६७६ विद्वत् लावण्य-कीर्ति आग्रह, पत्र १८ क्षमाकल्याणजी-भण्डार में ), ( २ ) अज-मसी कृत २१ प्रश्नोत्तर ( जिनराजसूरि राज्ये पत्र २६ बीकानेर ज्ञान-भण्डार ), ( ३ ) गुणकित्वशोडषिका ( जयपुर-भण्डार ), ( ४ ) ललिताग रास ( पत्र ७—अपूर्ण हमारे संग्रह मे है ), ( ५ ) लुपकमतोत्थापक गीत गा० ६१, ( ६ ) धर्मबुद्धिरास (सं० १६९७) और भी कई स्तवनादि उपलब्ध हैं। वा० मतिकीर्तिजी के शिष्य सुमतिसिन्धुर रचित पार्श्वस्तवन ( स० १६९६ मा० सु० ८ जै० गु० क० पृ० ५७४ मे नोंध है ) सुमतिसिन्धुरजी के कीर्तिविलास आदि कई शिष्य थे, जिनके रचित कई स्तवनादि मिलते हैं। मतिकीर्ति के दूसरे शिष्य सुमतिसागर थे, जिनके शिष्य कनककुमार शि०

कनकविलास कृत देवराज वच्छराज चौ० ( सं० १७३८ जेसलमेर ) उपलब्ध है।

उपाध्याय जयसोमजीकी शिष्य परपरा १६ वीं शताब्दी तक विद्यमान थी। उनके नामोंकी सूची हमारे संग्रह में हैं।

**(९) ज्ञानविमलोपाध्याय**—सुप्रसिद्ध उ० श्रीजयसागरजी की शिष्य परम्परा में आप भानुमेरुजी के शिष्य थे। आपने सं० १६५४ में बीकानेर में शब्दप्रभेद नामक व्याकरण ग्रंथपर टीका बनाई। इनके शिष्य उ० श्रीवल्लभजी भी उद्भट विद्वान थे उन्होंने (१) सं० १६५४ शीलोञ्छनाम-कोष पर टीका, (२) सं० १६६१ जोधपुर में लिङ्गानुशासनपर दुर्गपद प्रबोध नामक वृत्ति, (३) सं० १६६७ जोधपुर में अभिधाननाममालावृत्ति (श्रीपूज्यजी के संग्रहमें), (४) विजयदेव महात्म्य—जो कि आपके आदर्श गुण-ग्राहकता का परिचायक है यह ग्रन्थ श्रीजिनविजयजी के सपादकत्व में प्रकाशित हो चुका है। आप बड़े मिलनसार और सब गच्छोंके प्रति समभाव रखनेवाले थे सं० १६५५ में जब आप बीकानेर आये तब उपकेश गच्छीय सिद्धसूरिजी के कथन से। (५) "उपकेश शब्द व्युत्पत्ति" बनाई थी। डॉ० बुहर साहबने अपनी रिपोर्ट में आपका एक (६) अरनाथ स्तुति सवृत्ति नामक ग्रन्थ भी नोंध किया है।

**(१०) हंसप्रमोद**—आप श्री जिनकुशलसूरिजीकी शिष्य परम्परा में हर्षचन्द्रजी के शिष्य थे। आपका सारसारवृत्ति (सं० १६६?) नामक ग्रन्थ ७ भाषा कृतियों में वरकाणा

स्त० (सं० १६५३ मिगसर) आदि उपलब्ध हैं। स० १६७७ मेडता के शिलालेखों मे आपका नाम आता है।

आपके शिष्य चारुदत्तजी कृत कुशलसूरि स्त० (सं० १६६६ मि० कृ० ७), सेत्रावा स्त० (सं० १६७६ श्रावणसु० १), मुनि सुव्रत स्त० (जोधपुर, सरवाल श्रीमलशाह कारित प्रासाद स्त० स० १६६६) आदि उपलब्ध हैं। इनके शि० कनकनिधान कृत रत्नचूडरास (स० १७२८ आ व० १० श्री पूज्यजी के संग्रह मे है)।

उ० हसप्रमोदजी के पुण्यकीर्ति नामक शिष्य अच्छे कवि थे, इनका (१) रूपसेनराज चौपइ (स० १६८१ विजयादसमी मेडता), (२) मत्स्योदर चौ० (१६८२ कृपा भ०) (३) पुण्यसार रास (स० १६६६ विजयदशमी सागानेर) उपलब्ध हैं। इनके अतिरिक्त जैन-गूर्जर-कविओ प्रथम भाग मे (४) धन्ना चरित्र (सं० १६८८ भा० सु० १३ रवि० वीलपुर) और (५) कुमार मुनिरास की भी नोध है।

(११) **सूरचन्द**—आप श्रीजिनभद्रसूरि-शाखा मे वा० वीरकलशजी के शिष्य थे। इनका बनाया हुआ (१) पचतीर्थी श्लेपालङ्कार चित्रो (अपूर्ण पत्र ६ बीकानेर ज्ञान-भण्डार), अलङ्कार साहित्य मे एक विशिष्ट और महत्त्वपूर्ण ग्रथ है, ग्रंथ अपूर्ण होनेसे रचना-काल अज्ञात है। (२) जैनतत्त्वसार (स० १६६६ आश्विन पूर्णिमा बुध० अमृतसर) यह उत्तम रचना-शैलीवाला ग्रन्थ हिन्दी और गुजराती भाषानुवाद सहित छप चुका है। (३) चौमासी व्याख्यान (जयचन्द्रजी का भण्डार), (४) वर्ष फला-

फल ज्योतिष सझाय गा० ३६ और (५) जिनदत्तसूरि स्त० गा० १७ हमारे संग्रह में है। आपकी कविता बड़ी सुन्दर और रोचक है। सम्भव है कि कविवर ऋषभदासने प्रसिद्ध कवियों के नाम में जिन *"सूरचन्द्रजी"* का नामोल्लेख किया है, वे ये ही हों। लेकिन कृतियों की प्रचुर संख्या न मिलने से निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता।

**(१२) उ० शिवनिधान**—*आप श्रीजिनदत्तसूरिजीकी* शिष्यपरंपरा में, वा० हर्षसारजीके शिष्य थे। ये वे ही हर्षसारजी हैं, जिनके अकबर से मिलने का उल्लेख पृ० ६४ में कर चुके हैं। उ० शिवनिधानजीने उस समय की लोकप्रचलित गद्य भाषा में विधि विधान आदि ग्रन्थ रचकर उपकार किया है। इनके रचित (१) कल्पसूत्र बालावबोध, (२) संग्रहणीबाला (३) चौमासी व्या०, (४) लघुविधिप्रपा—जिसमें ७८ विधि-विधानों का सरल विवेचन किया है, (५) कृष्ण-रुक्मिणी वेलि टबा० और कई स्तवनादि छोटी कृतियें भी उपलब्ध हैं।

इनके (१) महिमसिंह (मानकवि) नामक शिष्य अच्छे कवि हुए हैं, जिनके (१) कीर्तिधर-सुकोशल प्रबन्ध (सं० १६७० दीवाली, पुष्करण), (२) मेतार्यऋषि सम्बन्ध चौ० (सं० १६७० पुष्करण), (३) क्षुल्लककुमार चौ०, (४) हंसराज वच्छराज प्रबन्ध (सं० १६७५—श्रीयुक्त मो० द० देसाई के संग्रह में), (५) अर्हद्दास सम्बन्ध (सं० आसकरण पुत्र कपूरचन्द्र के आग्रह से—राय

बद्रीदास बहादुर के म्यूजियम कलकत्ता में प्रति है), (६) मेघदूतवृत्ति ( सं० १६६३ शिष्य हर्षविजय पठनार्थ ) आदि ग्रन्थ उपलब्ध हैं।

उ० शिवनिधानजी के ( २ ) मतिसिंह नामक भी शिष्य थे। उनके शि० वा० रत्नजय कृत आदिनाथपञ्चकल्याणक स्त० गा० २४ और उनके शिष्य दयातिलक कृत धन्नारास ( सं० १७३७ कार्तिक), 'भवदत्त चौ०' ( सं० १७४१ जे० सु० ११ फतैपुर—कवि के स्वय लिखित प्रति श्रीपूज्यजी के सग्रह मे है ), ( ३ ) सिंहविनय —इनके रचित उत्तराध्ययन गीत ( सं० १६७५ आ० व० ८ ) उपलब्ध हैं।

**(१३) सहजकीर्ति**—आप क्षेमकीर्तिशाखा मे श्री हेमनन्दनजी ( सं० १६४५ सुभद्रा चौ० कर्ता, जयपुर-भण्डार ) के शिष्य थे। आप प्रकाण्ड विद्वान और उत्तम कवि थे। लौद्रवपुर के शिलापट्ट पर उत्कीर्ण "शतदलपद्मयन्त्रमय श्रीपार्श्व स्तव०" (सं०१६८३ कार्तिक शुक्ला १५) आप की ही अद्वितीय कृति है। जैन लेख सग्रह (भाग ३) मे बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर एम० ए० बी० एल० लिखते हैं—शिला पट्टपर खुदा हुआ ऐसा उत्तम काव्य अन्यत्र देखने मे नहीं आया। इससे आपके पाण्डित्य का अच्छा परिचय मिलता है। आपकी निम्नोक्त कृतियें उपलब्ध हैं —

( १ ) देवराज चौ० ( सं० १६७२ जयपुर भ० ), ( २ ) वच्छराज चौ० ( पत्र ३७ हमारेसग्रह मे ), ( ३ ) शत्रुञ्जय महात्म्य रास ( सं० १६८४ आसनीकोट जय० भ० ), ( ४ ) सागरसेठ चौ० ( सं० १६७५ बीकानेर, श्रीपूज्यजी स० ), ( ५ ) हरिश्चन्द्र

चौ० ( सं० १६१७ जे० सु० १५ कर्णपुरी ) जोड़सहीर ( स० १६२१ नागोर), उपलब्ध हैं। इनके शिष्य हेमानन्द थे,जिनके रचित वैतालपचीसी ( स० १६४६ इन्द्रोत्सव दिन ) और भोजचरित्र-चो० ( स० १६५४ भदाणइ ) आदि प्राप्त हैं।

(१७) जयनिधान—आप वा० राजचन्द्रके शिष्य थे। इनका बनाया हुआ (१) धर्मदत्त धनपति रास (अहमदाबाद) (२) सुरप्रिय रास (मुलतान) और कई छोटी कृतिए उपलब्ध हैं।

श्री कीर्त्तिरत्नसूरि परम्परा —

(१८) लब्धिकल्लोल—आप वा० विमलरंगके शिष्य थे। श्री "जिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास" और बहुतसी गहुलियें आपकी रचित उपलब्ध हैं। इनके २ शिष्य थे (१) गङ्गदास—इनके रचित वंकचूलरास ( स० १६७१ आ० सु० २ पातीग्राम ) मिलता है ( २ ) ललितकीर्त्ति-अगडदत्त रास ( स० १६७६ जे० सु० १५ भजनगर), कर्त्ता, इनके शिष्य राजहर्ष थे जिनके रचित थावच्चा सुकोशल रास (स० १७०३ माघ सु० १३ बीकानेरमें) उपलब्ध है।

(१९) हर्षकल्लोल—इनके शिष्य 'चन्द्रकीर्ति' कृत यामिनी भानु मृगावती चो० ( स० १६८९ आषाढ सुदी ७ बाहड़मेर ) उपलब्ध है।

(२०) भावहर्षोपाध्याय—इनका नाम पृ०१६ की फूटनोट (क्रियोद्धार कर्त्ताओं मे) आता है। आपके रचित कई स्तवनादि । स० १६२६ पर्य्यंत आप सूरिजी के आज्ञानुयायी थे। पश्चात् आपसे "भावहर्षीय शाखा" नामक गच्छ-भेद

स्त० (गा० ७६), गुणस्थानक्रमारोह वाला० (स० १६७८ ) आदि छोटे वडे और भी कई स्तवन उपलब्ध हुए हैं।

हेमनन्दनजी के यतिन्द्र (?) नामक भी एक शिष्य थे जिन्होने दशवैकालिकबाला० स० १७११ मे बनाया।

नोट —पृ० १९ मे उल्लिखित उ० कनकतिलकजी ( क्रियोद्धार कर्त्ता) के शि० लक्ष्मीविनय शि० रत्नसारके शिष्य उपरोक्त हेमनन्दन और रत्नहर्ष जी थे। इनकी परम्परा १९ वीं शताब्दि तक विद्यमान थी, नाम भी हमारे सग्रह में है।

**(१४) शुभवर्द्धन**—इनका नाम पृष्ठ १६ की फुटनोटमे क्रियोद्धारकर्त्ताओ मे आता है। इनके शिष्य सुधर्मरुचि कृत (१) आषाढभूतिरास, ( २ ) गजसुकुमाल रास, ( १७ ढाल स० १६६६ लिखित ) उपलब्ध है।

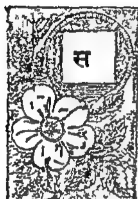
सागरचन्द्रसूरि परम्पराके विद्वान—

**(१५) ज्ञानप्रमोद**—सं० १६८१ वाग्भटालङ्कार वृत्ति कर्त्ता। इनके शिष्य विशालकीर्ति व्याकरण के अच्छे विद्वान थे। जिनका "सरस्वती" विरुद था। इन्होने ईडर राज सभामे जय प्राप्त की थी। इनके रचे 'प्रक्रियाकौमुदी' आदि कई ग्रन्थ भी उपलब्ध है। आपके शिष्य हेमहर्ष के शिष्य (१) अमर (२) रामचन्द्र—शिष्य अभय-माणिक्य शि० लक्ष्मीविनय कृत अभयकुमार रास ( सं० १७६१ फा० शु० ५ मरोट ) और ढुढक मतोत्पत्ति रास मिलते हैं। आपकी परम्परा मे भीनासर के यति सुमेरमलजी विद्यमान हैं।

**(१६) हीरकलश**—आपका ( १ ) सम्यक्त्व कौमुदी रास (स० १६२४ मा० सु० १५ वु० सवालक्ष देश ), (२) कुमतिविध्वंशन

# पन्नरहवाँ प्रकरण

## भक्तश्रावक गण




म्राट अकबरके शासनकाल मे जैन धर्मावलम्बी करोडो की सख्या मे थे। भक्तिवाद का जमाना था, लोगो का हृदय धार्मिक श्रद्धा और भक्ति से ओत प्रोत था, स्वधर्मी बन्धुओ के प्रति वात्सल्य और सद्गुरु के प्रति आदरणीय पूज्य-भाव छलकता था। उस समय के अनेक सुश्रावक स्थान-स्थान मे प्रतिष्ठाप्राप्त, राजमान्य, आमात्यादि उच्चपदाधिकारी, वैभव सम्पन्न, दानी, वीर और धर्मिष्ट थे।

हमारे चरित्र-नायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी के भक्त-श्रावको की सख्या लाखो * पर थी। भारत-भूमि के प्राय सभी प्रान्तो मे

* यथा इस्त प्रभावातिशयममिद्धुर्मंत्रिकर्मादिचन्द्रा।
श्रीमत्साह्विदा साहेरकबर नृपते प्राप्त सभ्य प्रतिष्ठा ॥
स्थाने स्थाने प्रकृष्टा नरपति विदिता श्रावका ऋद्धिमन्त
सघाध्यक्षा विपक्षप्रतिभयजनका लक्ष सख्या विशेषात् ॥ ७ ॥
[वादी हर्षनन्दन कृत "मध्यान्ह व्याख्या" स० १६७३]

हुआ। इनका विशेप परिचय "ऐतिहास-जैन-काव्य-सग्रह" में देखना चाहिये।

(२१) विजयमेरु—इनके रचित "हसराज वच्छराज प्रवन्ध" (सं० १६६६ लाहोर) उपलब्ध है।

इनके अतिरिक्त सूरिजी के आज्ञानुवर्त्तियो साधु सङ्घ मे अनेक विद्वान और अनेक कवि थे। किन्तु विस्तार भय, विपय की निरसता एव अधिक लिखना विपयान्तर हो जाने के कारण उनका परिचय नहीं लिखा गया है। उपरोक्त विद्वानो के परिचय में भी हमने वहुत ही सक्षेप किया है। वीकानेर ज्ञानभण्डार की सूचियें, नोटस् इत्यादि सामग्री परिचय लिखने के समय पास मे न होनेसे वहुत सी अप्रसिद्ध कृतियो का परिचय भी नहीं लिख सके। भविष्य मे हमारे सहृदय पाठको की अभिरुचि हुई और तथाविध अवसर मिला तो गवेपणा-पूर्ण विस्तृत आलोचना करने की अभिलापा है।



अश अपूर्ण-सा रह जाता है, और हम भी उनकी महान सेवाओ का गुणानुवाद लिखने का लोभ सवरण नहीं कर सकते, अत इस प्रकरण में उनका यथाज्ञात जीवन लिखा जायगा।

## मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र

ओसवाल जाति के पुनीत इतिहास मे बच्छावत वश की गरिमा गौरवान्वित है। इस वश की उज्ज्वल कीर्ति-कौमुदी का "कर्मचन्द मन्त्रि वश प्रबन्ध से" विस्तृत वर्णन है। बीकानेर राज्य से इस वश के महापुरुषो का राज्यस्थापना से लगाकर लगभग १५० वर्षों तक घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। सक्षिप्त मे इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि बीकानेर राज्य की सीमा की वृद्धि और रक्षा करने मे उनका बहुत-कुछ हाथ था। राजनैतिक क्षेत्र के साथ-साथ धार्मिक क्षेत्र मे भी इस वश के पुरखाओ की सेवा विशेष उल्लेखनीय है।

बच्छावत वश को जैनधर्मानुरागी बनाने का श्रेय खरतर गच्छ के आचार्य्यो को है, उन्होने भी कृतज्ञता स्वरूप इस गच्छ के प्रति काफी श्रद्धाञ्जलि समर्पण की है। जिसका विशेष परिचय "कर्मचन्द्र वश प्रबन्ध"से करना चाहिये। यहाँ हम मात्र सूरिजी के जीवन से सम्बन्ध रखने वाले म० सग्राम सिंहजी और कर्मचद्रजीका सक्षिप्त परिचय देते हैं।

मन्त्री नगराज के पुत्र सग्रामसिंहजी खरतर गच्छ के प्रति बहुत ही भक्ति और अनुराग रखने वाले थे। तत्कालीन गच्छ के शिथिलाचार को हटा कर सुव्यवस्था करने मे आपकी प्रेरणा ही मुख्य थी।



राजमान्य मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र वच्छावत

अंश अपूर्ण-सा रह जाता है, और हम भी उनकी महान सेवाओं का गुणानुवाद लिखने का लोभ संवरण नहीं कर सकते, अतः इस प्रकरण में उनका यथाज्ञात जीवन लिखा जायगा।

## मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र

ओसवाल जाति के पुनीत इतिहास में बच्छावत वंश की गरिमा गौरवान्वित है। इस वंश की उज्ज्वल कीर्ति-कौमुदी का "कर्मचन्द मन्त्रि वंश प्रबन्ध से" विस्तृत वर्णन है। बीकानेर राज्य से इस वंश के महापुरुषों का राज्यस्थापना से लगाकर लगभग १५० वर्षों तक घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। संक्षिप्त में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि बीकानेर राज्य की सीमा की वृद्धि और रक्षा करने में उनका बहुत-कुछ हाथ था। राजनैतिक क्षेत्र के साथ-साथ धार्मिक क्षेत्र में भी इस वंश के पुरुषाओं की सेवा विशेष उल्लेखनीय है।

बच्छावत वंश को जैनधर्मानुरागी बनाने का श्रेय खरतर गच्छ के आचार्यों को है, उन्होंने भी कृतज्ञता स्वरूप इस गच्छ के प्रति काफी श्रद्धाञ्जलि समर्पण की है। जिसका विशेष परिचय "कर्मचन्द्र वंश प्रबन्ध"से करना चाहिये। यहाँ हम मात्र सूरिजी के जीवन से सम्बन्ध रखने वाले म० संग्राम सिंहजी और कर्मचद्रजीका संक्षिप्त परिचय देते हैं।

मन्त्री नगराज के पुत्र संग्रामसिंहजी खरतर गच्छ के प्रति बहुत ही भक्ति और अनुराग रखने वाले थे। तत्कालीन गच्छ के शिथिलाचार को हटा कर सुव्यवस्था करने में आपकी प्रेरणा ही मुख्य थी।



राजमान्य मंत्रीश्वर कर्मचन्द्र वच्छावत

अंश अपूर्ण-सा रह जाता है, और हम भी उनकी महान सेवाओं का गुणानुवाद लिखने का लोभ संवरण नहीं कर सकते, अतः इस प्रकरण में उनका यथाज्ञात जीवन लिखा जायगा।

## मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र

ओसवाल जाति के पुनीत इतिहास में बच्छावत वंश की गरिमा गौरवान्वित है। इस वंश की उज्ज्वल कीर्ति-कौमुदी का "कर्मचन्द्र मन्त्रि वंश प्रबन्ध में" विस्तृत वर्णन है। बीकानेर राज्य से इस वंश के महापुरुषों का राज्यस्थापना से लगाकर लगभग १५० वर्षों तक घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। संक्षिप्त में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि बीकानेर राज्य की सीमा की वृद्धि और रक्षा करने में उनका बहुत-कुछ हाथ था। राजनैतिक क्षेत्र के साथ-साथ धार्मिक क्षेत्र में भी इस वंश के पुरुषों की सेवा विशेष उल्लेखनीय है।

बच्छावत वंश को जैनधर्मानुरागी बनाने का श्रेय खरतर गच्छ के आचार्यों को है, उन्होंने भी कृतज्ञता स्वरूप इस गच्छ के प्रति काफी श्रद्धाञ्जलि समर्पण की है। जिसका विशेष परिचय "कर्मचन्द्र वंश प्रबन्ध" से करना चाहिये। यहाँ हम मात्र सूरिजी के जीवन से सम्बन्ध रखने वाले म० संग्राम सिंहजी और कर्मचन्द्रजी का संक्षिप्त परिचय देते हैं।

मन्त्री नगराज के पुत्र संग्रामसिंहजी खरतर गच्छ के प्रति बहुत ही भक्ति और अनुराग रखने वाले थे। तत्कालीन गच्छ के शिथिलाचार को हटा कर सुव्यवस्था करने में आपकी प्रेरणा ही मुख्य थी।



राजमान्य मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र वच्छावत

अश अपूर्ण-सा रह जाता है, और हम भी उनकी महान सेवाओं का गुणानुवाद लिखने का लोभ सवरण नहीं कर सकते, अत' इस प्रकरण मे उनका यथाज्ञात जीवन लिखा जायगा।

## मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र

ओसवाल जाति के पुनीत इतिहास में बच्छावत वश की गरिमा गौरवान्वित है। इस वश की उज्ज्वल कीर्ति कौमुदी का "कर्म-चन्द्र मन्त्रि वश प्रबन्ध से" विस्तृत वर्णन है। बीकानेर राज्य से इस वश के महापुरुषो का राज्यस्थापना से लगाकर लगभग १५० वर्षों तक घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। सक्षिप्त मे इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि बीकानेर राज्य की सीमा की वृद्धि और रक्षा करने मे उनका बहुत-कुछ हाथ था। राजनैतिक क्षेत्र के साथ-साथ धार्मिक क्षेत्र मे भी इस वश के पुरुषाओ की सेवा विशेष उल्लेख-नीय है।

बच्छावत वश को जैनधर्मानुरागी बनाने का श्रेय खरतर गच्छ के आचार्यो को है, उन्होने भी कृतज्ञता स्वरूप इस गच्छ के प्रति काफी श्रद्धाञ्जलि समर्पण की है। जिसका विशेष परिचय "कर्म-चन्द्र वश प्रबन्ध" से करना चाहिये। यहाँ हम मात्र सूरिजी के जीवन से सम्बन्ध रखने वाले म० सग्राम सिंहजी और कर्मचद्रजीका सक्षिप्त परिचय देते हैं।

मन्त्री नगराज के पुत्र सग्रामसिंहजी खरतर गच्छ के प्रति बहुत ही भक्ति और अनुराग रखने वाले थे। तत्कालीन गच्छ के शिथिला-चार को हटा कर सुव्यवस्था करने में आपकी प्रेरणा ही मुख्य थी।

स० १६१३ मे जब सूरिजी ने क्रियोद्धार किया, तब आपने बहुत-सा धन शुभ कार्यों में विनोर्ण किया था *। जिसका उल्लेख हम तीसरे प्रकरणमे कर आये हैं। इन्होने अपने मातुश्री के पुण्यार्थ पोषधशाला निर्माण कराई, और २४ बार बीकानेर मे चादी के रुपयो की लाहण की। राय कल्याणसिंहजी के आप मन्त्री थे, और हसनकुलीखान से आपने ही सन्धि की थी। तीर्थाधिराज शत्रुञ्जय की यात्रा कर वापिस-आते हुए मेवाडाधिपति महाराणा उदयसिंह से आप सम्मानित हुए थे। चतुर्विध-संघ और श्रुत ज्ञान-की भक्ति मे आपने बहुत-सा द्रव्य व्यय किया था। स० १६११ मे इनके कथन से श्री० साधुकीर्तिजी ने "सप्तस्मरण-बालावबोध" रचा, जिसकी प्रति श्री पूज्यजी के संग्रह मे है।

आपके सुरताण देवी, भगवता देवी और सुरुपा देवी नाम की सिद्धान्त श्रवण रक्ता और धर्मपरायणा भार्या त्रय थीं।

मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र और जसवंत × आपके ही पुत्र-रत्न थे।

---

* श्रीजिनचन्द्र सूरीणा, समग्र गुणशालिनाम्।
क्रियोद्धार महश्चक्रे, येन वित्त व्ययेन वै ॥ २४ ॥

[ कर्मचन्द्र वंश प्रबन्ध ]

× बच्छावतों की पद्य वंशावली से ज्ञात होता है कि कर्मचन्द्र के बीकानेर छोडने के पश्चात् ये राजा रायसिंह के पास रहे थे। एक समय थट्टा नगरकोविजय करने के लिये सम्राट ने अपनी सभा में बीडा फेरा, अन्य किसी के न लेने पर राजा रायसिंह ने वह बीडा उठाया और बहुत-सी सेना लेकर युद्ध के निमित्त थट्टा गये। इस समय जसवन्त ने अपनी

बाल्यकाल मे ही कर्मचन्द्र की प्रतिभा के परिचायक हाथ-पावो की शुभ रेखाए और लक्षणो को देख कर राय कल्याणसिंहजी* ने संग्राम सिंहजी की मृत्यु के अनन्तर इन्हे आमात्य पद दिया। इन्होने शत्रुञ्जय, आबू, गिरनार, स्तम्भ तीर्थ आदि की सपरिवार यात्रा की। ये राजनीति, युद्धकला, मन्त्रि कराने मे कुशल होने के साथ-साथ वीर, दानी और धर्मात्मा भी थे।

---

स्वामीभक्ति और वीरता का अच्छा परिचय दिया, जिससे महाराजा ने प्रसन्न होकर बहुत सम्मानपूर्वक इन्हें "मन्त्रि पद" पर नियुक्त किया। जयवन्त जैसे वीर थे वैसे दानी भी थे। सांकर को आपने बहुत सा दान दिया था। गद्य वंशावलीमें आप को मृत्यु कुवर भींवराज की अवकृपा के कारण हुई लिखा है। इनकी सन्तति के विषय मे पृ० २३८ में गद्य वंशावलीका फूटनोट देखे।

* ये राय जैतसीजी के पुत्र थे। इनका जन्म स० १५७५ माघ सु० ६ को हुआ। स० १६०१ पोष सुदि १९ को बीकानेर की राज-गद्दी पर पर बैठे। इन्होने शत्रुके हाथ म गए हुए बीकानेर राज्य को पुन प्राप्त किया। स० १६२८ के वैसाख वदि ५ को इनका देहान्त हुआ।

इन्होने कर्मचन्द्र को आमात्य पदपर नियुक्त किया, कर्मचन्द्र ने सम्राट की कृपा मे इन्हें जोधपुर के राज्य गवाक्ष मे बैठाने का गौरव प्राप्त किया था, उस घटना को यदि कल्याणसिंहजी के स्वर्गवाससे ३-४ वर्ष पूर्व मान ली जाय, तो कर्मचन्द्र के मन्त्री होने का समय स० १६२५ के पूर्व होता है। अगर उस समय उनकी अवस्था लगभग २०-२५ वर्ष की भी अनुमानित करें, तो कर्मचन्द्रजी का जन्म स० १६०० के लगभग होना सम्भव है।

एक बार राय कल्याणसिंहजीने जोधपुर के राज-गवाक्ष मे बैठ कर कमल पूजा करने का अपने पूर्वजो के दुस्साध्य और चिर-कालीन मनोरथ, मन्त्रीश्वर के समक्ष प्रगट किया। उन्होने अपने स्वामी की भक्तिवश कुमार रायसिंहजो के साथ सम्राट अकबर के पास जाके उनको प्रसन्न कर, * इस विषम और कठिन कार्य को भी सिद्ध कर दिया। मन्त्रीश्वर की इस सेवा से प्रसन्न होकर राय कल्याणसिंहजी ने उन्हें मनोवाञ्छित मागने को कहा, किन्तु उन्हें तो वैभव से भी धर्म अधिक प्रिय था, इससे अन्य कुछ भी न चाह कर यह याचना की (१) चातुर्मास मे कुम्भार, हलवाई, तेली वगैरह, अपने तिल पीडनादि हिंसात्मक कार्य न करें। (२) वणिकों से "माल" नामक कर लिया जाता है और जकात, जो कि चतुर्थांश ली जाती है, भविष्य मे न ली जाय। (३) बकरी, भेड, वस्त्रादि का कर न लिया जाय। नरेश ने इन बातो की सहर्ष स्वीकृतिके साथ विशेष कृपा का परिचायक चार गाव का (वंश परम्परा तक) पट्टा प्रदान किया।

दिल्ली पर आक्रमण करने आते हुए 'इब्राहिममीर्जा' को नागौर के

* सम्राट को प्रसन्न करने का कारण "ओसवाल जाति के इतिहास" में लिखा है कि जिस समय कर्मचन्द्र दिल्ली (?) दरबार में गये, तब सम्राट सतरंज खेल रहे थे। सतरज की चाल रुकी हुई थी, क्योंकि जो चाल चलते, उसी में वे हारते थे। कहा जाता है कि कर्मचन्द्र ने सतरंज की ऐसी चाल बताई कि बादशाह विजयी हो गए और मन्त्रीश्वर पर खूब प्रसन्न हुए।

पास कुमार रायसिंहके साथ मन्त्रीश्वरने सग्राम करके पराजित किया। सम्राट की मदद के लिये गुजरातपर चढ़ाई करके 'मीर्जामहमद हुसेन' से युद्ध कर विजय प्राप्त की। सन्धिविग्रहादि में अपनी निपुणता और बुद्धि वैभव से, सोजत समियाणा और आबू देश को सर किये। जालोर के अधिपति को वश कर रायसिंहजी के पाय नामी किया। सम्राट से आज्ञा प्राप्त कर मुगल सेना से आक्रमित आबू तीर्थ की रक्षा और वहा के चैत्यों की पुन सुव्यवस्था की। शिवपुरी से आये हुए बन्दीजनोंको अपने घर लाकर सम्मानित किया। आबू-के मन्दिरों को स्वर्णदण्ड, ध्वज और कलश चढ़ाकर सुशोभित किये। समियाणा के बन्दीजनों को रायसिंहजी की कृपा से सैनिकों के हाथ से छुड़ाया।

स० १६३५ के महादुष्काल के समय १३ महीने तक मन्त्रीश्वर ने दानशाला खोल कर दीन, हीन, रोगग्रस्त व्यक्तियों को खान-पान, वस्त्र औषध आदि देकर प्रशसनीय सहायता की। वह सहा-यता सकुचित क्षेत्र में न हो कर, जो कोई भी चाहे किसी धर्म और जातिका हो, प्रदान की गयी। स्वजातीय और स्वधर्मियोंकी तो बात ही क्या? वर्षभर के खरच योग्य द्रव्य उनके घर गुप्त-रूप से पहुचा दिया गया। १३ मास के पश्चात् सुकाल हो जानेपर आश्रितों को अपने खरच से साथी देकर स्वस्थान पहुचा दिये।

स० १६३३ में तुरसमखान ने सीरोही लूटी। वहा से १०५० जिन प्रतिमाए लेकर फतहपुर में सम्राट अकबर को पेश की। सम्राट ने अपने धर्म-सहिष्णुता गुण से कर सोने निकालना निषिद्ध

करके एक अच्छे स्थान में हिफाजत से रखने का आदेश दिया, और यह भी कहा कि मेरी आज्ञा के बिना किसी को मत देना। जैन सघ मे उन प्रतिमाओ को पुन प्राप्त करने की आतुरता बढने लगी। लेकिन सम्राट से मिल कर उनको आज्ञा प्राप्त करना भी तो कोई सहज नहीं था। ५-६ वर्ष बीत गये, किन्तु जिनबिम्बो को छुडाने मे कोई समर्थ न हो सका। जब यह बात मंत्रीश्वर कर्मचंद्र ने सुनी तो उनके हृदय मे बहुत असरी और येनकेनप्रकारेण लाखो रुपये खर्च करके भी उन्हे प्राप्त करने के लिये अपने स्वामी रायसिंह से निवेदन किया। इस पर वे भी मन्त्रीश्वर के साथ हो गये और सम्राट अकबर को बहुत सी भेटें करके प्रसन्नता प्राप्त कर ली। उनके मागने पर सम्राट ने समस्त प्रतिमाए उन्हे सुपुर्द करने का फरमान दे दिया।

स० १६३६ के मिती आषाढ शुक्ला ११ गुरुवार के दिन उन प्रतिमाओ को प्राप्त करके, डेरे मे लाए, जैन सघ बहुत हर्षित हुआ। मन्त्रीश्वर ने इस कार्य से शासन की अपूर्व सेवा की। फतैपुर से समस्त प्रतिमाएं अपने साथ बीकानेर ले आये और महोत्सवपूर्वक अपने घर देहरासर मे स्थापित की ×।

× इस विषय के हमें दो तत्कालीन स्तवन उपलब्ध हुए है, उन्हीं के आधार से यह वृतान्त लिखा गया है, वे स्तवन भविष्य में हमारी ओर से प्रकाशित होनेवाले "बीकानेर जैन लेख सग्रह" में प्रकाशित होंगे।

इन प्रतिमाओ में मूलनायक श्री वासुपूज्य स्वामी की चोवीसी-मूर्ति आज भी "वासपूज्यजी के मन्दिरमें विद्यमान है। अन्य प्रतिमाए भी

सम्राट् अकबर ने प्रसन्न होकर वच्छराज के वंशजो की मत्रि-पत्नियो के पैरो मे नुपूर आदि सोने क आभूषण पहनने की आज्ञा देकर वच्छावत वंश का महत्व वढाया। इससे पहले ओसवाल वशज "साधु-सा॰ग" के घराने की स्त्रियो के अतिरिक्त दूसरो के लिए यह आज्ञा नहीं थी।

तुरसमखान के गुजरात से लाए हुए वणिक-कैदियो को बहुतसा द्रव्य देकर छुडाया, जैन याचको को बहुतसा दान दिया, शत्रुञ्जय और मथुरा के जीर्ण चैत्यो का उद्धार कराया। प्रति-देश प्रतिग्राम प्रतिपुर मे यावत् कावुल पर्यंत सर्वत्र "लाहण" की। उ० श्री जय-सोमजी के पास ११ अग श्रीचद्र के साथ बीकानेर मे श्रवण किये, श्रुतज्ञान की भक्ति के निमित्त सिद्धान्तो के लिखाने मे बहुत सा द्रव्य व्यय किया।

एक वार वीकानेर मे सूरिजी से "भगवती सूत्र" श्रवण किया और भगवान महावीर के प्रति गणधर गौतमस्वामी के किए

कई वर्षों तक उक्त मन्दिर में प्रति दिन पूजी जाती थीं। पश्चात् इतनी प्रतिमाओंका पूजन-प्रबन्ध कठिन होने से या किसी अन्य कारण से जन-सघ ने श्रीचिन्तामणिजी के मन्दिर के भूमिगृह में रख दी। उन प्रतिमाओं को समय-समय पर उपद्रव और महामारी आदि रोग उपशान्तिके निमित्त भूमिग्रह से निकालकर अष्टान्हिक महोत्सवादि किया जाता है। हाल ही में स० १९८७ के मिती कार्तिक शुक्ला ३ को निकाल कर मिती मार्गशीर्ष कृष्णा ४ को वापिस भीतर रखी गई थीं।

हुए प्रत्येक प्रश्नपर मुक्ताफल (मोती) चढाए† । इस आगम मे ३६००० प्रश्न होने से मोतिया की सख्या भी ३६००० ही हुई, जिन मे १६७०० मोती चन्द्रवे में, ११६०० पूठिये मे अवशेष पूठा ठवणी, कवली, साज, चीटागणा आदि मे लगाए गए ।*

---

† क्षमाकल्याणोपाध्याय कृत भगवती सूत्र सझाय में —

बीकानेर तणो वलि मन्त्री, कर्मचन्द्र इण नाम ।
तिण गौतम गुरु ना नाम पूछ्या, मुक्ताफल अभिराम ॥ १३ ॥

प० दीपविजय कृत भगवती सूत्रकी गहूली में :—

"कर्मचन्द्र मोतीडे वधाई, कीन भगत गुरु सेवा ।
भगवती सूत्र सुणो बहु माने, चाखो अमृत मेवा ॥ ६ ॥

* श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरि-ज्ञानभण्डार की एक ख्यात में लिखा है —

"छिने राजा रायसिहजी रे वारे मुहते करमचन्द शहर बथेली ने बसायो, जात आप आप री बास ( गुवाड़ ) मे बसाया × × × × रायसिंहजी पातसा रे पगे लागा अर मुहते करमचन्द ने लेकर गुजरात चढ्या उठे राड जीत्या । पछे पातसाह सु मुंहते करमचन्द मुजरो कियो । तरे पातस्या कह्यो मांग कर्मचन्द ! मै तूठा, पछे पातस्या सुं अरज कर ५२ परगना राजा रायसिंह ने दराया × × × × उपासरो महात्मा नीचे देस के आपरी घोडा री घुडसाल री जागा उपासरो करायो । देहरो १ चोवीसटेरो, २ वासुपूज्यजी रा, ३ नमिनाथजी रो इम तीन देहरा पचा रे खोरे घाल्या पछे श्रीपूज्यजी पासे भगवतीजी सुण्या, पूरण हुवा ३६००० मोती चढाया तरै श्रीपूज्यजी कह्यो माहरे कइ काम नहीं अर ज्ञान काम में लगावो ! तरे १६७०० मोती री चन्दरवो करायो, ११९०० मोती को पूठीयो करायो बाकी रा पूठा ठवणी साज चीटागणा र लगाया घणो द्रव्य खरच्यो"

[illegible]

अब इस विषय में [illegible] के मत देखते हैं —

(१) [illegible] के इतिहास में लिखा है — [illegible] [illegible] की [illegible] [illegible] का प्रयोग किया। [illegible] [illegible] और [illegible] कर्मचन्द को [illegible] [illegible] रायसिंह को यह [illegible] [illegible] करके [illegible] [illegible] की सेवा करने लगा।

(२) "[illegible] के प्राचीन राजवंश" में [illegible] को मार कर कुमार [illegible] लिखा है। [illegible] यह भी लिखते हैं कि सं० १६४८ में कर्मचन्द [illegible] [illegible] गया।

(३) [illegible] ने "[illegible]" में लिखा है कि जिस समय बादशाह कर्मचन्दजी से नाराज होते थे, उस समय कर्मचन्दजी तो बैठ रहते, लेकिन बीकानेर नरेश खड़े रहते थे यह भी उनकी नाराजी का एक कारण था।

(४) "राजपूताने के जैन वीर" में श्री गोयलीयजी ने लिखा है —कि भाट को राजा रायसिंह ने एक करोड़ का दान देने के लिये आज्ञा दी, उनकी इस आज्ञा को मन्त्रीश्वर ने अनुचित

मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र के उद्योग से बीकानेर-नरेश रायसिंह पांच हजारी पद को प्राप्त हुए, 'राजा' पदसे विभूषित हुए। "राजपुताने के जैन वीर" नामक ग्रन्थ मे लिखा है कि जयपुर के राजा अभयसिंह ने बीकानेर पर आक्रमण किया तब मन्त्रीश्वर ने ही अपनी प्रखर बुद्धि द्वारा शत्रु से सन्धि करके राज्य की रक्षा की थी। सक्षेपमे इतना ही कहना पर्य्याप्त होगा कि मन्त्रीश्वर ने बीकानेर राज्य की सेवा और स्वामी-भक्ति करने मे कोई कसर नहीं रखी। बीकानेर राज्य के इतिहास मे लिखा है कि सं० १६४५ मे बीकानेर का वर्त्तमान दुर्ग बनाना आपने ही प्रारम्भ किया था।

अन्यदा किसी कारण* से रायसिंहजी का चित्त-कालुष्य जान

---

* कर्मचन्द्रमन्त्रि-वश प्रबन्ध ( १६५० ) वृत्ति में :— "अथ अनन्तर अन्यदा अन्यस्मिन काले दैव शुभाशुभ कर्म दैव योगाद् विधि वशात् कलिकालस्य विक्षभित विलसित निजेशस्य आत्मीय प्रभो श्री रायसिंहस्य वैमनस्य चित्तकालुष्य निजे चित्ते ज्ञात्वा राज्ञ श्रीराजसिंहस्य आज्ञा आदेश समासाद्य प्राप्य निज जन स्वजन वर्ग समादाय गृहीत्वा मेदनी तट मेडतापुरेत्याख्ययाख्यात अध्यास्त् अध्यसिष्टत् अध्यवसत्, किम्भूतो मन्त्री स्वामी एव धन,तेनधिक: अतिशायि स्वामीधर्मधनाधिक ॥३३५-३६॥

श्रीजिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास ( स० १६५८ रचित ) मे —

पिशुन तणे पग फेर, मूंकी बीकानेर।
लाहोर जइय उच्छाहि सेव्यो श्री पतिसाह ॥ ३२ ॥

वच्छावतों की पद्य प्राचीन वशावली में —

"जाणी न बात हुई जिकाय, रायसिंह करमचन्द पडी राय।
यह कमो गयो पतिसाह पास, विशरियह राय लियह ग्रास घास ॥१२॥

कर भावी के शुभ संकेत से उनका आदेश लेकर विचक्षण और बुद्धिमान मन्त्रीश्वर, दीर्घदर्शिता से अपने स्वजन परिवार के साथ

---

अब इस विषय में आधुनिक इतिहासकारों के मत लिखते हैं —

( १ ) बीकानेर राज्य के इतिहास में लिखा है —' निदान अकबर ने रायसिंहजी की स्वावलम्बता को अधिक स्फूर्ति पाते देख फौरन भेद नीति का प्रयोग किया। यानी राजाजी के ज्येष्ठ पुत्र दलपतसिंहभाई, रामसिंह और दीवान कर्मचन्द को फोड़ कर राज्य में दो दल कर दिये। जब राजा रायसिंह को यह भेद ज्ञात हुआ, तो उन्होंने रामसिंह को तो विष-प्रयोग द्वारा शान्त कर दिया और दीवान कर्मचन्द बच्छावत को पदच्युत करके रियासत से निकाल दिया। वह सपरिवार दिल्ली जाकर बादशाह की सेवा करने लगा।

( २ ) "भारत के प्राचीन राजवंश" में वैमनस्य का कारण रायसिंह को मार कर कुमार दलपतसिंह को गद्दी बिठाने की आकाँक्षा लिखा है। रेऊजी यह भी लिखते हैं कि सं० १६५२ में कर्मचंद भागके अकबर के पास गया।

( ३ ) कर्नल पावलेट ने "बीकानेर गजेटियर" में लिखा है कि जिस समय बादशाह कर्मचन्द्रजी से सतरंज खेलते थे, उस समय कर्मचन्द्रजी तो बैठे रहते, लेकिन बीकानेर नरेश खड़े रहते थे, यह भी उनकी नाराजी का एक कारण था।

( ४ ) "राजपुताने के जैन वीर" में श्री गोयलीयजी ने लिखा है —कि एक बार शंकर भाट को राजा रायसिंह ने एक करोड़ का दान देने के लिये मन्त्रीश्वर को आज्ञा दी, उनकी इस आज्ञा को मन्त्रीश्वर ने अनुचित

मेड़ते में आकर निवास करने लगे। वे प्राचीन तीर्थ फलवर्द्धि पार्श्व-

---

समझा × × × × कर्मचन्द्र ने बीकानेर के घराने से भक्ति और प्रेम के कारण अपव्ययी राजा को सचेत करने का फिर उद्योग किया, परन्तु उसका परिणाम बहुत भीषण हुआ।"

गोयलीयजी ने टाड साहब की राय देते हुए उपरोक्त दलपतिसिंह के विषय में षड्यन्त्र के दोष से कर्मचन्द्र के बिलकुल मुक्त होने का उल्लेख इस प्रकार किया है — गरज यह कि कर्मचन्द्र षड्यन्त्र के दोष से बिलकुल विमुक्त था, उसने सत्य और न्याय के कार्यों के लिए अपने प्राण निछावर कर दिये। वह किसी षड्यन्त्र का रचियता नहीं था, वह स्वयं षड्यन्त्र का शिकार हो गया। उसकी बुद्धिमानी और कर्त्तव्यतत्परता ही, जिनसे उसने राज्य को सम्भाल रखा था, उसके नाश का कारण हुई। जो राजा को अपव्यय और दुराचार में फसा देखना चाहते थे, उनका जोर बढ़ता गया और कर्मचन्द्र के तरफ से राजा के कान भरने शुरू कर दिये और षड्यन्त्र रचने का दोष लगाया।

मुंशी देवीप्रसादजीने रायसिंहजी की नाराजी का एक अन्य ही कारण बतलाया है, लेकिन हम आधुनिक इतिहासकारों के किसी भी कारण से सहमत नहीं हैं। मन्त्रीश्वर के पवित्र हृदय, उनकी स्वामीभक्ति और राज्य-सेवाएं देखते हुए उनके राज-विद्रोही आदि होने का दोष केवल कपोलकल्पना और मनगढन्त किम्वदन्ती ही ज्ञात होती है।

हमारे इस कथनके मुख्य हेतु ये हैं —

मन्त्रीश्वर सं० १६४७ के साल में लाहौर पहुंच चुके थे। सं० १६४८ मे अकबरने सूरिजी को आमन्त्रित किया, उस समय मंत्रीश्वर भी वहीं थे। अतः रेऊजी का "सं० १६५२ में कर्मचन्द्र भागकर दिल्ली गया" लिखना

नाथ और जिनदत्तसूरिजी की भक्ति सहित पूजा किया करते थे।

बिल्कुल गलत है। सं० १६५० में "कर्मचन्द्रमन्त्रिवंशप्रबन्ध" लाहौरमें रचा गया था। उसमें मन्त्रीश्वरका महाराजा रायसिंह के आदेश से मेड़ता जाना, वहांसे सम्राट के पास भी उन्हींकी आज्ञा से आना, स्पष्ट रूप से लिखा है। इतना ही नहीं, किन्तु सम्राट के सम्मान पात्र हो, लाहौर में रहते हुए भी मन्त्रीश्वरने श्रीजिनचन्द्रसूरिजी का "युगप्रधान पद" महोत्सव भी रायसिंहजी की आज्ञा प्राप्त करके ही किया था। जैसा कि —

तत्रश्च सचिव स्वामी, धर्म धोरयता धर।
श्री रायसिंह भूपाल, पादशाहं समागमत् ॥ ४८९ ॥
सर्व वृत्तान्त माख्याय, साहयुक्त साहसाग्रणी।
प्राप्वसेह महादेशं, सिंह प्रक्षरितो भवत् ॥ ४९० ॥

अतः उक्त घटना के ७।६ मास पश्चात् लिखित, ऐतिहासिक प्रमाण से किम्वदंतिया को अधिक महत्त्व देना बड़ी भारी भूल है। "उक्त वंश प्रबंध" से, गोयलीयजीका कर्मचन्द्र जी को निर्दोष और शेषपर्यन्त स्वामी-भक्ति-परायण लिखना, प्रमाण और युक्ति पुरस्सर ज्ञात होता है। यह सम्भव है कि किसी चुगलखोर ने कर्मचंद्र क उत्कर्षसे असह्यमान होकर उनके विरुद्ध असत्य या व्यर्थ आक्षेप लगाकर राजासाहब की अप्रसन्नता उत्पन्न करा दी हो। "श्रीजिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास" का "पिशुन तणे पर फेर" वाक्य भी हमारे इस कथनकी पुष्टि" करता हैं। सारांश यह है कि कर्मचन्द्र जी राजविद्रोही नहीं थे।

नं० ३ और ४ के कारण भी कोई महत्त्व के और विश्वसनीय ज्ञात नहीं होते।

आधुनिक सभी लेखक, सम्राट अकबर की सेवा में मन्त्रीश्वरका दिल्ली

मंत्रीश्वर के बीकानेर छोडकर मेडता जाने का समय सं० १६४६ और ४७ के बीच मे है क्योंकि गुणविनयजी ने स० १६४६ में "रघुवश वृत्ति" बीकानेर में रची थी, उसकी प्रशस्ति मे उस समय कर्मचंदजी के वहा ही मंत्रीश्वर पद पर होने का ऐसा उल्लेख है —

"श्रीरायसिंह भूभुजि निज भुजबल निर्जितारि नृप राज्ये।
सन्ध्यादि गुण विचक्षण मंत्रीश्वर कर्मचन्द्र वरे॥"

और उन्होने ही सं० १६४७ मेडते में 'दमयन्ती चंपूवृत्ति" की रचना की, उसकी प्रशस्ति में भी मंत्रीश्वर का नाम है।

जब मंत्रीश्वर मेडते मे थे, तब उन्हे बुलाने के लिए राणा मानसिंह आदि (अनेक स्थानों के) नृपतियों के आमन्त्रण आये। लेकिन वे चञ्चल न होकर धीरता से, साधारण नृपतियों की सेवा करना अनुचित समझ कई मास वहीं रहे।

सम्राट अकबर उनके गुणसमूह से भली भाति परिचित थे। क्योंकि राजा रायसिंह के साथ मंत्रीश्वर कई बार सम्राट से मिल चुके थे। सम्राट ने इनके वाक्चातुर्य्य, युद्धकौशल और परम राजनैतिज्ञता आदि सद्गुणोंकी प्रशंसा रायसिंहजी के मुख से सुनी थी और स्वयं अनुभव की थी। इस प्रसग पर सम्राट ने मंत्रीश्वर को अपने पास

---

जाना लिखते हैं किंतु उस समय सम्राट लाहौरमें ही रहते थे, और उसके पश्चात् भी कई वर्षों तक लाहौर रहे। अत उनका यह लिखना बिलकुल अयुक्त और भ्रमपूर्ण है। न मालूम किस तरह आधुनिक इतिहासकारों(!) ने बेसिर-पैरकी बातें लिख डाली हैं।

लाहोर भेजने के लिए राजा रायसिंहजी को फरमान-पत्र भेजा। तब रायसिंहजी ने सम्राट के फरमान के साथ अपनी ओर से अद्भुत कृपा वाक्यों मय सम्राट के पास जाने के लिए आदेश-पत्र भेजा*।

मत्रीश्वर अपने स्वामी रायसिंह की आज्ञा प्राप्त कर हाथी, घोडे, पैदल सेना और महान् ऋद्धि के साथ× वहा से रवाना होकर अजमेर पहुचे। वहा श्रीजिनदत्तसूरिजी की निर्वाणभूमि का स्पर्शन और चरणपादुकाओ का दर्शन करके क्रमश लाहोर पहुचे। अपने प्रबल भाग्योदय से किसी उमराव आदि के प्रयास, सहाय्य और सेवा के बिना स्वय ही सम्राट से जा मिले और बहुमूल्य भेटना करके मधुर प्रस्तावोचित और युक्तियुक्त वचनो से सम्राट के हृदय को अपने आधीन कर लिया। सम्राट ने उनके प्रति सद्दा-

* प्रसादात्पार्श्वनाथस्य, गुरोश्च कुशल प्रभो।
साहे जलाल दीनस्य, श्रुत दृष्ट गुणावले॥ ३४०॥
महाराजाधिराज श्री, राजसिंह निज प्रभु।
प्रेषितास जनोत्कृष्ट, फुरमान समन्वितम्॥ ३४१॥
समाजगाम सप्रेम, प्रसाद वचनाद्भुतम्।
फुरमान स्वशास्त्रा गन्तव्या मेवोति भाववत्॥ ३४२॥
[कर्मचन्द्र मन्त्रि-वश प्रबन्ध स० १६५०]

× उनका पुत्र आदि परिवार मेडतेमे ही रहा। "अकबर प्रतिबोध रास" से ज्ञात होता है कि लाहोर जाते हुए सूरिजी जब मेडते पधारे, तो मंत्री पुत्राने उनका प्रवेशोत्सव किया था।] जिसका उल्लेख हम इसी ग्रन्थके पृ० ७१ मे कर आये हैं।

नुभूति और कृपा प्रगट करते हुए कहा "तुम किसी तरह की चिन्ता मत करो, जैसे वारिवाह-मेघ अंकुर को बढाता है वैसे ही मैं तुम्हे सब राजाओ से अधिक सन्मानित होने का गौरव दूंगा।" वे केवल यह कहके ही नहीं रह गये, किन्तु मंत्रीश्वर को अपने परिषद के सामाजिक लोगो का अध्यक्ष बनाया और अपना निजी हाथी, सोने के आभूषणो से सुसज्जित शिकारी घोडा समर्पण किया, इतना ही नहीं थोडे दिनो मे वे सम्राट के इतने विश्वास-पात्र हो गए कि उन्होंने मंत्रीश्वर को अपने भण्डार (गञ्ज) अर्थात् खजाने का अधिकारी ( खजान्ची ) और तोसाम देश का गवर्नर नियुक्त किया।

उसके पश्चात् मंत्रीश्वरका सम्राटके पुत्र शाहजादा शेखू (सलीम) के मूल नक्षत्रमे उत्पन्न पुत्रीके जन्म दोषकी शान्तिके निमित्त अष्टोत्तरी-स्नात्र कराना, वा० महिमराजजी और पीछे सूरिजी को सम्राट के विनीत आमन्त्रण से लाहौर बुलाना, काश्मीर यात्रा मे सम्राट के साथ जाना, जिनसिंहसूरिजीके पद स्थापन समय सवाकरोडका दान देना और अनेक सत्कार्यों मे विपुल धनराशि व्यय कर शासन शोभा बढाने का विस्तृत वर्णन हम इसी पुस्तक के छट्ठे, सातवें और आठवें प्रकरण मे लिख चुके हैं, अत उन्हे यहा दुहराना अनावश्यक है।'अकबर प्रतिबोध-रास' से ज्ञात होता है कि आपका प्रभाव सर्वव्यापी था। सभी देशोके राजागण, अमीर उमराव, मीर, मलक, खोजा और खान आपका बहुत सम्मान करते थे। सम्राट अकबरसे आपकी प्रगाढ प्रीति थी। देखें ऐ० जैन काव्य संग्रह पृ० ६१

मन्त्रीश्वर खरतर गच्छ के अनन्य भक्त थे। तपा-गच्छीय सुप्रसिद्ध विद्वान सिद्धिचन्द्रजी ने "भानुचन्द्र चरित्र" में मन्त्रीश्वरको "खरतरगच्छ श्राद्धमुख्य और भूभुजमान्य" लिखा है। आपने फलोधी तोसाम† लाहोर आदि अनेक स्थानो में श्रीजिनकुशलसूरिजी के स्तूप बनवा कर उनकी चरण पादुकाए प्रतिष्ठित कराई थीं।

वा० गुणविनयजी ने "कर्मचन्द वश प्रबन्ध" की वृत्ति आपके ही आग्रह से रची थी ×।

श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरि ज्ञानभण्डारस्थ पट्टावली मे, स० १६५३ के दुष्काल में मन्त्रीश्वर के दानशाला खोलकर अनाथो की रक्षा करने का उल्लेख इस प्रकार है —

"मन्त्री करमचदइ पइत्रीसइ नइ* त्रिपन्नइ, गामि गामि सत्रूकार मडावी पृथ्वी डुलती रखी, पतिसाह पास थी पीतलमय प्रतिमा घणी छोडावी, वलि जिण नगरि मुहतउ गयो तिण नगरी रुपइया बि नी लाहण कीधी"

---

† श्री तोसाम पुरेवर वाछिन दान प्रधान सद् शुभे।
श्री म न्त्रिराज कारित जिनकुशल स्तूप कृत रक्षे ॥६॥
(कर्मचद्रवश प्रबन्ध वृत्ति)

× श्रीकर्मचन्द्र राजाग्रहेण, सदनुग्रहेण कुशल गुरो।

* कविवर समयसुन्दरजी कृत कल्पलता वृत्तिकी अन्त्य प्रशस्ति में —
"यद्वारे किल कर्मचन्द्र सचिव, श्राद्धोभव दीप्तिमान्।
येन श्री गुरुराज नदि महसि,द्रव्य व्ययो निर्ममे ॥
कोटे पाट युत्त शराग्नि (३५) समये, दुर्भिक्ष वेलाकुले।
सत्राकार विधानतो बहु जना, सजीविता येन च ॥ ९० ॥
और अकबर प्रतिबोधरास, जिनराजसूरि रास, जिनसागरसूरि रास

इस प्रकार अनेकानेक लोकोपकार और धर्म प्रभावना द्वारा अपने प्रशस्त कीर्ति को दिगन्त-व्यापी और अमर करके मन्त्रीश्वर सं० १६५६ मे अहमदाबाद मे स्वर्ग सिधारे। जिसका उल्लेख हम इसी ग्रन्थके १३४ वें पृष्ट में कर चुके हैं।

आधुनिक प्राय सभी इतिहासकार और लेखक-गण मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रकी मृत्यु, सम्राट अकबर के देहान्त के कुछ समय पश्चात् ही (स० १६६२-६४) दिल्ली में होना लिखते हैं। और यह भी लिखते हैं, कि उस समय महाराजा रायसिंहजी भी जहांगीर से मिलने के लिए वहीं गए हुए थे, उन्होने मंत्रीश्वर की अन्त्य अवस्था मे उनकी हवेली मे जाकर शोक प्रकट किया, महाराजा के नेत्रो से नीर वहने लगा। जव वे वापस चले गए, तव कर्मचन्द्र के पुत्रो ने महाराजा के प्रेम की वहुत प्रशसा की, परन्तु मन्त्रीश्वर ने कहा पुत्रो! तुम भूल कर रहे हो! ये आँसू प्रेमके नहीं थे। वे तो इस वातके थे कि मैं सुख और सुयश से स्वर्ग सिधार रहा हू—और राजाजी जीतेजी मुझसे वदला न ले सके! तुम भूल कर भी वीकानेर मत जाना!" तदनन्तर कर्मचन्द्र की जीवन ज्योति निर्वाण को प्राप्त हुई, परन्तु प्रतिकार-परायण महाराजा रायसिंह ने अपनी अंतिम अवस्था मे अपने विशेष प्रेमभाजन कुमार सूरसिंह के समक्ष वच्छावत-पुत्रो से वदला लेने की इच्छा प्रकट की। तत्पश्चात्

---

एन बहुतसी गहूंलियो में मन्त्रीश्वरके सुकृत्योका वर्णन है, वे रास "ऐतिहासिक-जैन काव्य-संग्रह"में देखने चाहिये।

राज्य सिंहासनारूढ हो कर सूरसिंह दिल्ली गए और कर्मचन्द्र के पुत्रो को अत्यन्त विश्वास दिला कर बीकानेर मे ले आये। महाराजा ने उन्हे सन्मान पूर्वक मन्त्री-पद पर नियुक्त किये। कई (२-४-६) मास तक तो खून कृपा बतलाई। एक समय महाराजा स्वय इनकी हवेली पर पधारे, बच्छावत-भाइयो ने एक लाख रुपये का चौतरा करके उनको सन्मानित किया। इसके पश्चात् एक दिन, रात्रि के समय उनका मकान सूरसिंह जी के ३००० सिपाहियोने घेर लिया। वे दोनो बडे वीर थे, अपने पाच सौ सैनिको के साथ सामना किया, अन्तमे राज्य की बडी-शक्ति के सामने टिके रहना कठिन समझ कर अपने सारे परिवार को मारकर स्वय जौहर कर वीरगति को प्राप्त हुए। इनके कुटुम्ब की एक गर्भवती स्त्री रघुनाथ सेवक को साथ लेकर भागी और श्रीकरणी माता के मन्दिर मे जाके शरण ली, वह राज्यके नियमानुसार रक्षा पाकर अपने पीहर मे उदयपुर चली गई, उसीके पुत्र "भाण" से वश परम्परा चली जो अभी भी उदयपुरमे आबाद हैं।"

"महाजन वंश मुक्तावली"मे महो० रामलालजी गणि लिखते हैं, कि इनका रगतिया नामक नोकर इस युद्ध में खून वीरता से लड कर जूझार हुआ जो आज भी "रिगतमलजी" नामसे (प्रसिद्ध क्षेत्रपाल) लोगो द्वारा पूजा जाता है। वर्त्तमान रागडी के चौक का नाम पहले "माणकचौक" था। परन्तु वहा इस युद्धमे बहुत से रागड (राजपूत) मारे जाने से, उक्त स्थान 'रागडी"के नाम से प्रसिद्ध हो गया। उक्त पुस्तक मे भाट-मथेरणो की वशावलियें कर्मचन्द्रजी के द्वारा कुए मे

इस प्रकार अनेकानेक लोकोपकार और धर्म प्रभा
अपने प्रशस्त कीर्ति को दिगन्त-व्यापी और अमर करके
सं० १६५६ मे अहमदाबाद मे स्वर्ग सिधारे। जिसका
इसी ग्रन्थके १३४ वें पृष्ट में कर चुके हैं।

आधुनिक प्राय सभी इतिहासकार और लेखक-गण
कर्मचन्द्रकी मृत्यु, सम्राट अकबर के देहान्त के कुछ समय
ही (स० १६६२-६४) दिल्ली मे होना लिखते हैं। और
लिखते हैं, कि उस समय महाराजा रायसिंहजी भी उन
मिलने के लिए वहाँ गए हुए थे, उन्होने मंत्रीश्वर की अन्त्य
मे उनकी हवेली मे जाकर शोक प्रकट किया, महाराजा के
नीर वहने लगा। जब वे वापस चले गए, तब कर्मचन्द्र के
महाराजा के प्रेम की बहुत प्रशसा की, परन्तु मन्त्रीश्वर
पुत्रों! तुम भूल कर रहे हो! ये आँसू प्रेमके नहीं थे।
इस बातके थे कि मैं सुख और सुयश से स्वर्ग सिधार रहा
राजाजी जीतेजी मुझसे वदला न ले सके! तुम भूल
बीकानेर मत जाना!" तदनन्तर कर्मचन्द्र की जीवन ज्योति
को प्राप्त हुई, परन्तु प्रतिकार-परायण महाराजा रायसिंह
अंतिम अवस्था मे अपने विशेप प्रेमभाजन कुमार सूरसिंह
बच्छावत-पुत्रो से वदला लेने की इच्छा प्रकट की।

एव बहुतसी गहुँलियो में मन्त्रीश्वरके सुकृत्योंका वर्णन है
"ऐतिहासिक-जैन काव्य-सग्रह"में देखने चाहिये।

*पासाणी बहु वित्त वावई, पइसारइ साम्हा आरइ ।*

*सोलह शृंगारे सारी, श्री कलश धरी बहु नारी ॥ ८० ॥*

*श्री भागचन्द्र सुत आवइ, मनोहरदास निजदावइ ।*

*वलि सप सद्गुरु वदइ, श्री खरतरगच्छ चिरनंदइ ॥८१॥*

उपरोक्त प्रमाण से बीकानेर आने के पश्चात् भाग्यचंद और लक्ष्मीचद कई महीनो नहीं, बल्कि कई वर्षों तक बीकानेर में सुखपूर्वक रहे यह सिद्ध होता है।

( ३ ) भाग्यचन्द्र, लक्ष्मीचन्द्र की मृत्यु के सम्बन्ध में हमें १८ वीं शताब्दि के पूर्वार्द्ध मे लिखित बच्छावत-वंशावली* की दो प्रतियें उपलब्ध हुई हैं, जिनसे स० १६७६ के फाल्गुन मासमें सूरसिंहजीका कुपित होना और मन्त्रीश्वरके पुत्रोका मारा जाना सिद्ध है। वशावलीका आवश्यकीय सार इस प्रकार है —

*मुहता बछावतां री वशावली लिखीयै छै, देवडा गौत्र रजपूत चौवाण सोवन सी रो। सगरा रो। बोहथ। देवलवाडइ रो धणो। बोहिथ। श्रावक हुवो। अभयदेवसूरि प्रतिबोध दीयो श्रावक कीयो। प्र० सगर १ बोहिथ २ गांगो ३ समधर ४ तेजपाल ५ विजपराज ६ कडवो ७ मेरो ८ सांगन ९ ऊदो १० नागदे ११ जेसऊ १२ बछो। बछा सु सिरदार हुआ, ताणइ सु बछावत कहाणा। बच्छावत रो प्र० ( परिवार ) पुत्र ४ करमसी १ वरसिंह २ नरसिंह ३ रतो ४। करमसी निपट सिरदार हुओ। करमसीह बच्छावता रो प्र०। बेटा २। राजसी १ सूजो २। मुहतो जो सूजो। राव लूणकरण आगे होसीरी वड (वी) मोटे काम

मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र के भाग्यचन्द्र और लक्ष्मीचन्द्र दो पुत्र थे, जिन में भागचन्द्रजी के पुत्र मनोहरदास थे। राजा सूरसिंह ने कुपित होकर उनके घर के इर्द-गिर्द १००० सैनिकों का घेरा डाल दिया। उस समय भाग्यचन्द्र सोये हुए थे, लक्ष्मीचन्द्र और मनोहरदास दरबार में गये थे। भाग्यचन्द्रजी जगे, बहू मेवाडीजी

---

बछावत रो प्रवार बेटा ६ नगो १ अमरो २ मेघो ३ डुगरसी ४ भोज ५ हरो ६ ।नगै (ने) टीको दियो। अमरो सिरदार हुओ। टीकायत नगो। नगो वरसिघतरो परवार। सागो १ देवो २ राणो ३ सागो टीकायत। साग नगावत री प्र०बेटा २ मु० श्रीकरमचद जी १ जसवत। २ जसवत नु भू मर भींवराज चूक करनइ मारीयो।

करमचद सागावत रो० प्र० बेटा २ भागचद १ लखमीचन्द २ भागचन्द रो बेटा १ मनोहरदास १, राजा सूरजसिंघ मुहता उपरि कोपीयो तिवारै फोज विदा कीधी, माणस १००० मेली साथ घर दोलो फिरीयो, भागचन्द पौढीया था लखमीचन्द अनै मनोहरदास दरबार गया था, भागचन्दजी सूता जागीया तिवारे बहू मेवाडीजी मालिम कीयो राज उपरि फोज आइ। बहू कह्यो राज रो हुकम्म हुवे तो मरदो वागो करि नै हाथ जोवडा, भागच दजो बहूजी नु मनहि कीधो। आप जुहर कीधो बायर ३ मारी, माता १ मनोहर दासरी मातु मारी २ बेटारी बहु मारी ३ आप, आदमी ४ कामि आया। खवास १ मु० राजसी रो घडो जुहर कीधो। सवत् १६७९ हुकम्म हुवो फागुण सुदि माहे १ लिखमीचद करमचद- चत रो प्र० बेटा २ रामचन्द १ रुघनाथ २ प्रवार उदयपुर छै। लिखमीच दचतरो प्र० केसरीसिंघ १ सबलसिंघ २ पोयो ३ कोइ नहीं, प्रवार १ ए करमच द सागा[illegible] मचत

ने उनके ऊपर फौज चढ़ने की खबर दी, और यह भी कहा कि आप की आज्ञा हो तो मैं भी मर्दाना वेश पहन कर राज्य सेना को हाथ दिखाऊं। इस पर भाग्यचन्द्र ने निषेध किया। तत्पश्चात् (१) माता, (२) मनोहरदास की मा, (३) पुत्र-वधू (मनोहरदास की बहू) को मार कर स्वयं युद्ध करते हुए काम आए।

इसी प्रसंग पर मु० राजसी के खवास ने बड़ी वीरता से युद्ध (बडो जुहर) किया। लक्ष्मीचन्द्र के दो पुत्र थे। (१) रामचद्र (२) रुघनाथ, उनका परिवार उदयपुर में है। रामचद्र के केसरीसिंह, सबलसिंह और पीथा नामक तीन पुत्र थे। रघुनाथ निसन्तान रहे।

स० १६७६ के फाल्गुन शुक्ला में यह भयानक घटना हुई थी। किसी कविने क्या ही मार्मिक शब्दों में कहा है —

---

बेटा २ आसकरण १ अखैराज। २ आसकरण जसवतरो प्र० नरसिंघ दास १ अखैराज जसवतरो प्र० बेटा १ दुरगदास १, दुरगदास अखैराजवतरो प्र० सुंदरदास १ कल्याणदास २ प्र० २ जसवत सागावतरी विगति इतरो प्र० १ अथनगावत माहे प्र० २ भाइ रो २ मुं० देवो नगावत रो प्र० इत्यादि (इसके बाद नगावत परिवार की विस्तृत परम्परा लिखी है)।

इस वंशावली से मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र के भाई जसवन्त की मृत्यु और संतति परम्पराके विषय में भी नवीन ज्ञातव्य मिलता है, जो कि आजतक बिलकुल अज्ञात था।

मन्त्रीश्वर के पुत्रों की तो बात ही क्या? परन्तु भाग्यचन्द्र जी की वीराङ्गना पत्नी के उद्गार भी रोमाञ्चित करनेवाले हैं। उनमें सच्चे जैनत्व के साथ क्षत्रियत्व का पूरा ओज था, जिसका यह ज्वलन्त

मरिस्यइ अशत घणा महि ऊपरि, शत साहिस रिण समधरीयउ।
भागचन्द भिडतइ भारथ, मुवउ नहीं जगि उधरियउ॥ १ ॥
लाखा जम हरि कीयउ लोह वलि, रीसाणइ मारावइ राय।
सागाहरइ कियउ दम समहर, जुग जासी पिण नाम न जाइ ॥२॥
कान्हड(दे) वीरमदे कलि हूती, शाकउ ज्यू जालोर कीयउ।
चच्छाहरइ वीगाणइ भिढतइ, दो मज दु जने मरण दीयउ।३।इति
परमाणंद ते अधला, हीया थून (?) आखा जोह।
अर्द्ध कहइ न बुज्झइ, सब कुण टल्यइ तोह॥ १॥

× × × × ×

रीपाणइ सूरिजसिंघ महारिण, हूतिल जिनलइ वाहिआ हाथ।
कीयउ न को वले इम करिस्यइ, भागचद साखिउ भाराथ ॥१॥
आवे प्रहट निहट उथडे, घणा, घाघरट पाखरा घेर।
जमहर समहर तइ कीयउ, सागाहरा ग्रहे समसेर॥ २ ॥
चल छाडी पहिरी नहि वेडी, परनाले थयउ रगत प्रवाह।
करतइ कलिह भागचन्द कीयउ, सींगाला महुता वड (?) साह।३।

---

उदाहरण है।

इस वशावली में "बोहित्थ" को प्रतिबोध देनेवाले श्रीअभयदेव सूरिजी लिखे हैं, और "वश प्रबन्ध" में जिनेश्वरसूरिजीका उल्लेख है। घटना प्राचीन होने के कारण ऐसे पाठान्तर और वैषम्य हो जाते है,किन्तु हमें "वश-प्रबन्ध" का कथन ही विश्वसनीय ज्ञात होता है।

*अग्रहिचे चोथरा महारिण, तइ कीयउ करमेत तणा।*
*साकउ बीकानयर तणइ सिर, घणु सरिहस्यइ दीह घणा॥ ४॥*

[हमारे समहस्थ एक विकीर्ण पत्र से ]

इनके वंशकी प्रशसामे किसी कविने कहा है —

*प्रथम राज पृथ्वीराज, धुरा सामर सिरसधर।*
*हुवो रिणथम हमीर, विभै राजेन्द्र नरेसर।*
*जन्मतीथ जालोर, कुमर वीरम कहाणो।*
*चौथे गढ गागरण, वलि अचलेश वखाणो।*
*करमचद तणो चहुआण कुल, चिर सनाम पचेथियो।*
*भागचद उही पृथ्वीराज मिड, जिण कलि ऊपर साको कियो ॥×*

उपरोक्त बातो से ज्ञात होता है कि (१) यह घटना रात मे न होकर शायद दिन मे हुई थी, क्योकि उस समय लक्ष्मीचद्र और मनोहरदास दरबार मे गये हुए थे, लिखा है। (२) लक्ष्मीचद्र और मनोहरदास दरबार मे ही वीरगति को प्राप्त हुए हो, क्योकि वे दरबार मे ही थे, और घर पर मारे जानेवालो की नामावली मे उनका नाम नहीं है। (३) उनके मारे जाने का मुख्य कारण करमचन्दजी पर महाराजा रायसिंहजी की अनकृपा न होकर किसी कारण से भाग्यचद्र, लक्ष्मीचद्र पर महाराजा सूरसिंहजी

---

× बच्छावत वशका आदिम चौहाण कुल है, अत कविने उस कुलमें हुए नररत्नोकी प्रशसागभित यह पद्य रचा है। इस पद्यमें उल्लेखित पृथ्वीराज चौहाण और हमीर सुप्रसिद्ध ही है। जालोरके कान्हड वीरम दे का नाम कर्मचन्द्र वश प्रबन्धमें आता है, उनका विशेष परिचय साप्ताहिक पत्र जैन-क रौप्य महोत्सव अङ्क के पृ ५८ में देखना चाहिये।

के कुपित होनेका हो। हमारे इस अनुमान के दो कारण हैं — एक तो बच्छावत * भाइयोंका कई वर्षों तक बीकानेर मे रहना प्रमाणित है, यदि पहले का वैर ही कारण होता, तो उनका कइ वर्षों तक सुख-शांति से रह सकना कम सभव है। दूसरा वंशावली में "राजा सूरसिंह मुहता उपर कोपियो" लिखा है। यह वाक्य भी महत्व का ज्ञात होता है।

( ४ ) कर्मचंद्रजी का वंश, इस घटनास्थल से भगी हुई गर्भवती स्त्री † से न चल कर, पहिले से ही उदयपुर मे रहे हुए लक्ष्मीचंद्र के पुत्र रामचद्र और रुघनाथ से चला था। क्योंकि सं० १६८०-८१ में श्रीजिनसागरसूरिजी उदयपुर पधारे, तब उन्हें वन्दनार्थ रामचद्र और रघुनाथ अपनी दादी अजायबदे के साथ आये थे, जिसका उल्लेख सं० १६८१ मे रचित श्रीजिनसागरसूरि रास मे इस प्रकार है —

* भागचन्द्रजीके लिये लिखी हुई "पृथ्वीराज रासो"की गुटकाकार प्रति बिकानेर-स्टेट लाइब्रेरीमें विद्यमान है, जिसकी अंत्य प्रशस्ति यह है—

"मत्रीश्वर मण्डल (ण?) तिलक, वच्छा वश (व) खाण।
करमचद सुत करम वड, भागचद सव ? जाण। १।
सह कारण लिखियो सही, पृथ्वीराज चरित्र।
पढता सुख सम्पत्ति सकल, मम सुख होवे मित्र। २।

† गोयलीयजी लिखते है—यह महिला उदयपुर के भामाशाह की पुत्री थी। ओझाजी भी भाण को भामाशाह को पुत्रीका लड़का होनेका लिखते हैं। मेहताओं की तवारीख में"भाण" को भोजराजका पुत्र लिखा है, किन्तु अनुमानहै कि मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रजी का विवाह भामाशाह की पुत्री से हुआ

*"कुम्मल मेरइ जिन थुणि ए मेवाडइ गुण गान ।*
*उदयपुरा नउ राजियउ ए "राणउ करण" दइमान ॥९४*
*लखमीचन्द सुत परगडा ए, रामचन्द्र रघुनाथ ।*
*चित धरि वदइ महसमइ ए, अजायबदे सुत साथ ॥९५॥*

इस अवतरण से स० १६८० में रामचन्द्र रघुनाथ की अवस्था कमती-से-कमती भी हो, तो भी वे१०-१२ वर्ष के तो होने चाहिये। इससे गर्भवतीका भागना और उससे वंश चलने की बात बिल्कुल कल्पित और नि सार ज्ञात होती है।

(५) हमें जहातक की वशावली उपलब्ध है, उसमें 'भाण' का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र के जीवनसे उनके अनेकों सद्गुणों और असाधारण बुद्धि वैभव का परिचय मिलता है। इनके वशज वर्तमान समय में भी उदयपुर राज्य के उच्च पदाधिकारी और प्रतिष्ठासम्पन्न हैं, उनके विषय मे विशेष जाननेके लिये 'ओसवाल जाति का इतिहास' देखना चाहिये।

अब सूरिजीके श्रावकरत्न स० "सोमजी शिवा" का सक्षिप्त परिचय दिया जाता है।

---

हो, और उसीका नाम अजायबदे हो, और वह उपरोक्त दारुण घटनाके समय अपने पुत्रवधू व उभय पौत्रोंके साथ अपने पीहर में उदयपुर आई हुई हो। हमें उपलब्ध वशावली में भोजराज का कोई नाम नहीं मिलता।

कर्मचन्द्रजीके प्रभावसे रायसिहजीको पाचहजारी पद मिलनेका उल्लेख इस प्रकार है—

अकबर जलालादीना प्रसादतोनेक कोट पद कलित
ऋद्धि कृत मत्र योगा [illegible] च सहस्त्री तदिजेशो ॥३४॥

## संघपति सोमजी शिवा

जगत्प्रसिद्ध प्राग्वाट ज्ञातीय मन्त्रीश्वर वस्तुपालके निर्मल वंश × मे संघपति जोगीदासकी भार्या जसमा दे के कुक्षि से इन दोनो भाइयोका जन्म हुआ था। उ० क्षमाकल्याणजी अपनी

व्याख्या —श्री राजसिंह अकबर जलालदीनस्य सादे प्रसादतो प्रह्लात् अनेको यहयोये कोट्टा दुर्गाणि बलेन च सैन्येन कलित सहित अनेक कोट्ट बलकलित मन्त्रिण कर्मचन्द्रस्यो मन्त्र आलोचस्तस्ययोगात् सयोगात् मन्त्र अ ( ? प्र ) भावादित्यर्थ पचाना सहस्त्रांश अश्ववार सबन्धिन समाहार पच सहस्री तस्या पति स्वामी जज्ञे बभूव। पच हजारीकि ख्याति प्राप्त इत्यर्थ ॥३४॥

× शीलविजयजी कृत तीर्थमाला में —

वस्तुपाल मन्त्रीश्वर वश, शिवा सोमजी कुल अवतंस।
शत्रुञ्जय उपरि चौमुख कियउ, मानव भव लाहो तिण लियउ ॥

बम्बईसे प्रकाशित "श्री जिनचंद्रसूरि जीवन चरित्र"में आपके धनवान होने की एक किम्वदन्ती लिखी है —

ये दोनों भाई चिभडे का व्यापार करते थे, इनका भाग्योदय जानकर सूरिजी ने प्रतिबोध दिया। लाभ जान कर सूरीश्वरने इनके नवीन वस्त्र पर सप्रभाव वासक्षेप डाला। बहुत-से खरबूजे खरीदकर व भाई फलो के ऊपर उस वस्त्रको आच्छादित कर व्यापार करने लगे। सी समय ग्रीष्म ऋतुमें शाही फौजको किसी नगरको लूट-खसोट कर आते हुए अहमदाबाद में इनके यहा ही चिभडे खरबूजे एक-एक स्वर्ण मुहरके मूल्य में खरीदने पडे, क्योंकि खरबूजे अन्यत्र कहीं भी न मिले। इस व्यापार में सोमजी-शिवा ने अगणित द्रव्य उपार्जन किया।

रचित 'खरतर पट्टावली'मे लिखते हैं कि अहमदाबादमें ये दोनो भ्राता चिर्भटि(फल)का व्यापार करते थे। सूरिजीने इन्हें प्रतिबोध देकर जैन धर्ममें दृढ किये। इन्होने तीर्थयात्रा, नवीन बिम्बनिर्माण, जीर्णोद्धार और स्वधर्मी वात्सल्य आदि शुभकार्यो मे लाखो रुपये व्यय करके जैन शासन की महान् सेवा और प्रभावना की थी।

स० १६४४ मे जोगीशाह और सोमजी ने शत्रुजय का विशाल सघ निकालकर सूरिजी के साथ शत्रुञ्जय गिरिराजकी यात्रा की थी, जिसका उल्लेख इसी ग्रंथ के ५६ वें पेज मे कर चुके हैं।

सं० १६५३ अहमदाबाद मे आदिनाथ के नव्यनिर्मित जिनालय की सूरिजीके कर-कमलो से प्रतिष्ठा करवाई। इन्होने राणकपुर, गिरनार, आबू, गौडी-पार्श्वनाथ और शत्रुजयपर बडे-बडे सघ निकाल कर यात्राए कीं, प्रत्येक स्थानमें लाहणकी, करोडो रुपये खरच हुए, जिसका उल्लेख कविवर समयसुन्दरजी 'कल्पलता' में इस प्रकार करते हैं —

*यद्वारे पुनरत्र सोमजि शिवा, भ्राद्धौ जगद्विश्रुतौ।*
*याभ्या राणपुरश्च रैवतगिर, श्री अर्बुदस्य स्फुटम्।*
*गौडी श्री विमलाचलस्य च महा[ ], सघो नय कारितो*
*गच्छे लम्भनिका कृता प्रति पुर, रुक्मा द्विमेक पुन*

एक पट्टावली मे लिखा है —

"स० सोमजी शिवइ शत्रुञ्जय नी पहली यात्रा करी, ३६००० रुपइया खरच्या, वली वडी प्रतिष्ठायइ ३६००० रुपइया खरच्या, गिरनार आबू ना सघ कराव्या, अनेक देहरा कराव्या, बिम्ब भराव्या, खरतरगच्छ मा लाहण कीधी"

## संघपति सोमजी शिवा

जगत्प्रसिद्ध प्राग्वाट ज्ञातीय मन्त्रीश्वर वस्तुपालके निर्मल वंश × में संघपति जोगीदासकी भार्या जसमा दे के कुक्षि से इन दोनों भाइयोंका जन्म हुआ था। उ० क्षमाकल्याणजी अपनी

व्याख्या —श्री राजसिंह अकबर जलालदीनस्य साहे प्रसादतोनुग्रहात् अनेको महघोये कोट्टा दुर्गाणि बलेन च सैन्येन कलित सहित अनेक कोट्ट वद्धकलित मन्त्रिण कर्मचन्द्रस्यो मन्त्र आलोचस्तस्ययोगात् सयोगात् मन्त्र अ ( ? प्र ) भावादित्यर्थ पचाना सहस्त्राश अश्वयार संबन्धिना समाहार पंच सहस्त्री तस्या पति स्वामी जज्ञे बभूव। पंच हजारीति ख्याति प्राप्त इत्यर्थ ॥३४॥

× शीलविजयजी कृत तीर्थमाला में :—

वस्तुपाल मंत्रीश्वर वंश, शिवा सोमजी कुल अवतंश।
शत्रुञ्जय उपरि चौमुख कियउ, मानव भव लाहो तिण लियउ ॥

बम्बईसे प्रकाशित "श्री जिनचद्रसूरि जीवन चरित्र"में आपके धनवान होने की एक किम्बदन्ती लिखी है —

ये दोनों भाई चिभडे का व्यापार करते थे, इनका भाग्योदय जानकर सूरिजी ने प्रतिबोध दिया। लाभ जान कर सूरीश्वरने इनके नवीन वस्त्र पर सप्रभाव वासक्षेप डाला। बहुत-से खरबूजे खरीदकर व भाई फलो के ऊपर उस वस्त्रको आच्छादित कर व्यापार करने लगे। सी समय ग्रीष्म ऋतुमें शाही फौजको किसी नगरको लूट-खसोट कर आते हुए अहमदाबाद में इनके यहा ही चिभडे खरबूजे एक-एक स्वर्ण मुहरके मूल्य में खरीदने पडे, क्योंकि खरबूजे अन्यत्र कहीं भी न मिले। इस व्यापार में सोमजी-शिवा ने अगणित द्रव्य उपार्जन किया।

'खरतर पट्टावली'मे लिखते हैं कि अहमदाबादमें ये दोनो भ्राता
ं(फल)का व्यापार करते थे । सूरिजीने इन्हे प्रतिबोध देकर जैन
दृढ किये । इन्होंने तीर्थयात्रा, नवीन बिम्बनिर्माण, जीर्णोद्धार
स्वधर्मी वात्सल्य आदि शुभकार्यों मे लाखो रुपये व्यय करके
ासन की महान् सेवा और प्रभावना की थी ।

ं० १६४४ मे जोगीशाह और सोमजी ने शत्रुजय का विशाल
निकालकर सूरिजी के साथ शत्रुञ्जय गिरिराजकी यात्रा की थी,
ा उल्लेख इसी ग्रथ के ५६ वें पेज मे कर चुके हैं ।

ं० १६५३ अहमदाबाद मे आदिनाथ के नव्यनिर्मित जिना-
ी सूरिजीके कर-कमलो से प्रतिष्ठा करवाई । इन्होंने राणक-
गिरनार, आबू, गौडी-पार्श्वनाथ और शत्रुजयपर बडे-बडे
निकाल कर यात्राए कीं, प्रत्येक स्थानमें लाहणकी, करोडो
खरच हुए, जिसका उल्लेख कविवर समयसुन्दरजी 'कल्पलता'
प्रकार करते है —

यद्वारे पुनरत्र सोमजि शिवा, श्राद्धौ जगद्विश्रुतौ ।
याभ्या राणपुरश्च रैवतगिर, श्री अर्बुदस्य स्फुटम् ।
गौडी श्री विमलाचलस्य च महान्, सघो नय कारितो
गच्छे लम्भनिका कृता प्रति पुर, रुप्या द्विमेक पुन

रक पट्टावली मे लिखा है —

"स० सोमजी शिवइ शत्रुञ्जय नी पहली यात्रा करी, ३६०००
ा खरच्या, वली वडी प्रतिष्ठायइ ३६००० रुपइया खरच्या,
ार आबू ना सघ कराव्या, अनेक देहरा कराव्या, बिम्ब भराव्या,
रगच्छ मा लाहण कोधी"

## संघपति सोमजी शिवा

जगत्प्रसिद्ध प्राग्वाट ज्ञातीय मन्त्रीश्वर वस्तुपालके निर्मल वंश × में संघपति जोगीदासकी भार्या जसमा दे के कुक्षि से इन दोनो भाइयोका जन्म हुआ था। उ० क्षमाकल्याणजी अपनी

व्याख्या —श्री राजसिंह अकबर जलालदीनस्य साहे प्रसादतोनुग्रहात् अनेको यहयोये कोट्टा दुर्गाणि बलेन च सैन्येन कलित सहित अनेक कोट्ट वलकलित मन्त्रिण कर्मचन्द्रस्यो मन्त्र आलोचस्तस्ययोगात् सयोगात् मन्त्र श (? प्र) भावादित्यर्थ पंचाना सहस्त्राश अश्वचार सबन्धिना समाहार पच सहस्त्री तस्था पति स्वामी अहो बभूव। पच हजारीति ख्याति प्राप्त इत्यर्थ ॥३८॥

× शीलविजयजी कृत तीर्थमाला में :—

वस्तुपाल मत्रीश्वर वश, शिवा सोमजी कुल अवतश।
शत्रुञ्जय उपरि चौमुख कियउ, मानव भव लाहो तिण लियउ॥

बम्बईसे प्रकाशित "श्री जिनचद्रसूरि जीवन चरित्र"में आपके धनवान होने की एक किम्वदन्ती लिखी है —

ये दोनो भाई चिभडे का व्यापार करते थे, इनका भाग्योदय जानकर सूरिजी ने प्रतिबोध दिया। लाभ जान कर सूरीश्वरने इनके नवीन वस्त्र पर सप्रभाव वासक्षेप डाला। बहुत-से खरबूजे खरीदकर न भाई फलों के ऊपर उस वस्त्रको आच्छादित कर व्यापार करने लगे। सी समय ग्रीष्म ऋतुमें शाही फौजको किसी नगरको लूट-खसोट कर आते हुए अहमदाबाद में इनके यहा हो चिभडे खरबूजे एक-एक स्वर्ण मुहरके मूल्य में खरीदने पडे, क्योंकि खरबूजे अन्यत्र कहीं भी न मिले। इस व्यापार में सोमजी-शिवा ने अगणित द्रव्य उपार्जन किया।

रचित 'खरतर पट्टावली'मे लिखते हैं कि अहमदाबादमें ये दोनो भ्राता चिर्भटि(फल)का व्यापार करते थे। सूरिजीने इन्हे प्रतिबोध देकर जैन धर्ममे दृढ किये। इन्होने तीर्थयात्रा, नवीन बिम्बनिर्माण, जीर्णोद्धार और स्वधर्मी वात्सल्य आदि शुभकार्यो मे लाखो रुपये व्यय करके जैन शासन की महान् सेवा और प्रभावना की थी।

स० १६४४ मे जोगीशाह और सोमजी ने शत्रुजय का विशाल सघ निकालकर सूरिजी के साथ शत्रुञ्जय गिरिराजकी यात्रा की थी, जिसका उल्लेख इसी ग्रथ के ५६ वें पेज मे कर चुके हैं।

स० १६५३ अहमदाबाद मे आदिनाथ के नव्यनिर्मित जिनालय की सूरिजीके कर-कमलो से प्रतिष्ठा करवाई। इन्होने राणकपुर, गिरनार, आबू, गौडी-पार्श्वनाथ और शत्रुजयपर बडे-बडे सघ निकाल कर यात्राए कीं, प्रत्येक स्थानमे लाहणकी, करोडो रुपये खरच हुए, जिसका उल्लेख कविवर समयसुन्दरजी 'कल्पलता' में इस प्रकार करते है —

*यद्वारे पुनरत्र सोमजि शिवा, श्राद्धौ जगद्विश्रुतौ।*
*याभ्या राणपुरश्च रैवतगिर, श्री अर्बुदस्य स्फुटम्।*
*गौडी श्री विमलाचलस्य च महान्, सघो नय कारितो*
*गच्छे लम्भनिका कृता प्रति पुर, रूम्मा द्विमेक पुन*

एक पट्टावली मे लिखा है —

"स० सोमजी शिवइ शत्रुञ्जय नी पहली यात्रा करी, ३६००० रुपइया खरच्या, वली वडी प्रतिष्ठायइ ३६००० रुपइया खरच्या, गिरनार आबू ना सघ कराव्या, अनेक देहरा कराव्या, बिम्ब भराव्या, खरतरगच्छ मा लाहण कीधी"

अहमदाबादकी दस्सापोरवाड जातिमे आपने कई अच्छे रीति-रिवाज प्रचलित किये थे। अब भी विवाहपत्र के लेख मे "शिवा सोमजीकी रीति प्रमाणे" लेन देनकी मर्यादा लिखी जाती है। आपके निवासस्थान धनासुतार की पोल मे, जिनालय के वार्षिक दिवस और अन्य प्रसगो में जब कभी जीमनवार होता है, तब निमत्रण भी 'शिवा सोमजी' के नाम से दिया जाता है।

आपने अहमदाबाद में तीन जिनालय बनवाये। (१) धनासुतार-नी पोल ( शिवा सोमजी की पोल ) मे, आदिनाथजीका मन्दिर—जिसमें अपने उपकारी गुरु श्रीजिनचन्द्रसूरिजीकी मूर्ति स्थापित की। (२) झवेरी वाडाके चौमुखजी की पोल मे.—श्रीशान्तिनाथजी का चौमुख मन्दिर ( जिसका जीर्णोद्धार सं० १६२० मे जवेरी श्रीमोहनलाल-मगनभाई के पिता मगनभाई-हकमचन्द ने कराया था)। (३) हाजा पटेलकी पोल के कोने मे श्रीशान्तिनाथजी का मन्दिर।

गिरिराज श्रीसिद्धाचलजी पर "खरतरवसही" मे चौमुखजी का मन्दिर निर्माण करवाया, जिसमे ५८ लाख रुपये खरच हुए।×

इस मन्दिर की प्रतिष्ठा कराने के पूर्व ही आपका स्वर्गवास हो जानेसे सोमजीके पुत्र रूपजी ने सं० १६७५ मे श्रीजिनराजसूरिजी के करकमलोसे प्रतिष्ठा करवाई।

---

×मीराते अहमदी में लिखा है कि इस मदिरको बनाने में ५८०००००) रुपये खरच हुए, कहते हैं ८४०००) रुपयो की तो केवल रस्सी, डोरियाँ ही लगी थी। मदिरकी विशालता और सुन्दरता देखते, इसमें किसी प्रकारका सदेह ज्ञात नहीं होता।

शेठ सोमजी शिवाजीका स्वधर्मीवात्सल्य बहुत ही प्रशसनीय और अनुकरणीय था। एक बार किसी अज्ञात, अपरिचित स्वधर्मी-बन्धु ने विपत्ति के समय आपके उपर साठहजार रुपये की हुडी कर दी। जब वह हुडी भुगतान के निमित्त आपके पास आई, तब इनके मुनीम, कर्मचारियों के सारा खाता ढूढ लेने पर भी हुडी करनेवाले का कहीं नाम तक न मिला। विचक्षण सोमजीको उस हुण्डीके गौर पूर्वक देखने मात्र से उस पर अश्रुबिन्दुका दाग देखकर रहस्य समझ में आ गया और अपने किसी स्वधर्मी बन्धु के विपत्तिका अनुभव कर अपने निजी खातेमे खरच लिखाके हुण्डी सिकार दी। कुछ दिनके पश्चात् वह अज्ञात स्वधर्मी भाई वहा आया और आग्रह पूर्वक हुडीके रुपये जमा करनेकी प्रार्थना की। किन्तु सोमजीने, "हमारा आपके (नाम से) पास एक पैसा भी लेना नहीं है", यह कहते हुए रुपया लेना सर्वथा अस्वीकार कर दिया। आखिर सबकी सम्मतिसे श्रीशान्तिनाथ प्रभुका जिनालय निर्माण करानेमे वे समस्त रुपये व्यय कर दिये गए। इस वृतान्त से सोमजी के उदार हृदय, और अभूतपूर्व, आदर्श स्वधर्मी-

---

†हुण्डी सिकारनेका विस्तृत वर्णन "सवा सोमा" नामक ट्रैक्ट में है जिसके लेखक हैं, श्रीमान गोकलदास द्वारकादास रायचुरा (तत्रो शारदा)। उन्होंने इस ट्रैक्टमें सोमा पर हुण्डी करनेवाले व्यक्ति "सवा" को वामन-स्थली निवासी सेठ लिखा है और शिवा-सोमाकी टूक भी उन दोनों भिन्न २ व्यक्तियों के नामसे प्रसिद्ध होनेका उल्लेख किया है किंतु उन्होंने यह गम्भीर भूल की है। शिलालेखोंसे यह भली भाति सिद्ध है कि शिवा-सोमजी दोनों सगे भाई थे और उन्हीं दोनों भाइयोंने यह सुकृत किया था।

वात्सल्यका अच्छा परिचय मिलता है। ऐसे नर रत्नका जितना गुणानुवाद किया जाय, थोडा है।

सूरिजीके उपदेशसे आपने बहुतसे नवीन ग्रन्थ लिखवाकर, ज्ञान-भक्तिका महान लाभ लिया था, उन ग्रन्थोंमें १ ग्रन्थका उल्लेख 'जैन साहित्य नो संक्षिप्त इतिहास' में इस प्रकार है —"सं० १६५२ मा ख० जिनचन्द्रसूरि ना उपदेश थी अहमदावाद ना प्राग्वाट संघपति सोमजीए ज्ञानभंडार माटे सिद्धान्त नी प्रत लखावी ते पैकी राज-प्रश्नीय टीका नी प्रत गु० नं० १६२७ मले छे।" (पृ० ५६१)

सं० १६६३ चैत्र सुदि ६को रचित उ० गुणविनयजी कृत ऋषिदत्ता चौ० से ज्ञात होता है, कि खंभातमें भी इन्होने बहुतसा द्रव्य व्यय करके जिन-बिम्बोंकी प्रतिष्ठा कराई थी।

*श्री खंभायत थंभण पास, धरण पउम परतिख जसु पास ॥६६॥*
*श्री खरतरगच्छ गगन नभोमणि अभयदेवसूरि प्रगटित सुरमणि।*
*धन खरची बहु बिम्ब भरावित्र, साह शिवा सोमजी करावित्र ।६४*
*अचरजकारी पूतली जसु ऊपरि, शरणाइ वड (र?)भेरि विविह परि।*
*पास भगति वस जिहा वजावइ, गुरु परसाद रह्या शुभ भावइ ॥६५*

आपकी वंश परम्परा के जौहरी बालाभाई चकलदास, लगभग ४-५ वर्ष पूर्व (अहमदाबाद से) बीकानेर आए थे। उन्होने अपनी परम्परा का बहुत-सा इतिहास अपने पास होने का भी कहा था। किन्तु उसके कई मास पश्चात ही आपका स्वर्गवास हो गया, अत वह इतिहास अप्रकाशित अवस्था में ही रहा। उन्हाने "खरतर-वसही" सम्बन्धी झगडे के समय "खरतर वसही अने सेठ आणदजी

कल्याणजी वच्चे झगडो" नामक विज्ञापन × प्रकाशित किया था, उसमे भी शिवा सोमजीके विषयमे ज्ञातव्य इतिहास भविष्यमे प्रकाशित करने के विचार प्रकट किये थे। किन्तु दु ख है कि दुर्दैव काल ने उन्हे अपने पूर्वजोका इतिहास प्रकट करनेका मौका नहीं दिया।

इनके अतिरिक्त सूरिजी के भक्त श्रावको मे अहमदाबाद के मत्री सारगधर सत्यवादी, खभात के भण्डारी वीरजी, राका, वर्द्धमान, नागजी, वच्छा, पदमजी, देवजी, जैतमाह, भाणजी, हरखा, हीरजी, माडण, जावड, मनुआ, सहजिया, अमियाशाह, साभलिनगर के सा० मूला० सामीदास, पूरू, पदू, वस्तू, गागू-नाथू, धरमू, लटू आगरे के शाह श्रीवच्छ और लक्ष्मीदास, सिद्धपुर के शाह वन्ना, रोहीठ के शाह थिरा मेरा, बिलाडा के स० जूठा* कटारिया, रिणीके मन्त्री राजसिंह और साकर सुत वीरदास, लाहोर के जौहरी पर्वतशाह, सिन्धु देसके घोरवाड वगज शाह नानिगके पुत्र शाह राजपाल, जेसलमेर के भणसाली थाहरू*शाह, नागौर क मन्त्री मेहा, बीकानेर के मन्त्री दलू बोथरे की सतति, महेवा के काकरिया शाह कम्मा, मेडता के शाह आसकरण† चोपडा आदि के नाम विशेप उल्लेखनीय है। श्राविकाओमे भी बहुत-सी धर्म-परायणा और व्रत धारिणी थीं, जिनमेंसे नयणा, वींझू, गेली, कोडा, रेखा के व्रत गहण करने का उल्लेख पिछले प्रकरणो मे लिखा जा चुका है।



×इस विज्ञापन के आधार से हमने भी कितनी ही बातें इस "सोमजी शिवा के परिचय में लिखी है।

* कृपाचन्द्रसूरि ज्ञानभडारकी पट्टावलीमें लिखा है —

"श्री शत्रु जे उपरि स० जूठइ कटारियइ रुष करावी प्रतिष्ठा करावी"

* इनका परिचय ऐ० जैन० काव्य सग्रह में दिया जायगा।

† इनका विशेप परिचय ऐ० जैन काव्य सग्रहमें लिखा जायगा।

# सोलहवां प्रकरण

## चमत्कारिक-जीवन और अवशेष घटनाएं




छले प्रकरणो मे सूरिजी के जीवन-चरित्र सम्बन्धी सभी विषयो पर काफी लिख चुके हैं। इनके अतिरिक्त और भी कई ऐतिहासिक और जनश्रुति मे प्रचलित बातो का उल्लेख न करने से "जीवन-चरित्र" की असम्पूर्णता अनुभव कर इस प्रकरण मे उन सब बातो को बहुत ही सक्षेप से लिखते हैं।

जब सूरि महाराज खम्भात में थे, तब मालकोट से हर्षनन्दन, रत्नलाभ, मुनि वर्द्धमान, मेघा, रेखा आदि ने सस्कृत मे एक विस्तृत सावत्सरिक पत्र × दिया था, उसमे सूरिजी के गुणानुवाद मे आगे के

---

× इस पत्र को नकल हमारे पास है, विस्तृत होने के कारण यहा प्रकाशित नहीं की गई। स० १६०८ या स० १६६६ में यह पत्र सूरिजी को दिया गया था। उस समय सूरिजी के साथ उ० रत्ननिधान उ० जयप्रमोद, श्रीचन्द्र, रत्नचन्दर, धर्मसिन्धुर, हर्षवल्लभ, साधुवल्लभ, पुण्यप्रधान,

प्रकरणो मे लिखित जीवन की मुख्य-मुख्य घटनाओ का वर्णन करते हुए "दिल्लीपुर्य्यां पुनर्योगिनी साधका सूरिमन्त्र स्फुटाम्नाय संसाधका" लिखा है। इससे जाना जाता है कि आपने स० १६२६ मे जब कि हस्तक मे चातुर्मास किया था, वहा से दिल्ली निकटवर्त्ती होने से दिल्ली पधार कर ६४ योगिनीएंको अपने सूरिमत्र के प्रभावसे साधित की होगी।

आपकी आज्ञा से बहुत-से विद्वानो ने अनेक ग्रथो की रचना की थी, जिसका उल्लेख विद्वानो के परिचय मे कर चुके हैं। ग्रथ-रचना के अतिरिक्त आपके आदेश से कई जगह प्रतिष्ठाए भी हुई थीं। जिनमे स० १६५० आषाढ शुक्ला ६ को महो० पुण्यसागरजी प्रतिष्ठित श्रीजिनकुशलसूरिजी के पादुका का लेख "जैन लेख सग्रह भा० ३" लेखाङ्क २४६४ मे छप चुका है। और सं० १६६६ वै० शु० १३ "समदा नगर" मे प० राजप्रमोद के शि० प० नन्दिजय के प्रतिष्ठित महावीर चैत्यका लेख "यतीन्द्र विहार दिग्दर्शन" भा० १ मे छपा है।

स० १६६१ अक्षय तृतीया को जब सूरि-महाराज, जिनसिंहसूरि, उ० समयराज, उ० रत्ननिधान, प० पुण्यप्रधान आदि शिष्यो के साथ नागोर पधारे। उस समय वहा के निवासी कातेला गोत्रीय स० सहसा, स० सुरतान सकर ने अपने पुत्र तेजसी, जोधा डुगरसी,

---

स्वर्णलाभ, जीवर्षि और भीम मुनि आदि थे। यह पत्र पाडित्यपूर्ण और प्रौढ संस्कृत भाषा में लिखा गया है। इस पत्रका आवश्यक अश परिशिष्ट में देखें,—

कपूरचन्द, पूरणमल, आदि ने सपरिवार सागैकादशाग आगम वहराये थे, जिनमेसे "स्थानाग सूत्र वृत्ति" पत्र ३७१ * "श्रीजिन-कृपाचन्द्रसूरि ज्ञान-भण्डार बीकानेर" मे विद्यमानहै।

सं० १६५५ कार्तिक सुदि १३ को जब आप उपरोक्त शिष्य-मण्डल के साथ खभात मे थे, तब हापाणक ग्राम वास्तव्य सघ ने "ज्योति करण्ड वृत्ति" नामक ग्रन्थ वहराया। सूरिजी ने उस ग्रन्थ को स्तम्भतीर्थ के ज्ञान-भण्डार में स्थापित किया था। यह ग्रन्थ ( पत्र १२० ) भी अब उपरोक्त ज्ञान-भण्डार में हैं।

इसके अतिरिक्त और भी सैकडो § ग्रन्थ भक्त श्रावको ने वहरा कर ज्ञान-भक्ति और गुरु भक्तिका लाभ लिया था। सूरिजी ने उन सबको खभात और बीकानेर के ज्ञान-भण्डारो मे सुरक्षित कर दिये।

---

* यह प्रति सूरिजी ने अपने शिष्य वा० समतिकल्लोल गणिको दी, उन्होंने अपने शिष्य विद्यासागर के पठनार्थ सशोधित की।

§ खभात भडारके ग्रन्थ देखनेसे सम्भव है, कुछ नया ज्ञातव्य भी मिले। खभातमें प्राग्वाट ज्ञाति वालोंकी लिखाई हुई स०१६९६ व० शु० ५ महानिशीथ की सूत्र पत्र प्रति २१ (न० २१६६) बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर के सग्रहमें है।

सूरिजीकी ल खवाई हुई प्रतिया यत्र-तत्र प्रचुर प्रमाणमें मिलती हैं। जेसलमेर भाण्डागारीय ग्रथाना सूचि'में सं० १६३९ आषाढ शुक्ला ९ की लिखित प्रतिकी प्रशस्ति उक्त ग्रन्थके परिशिष्ट पृ० ५ में देखें।

बिकानेर स्टेट लायब्रेरी ग्रथाङ्क ८८३२ की प्रशस्ति इस प्रकार है —

जिनमें बीकानेर के ज्ञान-भण्डारों में अब भी बहुत-से विस्तृत × प्रशस्तियोंवाले ग्रन्थ विद्यमान हैं। विस्तार-भय से हमने उन सबका उल्लेख नहीं किया।

आपके प्रतिष्ठित बहुत-से जिन-बिम्ब यत्र तत्र उपलब्ध हैं, जिनके कई लेख हम आगे दे चुके हैं। अवशेष सं० १६१६ और १६६७ के लेखों की नकल नीचे दी जाती है —

( १ ) "संवत् १६१६ वर्षे वैसाख बदि ६ दिने ओसवाल ज्ञातीय राखेचागोत्रे म० हीरा भार्या हासू भा०हीरादे पुत्र देवदत्त भा० देवलदे सुत उदयसिंघ रायसिंघ कुटुंब युतेन म० देवदत्तेन श्री वासुपूज्य चतुर्विंशति पट्ट कारापित श्री खरतरगच्छे श्री जिनचन्द्रसूरिभि प्रतिष्ठित ॥ श्री ॥ ( श्री गौडी पार्श्वनाथ मन्दिर—बीकानेर )

( २ ) "सं० १६१६ वर्षे श्री पार्श्वनाथ बिम्ब प्रतिष्ठित श्रीजिनचन्द्र सूरिभि ।"

(श्री महावीरजीका मन्दिर—आसानियों का चौक, बीकानेर)

शत्रुंजय तीर्थ पर प्रतिष्ठित —

"सं० १६६७ वर्षे फाल्गुन सुदि पंचम्या गुरौ सं० रत्ना पुत्र सं० जुगकेन का० श्रीचन्द्रप्रभ बिम्बं प्र० श्री बृहत्खरतर गच्छेशाऽकबर साहि प्रतिबोधक युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभि । आ० जिनसिंह

---

"श्री शाहि प्रतिबोध कारक श्रीमज्जिनचन्द्र सूरि युग प्रधानाना प्रतिरिय लिखिता संवत् १६५६ वर्षे धन्य त्रयोदश्या।

( सूरिमंत्रादि साम्नाय कल्प पत्र ११ )

× उनमेंसे एक प्रशस्तिकी नकल परिशिष्टमें दी गयी है।

सूरि युतै वा० पुण्यप्रधान वा० राजसमुद्र स्या। व्यलेखि प्रतिष्ठापया ( म ) मौलि विम्बमेतत्" * ।

सं० १६६७ वर्षे फागुन शुक्ल पंचमी गुरो श्रीविक्रमनगर वास्तव्य श्री ओसवाल ज्ञातीय फसला गोत्रीय सा० हीरा। तत्पुत्र सा० मोकल। तत्पुत्र० मज्जा। तत्पुत्र दत्तू। तत्पुत्र सा० अमीपाल भार्या अमोलिक दे पुत्ररत्नेन सा० लीलाकेन। भार्या लखमा दे लाछल दे पुत्र सा० चन्द्रसेन। पूनसी सा० पदमसी प्रमुख पुत्र पौत्रादि परिवार सहितेन श्री पार्श्वबिम्ब अष्टदल कमल सपुट सहित कारित, प्रतिष्ठित श्रीशत्रुंजय महातीर्थे श्री बृहत्खरतर-गणाधीश श्री जिनमाणिक्यसूरि पट्टालंकरक, श्री पातिसाह प्रतिबोधक युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरि पुज्यमान चिरंनदतु। आचन्द्रार्कं॥

( अष्टदल कमल पर श्री महावीरजी के मन्दिर में ( वैदों का ), बीकानेर।)

श्री शत्रुंजय महातीर्थ की आपने कई वार यात्रा की थी। वहां खरतरगच्छके संघने आपके उपदेश से कई नए मन्दिर निर्माण कराये थे ×। और भी सौरीपुर, हस्तिनापुर, गिरनार, आबू, आरासन, राणकपुर, वरकाणा, संखेश्वर आदि बहुत-से तीर्थों की यात्राएं की थी। जिसका उल्लेख रत्ननिधान कृत गीत और अपूर्ण

* यह लेख हमें प्रकरण लिखते समय पालीताना से प्रवर्त्तक मुनिवर्य श्री सुखसागरजी महाराज से प्राप्त हुआ, इस संवत् के और भी कई लेख आप श्री ने हमें भेजनेकी कृपा की है, परन्तु वे अपूर्ण होने से यहां नहीं दिये गये हैं।

× देखो परिशिष्टान्तर्गत प्रशस्ति में।

बडी गहूली में है *। स्वर्गीय श्रीजिनदत्तसूरिजी और जिनकुशल-सूरिजी, शासन-सेवा मे आपको पूर्ण सानिध्य करते थे।

सूरिजी के रचे हुए कई स्तवनादि भी हमें उपलब्ध हुए हैं।

सूरिजी उच्च चारित्रवान् और निष्पृही थे, उनके किसी भी प्रकार का अनुचित प्रतिबन्ध नहीं था। कहा जाता है कि बीका-नेर मे जब आप भगवतीसूत्र वाचते थे, एक दिन व्याख्यान के समय मे कर्मचन्द्रजी कार्यवश उपस्थित न हो सके। सूरिजी ने व्याख्यान देना प्रारम्भ कर दिया, कर्मचन्द्र की मातुश्री ने निवदन किया "भगवन्! मेरा पुत्र आपका परम भक्त और आगम श्रवणका अभिलाषी है, इसलिये आपको उसके आने के पश्चात् ही व्याख्यान प्रारम्भ करना उचित था।" सूरिजी ने अपनी उच्च चारित्र की प्रभा का इन शब्दो मे परिचय दिया "मे इस प्रकार किसी भी व्यक्ति का प्रतिबन्ध नहीं रख सकता। म अपने विचारो मे किसी को ऊच नीच दृष्टि से नहीं देखता। सभा मे उपस्थित सभी सज्जन गण मेरे लिये कर्मचन्द्र ही हैं। एक व्यक्ति के लिये व्याख्यान का समय आगे-पीछे करना साधुओ का कल्प नहीं है।" सूरिजी का यह स्पष्ट वक्तव्य सुनकर कर्मचन्द्र की माता ने कुछ रोष दृष्टि से चारो ओर देखा, तो उन्हे सर्वत्र कर्मचन्द्र ही कर्मचन्द्र बैठे दृष्टि-गोचर हुए। बस तभी से उन्होने समझ लिया कि हमारी ओर से जो भक्ति है, वह अपने आत्मकल्याण के निमित्त ही होनी

* ये दोनों गीत "ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह" में मुद्रित हैं।

चाहिये, सूरिजी तो निष्पृह हैं। उपस्थित जनता पर सूरिजी के इस सचोट उत्तर का काफी प्रभाव पड़ा †।

"गणधर सार्द्धशतक भाषान्तर" * मे लिखा है कि एक बार सूरिजी किसी नगर मे पधारे। वहा एक धर्म-द्वेषी कापालिक योगी, लोगो को डराने के लिये काले साँप का रूप धारण कर उपाश्रय मे आ धमका। संघ ने इस उपद्रव निवारण के लिये सूरिजी से निवेदन किया, सूरि-महाराज ने शेषनाग का आकर्षण कर, उपद्रव दूर किया।

कापालिक ने सूरिजी से ईर्षा धारण कर और अपनी मन्त्रशक्तिसे गर्वान्वित होकर उन्हे छलने के लिये अनेक प्रकार के प्रपञ्च रचे और सूरिजीको करामात प्रकट करने के लिये घोषणा की। सूरिजी ने मृदु वचनो से शान्तिपूर्वक समझाने का बहुत प्रयत्न किया, और यह भी कहा "अहो योगी! इन मिथ्या प्रपंचो मे क्या रखा है? यह सब छोड, परमात्मा का भजन करो! जिससे आत्मकल्याण हो।" किन्तु योगी सीधे ही कब माननेवाला था, उसने अधिकाधिक उपद्रव और उत्पात करना प्रारम्भ किया। इतना ही नहीं कई चमत्कार दिखाकर लोगोंको धार्मिक श्रद्धासे विचलित करनेका भी दुस्साहस किया। बहुत-से आडम्बर रचे, तब सूरिजीने शासन प्रभावना के हेतु सूरिमन्त्र के प्रभाव से उन सब उपद्रवों का विनाश कर उससे अधिक चमत्कारिक बातें दिखला कर श्रावको को धर्म मे दृढ किये। कापालिक

† यह प्रवाद संक्षेप से (बम्बई से प्रकाशित) जिनचन्द्रसूरि चरित्रमें भी छपा है।

* यह ग्रन्थ इन्दोर के "श्रीजिन कृपाचन्द्रसूरि ज्ञान-भंडार" से छप चुका है।

भी आपकी असाधारण प्रतिभा से प्रभावित होकर भक्त बन गया।

एक बार सूरिजी और योगी के मन्त्रविद्या सम्बन्धी वार्तालाप होते हुए कोई अपूर्व कार्य कर दिखाने का परामर्श हुआ। इसके फलस्वरूप सूरिजी ने बडनगर से जैन मन्दिर को आकाश मार्ग से उड़ा कर रतलाम से १० मील पर स्थित सेमलिया नगर में स्थापित किया। वह शान्तिनाथजी का मन्दिर अब भी मालव देश का एक तीर्थ माना जाता है, इस मन्दिर में सूरिजी की चरण पादुकाए भी हैं। वहा प्रति वर्ष भादवा सुदि २ को मन्दिर में वर्षा होती है, यह प्रत्यक्ष चमत्कार है। योगी का लाया हुआ महादेवजी का मन्दिर भी अरणोद के पास विद्यमान होनेका सुना जाता है।*

एक बार सूरिजी गोढवाल देश में पधारे, वहा के श्रावकों को धार्मिक तत्त्वों से अनभिज्ञ और विवेकहीन देखकर धर्मका सद्बोध दिया, जिसकी एक कहावत प्रसिद्ध है —जिनचन्द्रसूरि आवो भले ज आवियो, साठे वरसे हाथ में पाणी † लरावियो।

एक बार सूरिजी सेत्रावा पधारे, वहा के संघ ने आपका खूब स्वागत किया। उस नगर में महर्द्धिक चोपड़ा गोत्रीय धन्ना शाह निवास करते थे, सन्तान न होने के कारण वे सदा उदासीन रहते

---

* ऐसी ही चमत्कारिक किम्वदन्ती नाडोल के मन्दिर के सम्बन्ध में प्रसिद्ध है। देखें —बड़वा जैन मित्रमंडलका सम्मेतशिखर स्पेशल ट्रेन 'स्मरणांक' और कॉ० हेरल्ड के 'इतिहास साहित्य' अंक में यशोभद्रसूरिजी का चरित्र।

† उन अव्रतधारियोंको व्रतधारक बनाये।

थे। सूरिजी को समर्थ जानकर उन्होंने अपना दुख प्रकट किया। सूरिजी ने उत्तर मे कहा कि धर्म ही इच्छित पदार्थदायक है, अत निशङ्क होकर विशेष रूप से धर्माराधन करो। जिससे ऐहिक और पारलौकिक समस्त कार्य सिद्ध हो। सूरिजी के उपदेश से वे विशेष मनोयोगके साथ धर्मध्यान करने लगे। क्रमश उसके सात पुत्र हुए। एक बार जब सूरिजी फिर सेत्रावा आये तब उनके पुत्र चोलाजी और भोलाजीने उनसे दीक्षा ग्रहण की। कई वर्षों बाद उन्होने सूरिजी की आज्ञा से सेत्रावा मे चातुर्मास किया, उस समय मे महामारी का रोग फैला, तब उन्होने उपद्रव शान्त कर लोगो को चमत्कृत किया। समाधि-मरण से वहीं दोनो दिवंगत हुए, सघ ने उनके स्तूप बनाये। आज भी वे स्तूप विद्यमान है और चमत्कारिक है।

उपरोक्त चमत्कारी बातो को हमने बहुत ही संक्षेप करके लिखी है, विस्तार से जानने के लिये उपरोक्त ग्रन्थ देखना चाहिये।

वास्तव मे महापुरुषो का जीवन ही चमत्कार-मय होता है। उनके पवित्र आचार और अमोघ वाणी जन समुदाय को मंत्रमुग्ध कर लेती है, और भक्तो के कार्य अपने आप ही सिद्ध हो जाते हैं। सूरिजी जहा विचरते थे, वहा दुष्काल मे भी वर्षा हो कर सुकाल हो जाता था, महामारी रोग आदि उपशान्त हो जाते थे, ऐसी बहुत-सी बातें पट्टावलियो मे पाई जाती है।

"महाजन वश मुक्तावली" मे लिखा है कि सूरिजीने १८ गोत्रा- को प्रतिबोध देकर जैन बनाए और यह भी लिखा है कि जेसलमेर मे किसनगढ के राठौर मोहणसिंह और पाचीसिंह को प्रतिबोध दे

कर व्रतधारी श्रावक बनाए, उनसे 'मुहणोत' और 'पींचा' गोत्र प्रसिद्ध हुआ।

पट्टावलियो में लिखा है कि आपने प्रतिमोत्थापक लुम्पकमत का खूब जोरो से उच्छेद् कर के श्रावको को शुद्ध श्रद्धावान् बनाए।

गणाधीश्वर श्री हरिसागरजी महाराज स० १९९२ वै० व० १० के कार्डमे लिखते हैं कि—"अहमदाबादमे ओसवाल जातिमे एक 'कडीया' नामक गोत्र है। उस गोत्रवालोको श्रीजिनचन्द्रसूरिजी महाराजने सुखी बनाए हैं। श्रीयुक्त चिमनलालजी * कडीया ठि० सेखनापाडा मा मु० अहमदाबाद गुजरातको पत्र देनेपर जरूर विशेष हकीकत मिलेगी, इन लोगा का बनाया हुआ मन्दिर अहमदाबाद मे है। धर्मशाला पालीतानेमे है, मोती कडिया की धर्मशाला के नाम से प्रसिद्ध है।"

सूरिजी का आदर्श और पुनीत जीवन हमे सन्मार्गगामी बनने मे सहायक हो यही अभिलाषा रखते हुए कविवर समयसुन्दरजी रचित सुगुरु महिमा छन्द द्वारा सूरिजीका विमल यशोगान गाते हुए चरित्र सम्पूर्ण किया जाता हैं।

---

नोट—चमत्कारी घटनाओं और गोत्र प्रतिबोध के विषय में प्रमाणाभाव से हम कुछ नहीं कह सकते। ओसवाल जाति के इतिहास में "मुहणोत" गोत्र स० १३५१ कार्तिक सुदी १३ को खेडनगर में मोहनजी के प्रतिबोध पाने से प्रसिद्ध होना लिखा है।

* गणाधीशजीके लिखे अनुसार हमने इन्हें Reply कार्ड दिया था, लेकिन उसका कोई उत्तर न मिला।

## ॥ सुगुरु महिमा छंद ॥

अवलियो अकबर तास अगज, सबल शाहि सलेम ।
शेख अबुल आजम खानखाना, मानसिंह सु प्रेम ॥
रायसिंह राजा भीम राउल, सूर नय सुरतान ।
वड वडा महिपती वयण मानइ, दियइ आदर मान ॥१॥
गच्छपति गाइयेजु, जिनचंदसूरि मुनि महिराण
अकबर थापियोजो, युगप्रधान गुण जाण ॥आ०॥
काश्मीर काबुल सिन्ध सोरठ, मारवाड (मेवाड ! ) ।
गुजरात पूरब गौड दक्षिण, समुद्रतट पय लाड ॥
पुर नगर देश प्रदेश सगले, भमइ जेति भाण (भानु०) ।
आषाढ मास अमीय वर्षे, सुगुरु पुण्य प्रमाण ॥२॥गछ०॥
पच नदी पाचे पीर साध्या, खोडिया क्षेत्रपाल ।
जल वहै जेथ अगाध प्रवहण, थाभीया तत्काल ॥
... कित किता कहु वखान ।
परसिद्ध अतिशय कला पूरण, रीझवण रायाण ॥३॥गछ०॥
गच्छराज गिरुयो गुणै गाढो, गोयमा अवतार ।
बड वखतवत बृहत्खरतर, गच्छको सिणगार ॥
चिरजीवो चतुर्विध सघ सानिध, करउ कोडि कल्याण ।
गणि 'समयसुन्दर' सुगुरु भेटया, सफल आज विहाण ॥४॥गछ०॥

इति परम प्रभावक युगप्रधान सुगुरु महिमा छन्द सम्पूर्ण ।

—:x:—

# परिशिष्ट

म इछइ ॥

ण' स० १६

' भाद्रवा सुदि ६

' नाम ।

ल्दे' दिवराग्यो

क्रमपुरे ।

सूरि

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| ५६ | अहमदावादि | ४५ | तत्रव | [illegible] जीरंगोनाम्नादवइ [illegible] गानेथ [illegible] पणजावलेइराजनगरिआव्या अत्रभ्राकोर्न मंत्रीपरोङ्मया॰ |
| ५७ | पाटणि | | | |
| ५८ | थंभाइत | ४६ | | |
| ५९ | अहमदावादि | ४७ | | |
| ६० | पाटणि | ४८ | | |
| ६१ | महेवइ | ४९ | | |
| ६२ | बीकानेर | ५० | का० | कम्मइपइठ्ठाकरावी |
| ६३ | बीकानेर | ५१ | तत्र | प्रतिष्ठा |
| ६४ | जेवेरइ | ५२ | तत्र | प्रतिष्ठा |
| ६५ | मेडतइ | ५३ | राजा | सूरिवादिवाआयोजोधछत्रपकी॥ |
| ६६ | थंभाइत | ५४ | | अहमदावादसंघरइतेकइराजनगरिआव्या |
| ६७ | अमदावादि | ५५ | | |
| ६८ | पाटणि | ५६ | | |
| [illegible] | [illegible] | ५७ | तिन [illegible] | |

# परिशिष्ट (क)

## विहार पत्र नं० १

॥युगप्रधान चन्द्रसूरि कृत नांदि अनुक्रम 'इछइ॥

१ चन्द्र स० १५६५ चैत्रवदि १२ जन्म नाम 'सुरताण' स० १६
दीक्षा 'सुमतिधीर' नाम, स० १६१२ भाद्रवा सुदि ६
गुरौ पद स्थापना 'श्रीजिनचन्द्रसूरि' नाम।

२ मडण

३ विलास

४ मेरु १२ जेसलमेरु चउमास १सूरिपद राउल 'मालदे' दिवराव्यो

५ विमल १३ बीकानेर चउमास २

६ कमल १४ बीकानयरि च० ३ परिग्रह त्याग विक्रमपुरे।

७ कुशल १५ महेवइ चउमास ४

८ विनय १६ जेसलमेरु ५

९ हेम १७ पाटणि ६ क० चर्चा जय अभयदेव सूरि

१० राज १८ खभाइत ७

११ आनद १९ पाटणि ८

१२ निधान २० वीसलनगरि ९

१३ रत्न २१ बीकानेर १०

१४ विजय २२ जेसलमेरु ११

१५ तिलक २३ बीकानेर १२

१६ सिंह २४ नडुलाइ १३

३६ दत्त ४५ सूरति ३४

३७ पति ४६ अहमदाबाद ३५

३८कल्याण४७ पाटणि ३६ तिहा चउमास करि अहमदाबाद आवी सघ वदावी खभाइति आव्या, तत्र श्रीजी × ना तेडा आव्या, असाड सुदि ८ प्रस्थान ६ चाल्या। फागुण सुदि १२ दिनि पहुता

३६ शेखर ४८ जालोर ३७

४० कीर्त्ति ४६ लाहोरि ३८

४१ मेरु ५० हापाणइ ३६ रातइ चोर पइठा पुस्तक सर्व लेइ गया पर अब थया पुस्तक आव्या पाछा।

४२ सेन ५१ लाहोरि ४०

४३ सिंह ५२ हापाणइ ४१ ऋषिमती – कृत कुमतिकुद्दाल ग्रन्थ (जो) टउ श्रीजी हुजूर कीधउ फुरमाण ( काढ्या ? )

४४ कल्याण५३ जेसलमेर ४२

---

× श्रीजी बादशाहका सकेत वाचक है यहा सम्राट अकबर और इसके बाद सम्राट जहागीरके लिये यही सकेत लिखा है।

* ऋषिमती शब्द "तपा गच्छीय" का संकेत वाचक है।

श्रीमान् मोहनलाल दलीचद देसाइने 'युगप्रधान निर्वाण रास' के सार ऋषिमती से लु का मतका निर्देश किया है, लेकिन खरतर गच्छीय ग्रन्थों में अनेक जगह 'ऋषिमती' विशेषण तपागच्छवालों के लिये ही प्रयुक्त किया है।

१७ हृष २५ वापडाऊ १४

१८ प्रमोद २६ बोकानेरि १५

१९ विशाल २७ महिम १६ शा०कुं०अ०म०थू०चद०मू०स्यु०नेमिचैत्य
विचि सौरीपुर यात्रा, चन्द्रवाडि हथिणाउरि आव्या]

२० सुंदर २८ आगर १७

२९ नारनउलि १८

२१ नन्दि ३० हस्तकि १९

२२ सिंधुर ३१ बीकानेर २०

२३ मंदिर ३२ बीकानेर २१ बीकानेरथी जेसलमेरु आवता
फलवधी चैत्य ताला उघाड्या

२४ कल्लोल ३३ जेसलमेरु २२

२५ धरम ३४ देराउरु २३

२६ वल्लभ ३५ जेसलमेरु २४

२७ नदन ३६ बीकानेर २५

२८ प्रधान ३७ सेरुणा २६

२९ लाभ ३८ बीकानेर २७

३० वर्द्धन ३९ जेसलमेरु २८

३१ जय ४० आसणिकोटि २९

३२ प्रभ ४१ जालोर (३०) ऋषिमती चरचा जय ३०

३३ सागर ४२ पाटणि ३१

३४ समुद्र ४३ अहमदावि ३२

३५ कुंजर ४४ खंभाइत ३३ सघ आग्रहि अहमदावाद आवी
श्रीशत्रुंजय यात्रा

३६ दत्त ४५ सूरति ३४

३७ पति ४६ अहमदाबाद ३५

३८कल्याण४७ पाटणि ३६ तिहा चउमास करि अहमदावाद आवी
सघ वदावी खमाइति आग्या, तत्र श्रीजी × ना तेडा
आव्या, असाड सुदि ८ प्रस्थान ६ चाल्या । फागुण
सुदि १२ दिनि पहुता

३६ शेखर ४८ जालोर ३७

४० कीर्त्ति ४६ लाहोरि ३८

४१ मेरु ५० हापाणइ ३६ रातइ चोर पइठा पुस्तक सर्व लेइ गया
पर अब थया पुस्तक आव्या पाछा ।

४२ सेन ५१ लाहोरि ४०

४३ सिंह ५२ हापाणइ ४१ ऋपिमती * कृत कुमतिकुद्दाल ग्रन्थ (जो)
टउ श्रीजी हुजूर कीधउ फुरमाण
( काढ्या ? )

४४ फलग५३ जेसलमेरु ४२

---

× श्रीजी बादशाहका संकेत वाचक है यहा सम्राट अकबर और इसके बाद सम्राट जहांगीरके लिये यही संकेत लिखा है ।

* ऋपिमती शब्द "तपा गच्छीय" का संकेत वाचक है ।

श्रीमान् मोहनलाल दलीचद देशाइने 'युगप्रधान निर्वाण रास' के सार ऋपिमती से लुंका मतका निर्देश किया है, लेकिन खरतर गच्छीय ग्रन्थों में अनेक जगह 'ऋपिमती' विशेषण तपागच्छवालों के लिये ही प्रयुक्त किया है ।

इति नादि।५४ अहमदावादि ४३ माह सुदि १० वडी प्रतिष्ठा सोमजी
५५ खभाइत ४४ श्री राजाजी ना तेडा .
५६ अहमदावादि ४५ तत्र बरहानपुरि श्रीजोयें चीतारया, पछइ ईडर प्रमुख गामे थइ घणा लाभ लेइ राजनगरि आव्या, अत्र श्री कर्मचन्द्र मन्त्री परोक्ष थया
५७ पाटणि ४६
५८ खंभाइत ४७
५९ अहमदावादि ४८
६० पाटणि ४९
६१ महेवइ ५० का० कम्मइ प्रतिष्टा करावी
६२ वीकानेर ५१ तत्र प्रतिष्टा
६३ वीकानेर ५२ तत्र प्रतिष्टा
६४ लनेरइ ५३ राजा *'सूरि'वादिवाआव्यो जोधपुर थकी।
६५ मेडतइ ५४ अहमदावा (द) सत्र रइ तेडइ राजनगरि आव्या
६६ खभाइत ५५
६७ अम्हदावादि ५६
६८ पाटणि ५७ जिनशासन नै कामै आगरै श्रीजी कन्हइ पधारया, पछै षट्दर्शन मुगता कराव्या
६९ आगरइ ५८
७० बीलाडै ५९ स्वर्ग

इसके पश्चात् जिनदत्तसूरिजी सम्बन्धी कई बाते लिखी हैं लेकिन अप्रासगिक होनेसे उसकी नकल भी नहीं दी गई और न ब्लाक ही बनाया गया।

( पत्र १ हमारे संग्रह मे तत्कालीन लिखित )

* जोधपुर के तत्कालीन नरेश सूरसिंहजी (सूर्यसिंहजी)।

## विहार पत्र नं० २

| | |
|---|---|
| सवत पनरइ ९५ वैशाप (ख) वदि १ जन्म। जन्मनाम 'सुरताण' दीधा। | |
| सवत् १६०७ | दीक्षा लीधी ॥ 'सुमतिधीर' नाम दीधउ ॥ |
| सवत् सोलडसइ बारोतरइ भादवा सुदि ६ गुरुवारइ पद दीधउ | |
| सवत् बारोतरइ | श्री जेसलमेरु चउमास |
| सवत् तेरोतरइ | बीकानेर चउमास। |
| सवत् १४ | बीकानेर चउमास, परिग्रह त्याग। म० साग़इ महोच्छव कीधउ। |
| सवत् पनरइ | महिवइ चउमास। तिहा छम्मासी तप |
| सवत् सोलोत्तरइ | जेसलमेरु चउमास, बीदा० |
| सवत् सतरोतरइ | पाटण च०,ऋ०चर्चाजय अभयदेव सूरि |
| सवत् १८ | खभाइत चउमास, सा० धन्म नइ आग्रह च३० |
| सवत् उगणीसोत्तरइ | पाटणि चउमास |
| बीसोत्तरइ | बीकानेर। |
| इकवीसोत्तरइ | बीकानेर, सागा आग्रह। |
| बावीसोत्तरइ | जेसलमेर, विचि नागोर हसनकुलीखान जयलाभ पडसारउ |
| तेवीसोतरइ | बीकानेर |
| चउवीसोत्तरइ | नडुलाइ, ल्रकग नउ भय काती-सुदि १० निवर्त्यउ। |
| पचवीसोत्तरइ | बापडाऊ |

इति नादि।५४ अहमदावादि ४३ माह सुदि १० वडी प्रतिष्ठा सोमजी
५५ खंभाइत ४४ श्री राजाजी ना तेडा
५६ अहमदावादि ४५ तत्र बरहानपुरि श्रीजोयें चीतारया, पछइ ईडर प्रमुख गामे थइ घणा लाभ लेइ राजनगरि आव्या, अत्र श्री कर्मचन्द्र मन्त्री परोक्ष थया
५७ पाटणि ४६
५८ खंभाइत ४७
५९ अहमदावादि ४८
६० पाटणि ४९
६१ महेवइ ५० का० कम्मइ प्रतिष्टा करावी
६२ वीकानेर ५१ तत्र प्रतिष्टा
६३ वीकानेर ५२ तत्र प्रतिष्टा
६४ लवेरइ ५३ राजा *'सूरि' वादिवाआव्यो जोधपुर थकी।
६५ मेडतइ ५४ अहमदाबा (द) सत्र रइ तेडइ राजनगरि आव्या
६६ खंभाइत ५५
६७ अम्हदावादि ५६
६८ पाटणि ५७ जिनशासन नै कामै आगरे श्रीजी कन्हइ पधारया, पछै पट्दर्शन मुगता कराव्या
६९ आगरइ ५८
७० वीलाडै ५९ स्वर्ग

इसके पश्चात् जिनदत्तसूरिजी सम्बन्धी कई बातें लिखी हैं लेकिन अप्रासंगिक होनेसे उसकी नकल भी नहीं दी गई और न ब्लाक ही बनाया गया।

( पत्र १ हमारे संग्रह मे तत्कालीन लिखित )

* जोधपुर के तत्कालीन नरेश सूरसिंहजी (सूर्यसिंहजी)।

## विहार पत्र नं० २

| | |
|---|---|
| संवत् पनरइ ६५ वैशाष (ख) वदि १२ जन्म । जन्मनाम 'सुरताण' दीघा। | |
| संवत् १६०२ | दीक्षा लीधी ॥ 'सुमतिधीर' नाम दीधउ ॥ |
| संवत् सोलइसइ बारोतरइ भादवा सुदि ६ गुरुवारइ पद दीधउ | |
| संवत् बारोतरइ | श्री जेसलमेरु चउमास |
| संवत् तेरोतरइ | बीकानेर चउमास । |
| संवत् १४ | बीकानेर चउमास, परिग्रह त्याग । म० सागइ महोच्छव कीधउ । |
| संवत् पनरइ | महिवइ चउमास । तिहा छम्मासी तप |
| संवत् सोलोत्तरइ | जेसलमेरु चउमास, वीदा० |
| संवत् सतरोतरइ | पाटण च०,म०चर्चाजय अभयदेव सूरि |
| संवत् १८ | खंभायत चउमास, सा० कम्म नइ आग्रह चउ० |
| संवत् उगणीसोत्तरइ | पाटणि चउमास |
| बीसोत्तरइ | बीकानेर । |
| इकवीसोत्तरइ | बीकानेर, मागा आग्रह । |
| बावीसोत्तरइ | जेसलमेर, विचि नागोर हसनकुलीखान जयलाभ पइसारउ |
| तेवीसोतरइ | बीकानेर |
| चउवीसोत्तरइ | नडुलाइ, लश्कर नउ भय काती-सुदि १० निवर्त्यउ । |
| पचवीसोत्तरइ | बापडाऊ |

छावीसोत्तरइ बीकानेर
सतावीसोत्तरइ महिम, शा-कुं- अ- म-थूभ। चन्द्र-मू-स्तु नेमि चे
विचि सोरीपुर यात्रा चन्दवाड हथणाउर पठइ आग
अठावीसोत्तरइ आगरइ

| | |
|---|---|
| उगणतीसइ | नारनउल |
| तीसइ | रुस्तक चउमास |
| इगतीसइ | बीकानेर |
| बत्तीसइ | बीकानेर |
| तेतीसइ | जेसलमेर |
| चउतीसइ | देराउर |
| पइंतीसइ | जेसलमेर |
| छत्तीसइ | बीकानेर |
| सइतीसइ | सेरूणइ |
| अडतीसइ | बीकानेर |
| गुणताल‌इ | जेसलमेर |
| चालइ | आसणीकोट |
| इकतालइ | जालोर चउमास। चर्चाजय |
| बयालइ | पाटण चउमास। चर्चाजय * |

* बिहार पत्रमें सूरिजी की विजय लिखी है, यही बात विस्तार
कुम्भचन्द्र कृत "सुविहित परंपरा" नामक ग्रन्थकी प्रशस्तिमें इस प्रका
लिखी है —

| | |
|---|---|
| ग्रयालड | अहमदाबाद |
| चम्मालड | खभाइत |
| पइतालड | सूरत चउमास |
| छयालड | अहम्मदाबाद |
| सडतालड | पाटण श्रीजी ना तेडा आव्या आसा० सु० ८ चाल्या |
| अढतालड | जालोर चउमास |
| गुणपचासड | लाहोर चउमास |
| पचासड | हापाणइ, चउमास |
| इकावनड | लाहोर |
| बावनड | हापाणइ, चोर आया थया पोथा लाधा |
| तिपनड | जेसलमेरु |
| चउपनड | अहम्मदाबाद, तत्र श्रीजी रा वरहाण श्री जी पीसारा |
| पचाननड | खभाइत |

द्रंगे पत्तनके च राजनगरे, विद्वत्समक्षं पुन ,
कृत्वाष्टादश वासराणि सतत, यावच्च वाद भृशम् ।
पूज्य श्री जिनचद्र सूरि गुरुणा, मूकी कृता गेन च ।
किंचित् शास्त्र मदोद्धता, विजय युक सेनादि पाण्डिता ॥१॥

भावार्थ —पाटण और राजनगरमें जिनचद्रसूरिजीने विजयसेनसूरि आदिको १८ दिन तक विद्वानोके समक्ष शास्त्रार्थ करके पराजित किया।

'विजय प्रशस्ति काव्य' से ज्ञात होता है कि यह शास्त्रार्थ धर्मसागर रचित 'प्रवचन परीक्षा' के सम्बन्धमें हुआ था। उसमें विजयसेनसूरि की विजय लिखी है, सभव है वह अपने २ गच्छके पक्षपातके कारण हो।

| | |
|---|---|
| छपनइ | अहम्मदावाद |
| सतावनइ | पाटण चउमास |
| अठावनइ | खंभाइत |
| गुणसठइ | अहमदावाद |
| साठइ | पाटण चउमास |
| इगसठइ | महेवइ, काकरियइ कम्मइ प्रतिष्टा करावी |
| बासठइ | बीकानेर, तत्र प्रतिष्ठा |
| तेसठइ | पिण बीकानेर, प्रतिष्ठा |
| चउसठइ | लवेरइ चउमास, श्रीराजाजी वादण आयो जोधपुरथी |
| पइसठइ | मेडतइ च०, अहमदाबाद रा तेडा आया। |
| छासटइ | खंभाइत |
| सतसठइ | अहम्मदावाद |
| अढसटइ | पाटण चौमास |
| गुणहत्तरइ | आगरइ चौमास |
| सत्तरइ | बीलाडइ चउमास।* |

( पत्र १ हमारे संग्रह में १८ वी शताब्दी के पूर्वार्द्ध मे कवि 'राजलाभ' के लि० )



* विहार पत्र आदि की प्रतियों में ब के स्थान पर व लिखा हुआ है हमने यथाप्रसग व के स्थान ब कर दिया है।

# परिशिष्ट (ख)

## ॥ क्रिया उद्धार नियमपत्र ॥

॥ ई० ॥ श्री प्रवचन वचन रचनायै ॥ ॐ सिद्धि ॥ श्रीमद्वि-क्रमदुर्गस्थैस्तत्र भवद्भि श्रीमज्जिनचन्द्रसूरि सूरीश्वरैर्विनिय दुर्विधि वारण वारण केशरि किशोर वरैं सुमति सुविहित यति सनती स्तुकपनाद्भि सप्रेष्य प्रेक्षया मुख्य यामि जगणसूत्रणा ससत्रिना सम्मत समति मगत्याद आमोद विनोद कोविदर्पणैरूरी-कृता विगतारेन श्री मन्मुविधिसघेन तथेतिकरणपूर्वकमुत्तमागे निवेशिता सा चैषा ॥

(१) चउमासि माहे एकइ क्षेत्रि एक सामग्री × रहइ। वली कोई बीजा तप प्रमुख नइ कार्यि रहइ, तउ मुख* विहारीरा कथन माहि रहइ ॥ १ ॥

(२) जीयइ क्षेत्रइ जे सामग्री रहिवा आवइ तीयइ क्षेत्रइ वस्त्र कवलादिक विहरइ। साधुनइ प्रत्येकि वेस ३ विहरिवा, साध्वी नइ वेस २, कदाचिनि तिहा न मिलइ तउ जिहा सामग्री न रही हुइ तिहा विहरइ, आस्ता पूर्वक ॥ २ ॥

(३) पाचे तिथ्ये विगइ निषेध सर्वदा, गाल ग्लानादि विना। विशेष तप रा करणहार यथाशक्ति मोकला ॥ ३ ॥

(४) अष्टमी चतुर्दशी समर्थ साधु उ (प) वास करइ। कदाचि न करइ तउ आम्बिल नीवी करइ ॥ ४ ॥

---

× सघाडा * मुख्य-सघाडे के अधिपती

(५) लघु शिष्य वृद्ध ग्लान रा कार्य टालि, बोजइ टकि न विह-रणा आहार। उत्तर वारणा, पारणा, मारग मोकला ॥५॥

(६) जिणि क्षेत्रि नवउ शिष्यादिक मिलइ तेहनइ पदीक* मिलइ तेहनइ पदीक दीक्षा दियइ, पर गणीश× दीक्षा न दीयइ। नवीन शिष्य नइ १७५ कोश माहिं पदोक न हुवइ तउ गणि पिण वेप पहिरावइ।६।

(७) गणीश तप प्रमुख नादि न करइ ॥ ७ ॥

(८) एकल ठाणइ विहार न करइ। एकलउ क्षेत्रि पिण न रहइ। स्वच्छन्द पणइ एकउ रहइ ते माडलि बाहर ॥ ८ ॥

(९) वणारिस उपाध्याय पदीके जे शिष्य दीख्यो हुवइ ते पाछी चोमासइ पर्यूषणा दिने वादता पहिलउ दीख्यउ ते वडउ, पछइ दीखाणउ ते लघु। पछइ जि श्रीपूज्या तीरइ वडी दीख्या लियइ, तिहा थकी वड लहुडाइ व्रत पर्य्याय गिणणउ। नाम पिणि वडी दीक्षायइ श्रीपूज्य दियइ। माडलि रा तप पहिला वहइ, बिहु उपधाना ताइ अर्गला नहीं। वहि सकइ ते वहउ ॥ ९ ॥

(१०) श्री पूज्य जिणि देसि हुवइ तियइ देस माहे जे शिष्य हुवइ, साधु नइ ते पूज्य पूछावो चारित्र दियइ। कोश ४० माहि पूछाविवा। उपरान्त हुवइ तउ दीक्षा देता पूछावण रा विशेष को नहीं श्री पूज्ये दूग्रा देइ ज मेल्या छइ श्री बीकानयरा देस माहि पूज्य हुवइ तउ तिणी प्रमुख बीकानेर रा देस माहिला साधु श्रीपूज्य पूछावी दीखइ ॥ १० ॥

---

*वाचक, उपाध्याय आदि पदों से विभूषित। × गण—ईश = समुदाय (सघाडा) का अधिपति, तथा 'गणि' पद भी दिया जाता है।

(११) जिणा जिणइ तीरइ दिक्षा लीधी हुवइ अनइ गुरुना कथन माहि न चालइ अनइ सघाडा बाहिर नीसरइ, तेहनइ बीजा गच्छ-वासी साधु श्री पूज्यरा आदेश पाखइ कोई राखिवा न लहइ ॥११॥

(१२) तथा अहोरात्रि माहे ५-७ शत सझाय करणा। भणिवउ गुणिवउ तेहू सझाय ॥ १२ ॥

(१३) मा वेटउ स्त्री पुरुष अनइ एकली स्त्री भाई वहिनि ए श्री पूज्य पूछावो इज चारित्र लियइ ॥ १३ ॥

(१४) प्रहर उपरान्ति उपाश्रय माहि एकली श्राविका एकली साध्वी नावइ। काइ पूछिवा कि वांदिवा आवइ तउ ४।५ मिली नइ आवइ ॥ १४ ॥

(१५) पाडिहेरु वस्त्र कम्बलादिक सरतइ-- वरतइ न लइणा। कारणि मोकला ॥ १५ ॥

(१६) उत्कृष्ट मध्यम जघन्य भागइ ३।५।७ वड ओढिवा, नवा पुराना पातला जाडा विचारि नइ

तिन्नि किसिणे जहन्ने, पचइ दृढ दुब्बलाइ गिन्हेवा।
सत्तय परिजुन्नाइ, एय उक्कोसग गहण ॥ १ ॥
॥ इतिश्री बृहत्कल्प वचनात् ॥ १६ ॥

(१७) वाणिया, ब्राह्मण जाति रे जोग दीक्षा देणी। १५ वर्ष माहिला ब्राह्मण दोखिया। जीयइ ब्राह्मण रइ कुलि मद्य मास न वापरइ, ते दोखणा परीक्षा करि ॥ १७ ॥

(१८) विषम मार्गि साधु सघात निश्राइ आगलि पाछलि जिम सजम निर्वहइ, तिम विहार करणा साधु साध्वी ए ॥ १८ ॥

---

* उसके बिना भी चल सकता हो तो

(१६) शेषइ कालि एकइ नगरी एकइ उपाश्रयि कदाचि रहिवा रा योग न हुवइ, तउ प्रभाति सज्झाय एकठा करणा। जूए २ उपाहुरइ उपाश्रए नउ ॥ १६ ॥

(२०) पडिक्कमणउ वलि माडलि सगले जतिये एकठउ करणउ, एकणि उपासरइ रहता जूयउ पडिक्कमणउ जको करइ, ति सुप-विहारी, पदीक रा आदेश लियइ कारणि ॥ २० ॥

(२१) पोसाल-वाला माहतमा* मोकला तेह सउ परिचा(परिचय) न करणा। माहतमा द्रव्य लिंगीया नउ भणावणा न करणा। कोई सुविहित माहतमा रूडा जाणि भणावइ तउ भणावउ। ऋषीश्वर आप माहतमा तीरइ भणइ तउ सघनी अनुमति भणइ भणावइ ॥ २१ ॥

(२२) साध्वी एकइ खेत्रि एक वरस उपरान्त न रहइ, जिणइ उपाश्रयि चउमासि कीधी हुवइ तिहा चउमासि नइ पारणइ वि मास-क (ल्प) बीजइ थानकि रहइ, पछइ मूलगइ उपाश्रयि रहइ, जिका सामग्री रहइ ते साध्वी नो वस्त्र पात्रनी चिन्ता करइ, अनइ साध्वी पिणि तेहना कथन माहि चालइ ॥ २२ ॥

(२३) शेष काल हुंती चउमासि माहि साधु साध्विए विशेष तप करणा ॥ २४ ॥

(२४) साध्वी पुस्तकादिक साधु नइ पूछा (छी?) वहिरइ ॥२४॥

(२५) यतियइ आपणइ काजि क्रीत पात्रादिक न करणा ॥२५॥

(२६) जको विशेष वइरागि आपणइ भावि चारित्र लियइ सु जिहा तेहना मन हुवइ ते तिहा चारित्र लियइ ॥ सामान्य वइरागि

* मत्थेरण —जिन्हें कि क्रिया उद्धार के समय शिथलाचारी रहने से साधु रूपसे निकाले गये थे।

जे जिणइ प्रतिबोध्या हुवइ ते तियइज सनि दीक्षा लियइ जउ ठामि ठामि सुख घातइ तउ न दीखणा।

(२७) जेहना मावित्र (माता-पिता) काइ वान्छा करइ ते लघु छात्र नइ सघ नइ कहि दीक्षा देणी। सघइ यथा योगि उद्यम करणा। यतियइ जिम उछ्रा हुवइ तिम न करणा ॥२७॥

(२८) साधु साध्वी नइ जे पुस्तक पाना जोइयइ ते भिन्न भिन्न श्रावक नइ न कहणा, यथा योग्य ते सघ नइ कहणा, श्री सघइ यथा योग्य चिन्ता करणी ॥ २८ ॥

(२९) गच्छ माहि ऋपीश्वरे माहो माहि पठन पाठन रा उद्यम करणा। भणण हारे पिणि विनयपूर्वक भणिवा ॥२९॥

(३०) कोइ वइरागी नवउ आवइ तहनी परीक्षा करइ, मास २ सीम। २ मासे भलउ जाणइ तउ दीखइ ॥ ३० ॥

तथा ऋपीश्वरा रा सघाडा जिकइ पोसाल माहि छइ, तियइ जके चेला कीधा छइ, जियारी जाति पाति जाणियइ जियइ, गाम माहि वसता रहता, तिया री सारि भरइ, सगउ सणीजउ अलगउ ढूकडउ ( निकटवर्त्ती ) दिखाडइ सु ऋपीश्वरा माहि मन मानइ तउ, श्री पूज्य रइ आदशि आणी जइ ॥ तथा पोशाल माहिला माहातमा जे क्रिया-उद्धरइ ति सघाडा वद्ध घालणी पर जे चेला केडइ राखइ, तिया नइ न घालणा वासइ अघोवारि न राखणी। वलि जि पूरइ सघाडइ आवइ ति बि वरस रूडा रहइ सघ रा मन मनावि श्री पूज्या तीरइ आनि श्री पूज्या रइ मनि मान्यइ, ऋपीश्वरा री माडलि माहि आवइ ॥ तथा जियइ ऋपीश्वरे चेला १।२ पोसाल माहिला योग्य जाणी समह्या। तियइ

(१६) शेषइ कालि एकइ नगरी एकइ उपाश्रयि कदाचि रहिवा रा योग न हुवइ, तउ प्रभाति सझाय एकठा करणा। जूए २ उपाहरइ उपाश्रए नउ ॥ १६ ॥

(२०) पडिक्कमणउ वलि माडलि सगले जतिये एकठउ करणउ, एकणि उपासरइ रहता जूयउ पडिक्कमणउ जको करइ, वि मुख-विहारी, पदीक रा आदेश लियइ कारणि ॥ २० ॥

(२१) पोसाल-वाला माहतमा* मोकला तेह सउ परिचा(परिचय) न करणा। माहतमा द्रव्य लिंगीया नइ भणावणा न करणा। कोई सुविहित माहतमा रूडा जाणि भणावइ तउ भणावउ। ऋषीश्वर आप माहतमा तीरउ भणइ तउ सघनी अनुमति भणइ भणावइ ॥ २१ ॥

(२२) साध्वी एकइ खेत्रि एक वरस उपरान्त न रहइ, जिणइ उपाश्रयि चउमासि कीधो हुवइ तिहा चउमासि नइ पारणइ बि मास-क ( ल्प ) बीजइ थानकि रहइ, पछइ मूलगइ उपाश्रयि रहइ, जिका सामग्री रहइ ते साध्वी नो वस्त्र पात्रनी चिन्ता करइ, अनइ साध्वी पिणि तेहना कथन माहि चालइ ॥ २२ ॥

(२३) शेप काल हुती चउमासि माहि साधु साध्विए विशेष तप करणा ॥ २४ ॥

(२४) साध्वी पुस्तकादिक साधु नइ पूछा (छो?) वहिरइ ॥२४॥

(२५) यतियइ आपणइ काजि कोल पात्रादिक न करणा ॥२५॥

(२६) जको विशेष वइरागि आपणइ भावि चारित्र लियइ सु जिहा तेहना मन हुवइ ते तिहा चारित्र लियइ ॥ सामान्य वइरागि

---

* मत्थेरण —जिन्हें कि क्रिया उद्धार के समय शिथलाचारी रहने से साधु रूघमे निकाले गये थे।

जे जिणइ प्रतिबोध्या हुवइ ते तियइज रानि दीक्षा लियइ जउ ठामि ठामि मुख घातइ तउ न दीखणा।

(२७) जेहना मावित्र (माता-पिता)काइ वाञ्छा करइ ते लगु छात्र नइ सव नइ कहि दीक्षा देणी। सघइ यथा योगि उद्यम करणा। यतियइ जिम उङ्गा हवइ तिम न करणा ॥२७॥

(२८) साधु साध्वी नइ जे पुस्तक पाना जोइयइ ते भिन्न भिन्न श्रावक नइ न कहणा, यथा योग्य ते सघ नइ कहणा, श्री सघइ यथा योग्य चिन्ता करणी ॥ २८ ॥

(२९) गच्छ माहि ऋषीश्वरे माहो माहि पठन पाठन रा उद्यम करणा। भणण हारे पिणि विनयपूर्वक भणिवा ॥२९॥

(३०) कोइ वडरागी नवउ आवइ तेहनी परीक्षा करइ, माम सीम। २ मासे भलउ जाणइ तउ दीखइ ॥ ३० ॥

तथा ऋषीश्वरा रा सघाडा जिकइ पोसाल माहि छइ, तियइ जे चेला कीधा छइ, जियारी जाति पाति जाणियइ जियइ, गाम माहि वसता रहता, तिया री सारि भरइ, सगउ सणीजउ अलगउ ढूकडउ (निकटवर्त्ता) दिखाडइ सु ऋषीश्वरा माहि मन मानइ तउ श्री पूज्य रइ आदशि आणी जइ ॥ तथा पोशाल माहिला माहातमा जे क्रिया-उद्धरइ ति सघाडा बद्ध घालणी पर जे चेला थे डइ राखइ, तिया नइ न घालणा वामइ अघोवारि न राखणी। वलि जि पूरइ सघाडइ आवइ ति बि वरस रूडा रहइ सघ रा मन मनावि श्री पूज्यां तीरइ आवि श्री पूज्या रइ मनि मान्यइ, ऋषीश्वरा री माडलि माहि आवइ ॥ तथा जियइ ऋषीश्वरे चेला १।२ पोसाल माहिला योग्य जाणी सग्रह्या। तियइ

वलना पछइ बद्ध सघाडा पोसाल माहिला आवइ, तउ इज लइणा श्री पूज्या रा मन मनाविनइ। परं वलि १।२ अधूराइ मन वइणा योग्य पणइज लइणा, श्री पूज्य रइ आदेशि॥ तथा साधु श्रावक घणा माहि वइसी नइ गीत राग न गावइ, सभा माडिनइ। जउ कोई भणता होइ ते प्रति ढाल सीखावइ॥

( पत्र १ हमारे सग्रहमें तत्कालीन लि०

## श्री जिनचंद्रसूरिकृत समाचारी

एतला वोल ढोदला हुता सु श्री जिनचन्द्र सूरि बीजे उपाध्याये वाचनाचार्ये ए गीतार्थे एकठा मिली नइ श्री बीकानेर मध्ये थाप्या।

१ श्री स्थापनाचार्य पडिलेही जिणि थानि माडिए ते ठाम पहिला दृष्टि सु जोइ पूजी माडियइ, जइ तिहा कोई जीव जन्तु हुइ, तउ रुडा परठवीइ इरियावहि पडिक्रमीयइ, अन्यथा इरियावही पडिक्रमण विशेप कोइ नहीं।

२ पाणी पारीयइ तेहनी विगतो। जइ अवड्ढ रा पचखाण कीधा हुइ तउ साझ री पडिलेहण पछइ पारीयइ। बीजा पोरसि प्रमुख पचखाण कीधा हुइ तो पहिला पारीयइ।

३ स्थापनाचार्य विधि पूज्या हुइ अनइ सामायकादिक क्रिया कीजइ तउ वारू। कदाचि न पूज्या हुइ अनइ को एक आप नीचइ भूमिका पूंजी काजइं उधरइं सामायकादिक क्रिया करइ पारइ, तउ पिणि असूझिवउ कोइ नहीं।

४ पउण पडिलेहणनी गुरे मुहपति पडिलेही पछइ, उपधान नदि पोसह क्रिया न सूझइ।

५ पेढ़िली आडी हुइ अनइ गुरु स्थापनाचार्य आगलि क्रिया करइ तउ योग्य भूमिकाइ रह्या आसूझिवउ कोइ नहीं ॥

६ जन्म सूतक हुए घर ना मनुष्य १२ दिन देव पूजा न करइ, पडिकमण ना विशेष कोई नहीं । मृतक सुअइ× (सूतक) १३ दिन पूजा टालइ मूळ काधिया हुइ ते, बीजा घर रा दिन ३ देवपूजा पडिक्रमणा टालइ । घर रा मूळ काधीया हुइ ते १२ दिन देवपूजा न करइ। पडिकमणा २४ पहर न सूझइ । मृतक भीट्या— न हुइ, काधीया पिण भीट्या न हुइ, वस पालट्या हुइ तउ ८ पहर देवपूजा टालइ, जउ काधीया आभडइ तउ पहर १२ ॥

७ श्रावक क्रिया करतउ चउकल्थ करइ विधि वादइ । आगिला छेहडा ऊचा करइ ए परमार्थ ॥

८ स्थापना गुरु प्रतिमा पादुका सघाऊ सुकडि केसर प्रमुख द्रव्ये करि पूजिए ।

९ पाखीरइ पडिकमणइ श्रावक पाखीसूत्र वदितु गुणता "त निंदे त च गरहामि" एतला सीम गुणइ "अभुट्ठियोमि आराहणाए" ए चूलिका न गुणइ ।

१० जीरा वाळ्या कपड-छान्या फासू होइ । जीरा लूण अग्नि आदिक सयोग विना फासू ( प्रासुक ) न गिणीयइ, व्यवहारइ जीरा करवा छाछ माहे घाल्या हुता रात्रि नइ आतरइ फासू गिणीयइ ।

११ सचित्त परिहारी द्राख लेइ । काला ?

१२ सूकडि केसर री पूजा माझ री कालवेला उपराति न सूझइ ।

× स्पर्श × समीप

१३ भगवंत नइं धूप धुपणउ जे गाढउ अपूर्व हुई सखरा, ते सूझइ।

१४ कटाला-काष्ट री प्रतिमा, थापनाचार्य, नवकरवाली न सूझइ, अपर सूझइ।

१५ छास रावड (रावडी ?) काजी रा उत्कट द्रव्य। घोलवडा दही रो निवीतउ कहीयइ।

१६ यती नी नवकरवाली श्रावक नवकार गुणइ तउ असूझिवउइ को नहीं, पर अति प्रवृति न घालिवी।

१७ धनागरा माहि धाणा सूठ हरडइ दारा ग्यारक ए सहु एक द्रव्य। पर द्रव्य पचखाण ना धणी जुदा २ न खाइ, एकठा करी खाइ तउ एक द्रव्य।

१८ कूलरि घी रउ निवीतउ कहीजइ।

१९ काष्ट विदलइं फल काण ए विदल गणिवा, काष्ट विदल न गणिवउ।

२० उपाश्रय नीकलता खूलउ श्रावक आवस्सही न करइ। पोपहतउ सामयिकधर कहइ। देहरइ निकलता आवस्सई कहण प्रयोजन को नहीं।

२१ सध्यारइ पडिकमणइ तवन कह्या पछइ इच्छामि खमा० ए पूरी खमासमण देइ। (१)श्री आचार्य मिश्र कहइ (२)बीजइ खमासमणइ उपाध्याय मिश्र वादइ। (३)त्रीजी खमासमण सर्व साधु वादइ। (४) चौथी खमासमणि पूरी देइ 'देवसी पायच्छित विशुद्धि करेमि काउसग्ग' करइ।

२२ त्रिकाल री देवपूजा अविरती श्रावक जे पडिक्कमणउ नहीं करतउ छइ, ते करइ। पहिलउ श्री जिन प्रतिमा पूजाइ सप करइ। अनइ जे विरती पडिक्कमणा ना करणहार करइ छइ ते पहिलो पडिक्कमणउ करी पडिलेहण पहिला सामायक पारी छइ देवपूजा करइ।

२३ पोसह माहे देहरइ पूछणउ (चलवला) ले जाइ, कदाचि देहरा अलगा हुइ कारणइ वइसइ पूजीनइ। तिण कारणि तीरइ हुइ तउ वारू। देहरा ढूकडा हुइ तउ न ले जाइ, तउ असूझिवउ पण को नहि।

२४ चलवला काइ सबल अजयणा विचि हाट अथवा चैत्य गृह जाणइ तउ पूजिवा भणी ले जाइ। चरवला विना अजयणा न टलइ तउ ले जाइ।

२५ श्रावक देव गुरु प्रतिमा पादुका, जेतलउ ढोवणउ ढोवइ ते न खाइ।

२६ रोटी रोटला फेणा वाटी प्रमुख ना जुदा २ द्रव्य गिणीजइ, एक पिंड आटा ना जे रोटी वेलणादिक करइ ते एक द्रव्य।

२७ अणपडिहेलउ ठे पाडउ पुञणा माहि न वापरइ। वापरइ ते अपडिलेही दुपडलेही दोष लागइ ॥ २७ ॥

॥ इति सत्तावीस चरचा वोल समाप्त ॥



# परिशिष्ट (ग)

## "शाही फरमान"

सरस्वती मासिक पत्रिका (सं० १६१२ जून पृ० २६३)से उद्धृत —

"फर्मान जलालुद्दीन मोहम्मद अकबर बादशाह गाजी —

हुक्काम किराम व जागीरदारान व करोरियान व सायर मुत्सद्दियान मुहिम्मात सूबै मुलतान विदानंद।

"कि चू हमगी तवज्जोह खातिर खैरदेश दर आसूदगी जमहूर अनाम बल काफफए जाँदार मसरूफ व मातू फुस्त कि तवकात आलम दरमहाद अमन बूदा बफरागे वाल वइबादत हजरत एजिद मुतआल इश्तगाल नुमायद। व कब्ले अर्जी मुरताज खैर-अन्देश जैचदसूर खरतर गच्छ कि बफैजे मुलाजिमत हजरते मा-शरफ इखति सास यापता हकीकत व खुदा तलबी ओ व जहूर पैय(व?)स्तावूद। ओरा मशगूल मराहिम शाहशाही फरमूदैम्। मुशा-रन् ईले है इलतिमास नवू(मू?)द कि पेश अर्जी हीरविजयसूरि सागर शरफ मुलाजिमत दर्यापता वूद। दर हर साल दोवाजदह रोज इस्तदुवा नमूदा वूद की दरा अय्याम दर मुमालिके महरूसा तस-लीख जाँदारे न शवद। व अहदे पेरामून मुर्ग व माही व अमसाले आँ न गरदद। व अजरूय मेहरवानो व जाँ परवरी मुस्तमसे ऊ-दरजे क़बूल यापत्। अयतू(नू?)उम्मेदवारम् कि यक हफ्ते दीगर ई



अष्टाह्निकामादि शाही फरमान नं० १

दूवागोय् मिसले ऑं हुक्मे आली शरफ सुदूर यावद् । बिनावर उमूम ग (रा?)फन हुक्म फरमुदैम् कि अज तारोखे नौमि ता पूरनमासी अज शुक्ल पछ असाढ दर हर साल तसलोख जॉंदारे न शवद् । व अहदे दर मकाम आजार, जाँदार 'मोरे नागरदद । व असल व खुद ऑंनस्त कि चू हजरते यै चू अज्ज वराए आदमी चदौं इन्थामत-हाय गुनागूं मुहय्या करदा अस्त । दर् हेच वक्त दर आजार जान-वर व शवद् । व शिकमे खुदरा गोर हैवा नात न साज़द । लेकिन वजेहत वाजे मसालह दानायान पेश तजवीज नमूदा अद । दरीं-विला आचार्य जिनसिंह सूरि उर्फ मानसिंह व अरज अशरफ अक-दस रसानोद की फरमाने कि फब्ल अर्जी वशरह सदर अज सुदूर याफ्ता बूद गुम शुदा । बिना बरॉं मुताबिक मज़मून हुमा फरमान मुजदद फरमान मरहमत फरमुदैम् । मे बायद् कि हस्बुल मस्तूल(र?) अमल नमदा व तकदीम रसानद । व अज़ फरमुदह तख़ल्लुफ व इनहिराफ ननरज़द । दरीं वाब निहायत एतहमाम व कदगन् अजीम लाज़िम दानिस्ता नगइयुर व तबद्दुल् बकवायद ऑं राह न दिहद । तहरीरन् फोरोज् रोज सी व यकुम माह खुरदाद् इलाही सन् ४६ ।

(१) "ब रिसालए मुकर्रबुल हजरत स्सुलतानी दौलतरा दर चौकी (उमदे उमरा)

(२) "ज़ुनद तुल आयान राय मनोहर दर नौबत वाकया नवीसी ख़ाजा लालचद" ।

---

जोधपुर निवासी मुन्शी देवीप्रसादजीने इसका अनुवाद हिन्दीमे इस तरह किया है —

## फ़रमान अकबर बादशाह गाजीका

"सूबे मुलतानके बडे २ हाकिम, जागीरदार, करोडी और सब मुत्सद्दी(कर्मचारी)जान लें कि हमारी यही मानसिक इच्छा है कि सारे मनुष्यो और जीव जन्तुओको सुख मिले, जिससे सब लोग अमन चैन मे रहकर परमात्मा की आराधना मे लगे रहे। इससे पहिले शुभ-चिन्तक तपस्वी जयचन्द (जिनचंद्र) सूरि खरतर (गच्छ) हमारी सेवामे रहता था। जब उसकी भगवद्भक्ति प्रकट हुई तब हमने उसको अपनी बडी बादशाही की महरबानियोमे मिला लिया। उसने प्रार्थना की कि इससे पहिले हीरविजयसूरि ने सेवामे उपस्थित होनेका गौरव प्राप्त किया था और हरसाल बारह दिन मागे थे, जिन मे बादशाही मुल्कोमे कोई जीव मारा न जावे और कोई आदमी किसी पक्षी, मछली और उन जैसे जीवो को कष्ट न दे। उसकी प्रार्थना स्वीकार हो गई थी। अब मे भी आशा करता हू कि एक सप्ताहका और वैसा ही हुक्म इस शुभचिन्तक के वास्ते हो जाय। इसलिये हमने अपनी आम दया से हुक्म फरमा दिया कि आषाढ शुक्ल पक्ष को नवमी से पूर्णमासी तक सालमे कोई जीव मारा न जाय और न कोई आदमी किसी जानवरको सतावे। असल बात तो यह है कि जब परमेश्वरने आदमीके वास्ते भाति-भातिके पदार्थ उपजाये हैं तब वह कभी किसी जानवरको दु ख न दे और अपने पेटको

पशुओंका मरघट न बनावें। परन्तु कुछ हेतुओंसे अगले बुद्धिमानोंने वैसी तजवीज की है। इन दिनों आचार्य 'जिनसिंह' उर्फ मानसिंहने अर्ज कराई कि पहिले जो ऊपर लिखे अनुसार हुक्म हुवा था वह खोगया है इसलिये हमने उस फरमानके अनुसार नया फरमान इनायत किया है। चाहिये कि जैसा लिख दिया गया है वैसा ही इस आज्ञा का पालन किया जाय। इस विषयमें बहुत बड़ी कोशिश और ताकीद समझकर इसके नियमोंमें उलट फेर न होने दें। ता० ३१ खुरदाद इलाही। सन् ४९॥

हजरत बादशाहके पास रहनवाले दौलतखाँको हुकुम पहुचाने से उमदा अमीर और महकारी राय मनोहरकी चौकी और ख्वाजा लालचदके वाकिया (समाचार) लिखनेकी बारीमें लिखा गया।"—



* यह फरमान लखनऊ में खरतर गच्छ के भंडार में है। इसकी नकल 'कृपारस कोश' पृ० ३२ में भी छप चुकी है। मूल फरमान फारसी में है, और उपर शाही मुहर लगी हुई है।

## ॥ शाही फरमान नं० २ ॥



नकल पातसाइ परवाने री इण ठिकाने नत्र मोहर री छाप

॥ श्री ॥

सेत्रुजा पर देहरा अरु किल्ला है सो तमाम जैन मारगके यात्रा का जगा है अरु भाण क्षेत्र(भानुचद्र?)सेवड मना करता है अरु किल्लामें देहरा मत करो। पहिला वखतमे भरत चक्रवर्तीने पा(हा)ड पर किल्ला अरुदेहरा बनाया, दुसरी वखत सगर चक्रवर्ती सोमदेव के बेटे ने पाड पर देहरा वणाया, तीसरे वखत राजा जुधिष्टर पाडव ने पाड पर देहरा वणाया,चोथा वखत विक्रमादित्य के एकसोआठ सन मे जावड वनीये ने देहरा वणाया, पाचवा वखत १२१३ सन्मे मेहता वाहडदे जयसिंह-देव के चाकर नै पाड पर देहरा वणाया, छठा वखत अलाउदीनके वखतमे १३०० ( १३७१ ? ) सन् मे समर वनीये नै एक मूरत नवी बनवाइ और जुने देहरे मे रखी, सातवे* वखत वहादर (शाह) गुजराती के अमल मे १५८७ सन मे करमान डोसो नै जो चं प्रान।

*इस फरमानकी नकलमें जिन सात उद्धारोंका उल्लेख है, उनका वर्णन कवि-लावण्यसमय कृत शत्रुञ्जयउद्धार स्तवनमें इस प्रकार है —

> उद्धार पहिलउ भरत केरु, बीजउ सगुरु छद्धावए।
> त्रीजउ ति पाण्डव राय युद्धिष्टर, पुहवी प्रगट करावए।
> चुउथउ ति जावड अनइ वाहड, कराव्यु जग जाणीयइ।
> उद्धार छट्ठो शाहं समरा, तणउ वलिय वखाणियए ॥

(श्री० विद्याविजयजी सम्पादित 'प्राचीन तीर्थ माला संग्रह')

पुनमीयें गछ का था, उसने जुने देहरे का मरमत करवाया और जुनी जुरा जरा मुरता तुटेली थी सो भंडार कीवी और नवी मुरत जुनें देहरामें थापना कीवी। आठवी वखत १५६१ सन मे मजादेहखान गुजराती ने देहरे कु तोडा, कितनीक मूरता तोडी पीछे करमान डोसीने जेपुर सु आयकर देहरा कु मूरता को मरम्मत किया। १५६२ सन् मे राजकाज युक्त हुमायु बादशा गुजरात मे आये,१५६३ सन् मे बादर गुजराती कु फिरंगी ने मारा, सुलतान महमद पातस्या हुआ अरु इस महमद के अमल में ॥ (आधा) वरसतक सोरठ (देश) के मुलक मे दगा रहा, उस पीछे एकहजार पाचसौच्यार (मे) सेंत्रुजा मजादाहखान कु जागीरी मे मिला। उस पीछे अश्वलगच्छ के जमनन्त पसारी बहुत आता जाता, मजाहीदखान का जागीरी में उस अपने साहिब कु बीनति किया, फागुण सुदि ३ सुकरवार के दिन अमारत शुरू करी एक बडा देवल वनाया ३५ छोटे बनाए, अर दर-

---

इस तीर्थ मालामें उपरोक्त ६ उद्धारके वर्णनके पश्चात् सातवा उद्धार करमा शाह डोसी ने स० १५८७ में कराया जिसका वर्णन है। जावड-शाह का चोथा उद्धार होना कवि 'देपाल' कृत 'जावड भावड रास'से भी सिद्ध होता है। यथा —

जावड प्राग-वश सिणगार, सोरठिउ सहजिइ सुविचार।
जेहनउ सेंत्रुंजि चउथु उद्धार, तस गुण पुहवी न लाभइ पार ॥१०८॥
( उक्त रासकी नकल हमारे संग्रह में है )

जयसोमजी कृत कर्मचन्द्र मंत्रि वंश प्रबन्धमें भी —

उद्धारान् सप्त चैत्यानां कारणाद्विदधु पुरा।

नर गच्छके वनिया ने २२ देहरा बनाया अरु किल्ला में अंधारथ (त
भी कराया। कर(ड ?) वामती के गच्छ के बनिये ने किल्ले
दरम्यान अम्बारत (इमारत ?) करके २ देहरे बनाए, पायच
गच्छके बनिये नै किल्ले मे अम्बारत करके देहरा ३ बना
अचलगच्छ के बनियेने वोहट अम (अरु?) वखत्रालने ३ वरस तल
किल्लामे अम्बारत किया, बडे देहरे ३(तीन) बनाए और छोटे ६ बन
इलाहीके आठमे सनमे राजकाज युक्त पातशाहके १३ सन् मे पद
( ? ) डोसी अरु हुमान मोहते ओसवाल खरतरान गच्छके थे, उन
ने अम्बारत करके ५ वरस तक टूटे हुवे देहराकी मरम्मत करवा
रामजी तपाने किल्लामे देहरा बनाया, इलाहीके १६ सन् मे गुजरात
मुलकमे काल पड्या,इस वास्ते४(च्यार)वरस तलक सेत्तुजा उजड रह
उस पीछे इलाहीके ७२ सन् मे • • आबाद
हुआ अरु अल्लाहीके २५ सन् मे तपागच्छके जसू बनियेने देह
बनाया। फते इलाहीके ३० सन् मे खरतरान के सीस मेहता सा
लाहोरमे पातस्याहके कदवो से हुवा था। उसने रायण के झाडके
नीचे ४ वडे देवल किल्ले मे करवाये। अल्लाही के ३६ सनमे सहरद
महीनेमे पातसा ने गिरनार सत्रजा और पालीताणे के देहरे सम्पू
कृपासे महत्ता कर्मचन्द कु कृपा दान किया और इस बाब(त)मे फरमा
मुहर वाला कर दिया। अब करमान मेहता ने भलमणसाइ करके जै
मारग के तमाम गच्छ के लोगा कु सब देहरे दे डाले। इस वास्ते
मुझे तो पातसाने कृपाकर दए,हमे सेत्रुंजा के सब देहरे तवाब (तमाम
जैन मारग के टोला के हैं। मुझे एकला कु राखणे लायक नहीं, अ

तेहुत्तर वरस हुने के छोटे तपागच्छ ने हीरविजय सूर तपा के गच्छ कु अपनेसे जुदा किया अरु हीरविजयसूर के चेले भाणचन्द कु पूछणा चाहिये के आदिनाथके देहरा अरु किल्ला ७३ वर्ष पहले तुमारा था के ७३ वरस पीछे तुमारा हुवा, अगर भाणचद केहवे ७३ वरस पहला किसा हमारा था तो छोटे तपागच्छका लिखा हुआ त (?)को किसमे हीरविजेसूर का गच्छ जुदा हुवा लिखा हुआ अपने हाथमे है के सतरु जा अरु आदिनाथ का देहरा किल्ला तमाम जैन मारग का है, अगहर कोइ दावा हरकत कर सो झूठा, अगर कोई तपा मतके कहते हैं, सेत्रुजा हमारा है सो विचार कर तजवीज करेगा, सेत्रुजा तमाम जैन मारग का है, कृपादान परवाना 'कर्मचन्द' का है।×

× मूल फरमान का यह अनुवाद, बिकानेर के ( बड़े उपाश्रयमें ) *बृहद्ज्ञानभण्डारस्थ १९वीं शताब्दी लिखित १ पत्र की* तद्वत् नकल करके यहां प्रकाशित किया गया है, अनुवादकर्ता की असावधानी के कारण भाषान्तर में कई भूल रह गयी ज्ञात होती है।

तीर्थाधिराज शत्रुञ्जयके सम्बन्धी इसमें बहुत महत्वका ऐतिहासिक ज्ञातव्य मिलता है। सम्राट्का गिरनार, शत्रुञ्जय और पालीताणेके देवालयों को सुरक्षा के लिये मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रजी के आधीन करने का फरमान देने, शत्रुंजय तीर्थ के दुर्ग में नवीन देवालय निर्माण करने के लिये भानुचन्द्र जी के निषेध करने का इसमें उल्लेख है। तीर्थपर नवीन मन्दिर निर्माण के विषय में खरतर गच्छ और तपा गच्छ वालों के झगड़ा होने का भानुचन्द्र चरित्र, परिशिष्टान्तर्गत ( न० ४ ) प्रशस्ति आदिसे भी जाना जाता है। झगड़ेके उपशान्तिके

## ॥ नं० ३ परवाना ॥

श्री परमेसरजी

श्रीकृष्ण — सलाबतका चिह्न — सही

॥==॥ स्वस्ति श्री महाराजाधिराज महाराजा श्री सूरिजसिंहजी कु० । श्री गजसिंघजी वचनात् युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिजी नु मया करे दुवो दीयो जु श्री जोधनेर सोझत सिवाणै मेडतै जैतारण आसोप रे देस, माहरी धरती छै ततरी माहे वाजा वजावौ झालर दमामा वाजा मात्र वजावता कोई मनै करे सु गुन्हेगार होसी मागश्र (मार्गशीर्ष ?) वदि ६ सवत १६६४ दुवै श्रीमुख। प्र०। भाटी गोइन्ददासजी । पा । जोधनेर—

"औ मूलपरवानो उ०। श्री सरुपचन्दजी गणि पास हैं श्री जोधपुरमे, तिकैरी आ नकल छै—

( पत्र १ हमारे संग्रह मे )

---

लिये यह फरमान जाहिर किया ज्ञात होता है। इस विषयमें विशेष ऊहापोह मूल फरमान प्राप्त होने पर की जायगी।

प्राचीन पत्रोंकी नकल करके तद्रूप ही प्रकाशित करने में हमने पूर्ण सावधानी रखी है। जो प्रति अशुद्ध मिली, वह भी पाठक मूल वस्तुका उसी रूपमें दर्शन कर सकें, अत उसको प्राय उसी रूपमें नकल प्रकाशित की गयी है।

# परिशिष्ट (घ)

## सांवत्सरिक पत्र ।

॥ सकल विमल शाश्वत स्वस्तिम ज्योति रुद्योतित सर्व सूर्यादि मन्त्रेपु तन्त्रेपु सर्वत्र भूर्यादि पत्रेपु यन्त्रेपु विद्या पवित्रेपु मिथ्यात्व वल्ली लवित्रेपु दत्तात्म भक्तालपत्रेपु ससिद्धि सत्रेपु मित्रेपु लिव्या विचित्रेपु वाद्य पुनर्य च वाला पतद्वक्र लाला लसत्कण्ठ पीठेपु मुक्तादि माला अनालिप्ट ससार मायादि जवाल जाला सुभाला सुबुद्धया विशाला समात्मीय नाल प्रणाला करालाक्षिकाला सदा सन्मुदा मातृकाया पठतीह पूर्व तथा त्र (?) रक्षणे वातुरूप स्वरूप नतानेक भूप सदाम्नाय पानीय कूप सदाप्यव्यय न व्यय सन्मनोहारि सर्वत्र विस्तारि मिथ्यात्व सहारि सम्यक्त्व सम्कारि दुर्बुद्धि निवारि सद्बुद्धि सचारि निर्वाण निर्द्धारि तीर्थेश धामेव शौर्ये प्रचडेन दडेन सप्रोल्लसत्कीर्त्ति पिंडेन दीप्ते करडेन नित्य अखडेन युक्त तदूर्ध्व महेन्द्रध्वजेनापि कुभेन सर्वर्द्धि लभेन संशोभित वर्णमेकं पुन पद्मनाभो विरचिर्वृषाकश्च देवत्रयं यत्र नित्स्य मिलित्वा स्थित वक्रधार कृपाण तथा लोह गोलं यको दानवो मानवो व्यतर किन्नरो राक्षसो यक्ष वेताल वैमानिक प्रेत गन्धर्व विद्याधर क्षेत्रपालादि दिक्भू पाल भूतव्रजो भास्करो भासुर श्चचुर श्चद्रमा मगुलो मगल सोमपुत्रो (त्र ?) पवित्र स्तथा सन्नगी पतिर्भार्गवो नीलवासास्तथा सैहिकेय स्त्रिशरीयो (?) ग्रहो दुर्मुहो या च नक्षत्रमाला विशाला तथा

शाकिनी डाकनी नाकिनी किन्नरी सुन्दरी मंत्रिणी तन्त्रिणी यत्रिणी दुष्टनारी तथा केसरी चित्रक कुञ्जरो वेसर सैरमेय स्तुरगो विरग कुरगो महागो भुजगस्तथान्योपि जोवो महा दुष्टबुद्धि सदास्माक-मेकार्मचित्ताद् भृश भक्ति भाजा सुराजा विरूपं स्वरूपं विधास्यत्य-हो तं वय मारयिष्याम एतद् द्वयस्य प्रहारै रितीवात्र हेतोर्दधान[ऽहँ] तथा सर्व वर्णेषु मुख्य सुरक्षं सुकक्षं सुलक्षं सुयक्ष सुदक्ष सुपक्ष विरिच्यात्म मार्तण्ड मौख्यादि वर्याभिधाधायकं नायकं त्रायकं दायक सविभाव्येति सम्यक्त्व वर्गं सुवर्ग लवर्णोवराक श्रियोर्व्वीयकं साश्रत । सोपि मत्वाधिको दाग्छिद्र्य देवदूष्या वृतात्मीय शीर्षोपरि न्यसगस्त प्रशस्त स्फुरत्काम कुम्भान्वितं ॥ क्लीं ॥ त तथा विश्वरेत सुता सवदेवैनता हस यान स्थिता पुस्तकेनाकिता देववाणी रता कूर्म पादोन्नता केलिजंघान्विता सिंहमध्याङ्गनावर्य वक्ष स्थला मञ्जु सन्मेखला हस्तनोलोत्पला ध्वस्त कुव्यत् खला सद्गुणै निर्मला भक्त हृन्निश्चला च्छिन्न दुष्ट च्छला नैव सा नि फला सर्वत सद्बला केशत श्यामला विश्वन सत्कला केलित कोमला सद्वच कोकिला पेशला मासला वत्सला मरणन्नूपुरा प्रौढ पुण्याकुरा चक्रमाच्चचुरा क्वापि नैवातुरा सर्वदा मेदुरा दीप्ति सन्मुर्मरा सद्यश पुर्पु रा भग्न भी मुर्मु रा सपदा कारिणी पङ्कजागारिणी विश्व सचारिणी बुद्धिविस्तारिणी भक्त निस्तारिणी दुर्मतेर्द्दारिणी धर्म धी धारिणी सवका वारिणो ससृते पारिणी मायिना मारिणी वैरिणा वारिणी दैत्य संहारिणी ऐ नमो हारिणी शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा शारदा शारदात्ता तथा ॥ ६६६॥

॥ प्रथम ऋषभ देवता नामाभिरामाद्भुत श्री समेवोजितोनोजित सयत सभव सभव सवराधीश जन्मा सुजन्मा जिनो मेघराजा गजो नग जो देवपद्मप्रभु सप्रभ साधुपार्श्व सुपार्श्वश्चद्र प्रभो दीप्ति चद्रप्रभो मातृरामाभिजातोऽ भिजातो वच शीतल शीतलो विष्णुपुत्र सुनेत्रस्तथावासु पूज्य सुपूज्यो विपूर्वोमलो निर्मलोऽनत तीर्थेश्वरो भासुरोधर्मनाथ सनाथ श्रिया शातिङ्कर शकर कुथुनाथ प्रमाथस्तताऽर कर सपदा मल्लिरापल्लना मल्लिरत्यत सत्सुव्रत सुव्रत श्रीनमिर्निभ्रमिर्नेमि देवाधि देव सुशेवस्तथा पार्श्वतीर्थाधिप सत्कृप सद्गुणैर्वर्द्धमानो जिनो वर्द्धमानस्तथा गुव्वर ग्रामवासी प्रकाशींद्र भूतिर्गणेशोऽग्निभूति स्तथा वायुभूति पुनर्व्यक्तनामा सुधर्मा गुणैर्मण्डितो मण्डितो मौर्यपुत्र सुमूत्रस्तथाऽकपित कपितो नाचल भ्रातृकस्तान्त्रिकस्त्यक्त भार्य मडार्यश्च मेतार्य साधु सदाचार साधु प्रभासो निरासो गुणाना च्युत पचमस्वर्गतो धारिणी कुक्षिपाथोज सलब्ध जन्माऽब्द कन्या परित्याग कर्त्ता हिरण्यादि कोटी प्रहर्त्ता लमत्केवलश्री सुभर्ता गणाधीश जनूयतींद्र प्रपूर्वो भवो भीम ससार कातार पारगमी सयमी सूरिमुख्य सुदक्षश्च शय्यभव श्री यशोभद्र सूरींद्र नामायसभूत सूरिश्च मुनिर्गुणाना कलापै स्तथा भद्रबाहु पुन स्थूलभद्रो मुनींद्रश्च कोशा सुवेश्या मनोबोधकारी महा ब्रह्मचारी लसल्लब्धिधारी नराणा वराणा भवाम्भोधितारी तथार्य्यो महागिर्य्य भिख्य सुशिष्य सुहस्ती प्रशस्ती तथा शाति सूरि गुणश्रेणि भूरि पुन श्री हरेस्प्रगो भद्रसूरि गभीरार्थ प्रज्ञापनासूत्र सद्धर्म विज्ञान विद्या वरेण्य सुपुण्यश्च नोलार्य्य भट्टारकस्तारक समत कारक सपदा-

मेप साडिल्ल सूरिर्मुनी रेवतीमित्रनामार्य्य धर्म्मार्य्य गुप्तार्य्य नामान एव समुद्रादि सूर्यार्य्य मग्वार्य सौधर्म सूरीन्द्र मुख्या सुदक्षा पुनर्भद्रगुप्त सुगुप्तो यतो निर्गता वार्द्धि सख्येय शाखा सुनागेन्द्रचन्द्र, स्फुरन्निवृ त्ति स्फार विद्याधरोदार नामाभिरामा द्विपचाप्तपूर्वः सुपूर्वोतुवज्रादिम स्वामि सूरीश्वरो यीश्वरो रक्षितातार्य्यसूरि पुन. पुण्यमित्र पवित्रस्तथार्य्यादि नन्दि प्रभुर्नाग हस्त प्रशस्तस्ततो रेवती सूरि राचार्य्यधुर्य्य सुगाभोर्य्य धैर्य्यादि वर्य्य. परब्रह्मवान् ब्रह्मनामादिम द्वीप सडिल्लसूरि हिंमाद्धन्त सूरिर्गणिर्वाचकाचार्य्य नागार्जुन प्राजुन सद्गुणे सूरि गोविन्द सभूति सद्भावकौ सूरिलौहित्य नामा पुरि श्रीदलभ्यायक सर्वसिद्धान्त वृन्दानि तालादि पत्रे विचित्रे वरैलेंखकैलेंखयामास देवर्द्धि भट्टारक । श्री उमास्वामि सूरिर्भृ शं भाष्यकर्त्ता जिनाद्भद्र सूरि स्ततो देवसूरि पुनर्नेमिचन्द्र स्तथो द्योतनो वर्द्धमानो जिनाधीश्वरो जैनचन्द्रोऽभयाद्देवसूरि जिनाद्वल्लभो दत्त चन्द्रो पति श्री जिनेश प्रबोधश्च चन्द्र शिवाख्यो जिनात्पद्म लब्धी च चन्द्रोदयो राजभद्रो च चन्द्र समुद्रो जिनाद्धस माणिक्य सूरी च पूर्वोक्त मन्त्रास्तथा तीर्थराजान् श्री गुरून् सपनीपत्य लेलिख्यते पार्वणे लेख एषोद्धुत ॥ २ ॥

क्वचिदिह मणिरत्न माणिक्य माल क्वचिन्मुक्त मुक्ताफलाली प्रवाल क्वचित्स्वर्ण रूप्यादि पु जे विशाल क्वचित्स्वर्ण पट्टोल्लच्छ्रेष्ठि भाल क्वचिद्धट्ट पीटे लुठन्नालिकेर । क्वचित्काचनी राजिका शृगबेर । क्वचित्प्रस्तरी न्यस्त नानार्थ मूल क्वचित्प्रस्फुट च्छादिका पट्ट कूल क्वचिच्छात्य धान्यादिग जै गरिष्ट । क्वचित्प्राज्यमाज्यादि कूपैर्वरिष्टं

क्वचिद्विप्रशाला पठच्छात्रवृन्द । क्वचित्पीयमानासवाणीमरन्द ।
क्वचिद्दीयमानार्थि वाञ्छार्थदान । क्वचित्कामिनी गीत सगीत गान ।
क्वचिन्मत्त मातग घटानिनाद । क्वचिद्वाजि हेषारवैर्लग्नवाद
क्वचिद्रम्य हर्म्ये र्जित स्वर्विमान । क्वचिच्चारु चैत्यावली भ्राजमानं ।
क्वचित्साधु साध्वो कृताध्यायघोष । क्वचित्कामुकावि कृत प्रेमपोष ।
क्वचित्कल्पत विस्फार शृ गारवेप । क्वचिद्दिव्य भव्यागनारूपरेख (प) ।
क्वचित्तोर सायात्रिकोत्तीर्णपण्य । क्वचिद्वारिमध्य भ्रमन्नौ वरेण्य ।
क्वचित्स्वर्ण पीठोपविष्ट क्षमेश । क्वचित्साधुभिर्दीयमानोपदेशं ।
क्वचित्सूरि मत्रस्मृतौ लीन शुद्ध । क्वचिद्राज ससद्भवन् मल्लयुद्ध ।
क्वचित्स्तभनाधीश चैत्य प्रधान । क्वचित्सद्गुरु स्तूप रूप प्रतान ।
तत किं बहूक्त्या समृद्धया सुवृद्धया । सुनाशीरपुर्या सदृक्ष सुवृक्ष ।

पुर स्तभतीर्थं सुतीर्थं च तस्मिंस्तथोकेशवशाम्नुजोद्द्योधने भास्करा रैहडीये कुले गाढराढाधरा, श्रीमदुद्बोद रत्नानि, सल्लक्षण ज्ञानविज्ञान चातुर्यविचाचणा, शीलभास्वच्छ्रियादेविमातु प्रलब्धाव-तारा, कलाकेलिरूपरेखातिसारा, लसत्पचधात्रीभृशपाल्यमाना, द्विसप्त प्रभा सज्ज्वला सत्कला मण्डिता, पण्डिता, सर्वदक्षा पुनर्लब्धलक्षा, विनीता सुगीता सुमित्रा पवित्रा सुलावण्यवाणीसुधारजिता-नेकलोका सरोका सुदाक्षिण्यनैपुण्या जाग्रत्प्रतापा विपापा गुरो-र्जैनमाणिक्यसूरे सत्काशात्श्रुतासारकान्तारकाराविचारा समु-त्पन्नवैराग्यरगत्तरगा सरगा गृहीतव्रता सुव्रता गुप्ति गुप्ता समित्याभियुक्ता प्रमुक्ता सुमुक्ता श्रुतोक्तास्तपस्तेजसा दीप्यमाना समाना सुगाना सुताना सुदाना सुयानास्ततो जेसलाम्मेरु दुर्गे

सुवर्गे सुसर्गे गुरुप्रदत्तपट्टाधिकारास्ततो विक्रमेसक्रिया श्रीफलद्धवर्या महामत्रशक्त्याप्रभोर्म दिरे तालकोद्धाटका शात्रवोचाटका ढिल्ली-पुर्य्या पुनर्योगिनो साधका सूरि मत्रस्फुटाम्नायससाधका, गुर्जरेऽजर्जर या तपोटैस्तपोटै कृतागालिनिन्द्यमयीपुस्तिका तद्विवादेपु सर्वत्र सप्राप्तजाग्रज्जयश्रीप्रवादा पुनर्यद्गुणाकर्णनाकृष्टसहष्ट हत्साहिना मानसन्मानपूर्व समाकारिता लाभपुर्य्या यकै साहिछप्पा प्रयोगेण अंगे कलिंगे सुवगे प्रयागे सुयागे सुहट्टे पुनश्चित्रकूटे त्रिकूटे किराटे वराटे च लाटे च नाटे पुनर्मेदपाटे तथा नाहले डाहले जगले सिधुसोवीरकाश्मीर जालधरे गूर्जरे मालवे दक्षिणे काविले पूर्वपंचावदेशेष्वमारिर्भृ शपालया-चक्रिरे प्रापि यौगप्रधानं पदं स्तम्भतीर्थोदधौ दापितं सर्वमीनाभयं यै पचकूलब्धासगमे साधिता सूरिमंत्रेण पचापिपीरा महाभाग्य वैराग्यवंत सदाजैनचन्द्रा मुनीन्द्रा, सुभट्टारका ॥ ६६६ ॥

प्रवर विदुर रत्न निध्यह्वया श्री उपाध्याय विद्वद्गजेंद्रा जयादि प्रमोदा श्रिया सुन्दरा सुन्दरा रत्नत सुन्दरा धर्मत सिन्धुरा हर्ष तो वल्लभा साधुतो वल्लभा प्राज्ञ पुण्य प्रधाना पुन स्वर्ण लाभास्तथा नेतृ जीवर्षि भीमाभिधानास्तथेत्यादि, सत्साधु साध्वी द्विरेफ व्रजा (जै) सेविताह्वि द्वयाम्भोजराजी मनोहारिणस्ता स्तथा मालकोट्टात्तटान्मे दिनीतश्च शिष्याणु सिद्धात चार्गणिर्हर्षतो नदनो रत्नलाभो मुनेवर्द्ध-मानो मेघरेपा भिधानो तथा राजसी खीमसी ईश्वरो गगदासो गणादि पतिर्ज्येष्ट नामा मुनि —सुन्दरो मेघजीत्यादि यत्याश्रित. कार्त्तिकेयाऽक्षि मित्यद्भुतावर्त्तवत्या प्रणत्या च विज्ञप्तिमेव चचरी-कर्त्ति वर्वर्त्ति नि श्रेयस श्रेणिरत्राप्त सत्रुञ्जयराज क्रमाम्भोज मन्दार

सार प्रसादात् तथा पत्तनाच्छ्रीगुरूणामिहादेशरत्न गृहीत्वा विहृत्यानु सत्सार्थयोगेन साद्धं वरात्काणके पार्श्वनाथ च जूत्कृत्य वैशाख मासे द्वितीये नवम्यह्नि साडम्बरं सन्मुहूर्त्तोऽहमत्राजगामाशु मघोपि सर्वो भवन्नामत प्रापितो धर्म्मलाभ जहर्ष प्रकर्ष । तत प्रातरुत्थाय मघाग्रत श्री विपाकश्रुते वाच्यमाने पुनर्हर्षनदे मुनेर्मेघनाम्न क्रमाद्भाणरुद्रादि कृष्णाह्वि पक्षाभिधाने तपस्यद्भुते वाह्यमाने प्रति क्रान्ति सामायिकाऽर्हत्पदार्चादि सद्धर्मकार्ये विशेषेण सङ्घन्य वर्गे भृश प्रेर्यमाण विनेयस्य सत्सप्तमाङ्गे पुन पाठ्यमाने सति श्रीमहापर्वराजाधिराज समागानन्दोत्पन्न रगद्विवेकातिरेकेण सन्मन्त्रिमग्राम मह्नेन भास्वत्कनीय सम ' न सद्धमशाला समागत्य संघस्य सम्यक् समग्र क्षमा श्रान्ति पूर्व स्फुट कल्प पुस्त प्रशस्त समादाय साय निजाया मुदा मन्दिराया स्फुरच्चन्द्रिराया समानीय कृत्वा निशा जागरा सुन्दरा देवगुर्वादि गीतादि गानै सुदानै प्रगे सर्व सघ समाकाय वर्याति विस्फार कश्मीर जन्म उदाच्छोट पूगीफल प्रौढ सन्नालिकेरादि दानै, सत्कृत्य शृङ्गारितेभकुभस्थलारूढ रग कुमार स्फुरत्पचशारतावुजे स्थापयित्वा महापचशब्दादि वाजित्र निर्घोष पोष त्रिके चत्वरे राजमार्गे चतुष्के भृश भ्रामयित्वा मदीये श्रयाम्भोज युग्मे प्रदत्ता तत मघवाचा मया वाचित ब्रह्मगुप्ति प्रमाणाभिरामाभिर्वर वाचनाभि प्रभावाभिरस्याभिरानदत. पुस्तकमाहिणै वाक्षि वेद श्रुतीनामिहान्तवर्हिस्त्वाच्च सम्यग् दृश। पौषधा ग्राहिणा पुसा कसत्कुडलाकारपक्वान्नसन्मोदकै पारणा भीमससारकान्तार भोत्तारणाऽदायि दान घन दत्तमाशीलि शील तपस्ततम-

ष्टान्हिकापप्रमुख्यं पुनर्भावना भाविने त्यादि सद्धर्मरीत्या समाराधिन श्रोमहापर्व सर्वं कृनार्थं कृन मानवं जन्म एतत्पुनस्तात पादैरपि स्वीयपर्वस्वरूप निरूप्य। महामन्त्रिराठ् मागचंद्र सदारंगजी भाणजी रावत्रो वेणिदासोऽपि वावा च वीरम्मदे सामलो राजसी ईश्वरो मन्त्रि हम्मीर पंगार [सगार] सत्कादि भोजू अमीपाल तेजा समूउम्र मुख्य पुरातश्च मेहाजल सिद्धराजश्च रेपामुरत्राण सद्वीरपाला नृपालस्तथा राजमल्लोपि पीथादिक सर्वं संघ सदा वन्दते पूज्य पादान् महा दण्डक ॥ ६६६ श्री श्री श्री ५

---

## श्रीजिनसिंह सूरिजीका दिया हुआ आदेश पत्र।

॥स्वस्तिश्री॥ श्रीमेन्नातटात॥ श्रीजिनसिंह सूरय सपरिकरा.। सर्वगुण सुन्दरान् वाचनाचार्य यश कुशल गणिवरान्। सपरिकरान्। सादरमनुनभ्यादिशति। श्रेयोऽत्रास्ति प्रसत्ते ॥

तथा हिवणोकइ तुह्म। नइ लाहोर ना आदेश छइ, भली परइ रहेज्यो। श्रावक श्राविका ना जिम घणा भाव वधइ तिम करेज्यो तुहे पिण डाहा छउ, सर्व वात ना जाण छउ। जिम गच्छनी घणी सोभा वधइ तिम करेज्यो। श्रावक श्राविका समस्त नइ नाम लेई धर्मलाम कहेज्यो॥ वा० राजसमुद्र गणि सादर प्रणमति॥ मगसिर सुदि ११ दिने

पत्र के मुख पृष्ट पर

। भट्टारक श्रीजिनसिंह सूरिभि २ ...० ... कुशल

(मूलपत्र

---

* पृ २४७ में हम

परिशिष्ट में ... है ...

सम्पूर्ण ...

# प्रशस्तिः ।

॥ रत्नवैराग्य वासनातिशयसमाहत कठोरतरसुन्दरसाधुक्रिया समाचार, कुनकुवादिवृन्द तिरस्कार, प्रधान जन वदन श्रुत विश्रुत निरुपमसद्गुरु गुणगण समुल्लसित चित्तश्वीयोदेश समाहूतागत श्री गुरुराज समुपदिष्ट विशिष्टाभयदानादि धर्मधाम्नावासितात करणेन तद्गुरूपदेशादेव यावज्जीव पाण्मासिक जीवामारि प्रवर्त्तकेन, विशेष सकलगोमहिषजाति पालकेन, समस्त जैनसम्मत श्रीशत्रुञ्जयादि महातीर्थकर मोचकेन सकलस्वदेशपरदेशमुक्त शुल्कजीजीयादिकर-सतापेन, निर्मलप्रबलबल निस्तुलभुजबल साधित सकलभूमण्डलेन, दिल्लीपतिसुरत्राणेन, श्रीमदकबरसाहिपुङ्गवेन प्रदत्त श्रीयुगप्रधानबिरुदा-धार सतत प्रहृष्टसाहिविनीर्णांपाढीयाष्टाह्निका सदमारि, स्तम्भती-र्थीय समुद्रजलचरजीव सघातघात निवारणजातयश सम्भार, वितथतया साहिसमक्षदूरीकृत कुमतिकृतोत्सूत्रासभ्यशासनमय 'प्रवचन परीक्षादि' शास्त्र व्याख्यान विचार,विशिष्ट स्वेष्ट मन्त्रादि प्रभाव प्रसा-धित पञ्चनदपति सोमराजादि यक्षपरिवार, श्रीशासनाधीश्वर वर्द्धमान-स्वामि पट्टप्रभाकरपंचमगण (धर) श्रीसुधर्मस्वामिप्रमुखयुगप्रधानाचार्या-विछिन्न परंपरायातकोटिकगणमडन वज्रशाखाशृङ्गार श्रीचन्द्रकुला भरण श्रीनेमिचन्द्रसूरि श्रीउद्योतन पट्ट प्रदीप सर्व्वातिशायिज्ञानगुणा-तिशय प्रबोधित मन्त्रीश्वर विमलकारितार्बुदाचलशिर शेखरी भूत

विमलवसति नामक श्री आदिनाथ चैत्य प्रतिष्टापक श्री वर्द्धमान सूरिपट्टाम्बरम श्रीमदणहिल (पुर) पत्तनाधिप दुर्लभराजमुखो-पलब्ध श्रीखरतर विरुद श्रीजिनेश्वरसूरि श्रीजिनचन्द्रसूरि नवाङ्गी विवरणाविर्भावक, श्रीस्तभनक पार्श्वनाथ प्रकाशक, श्री अभय देव सूरि, श्री जिनवल्लभ सूरि, श्रीजिनदत्त सूरि, पट्टानुक्रम समा-गत सुगृहीत नामधेय श्री जिनमाणिक्य सूरि पट्टप्रभाकर श्रीऋषभेश देवकृतानेकवार चरण सन्निवेश श्री पुण्डरीकाचलोपरिप्रदेश समु-ल्लसित परमरमा ससर्गान्त दुर्गान्त परित परविहार प्रतिषेध दुर्ललित कोपविकार दुराचार प्रतिपन्थि मथनोद्भूत नव्यभव्य चैत्यनिष्पादन प्रभूत परमोत्साह सुखसागरावगाह सन्तुष्ट पुष्ट सत्कर्म्मा वारित श्री खरतरसङ्घ कारित श्रीयुगादिविहार मुक्ताहार पुञ्जस्थापक पद सपदनुत्तर सुधामधु मधुरतर वचन रचनाऽवर्जिता तर्जिता ज्ञविद्व श्री सलेम सुरत्राण सदाचीर्ण वितीर्ण रवि गुरुवार दुर्निवार सदुच्चारामारि पटह प्रकार प्रसादीकृतोच्छिन्नोच्छित्त निरु-पम परित्राण श्री पितृ सुरत्राण धर्मप्रभार सदुपदेशोल्लास जगत्प्र-काश जगाति जेजीया प्रभृति करमोचन कारित दिग्वलय, मलयज, हास, काश, सकाश, यशोमरालपाल पद प्रचार प्राभृतीकृत स्फुरत कानकाति स्फुट स्फुटिक विमलदल तरुणिति घटित सुघट कलिकाल प्रगट प्रताप दूरीकृत सताप व्याप पुरुपादेय श्रीवामेयबिम्ब प्रतिष्ठा विधायक श्री खरतर गच्छनायक सुविहित चक्रचूडामणि युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि पुरन्दरे श्री महाचार्य श्री जिनसिंह सूरि श्री समय-राजोपाध्याय श्री रत्ननिधानोपाध्याय वा० पुण्यप्रधानगणिप्रमुख

शिष्य प्रशिष्य साधुसङ्घसुपरिकरैः प्रतिष्ठित श्रीआदिनाथम्बि कारित च मकल श्री सघेन पूज्यमानं चिरं नन्दतादाचन्द्रार्कंतीर्थ मिदम् ॥ स० १६६२ वर्षे चैत्रवदि सप्तमी दिने श्री विक्रम नगरे राजाधिराज श्रीरायसिंह विजयिराज्ये ।*

युगप्रधान श्री जिनचद्र सूरि पुन्दराणा-सदुपदेशेन श्री विक्रम-नगर वास्तव्य भव्योसवाल ज्ञातीय चोपडा गोत्रीय सघपति कचरा पुत्र रत्न सघपति अमरसी भार्या अमरादेवी पुत्र सघपति आसकर्णेन भ्रातृ अमीपाल कपूर परिवृतेन श्री योगशास्त्र वृत्ति पुस्तक लेख-यित्वा, श्री युगप्रधान गुरुभ्य प्रदर्द, तैश्च श्री स्तम्भतीर्थ ज्ञानकोशे ज्ञान सपद्वृद्ध्ये स्थापया चक्रे। शिष्य प्रशिष्य परंपरया वाच्यमान चिरनन्दतादानन्द विधायक । श्री रस्तु ।

( श्री पूज्यजी सग्रहमे, प्रशस्तिपत्र १ ( गुणविनय लि ? ) से ।

# विज्ञप्ति पत्र ।

॥ ६० ॥ स्वस्ति श्री शान्ति जिन मानम्य ॥ श्री मति वेन्ना-तटे। प्रकट प्रोत्कट सकट कोटि करटि सत्पराक्रमा क्रान्त नभ क्रान्ता भ्रान्त वादि वृन्द प्रदत्तामान सन्मान दानान, प्रस्फुरदुद्दुप-मार विसारि म्लेच्छ सम्भार हारि निकर प्रणामाभिराम पादसाहि सलेम स्वच्छन्द गलन्मानावमति तापित जिनपतियति तति कृत त्राणानदानान्, युग प्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि राजान् वा० सुमति

* यही प्रशस्ति ( पीछे की २, ३ लाइनों को छोड कर ) प्रवर्तक सुखसागरजीके प्रेषित षड्दर्श हिन्दीके अन्तिम पत्र में भी लिखी हुई है।

कल्लोल वाचनाचार्य, पुण्य प्रधान गणि, पं० मुनि वल्लभ गणि, प० अमीपाल प्रमुख साधु मधुकर ससेवित पदिन्दीवरान्, श्री जेसलमेरु दुर्गतो, वि० विमलतिलक गणि, वा० साधुसुन्दर गणि, वि० विमलकीर्ति, वि० विजयकीर्ति, वि० उदयकीर्ति प्रभृति यति तति समनुगत सरणि सादर सुन्दर त्रि प्रदक्षिणी कृत्य सत्य विज्ञापयतीदवच । श्रेयोत्र श्री सौव गुरु राज प्रसादत ।

श्रीमता वत्रिमय( त्र ? )स्मि । तथा पत्र मेकं श्री युगप्रधान गुरूणामागतमवगतादत प्रवृत्ति राग(?)दितं मन्मनस ॥ यत्तु कोट्टडा देश सत्क आदेशो नेतरथाकारि । तच्चारु कृत । नहि पुण्य प्रजय ! मतरेण पुण्यार्क युक्तस्य क्षेत्रस्य देवसस्येव कार्य-सिद्धौ तत्काल मेव दु प्राप्य माणत्वान्मम द्विरूप दिष्टा विशिष्ट क्षेत्रा-दिष्टि पुण्यमेवाविर्भावयति । यत्तु द्विस्थान्या तत्पार्श्ववर्तिनि ग्रामे स्थेय मिति लिखित तद्दूर पार्श्व वत्त (वर्त्ति)१ ग्रामोपिनास्ति । पृथग् चातुर्मास्यवस्थान कृदपिनास्ति ॥ इति विज्ञेय । भवत्प्रसादात्ताअपि सुखिन वाह स्थास्ये इति न कापि चिन्तास्ति । सा० थिरुकस्य प्रति शोध्यते । यावदत्र स्थास्यामि तावत्तत्प्रतिशोधनं करिष्यामीति ॥

तथा श्री गुरुराज दर्शनार्थ गत रूपी मच्चक्षुपीसतृपीस्तस्तत स्व दर्शन दान प्रधान पीयूष दानेन तोषणीये इति ॥ सदा वन्दना-वर्मेया ॥ भाटी गोइद दासोपि चलितु मुत्कालना करोति तथापि कतिच्चिदिनानि लगिष्यन्ति । वलमानपत्रं प्रसाद्यम् । सर्वेषा पार्श्व-वर्तिना साधूना मन्नामग्राह वदना निवेद्या । चैत्रासित दशम्या रजन्याम् ॥ ( मूलपत्र हमारे संग्रह मे )

———o———

# परिशिष्ट (ङ)

## श्री जिनचंद्र सूरिश्वर कृत

# अष्टमद चौपइ

---

प्रथम ऋषभ नमु जिनराज, जसु सेवइ सवि सीझइ काज ।
अष्टमद चउपई सुचग, रचिमि (सु?) भाव भगति मन रगि ।।१।।
पर हित पर उपकार मुणिंद, पूछइ गोयम वीर जिणद ।
कहि प्रभु कर्म विपाक विचार, किम जीव रुलइ मदइ संसार ।।२।।
जाति न अम्ह समउ उत्तम कोइ, इसइ गरबि मरी सो कमि होइ ।
पूरव भव जाति मद कीयउ, मरी चडाल 'हरकेसी वली हुओ ।।३।।
जे कुल मद करइ बोलइ आल, ते परभवि हुइ ससउ सीयाल ।
कुलमद 'मरीचि' 'लगाई' खोडि, भमिउ सागर कोडा कोडी ।।४।।
हम सम रूपि न इसि मदि नडिउ, निरखन सयल अचल(चलत) आरडीउ
विणसत रूप न लागी वार, हुओ सुउद योनि अवतार ।।५।।
षटखड पृथवी ऋद्धि अपार, चउद रतन नवनिध भडार ।
रूप गर्व कीय 'सनतकुमार', निणठउ तन धिग २ ससार ।।६।।
कहइ न वलवत हम सम कोई, मरि पतग सो निश्चय होइ ।
गति यौवन वलि थिर न रहेइ, तु 'बाहूबलि' दीक्षा लेइ ।।७।।
मति बुधि नउ फल परतखि जोइ, मरि मूरख मृग छालउ होइ ।
पढत पाठ(ढ!) गरबिउ अयाण, हु जगि पडित अवर न जाण ।।८।।

ज्ञान मदिइ वलदिउ सु होइ, रथ जूतइ दुख सहसिइ सोइ ।
धण कण कचण ऋद्धि मद कीउ, धिग धनु जिसु लगइ कूकर हुउ ॥९॥
रानिहि घरि २ भमतउ रहइ, हडकत राक न गुरुवचनि लहइ ।
नवइ नदि मम्मणि लोभियउ, धन न धर्म दुख आगल थयो ॥१०॥
भोजन करि वेयावच करइ, निंदइ तसु तपुगरव मनि धरइ ।
'कूरगडू'नी परि दुख सहइ, तृपति आहार करत नवि लहइ ।११।
मुझ न गमइ इटु दोभागियउ, हु जगिवलभ सोभागिउ ।
इमा वचन गरव मनि धरइ, साप काग होइ अवतरइ ॥१२॥
सूना मारू मधुरमि लवइ, वचन दड पजर दुख सहइ ।
मगर सहस योजन विस्तार, तदुल लवुतमि मन व्यापार ॥१३॥
इक इक दण्डि महादुख पार, तिहु सहत तिणि कवण आधार ।
माया त्रागुल क्रोध भुजंग, मानिहि वेसर होइ मतगु ॥१४॥
लोभिइ उदरडो मरि हेइ, कर्म आगल नवि छूटइ कोइ ।
नयन रूपि रगि रमइ पतग, नाद वेधि वेधियउ कुरंगु ॥१५॥
मीन रसनि परिमल भमरलउ, फरस रसि गज गयवर गलिउ ।
इक २ इद्रि लगइ दुख सहइ, जिस तनि पचइ ते किम सहइ ॥१६॥
इय सुणिय मुणिय विचार निर्मल, आठमद जिउ परिहरइ ।
तिजी राग दस (द्वेष?) कषाय इन्द्रि, पच विषय न चित्त धरइ ॥
धन्न धन्न खरतर गछ सुरतरु, भणइ 'जिणचन्द्रसूरि' ।
जे पढइ तेहनइ आदि 'जिणवर', मनह वछित पूरि ॥१७॥

( पत्र १ स० तत्कालीन )

---

## (२) विक्रमपुर मंडण आदि जिन स्तवन

### राग :—धारणि

साचउ इक अरिहन्त अकल सरूपी जिणवर जाणीयइ रे।
हरिहर ब्रह्मा देव ते सुहणइ मनहि न आणियइ रे ॥
सामी समरथ आज मई नयणउ निरखीयइ रे।
मन माहरउ रे रूडा, जिणगुण गाइआ हरखीयउ रे ॥आ०॥
रमणि रग विलास योवन धन छइ सहु(य) कारिमउ रे।
भवभय भजण धोर ओऋषहेसर सुरत(सुरत) सुरतरु समउरे ॥२॥
तुम्ह दरसिण जगनाह, सफल जमारो जाण्यो मइ माहरो रे।
कामिन फल दातार हिव हु नाम न छोडं ताहरउ रे ॥३॥
द्यो समकित मुझ सामी वलि वलि पय पणमी वीनवउं सही रे।
गरूआ तणउ रे सभाव एहज प्रारथिया पहडइ नही रे ॥४॥
'विक्रमनयर' शृङ्गार श्री आदिसर निज मन ध्याइयइ रे।
श्रीजिनचन्द्रसूरि एम, पभणइ वछित(बहु) फल पाईयइ रे ॥स०॥५॥

## (३) जोगी वाणी

काया नगरी कोट सयल तिहा, अष्ट बुरज नव द्वार।
सहस वहुत्तरि राणी रमना, राइण (रावइन) विरचत यार ॥१॥
जोगी हो भूलि म भरम ससार,
यहु घट काचउ कूड म राचउ कोजइ जिनधर्म सार ॥१॥जो०॥
चीर कपूर आसन कि पटवर ताल सु अमृन हार।
देखन धिग धिग सयल सगत ए, फीटी हुइस्यइ असार ॥२॥जो०॥

काचउ रे कुम्भ भर्यो जिम नीरइ, होइ न विणसन वार।
तेम अथिर तनु छीजइ खिण खिण, कीजइ पुण्य अपार ॥३॥जो०॥
जडिय न ओषध मन्त्र न मूली, तन्त्र न जन्त्र जनोइ।
जामन मरण जरा दुख वारण, राखणहार न कोइ ॥४॥जो०॥
नव तत(त्व) मेरी कगुरी (किन्नरी) रे, जीवदया तंत सार।
जे कगरी(किनगरी) वाबइ अरिहन्त ध्यावइ, ते पावइ भवपार ॥५॥जो०
वाणी श्रुत रग सोगी पूर, नासइ दुकृत पूर।
कानइ मोरइ तप मुद्रा दीपइ, जीपइ चंद नइ सूर ॥६॥जो०॥
समता अगि विभूति लगाउ, विनइ जटा सुर खाऊ।
मेखलि मौनि महाव्रत कथा, पहिरि परम पद पाउ ॥७॥जो०॥
शील गुण्ड तिन डपत्ति जोगवटउ, दीनउ गुरु हितकार।
ज्ञान मढी थिर आसन वइठउ, मन्त्र जपु(जपइ) नवकार ॥८॥जो०॥
भावना भूमि गिमा मोरी मिज्या, मोवत सयर सुरंगो।
सुगुरु वचन सुणि मोह निद्रा मिसि, राव? लगी सिव रंगो ॥९॥जो०
खपर खाइ सघ(था)रइ सोवइ, भार जटा सिर धारइ।
जोगी नाम विगोवइ का रे, जिण मत विण भ(व) हारइ ॥१०॥जो०॥
आदीसर जिन शासन जोगी, नेमि नइ थूलिभद्र राया।
जेहनइ नामइ पाप पुलायइ, निर्मल होवइ काया ॥११॥जो०॥
पूरि मनोरथ वीर जोगीसर, 'ढिलीपुर' प्रभु जाणी (राया)।
जोगी वाणि 'जिनचन्द सूर' हि, रगइ एम वखाणी ॥१२॥जो०॥
पाठा श्री जिनचंद सूरीसर'इणपरि जोगी कु समझाया ॥जो०॥
॥ इति गीतम् ॥

# पञ्चतीर्थी स्तवनम् ।



कनक केनक केसर दीधिति, मिलित मुक्त महासुर सन्ततिम् ।
विदित विश्वपति विगतानृत, नमत नाभि भव नयनामृतम् ॥१॥
सुसुर गोमुख यक्ष वरेणय, समनु सेवित आदिमतीर्थप ।
दम दयापर काम फलाजित, शिव रमा दृढतान्सवपाङ्कित ॥२॥
मृदु मृगाङ्क महाभव भीन भिदुगगन नीरवि चापति तुससवित् ।
फल कुमारक काचल कान्तजित्, विजयना जिन शान्ति त्रिकालवित् ।३।
सकल सद्गुण रत्न करण्डकम्, भव महोदधि तार तरण्डकम् ।
सपदि वारित वाद वितण्डकम्, स्मरति शाति जिनेश म चडक ।४।
विगत विस्तर वाम विरामकम्, मुख कला जित तापन धामकम् ।
नत सुरासुर शङ्कर नामकम्, विधित मार्ज्जनताङ्कन कामकम् ॥५॥
घन घना घन कज्जलकासितम, परम केवल भाव विभासितम् ।
नमित निर्ज्जर राज नरेश्वरम्, भजत सुन्दर नेमि जिनेश्वरम ॥६॥
सकल मगल मूलमपापकम्, विदलिताखिल कर्म कलापकम् ।
वर विभा भर भासुर भालकम्, प्रणत पार्श्वपति परपालकम् ॥७॥
तव जिनेश दिनेश समाकृति जनित लोक सुकोक चमत्कृति ।
रुचिर रोचि कलाप कलावृति कृत कुनोव तमोहर नादति ॥८॥
मथित मन्मथ मन्थुर सकथ, जरित जन्म जरा मरणव्यथम् ।
सजल मज्जित मग्न सद्व्यथ, विनुत वीर जिन धृत सत्पथम् ॥९॥

तरुण तप्त हिरण्य समत्विषम्, दुरितरत्य रति प्रभृति द्विपम्।
विकट सङ्कट कोटि पराङमुखम्, हृदि विवत्त जिन विलसत्सुखम्॥१०॥
इति जगद्गुरु पचक सस्तवस्सविनय जिनचन्द्र कृतस्तव ।
सुकवि चित्त कृतानघ समद प्रतनुतात्सुख सन्तति सम्पद ॥ ११॥
॥ इति पञ्चतीर्थी स्तवनम् सम्पूर्णम् ॥

# पार्श्वनाथ स्तवन

पद द्वयाशक्त नरा प्रभूता अभीपवोयस्य परि प्रभूता ।
उर्द्ध प्रयान्ति प्रतिभास माना. सूर्यस्य जेतु प्रतिभा समाना ॥ १ ॥
वीर्यादि हार्यादित मन्युनेव रक्ता नितान्त खलु मन्युनेव।
अय जन तापयति प्रमोदात् दुस्मस्तु सत्सु प्रभुप प्रमोदात् ॥ २ ॥
पद द्वय यस्य विभाति कामम् सरोज सभार मिव प्रकामम्।
सुरेन्द्र नागेन्द्र कृत प्रणामम् स्तवीमि पार्श्व सुगुणाभिरामम् ॥ ३ ॥
सुदेशोस्तु'पार्श्वो जिनो मे विशाल सदायोष्ट देहो भवत्शर्म्मकाल ।
अर्हन्नम्र भूतस्य सप्तास्य चूडामणि बिम्ब नोष्ट प्रकर्मच्छि देहि ॥ ४ ॥
स्वच्छ श्री शशि गच्छ मण्डपमणि गाम्भीर्य्य धैर्योदधि
श्रीमच्छ्री जिन पूर्वको गुणनिधि माणिक्य सूरि गुरु
शिष्य श्री जिनचन्द्र सूरिभिरिति सम्यक् स्तुतो भक्तित
श्री पार्श्व प्रददातु निर्मल फल त्रैलोक्य चूडामणि ॥ ५ ॥
॥ इति पार्श्वनाथ स्तवनं समाप्तम् ॥
( पत्र १ हमारे संग्रह मे )

अवश्य पढिये ! शीघ्र खरीदिये !!

## श्री अभय जैन ग्रन्थमाला की

### सस्ती, सुन्दर और उपयोगी पुस्तके।

ग्रन्थमालाका उद्देश्य—प्राय लागत मूल्यमें या उससे भी कम मूल्यमें यावत् अमूल्य तक में, भी सुन्दर उपयोगी जैन साहित्यका प्रचार करना।

ग्रन्थमाला स्थापन—श्रीमान् शकरदानजी नाहटाके पुत्ररत्न, परम धर्मज्ञ विद्याविलासी, शिक्षाप्रेमी, सुधार प्रिय स्वर्गीय, श्रीमान् अभयराजजी की पवित्र स्मृतिमें स० १९८२ में स्थापित की गयी थी। थोडे ही वर्षों में अत्युपयोगी ८ ग्रन्थोंका प्रकाशन होना हर्षका विषय है। ग्रन्थमाला द्वारा प्रकाशित पुस्तकोंका संक्षिप्त परिचय यह है —

### १ अभयरत्नसार अलभ्य

खरतरगच्छीय पचप्रतिक्रमण, साधु प्रतिक्रमणके साथ श्रावकोपयोगी स्तवन सझाय, तपस्या विधि, विधान भक्ष्याभक्ष्य आदि सभी आवश्यक विषयोंका अत्युत्तम सग्रह, सजिल्द पृ० ८०० का लागतसे भी कम मूल्य ॥।) मात्र। इसकी उपयोगिताका स्पष्ट प्रमाण यही है कि २००० पुस्तकें धडाधड बिक गयीं, अब भी प्रचुर मांग है, लेकिन अब पुस्तकें स्टोकमें नहीं रहीं।

२ पूजा सग्रह—पृष्ठ ४६४ सजिल्द ग्रन्थका मूल्य मात्र १)।

भिन्न भिन्न विद्वान् कवियोंके रचित १७ पूजाओंके साथ अप्रकाशित कविवर समयसुन्दरजीकृत चौवीसी और मनोहर स्तवनोंका उपयोगी सग्रह।

मगानेकी शीघ्रता करनी चाहिये, अन्यथा अभयरत्नसार की की तरह पछताना पडेगा।

३ सती मृगावती ले०—भवरलाल नाहटा

प्रात स्मरणीय सती मृगावतीका सरल और रोचक भाषामें मनोहर चरित्र इस पुस्तकमें बडी ही खूबीके साथ अङ्कित है पृ० ४० मूल्य =) मात्र

### ४ विधवा कर्त्तव्य ले०—अगरचन्द नाहटा

ताडपत्र पर लिखित प्राचीन 'विधवा कुलक'का सरल विस्तृत विवेचनात्मक भाषान्तरके साथ विधवा बहिनोंके उपयोगी सभी विषयों और कर्त्तव्यो पर इसमें प्रकाश डाला गया है। विधवा बहिनोके लिये तो यह मार्गदर्शक ही है। प्रभावनामे अमूल्य वितरण करने योग्य ग्रन्थरत्न पृ० ६८ मूल्य मात्र =)।

### ५ स्नात्र पूजादि सग्रह —पोस्टेज )॥। का टिकट भेजने पर मुफ्त

स्नात्रपूजा, अष्टप्रकारी, दादाजीकी अष्टप्रकारी पूजाओंके साथ दर्शनिक स्तवनादि सग्रह।

### ६ जिनराजभक्ति आदर्श अलभ्य

जिनेश्वरकी भक्ति और पूजाका सच्चा स्वरूप दर्शानेवाला अत्युत्तम ग्रन्थरत्न, प्रारम्भमें 'मूर्त्ति पूजा विचार' नामक बाबू अगरचन्दजीका मननीय लेख है। १००० प्रतिया धडाधड बिक गयीं, अब स्टोकमें नहीं है।

### ७ युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि

आपके कर कमलोमे विद्यमान, हाथ कङ्गनको आरसी क्या!

### ८ ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह छप रहा है

१३ वीं शताब्दीसे वर्त्तमान तककी भाषाओका क्रमिक विकाश, जैन धर्मका उज्वल अतीत गौरव, जैनाचार्यो, विद्वानोकी जीवनी और शासन सेवाओंका दिग्दर्शन करनेवाला हिन्दी साहित्य ससारमें अपूर्व अजोड ग्रन्थरत्न बडे ही सजधज सुन्दर चित्रोंके साथ सुसज्जित होकर शीघ्र ही प्रकाशित होगा। पहलेसे ग्राहक बनिये नहीं तो पछताना पडेगा।

### भविष्यमे प्रकाशित होनेवाले ग्रन्थ

१—जिनदत्तसूरि चरित्र २—कविवर समयसुन्दर ३ कविवर धर्मवर्द्धन ४—मस्तयोगी ज्ञानसारजी, आदि ऐतिहासिक अनेकों ग्रन्थरत्न बडी ही महत्वपूर्ण खोज शोधके साथ प्रकट होंगे।

—o—

# परिशिष्ट ( च )

## ( परिशिष्ट "ग" के पूर्त्ति रूप )

### ( अल्लाहो अकबर )

नकल प्रतिभाशाली फरमान तारीख २२ महीना अयान आलही सन् ४० ( मेरे ) साम्राज्य के वर्त्तमान व भविष्य के मुत्सद्दियो ( समस्त कर्मचारियों—या कार्यकर्त्ताओं ) को मालूम हो कि युग-प्रधान जिनचन्द्रसूरि व ( और ) जिनसिंहसूरि कि जो ईश्वर-भक्त व ईश्वर के विषय के पंडित हैं, चाहिये कि उनको तसल्ली (दिलजमी) देनेका प्रयत्न करे (याने प्रसन्न रखे) कोई उनके साथियों को दुःख न देने पावे। यदि वे अपने किसी चेले या साथीको अपने पास से दूर करदेतो किसीको ऐसे ( उस ) व्यक्ति की सहायता नहीं करना चाहिये। उनके उपासरो व मन्दिरों आदि मे कोई भी किसी तरह से भी उनके कार्यमे विघ्न न डाले। क्योंकि बादशाह ( अकबर ) का यह नियम है कि हरएक सम्प्रदाय अपनी रीतिके अनुसार ईश्वर की सेवा-पूजा करे।

जो झगडा ईश्वरभक्त हीरविजयसूरि व विजयसेनसूरि के सम्प्रदाय वालोंमे हुआ था वह बादशाह के सामने अर्ज किया गया बादशाह ने हुक्म फरमाया कि अब उनके अनुयायियों मे किसी भी कारण से झगडा न हो और वह एक दूसरी की बदी (बुरी) न चाहें। और जो कुछ उनके चेले धर्मसागर ने "प्रवचन परीक्षा" नामक पुस्तक मे उनकी बुराई लिखी है उसको उसमे से दूर करदे और यदि उन्होने अपनी पुस्तको मे उसके विरुद्ध कुछ लिखा है तो उसे वे भी दूर करदें क्योंकि ईश्वरभक्ति की पहली पूंजी-सीढी यह है कि ऐसे कार्यों से दूर रहे।

ईश्वर से प्रार्थना है कि इन दोनो सम्प्रदायो मे प्रेम व मेल होजाय।

अबुलफजल

वाके अनवीस सरफुद्दीन हुसेन

अल्लाह अकबर

## नकल प्रतिभाशाली (चमकदार) फरमान जिसपर मुहर "अल्लाह अकबर" लगी हुई है।

## तारीख शहरयूर ४ माह महर आलही सन् ३७

चूंकि उमदतूल मुल्क रुकनूम सलतनत उल काहेरात उजदूद-दौला निजामुद्दीन सइदखाँ जो बादशाह का कृपापात्र है, मालुम हो चूं कि मेरा (बादशाह का) पूर्ण हृदय तमाम जनता तथा सारे जानदारों (जीवधारियों) के शान्ति के लिए लगा है कि समस्त संसार के निवासी शान्ति और सुख के पालने मे रहे। इन दिनों मे ईश्वर भक्त व ईश्वर के विषय मे मनन करने वाले जिनचन्द्रसूरि खरतर भट्टारक को मेरे मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ उसकी ईश्वर भक्ति प्रगट हुई, मने उमको बादशाही मिहरबानियो से परिपूर्ण कर दिया उसने प्रार्थना की कि इससे पहिले ईश्वर-भक्त हीरविजयसूरि तपसाने (हजूरके) मिलने का सौभाग्य प्राप्त किया था उसने प्रार्थना की थी कि हरसाल बारह दिन साम्राज्य मे जीववध न हो और किसी चिडिया या मच्छी के पास न जाय ( न सतावें ) उसकी प्रार्थना कृपाकी दृष्टि से व जीव बचाने की दृष्टि से स्वीकार हुई थी अब मै आशा करता हू कि मेरे लिए (एक) सप्ताह भर के लिए उसी तरह से (बादशाह का) हुक्म हो जाय। इसलिए हमने पूर्ण दया से हुक्म किया कि आषाढ मास के शुक्लपक्ष मे सातदिन जीववध न हो और

न सताने वाले (गैर मूज़ी) पशुओ को कोई न सताने, उसकी तफ-मील यह हैं —नवमी, दसमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी और पूर्णमासी। वास्तव मे वात यह है कि चूंकि आदमी के लिए ईश्वर ने भिन्न भिन्न अच्छे पदार्थ दिए हैं अत उसे पशुओंको न सताना चाहिए और अपने पेट को पशुओ की कब्र न बनाए। कुछ हेतुवश प्राचीन समय के कुछ बुद्धिमानलोगों ने इस प्रथा को चलादिया था। चाहिए कि जैसा ऊपर लिखा गया है उसपर अमल करें इसमें कमी न हो और इसे (हुक्म को) कार्य रूपमे परिणित करने में बहुत सहनशीलता से काम ले।

उपर लिखी तारीख को लिखा गया

**अबुलफजल व वाकयानवीस इब्राहिमबेग**

(१) उडीसा और उडीसा की सब सरकारें,

| | |
|---|---|
| | खिलनीयाबाद |
| जिहन्नाबाद | सरीफाबाद |
| मारोहा (माडोहा) | सासा गॉव |
| तारीफाबाद | सारकाम |
| गोरीया | सलीमाबाद् |
| कफता | सलमल (सिलमल) |
| कीचर | फतहाबाद् |
| बलाद् (टाण्डा) | भूराघाट |
| ताजपुर | महमूदाबाद् |
| हसन गॉव | मदारक, |

(२) फरमान चरागीव मोहर "अल्लाहु अकबर" असफंदार ४ महरूर मास्कद्दर शाही सन ३५ माहि जारीहुआ मशाहिरात औ मुत्सद्दियान सूबे अहमदाबाद.

| | |
|---|---|
| उडा | [illegible] |
| मैराबाद | गोरखपुर |
| [illegible] | |

(३) (फटा हुआ आधा उपर था, भाग नहीं मिला)

| | |
|---|---|
| देहली | महेन्द्र |
| धन्धु | मण्डल |
| हिसार—फीरोजा | सहारनपुर |
| रिवाड़ी | |

नोट:—अहमदाबाद निवासी श्रीयुत् [illegible] के संग्रहमें हमें पांच शाही-फरमानों की नकल प्राप्त हुई, जिनमें तीन जैन, [illegible] सम्बन्धि [illegible] फरमान है। जिनमेंसे एक फरमान परिशिष्ट (ग) में छप गया है। ये तीन फरमान क्रमशः सूबा उड़ीसा, [illegible] और दिल्लीके हैं। पहला फरमान धर्मसागर कृत "प्रवचन-परीक्षा" सम्बन्धी है उनकी दोनों नकलें अत्यन्त जीर्ण और अशुद्ध होनेके कारण पूर्ण शब्दानुसार न हो सका, अतएव भावानुवाद ही प्रकाशित करते हैं। फरमानोंका अनुवाद डा० आशीर्वादीलालजी श्रीवास्तव M A ph D महोदयने करनेकी कृपा की है एतदर्थ आपको अनेक धन्यवाद है। सूरिजीको मिले हुए शाही फरमानोंमें सम्राटके [illegible] [illegible] एवं आठ हजार [illegible] फरमान, एवं शाही आमन्त्रण-पत्र, दर्शनीविहार मोक्ष इत्यादि कई और मिलने चाहिए। भविष्यमें प्राप्त हुए तो द्वितीयावृत्तिमें प्रकाशित करेंगे।

# परिशिष्ट ( छ )

## पूर्त्ति

पृ० ९ श्रीवर्द्धमानसूरि कृत उपमितिभवप्रपञ्चानामसमुच्चय, उपदेशमाला बृहद्वृत्ति और सं० १०८५ का प्रतिमा-लेख ( फलिग्राममें ) उपलब्ध है।

पृ० १२ श्री अभयदेवसूरि कृत १ सत्तरीभाष्य ( गा० १९२ कृपा० भं० ), २ नवतत्त्वप्रकरण भाष्य, ३ पचनिग्रन्थी, ४ वदणक भाष्य, ५ निगोद षट्त्रिंशिका, ६ पुद्गल षट्त्रिंशिका, ७ साहम्मी वच्छल कुलक ( गा० २९ ) और ८ महावीर स्तवनादि उपलब्ध हैं।

पृ० १३ जिनदत्तसूरि कृत १ सुगुरु पारतन्त्र २ विघ्नविनाशी स्तोत्र, ३ उपदेश कुल, ४ समाधिष्ठायी स्तोत्र, ५ श्रुतस्तव, ६ आध्यात्म गीतानि ७ मन्त्रगर्भित स्तोत्र आदि उपलब्ध हैं।

पृ० १४ जिनपतिसूरि कृत पचलिंगीटीका, तीर्थमाला, चतुर्विंशतिजिन स्तव, निरोष्ठ्यद्वार ऋषभ स्तुति इत्यादि उपलब्ध हैं।

पृ० १५ श्री जिनप्रबोधसूरिजीने विवेकसागर कृत 'पुण्यसार कथा" का संशोधन किया था।

पृ० १६३ विनयसोम—इनके शिष्य सोमचन्द्र शि० अमर कृत विवाह पडल ( प० १९ ) उपलब्ध है।

पृ० १६३ लब्धोदय शि० दानसागर शि० रत्नधीर कृत भुवनदीपकटबा ( सं० १८०५ जे० मा० सु० इ० ) मिलता है।

पृ० १६४ कल्याणधीर कृत साधुसझाय गा० ६८ पत्र ३ चतुर० सं० में है।

पृ० १६४ गुणरत्न कृत काव्यप्रकाश टीका ( सं० १६१० ज्ये० व० ७ शि० रत्नविशालार्थ ) और सारस्वतक्रियाचन्द्रिका ( सं० १६४१

भुवन० भं० पा ४४ ) उपलब्ध हैं। इनके शिष्य रत्नविशाल कृ
रत्नपाल चौ० ( सं० १६६२ महिमापुर भुवन० भं० ) औ
इनके लिखित प्रशस्ति स० १६६६ भा० सु० ३ बीरमपुर
( नाहर लेखाङ्क १७१९ ) है। शिष्यके प्रशिष्य महिमोदय कृ
पञ्चाङ्गनयनविधि गा० ६४ ( स० १७२३ भा० सु० ७
की उपलब्ध है।

पृ० १६४ कुशलधीर कृत 'रसिकप्रिया भाषाटीका' ( जोधपुर, वर्द्धमा
भं० गु० ) और कुशललाभ कृत वनराजर्षि चौ० ( स० १७०
जय० भं० ), मल्लिस्त० ( १८९६ जेसलमेर ) उपलब्ध है।

पृ० १६४ महिमोदय कृत ग्रहपक्षगुहल्यल्पष्टानयन चौ० गा० ४६ (सं
१७३१ मा० सु० ९ सागाजी हेतने रचित ) संग्रह
नं० १२९ में है।

पृ० १६९ क्षेमरङ्ग शिष्य विनयप्रमोद शि० महिमासेन लिखित प्रति महिम
भं० व० नं० २० में है।

पृ० १७३ पद्महेम शिष्य कृत देशीनाममाला अवचूरि ( स० १६९
कृपा० भं० न० ९२९ ) उपलब्ध है।

पृ० १८१ श्रीजिनसिंहसूरिजी के भुवनराज नामक शिष्य थे जिन
स० १६८७ फा० शु० ९ बीकानेरमें लिखित प्रति का अन्त्य
पत्र हमारे संग्रहमें है।

पृ० १८२ रामचन्द्र कृत मूलदेव चौ० ( स० १७११ नवहर–चतुर० स०
एव सामुद्रिकभाषा ( स० १७२२ माघ कृ० ६ मेहर
जिनहर्षसूरि भं० ) उपलब्ध है। वैद्यविनोद स० १७२० लिख

है यह सवत् रामविनोद का है। वैद्यविनोद इससे अलग होगा उसका रचनाकाल सं० १७२६ वै० सु० १५ मरोट (दान० भं०) है।

पृ० १८३ दयासागर कृत शीलवतीरास ( सं० १७०५ फा० सु० ९ वर्द्ध० भं० ) उपलब्ध है।

पृ० १८५ सुमतिकल्लोल कृत मृगापुत्र सन्धि (रामचन्द्र भं०) सं० १६६१ (?) आ० व० ११ महिमनगरमें रचित उपलब्ध है।

पृ १८५ रत्नसुन्दर शि० रत्नराज शि० नरसिंह कृत कल्पसूत्र बाला० और योगचिन्तामणि बाला० उपलब्ध है।

पृ० १८६ ज्ञानचन्द्र कृत जिनपालित जिनरक्षितरास ( गा० १८४) और चित्तसंभूति चौढा० ( गा० १८६ ) क्षमा० भं० में उपलब्ध है।

पृ० १८६ साधुरंग कृत धर्मोपदेश गा० ८७, सूयगडग दीपिकादि उपलब्ध है।

पृ० १८८ विनयलाभ कृत 'पार्श्व भक्तामर' गा० ४५ "भक्तामर पाद पूर्ति काव्यसंग्रह" भा० २ में मुद्रित है।

पृ० १८६ देवचन्द्रजी कृत "दण्डक बाला०" ( सं० १८०३ का० सु० ११ नवानगर० चतुर० भं० ) उपलब्ध है।

पृ० १९० की फूटनोटमें उल्लिखित "ऋतुविधिप्रपा" का अवतरण —
"श्री जिनचन्द्रसूरिजी यइ श्री पुण्यसागर महोपाध्याय नइ पूछायउ हुतउ विचारइ एही जवाब कीधउ हुतउ"

पृ० १९१ पद्मराज कृत चौदह गुणस्थान स्त० टबा और ० बोलगर्भित चौबीस जिन स्तवनादि उपलब्ध है।

पृ० १९२ अमरमाणिक्य शि० वा० क्षमारंग शि० रत्नलाभ शि० राजकीर्त्ति कृत "वर्द्धमानदेशना" उपलब्ध है।

पृ० १९३ विमलकीर्त्ति कृत (१) दशवैकालिकटबा (२) पाक्षिकसूत्र टबा और (३) प्रतिक्रमण समाचारी टबा उपलब्ध है।

पृ० १९३ ज्ञानमेरु कृत (१) कालिकाचार्य कथा (भुवन० भ०), (२) साधुवनिदान बाला० उपलब्ध है।

पृ० १९३ नयमेरु के शिष्य केशवदास लिखा है किन्तु वे उनके प्रशिष्य यानी शि० लावण्यरत्नके शिष्य थे।

पृ० १९६ राजसिंह कृत विद्याविलास चो० (स० १६७९ वै० चपावती दान० भ०) उपलब्ध है।

पृ० १९६ कुशलप्रभ कृत जिनरक्षितरास (स० १६२१ आ० सु० ५) उपलब्ध है। इनके गुरुभाई भानुचन्द्र-रामचन्द्र (स० १६९७ बाल्यनयचक्र, ग्रहयेयो) थे, भानुचन्द्रजीके पास सुप्रसिद्ध कविवर बनारसीदास श्रीमाल प्रतिक्रमणादि पढ़े थे (आ०का०म०मौ० ७ पृ० १५८)।

पृ० १९७ चरित्रसिंह कृत देशीनाममाला वृत्ति पत्र ४९ महिमा० भ० में उपलब्ध है।

पृ० १९७ प्रमोदमाणिक्य शि० क्षेमसोम पुण्यतिलक शि० विद्याकीर्त्ति कृत नरवर्म चरित्र स० १६६९ पत्र ५ महिमा० भ० में है।

पृ० १९९ लावण्यकीर्त्ति कृत "देवकी ६ पुत्र ढाल" हमारे संग्रहके न० १८०२ मे है।

पृ० २०१ गुणविनय कृत ऋषिमण्डल अवचूरि (पत्र० १९ भुवन० भ०) और जयतिहुअण बाला० (लाहोर, स्वय लि० राम० भ०)उपलब्ध है।

पृ० २०२ मतिकीर्त्ति कृत सम्यक्त्वपचीसी टबा (पत्र ४ महर० भ०), ललिताङ्ग रासादि उपलब्ध है।

पृ० २०३ श्रीवल्लभ कृत "चतुर्दश स्वर स्थापन वादस्थल जिनराजसूरिराज्ये रचित उ० जयचन्द्रजीके निजी पुस्तकमें है।

पृ० २०४ धारदत्त शि० कल्याणनिधान शि० लब्धिचन्द्र कृत जन्मपत्री पद्धति ( स० १७५१ का० सु० महिमा० भ०) उपलब्ध है।

पृ० २०४ पुण्यकीर्त्ति कृत मोहछत्तीसी ( १६८४ आ० नागोर ) मदछत्तीसी (स० १७८९ आ० व० १३ मेडता) महिमाभक्ति भडारमें उपलब्ध है।

पृ० २०४ सूरचन्द्र शि० हीर उदय प्रमोद कृत चित्तसंभूति चौ० (स १७१९ जेसलमेर चतुर० सं०) उपलब्ध है।

पृ० २०५ शिवनिधानकृत गुणस्थानस्तवबाला० ( पूलमचन्द्रजी यति स० पत्र १६) सग्रामपुर म श्रावक जीवराज की धर्मपत्नी के लिए रचित एवं भाषाके कालिकाचार्यकथा व चौमासीव्याख्यान उपलब्ध है। इनके शिष्य "मान" कृत रसमञ्जरी (गा० १०७) शिक्षा छत्तीसी (दान० भ०) और उत्तराध्ययनगीत जो सिंहविनयकृत लिखा है वास्तवमे महिमासिंह "मानकवि" कृत ही है, इस कृतिमे मतिसिंह और कनकसिंह दो गुरुभाइयोका उल्लेख किया है।

पृ० २०६ सहजकीर्त्ति कृत विसनसत्तरी (स० १६६८ नागौर भुवन० भ०) उपलब्ध है। इनके हरिश्चन्द्र रास में १ सागर सेठ २ वच्छराज ३ नरदेव ४ सुदर्शन ५ कलावती ६ रायपसेणी उद्धार ७ शत्रुञ्जय रासके रचनेका उल्लेख है। देवराज वच्छराज चौ० भिन्न भिन्न लिखा वह एक ही है। इनके शिष्य रत्नसुन्दर शि० नन्दलाल कृत (१) अष्टाह्निका व्या० (१७८९ फा० सु० ५), (२) शृङ्गार-वैराग्य तरङ्गिणी वृत्ति ( सं० १७८९ आगरा ), चौदहगुणस्थान विवरण ( सं० १७८८ वै० शु० ३ कासमपुर जय० भ० ), (४)

सिद्धान्तरत्नवार्त्ता आदिपद व्याख्या० (प० २ दान० भ०) आदि उपलब्ध है।

पृ० २०६ श्रीसार कृत जयतिहुअण बाला० ( पत्र २६ जय० भ० ) और कई स्तोत्रादि उपलब्ध हैं।

पृ० २०८ ज्ञानप्रमोद कृत जगद्वाभरण वृत्ति ( जिनराजसूरि राज्ये प० ६१ दान भ० और कतिपय स्तवनादि उपलब्ध हैं। इनके शिष्य गुणनन्दन कृत इलातीपुत्र चौपई ( स० १६७६ विजयादशमी, विहारपुर क्षमा० भ० ) और प्रशिष्य विनयचन्द्र कृत मेघदूतअवचूरि (स० १६६८ राडद्रह० स्वय लि० प्र०) सग्रह में है। दूसरे शिष्य विशालकीर्त्ति के शिष्य क्षेमहर्ष कृत (१) पुण्यपाल चौपई ( स० १७०४ पो० शु० १० श० सिन्धु-सजाउलपुर, वर्द्ध० भ ), (२) चन्दनमलयागिरि चौ० ( स० १७०४ महिमा० भ० ) उपलब्ध है। क्षेमहर्ष कृत फलोदीपार्श्वस्त० गा० ७४ ( प० ३ ) और लक्ष्मीविनय कृत भुवनदीपक बाला० (स० १७६७ मि० कृ० १० दान० भ० ) उपलब्ध है।

पृ० २०८ हीरकलश कृत १मुनिपतिचौ० ( १६१८ मा० कृ० ७ र० बीकानेर महिमा० भ० ), २ आराधना चौ० (स० १६२३), ३ जीभदातमवाद ( स० १६४३ बीकानेर स० ), हियाली ( स० १६४३ बीकानेर ) और इनके शिष्य हेमाणद कृत अङ्ग फुरकण चौ० और दशारणभद्रभास ( सं० १६५८ कार्त्तिक पूर्णिमा गा० ५६ ) भी उपलब्ध है।

पृ० २०८ जयनिधान कृत १ देवदिन्नचरित्र ( कृपा० भ० ), २ अठारह नाता सज्झाय ( स० १६३६ जय ) ३ समेतशिखर यात्रा स्त०

( स० १६९९ गा० १७) ४ चौवीसजिन अन्तरकाल स्त० ( स-१६३८ ) और कई स्तवन स्तोत्रादि उपलब्ध हैं। इनके शिष्य कमलसिंह शि० कमलरत्न कृत ज्ञानपञ्चमीस्तवनादि उपलब्ध है, कमलरत्नके शिष्य दानधर्मने पृथ्वीराज वेलि का टबा लिखा ( महिमा० भ० न० ३३ )। जयनिधानजी के लिखी हुई कई प्रतिए बीकानेर के ज्ञानभण्डारों में है।

पृ० २०९ हरिलकीर्त्ति कृत शीलोपदेशमाला वृत्ति और इनके शिष्य पुण्य-हर्ष कृत हरिबल चो० ( इषु मुनि शशि—कृपा० भ० ) उपलब्ध है। हीरगान के शिष्य उदयहर्ष भी अच्छे कवि थे।

पृ० २०९ चन्द्रकीर्त्ति शिष्य समतिरङ्ग सुकवि थे। उनकी १ प्रबोधचिन्तामणि चो० २ मोहविवेक चौ० ( स० १७२९ वि०द० मुलतान ), ३ हरिकेशी चो० ( स० १७२७ श्रा० शु० २ मं० मुलतान ), ४ जम्बू चो० ( स० १७२९ आ० कृ० ९ मुलतान श्रीपूज्य० भ० ) आदि कई कृतियें उपलब्ध है।

पृ० २१० "कीर्त्तिरत्नसूरि परंपरा" के हैडिङ्ग में जो कवि लिखे गए हैं उनमें केवल नं० १८-१९ के ही उक्त परंपरा के हैं। भावहर्ष सागर-चन्द्रसूरि परंपरा के थे और विजयमेरु नाम भूलसे छपा है। इनका नाम वास्तव में विनयमेरु है। इनके रचित पन्नवणा विचार स्तवन गा० २९ ( स० १६९२ पौष शु० १० साचोर ) संग्रहमें है, ये श्रीजिनकुशलसूरि शि० क्षेमकीर्त्ति शाखाके थे।



# ❀ शुद्धाशुद्धि पत्रम् ❀



| पृष्ठ पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|
| १३—२२ | ( पत्र २६ ) | ( पत्र ८६ ) |
| १६—२० | समयसुन्दरोयाध्यायौ | समयसुन्दरोपाध्याये |
| १६—१६ | पह्ले | पहले |
| २६—५ | केखक | लेखक |
| ३३—१५ | पहोडो | पहाडो |
| ३४—६ | लेओ | तेओ |
| ४७—६ | प्रसिद्धेया | प्रसिद्ध थया |
| ४९—२१ | पट्टा | पट्ट |
| ५०—५ | सन्वन्धी | सम्वन्धी |
| ५१—२२ | नखू | खून |
| ५५—४ | मूधी मा | सूधी मा |
| ५५—७ | सं० १६४८ | स० १६४८ |
| ५७—५ | ६५ | ७५ |
| ६७—१७ | नो | तो |
| ६८—२१ | पण | पण |
| ७०—३ | शेकनो | शकतो |
| ७०—२१ | मनी शकेलीनथी | मलीशकेल नथी |
| ७७—१४ | मोठिया | मेठिया |

| पृष्ठ पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|
| ५—१४ | सं० १५६६ | सं० १५६८ |
| ७—२ | स्त्रोत | स्रोत |
| ८—७ | चरित्र | चारित्र |
| १०—२२ | सोजगोथ | सोजगोध |
| १६—६ | परिगृह | परिग्रह |
| २४—१२ | आग | आगे |
| २१-४, १२ | परिगृह | परिग्रह |
| ३१—४ | धर्मिष्ट | धर्मिष्ठ |
| ४१—५ | स्थभणा | स्थम्भणा |
| ४४—३ | उद्गत | उद्धृत |
| ४६—५ | वादका | वाद कीयउ |
| ७२—८ | ओग | ओर |
| ७४—१५ | फरनिजा | फरहर नेजा |
| ७६—१६ | गुणो के | अवगुणो के |
| ७६—२० | कभी कभी | कभी धनी कभी |
| ७७—५ | विनेचन | निरेचन |
| ७६—२१ | अरूढ | आरूढ |
| ८०—२० | आदुर्भाव | प्रादुर्भाव |
| ८२—२१ | वलाए | बुलाए |
| ८३—२१ | माता | माता |
| ८४—२२ | याग | जोग |

| पृष्ठ पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|
| ९०—१९ | महान्त | महान्त |
| ९१—१३ | काश्मीरान | कश्मीरान् |
| ९१—१७ | तथाहूता | तदाहूता |
| ९१—१७ | नायक | यथु |
| ९१—१८ | श्रीगुरोर्देशना देवानन्दितो भून्नराधिप | श्रीगुरोर्दर्शना देवनन्दितोऽभून्नराधिप |
| ९१—२० | ददो | ददौ |
| ९३—६ | जीवो को | जीवों के |
| ९३—२० | स्तु | स्तत् |
| ९७—१३ | समं मत्री साहिनाचालयत्तराम् | महामत्री सार्द्धं साहेरचालयत् |
| ९७—१४ | मयमन् | सयमान् |
| ९७—१६ | वृताचार | व्रताचार |
| ९७—२० | म्यदमीगितु | स्पदमीगितु |
| १००—१५ | तइ | तडं |
| १०६—१३ | वसारव | वैसारव |
| १०७—१ | रायसिंघे | रायसिंघै |
| १०७—२१ | ससर्ग | संसर्ग से |
| १०८—४ | समझ | समक्ष |
| ११६—१४ | कने | कर वे |
| ११६—१० | made | mode |

| पृष्ठ पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|
| ११६—२० | अम्राट | सम्राट् |
| १२४—२० | करो | करी |
| १३०—२० | ज्ञी | जी |
| १४३—११ | कमों | क्यों |
| १४३—२३ | चको | चूको |
| १५३—२० | चत्र | चैत्र |
| १६४—२३ | मुमतिमन्दिर | सुमतिमन्दिर |
| १६८—१२ | चत्री | चैत्री |
| १८७—८ | पत्र० | पत्र० ७ |
| १६०—२२ | साधुकीर्त्य | साधुकीर्त्यु |
| १६६—६ | आरामशाभा | आरामशोभा |
| १६६—२१ | कुशलल्लाम | कुशललाम |
| १६७—२२ | महो | महो० |
| १६८—११ | ( रना | ( रचना |
| २०१—१० | अन्तिय | अन्तिम |
| २०७—६ | उपधानवधि | उपधानविधि |
| २०६—१३ | भजनगर | भुजनगर |
| २१४—१६ | ॥२४॥ | ॥२४८॥ |
| २१८—२१ | वामुपूज्य | वासुपूज्य |
| २१८—२२ | वामपूज्य | वासुपूज्य |
| २२१—१० | म्नान | स्नात्र |

| पृष्ठ पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|
| २२२—२३ | यहक्रमो | पट्टक्रमो |
| २२५—८ | धर्मधोरयताधर | धर्मधौरेयताधर. |
| २२५—६ | मर्व | मर्व |
| २२५—६ | साहु कं | साहेयं |
| २२५—११ | प्राप्यसंह महाद्र सिंह प्रअरितो भवा | प्राप्य सैंह महान्द्र सिंह प्रअरितोऽभवत् |
| २२७—१२ | प्रभो | प्रभो |
| २२५—१४ | यर्यन्त | पर्य्यन्त |
| २२७—१३ | गुणारुले | गुणारुले |
| २२७—१७ | गन्तव्यमेनोति | गन्तव्यमेनेति |
| २२६—१२ | पीतलमय | पीतलमय |
| ,, —१३ | वगो | घगो |
| ,, —१६ | भव | ऽभवद् |
| २३३—५ | मद्ध | सिद्ध |
| ,, —२१ | मोहि | माह |
| २३४—१७ | गोनडा | जोनाडा |
| २३८—२० | गभिन | गर्भिन |
| २४६—२३ | [illegible] | जजान्टीन |
| ,, ,, | मेक फोट | अनेफाट |
| ,, २४ | नति | पति |
| २४३—१६ | ट्रस्ट | |

| पृष्ठ पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|
| २४६—६ | म० | म० |
| २७६—१ | सरश्वती | सरस्वती |
| २८३—१३ | तदवन् | तद्वन् |
| २६४—५ | जिननवल्लभ | जिनवल्लभ |
| ३०४—२२ | मविष्य | भविष्य |

पृ० ८३-६७ की फुटनोटमे जो श्लोक दिए हैं वे "कर्मचन्द्रमत्रि वश प्रवन्ध"के हैं और पृ० २३६-४० के फुटनोटका अवतरण "कर्मचन्द्र मन्त्रिवश प्रवन्ध वृत्ति"का हैं। पृ० ७३ का अवतरण "अकबर-प्रतिबोध रास" का है। पहले फरमेमे फुटनोटके चिन्ह ( स्टार ) शब्दोके पीछे लगे हैं वे आगे लगने चाहिए।

प्रेस दोपसे अनेक जगह मात्राए टूट गई और अक्षर अस्पष्ट उठे हैं एव 'व' के स्थान पर 'व' छपा है, ऐसी साधारण अशुद्धिया हमने नहीं लिखी हैं।



# विशेष नामोंकी सूची

## अ

छ

## ज

## त



## थ



## द

